भीष्म साहनी के साहित्य में सामाजिक चेतना

(साम्प्रदायिक परिवेश के विशेष संदर्भ में)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
पी–एच.डी. (हिन्दी) उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध–प्रबंध

2008

(DR. S. N. Saxena)

शोध–निर्देशक –
डॉ0 सुरेन्द्र नारायण सक्सेना
रीडर एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी–विभाग
मथुरा प्रसाद महाविद्यालय, कोंच (जालौन)

कु. संगीता अग्रवाल
अनुसंधित्सु –
कु0 संगीता अग्रवाल
एम.ए. (हिन्दी)
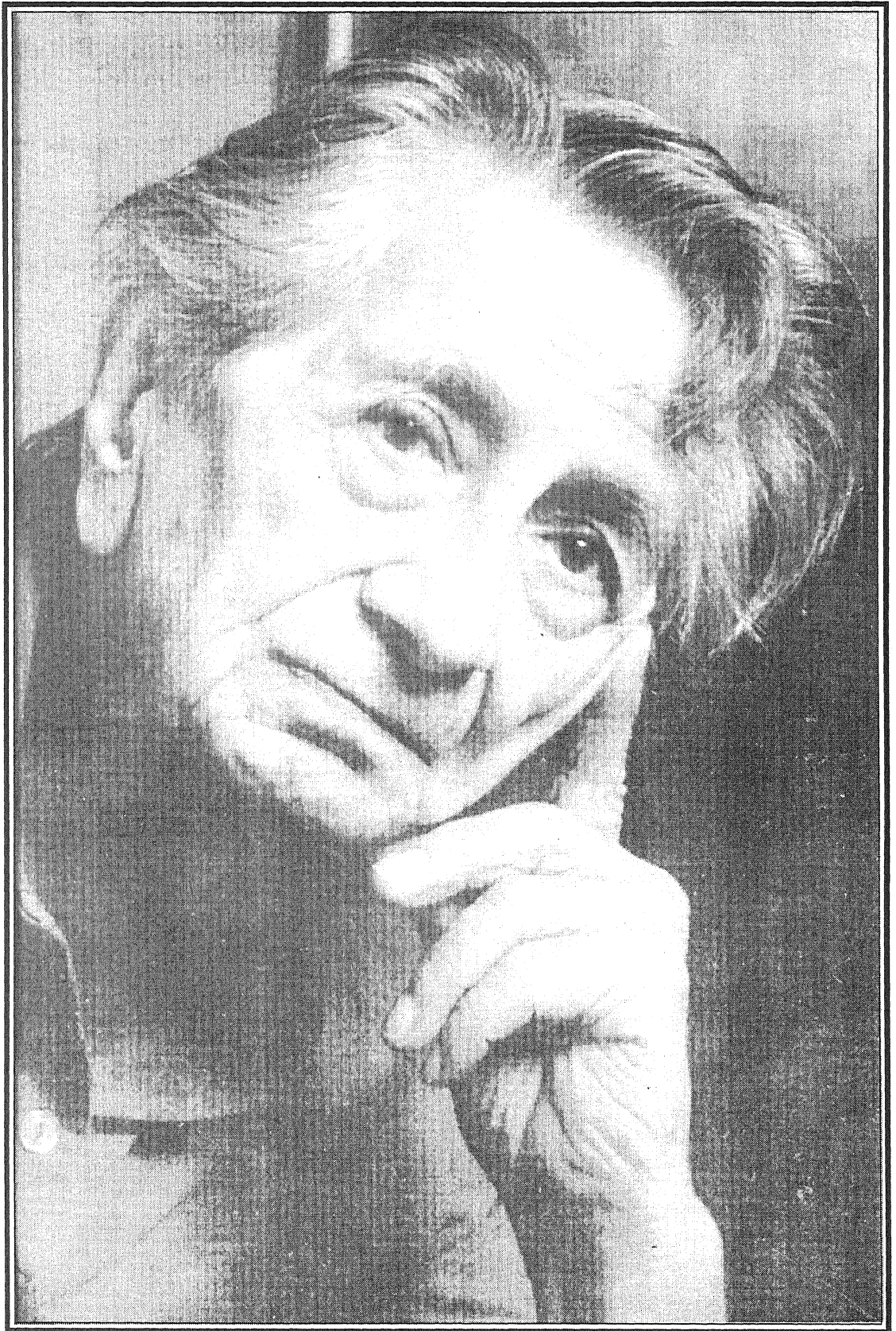
भीष्म साहनी

(1915 - 2003)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि अनुसंधित्सु कु० संगीता अग्रवाल ने दो सौ दिनों से अधिक अवधि तक उपस्थित रहकर मेरे निर्देशन में **"भीष्म साहनी के साहित्य में सामाजिक चेतना" (साम्प्रदायिक परिवेश के विशेष संदर्भ में)** शोध प्रबन्ध पूर्ण किया है। इस उपक्रम में इन्होंने बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के समस्त उपबन्धों का पूर्ण पालन किया है। मैं इस मौलिक शोध प्रबन्ध को शोध विशेषज्ञों के समक्ष परीक्षार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा तथा अनुसंधित्सु के ज्योतिर्मय भविष्य की कामना करता हूँ।

(DR. S. N. Saxena)

20.5.08

शोध-निर्देशक -

डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना

रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग

मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय

कोंच-जालौन उ०प्र०

पिन-२८५२०५

घोषणा पत्र

मैं घोषणा करती हूँ कि मेरा शोध–प्रबन्ध **"भीष्म साहनी के साहित्य में सामाजिक चेतना"** (साम्प्रदायिक परिवेश के विशेष संदर्भ में)" डॉ0 सुरेन्द्र नारायण सक्सेना, रीडर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर हिन्दी–विभाग, मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच (जालौन) के निर्देशन में पूर्ण हुआ है। यह शोध–प्रबन्ध मैंने पी0–एच0 डी0 की उपाधि हेतु 200 दिन में पूर्ण किया है।

20-05-2008

कु. संगीता अग्रवाल

शोधार्थी

कु0 संगीता अग्रवाल

आभार

मैं माँ शारदे एवं अपने सद्गुरु परमपूज्य संत श्री आसाराम जी बापू के चरणों में शीश झुकाती हुई एवं उनके शुभ आशीर्वाद से यह शोध कार्य पूर्ण कर पाई हूँ। मैं हृदय से बारम्बार पूज्या माँ व सद्गुरु की वन्दना करती हूँ।

मेरे पथ प्रदर्शक, परम आदरणीय निर्देशक डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना, अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच (जालौन) के प्रति मैं अति विनम्र भाव धारण कर हृदय की गहन अनुभूतियों से कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ, जिनके उत्कृष्ट निर्देशन में प्रस्तुत शोध कार्य पूर्ण कर सकी हूँ। वास्तव में उनका उदात्त व्यवहार, सारगर्भित विचार, अखण्ड सहयोग एवं मृदुल स्वभाव से जो मुझे प्राप्त हुआ, वह मेरे लिए अविस्मरणीय है।

मैं अपने परमपूज्य आदरणीय माता-पिता श्री मती अरुणा अग्रवाल एवं श्री संतोष अग्रवाल के प्रति विशेष आभार प्रकट करना चाहूँगी, जिन्होंने मेरी प्रत्येक आवश्यकताओं को पूर्ण किया और पग-पग पर मेरा उत्साह बढ़ाकर शोध प्रबन्ध की प्रूफ रीडिंग में भी अपना असीम सहयोग दिया। मैं हमेशा उनके लिए नतमस्तक रहूँगी।

मैं अपने प्रिय हितैषी अनुज राधामाधव अग्रवाल, शिवाकान्त अग्रवाल और भाभी पूनम अग्रवाल के प्रति अत्यधिक हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने व्यावसायिक व्यस्तता के बाद भी हर समय अपना असीम सहयोग दिया। मैं अपनी मित्र तुल्य हितैषी बहिन श्री मती जूली अग्रवाल के प्रति बहुत आभारी हूँ जिन्होंने मुझे सदैव प्रोत्साहित किया ।

मैं अपने सभी मामा-मामी, चाचा-चाची, बुआ-फूफाजी एवं दादा-दादी की अत्यधिक आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे समय-समय पर सहयोग दिया। मैं अपने ममेरे भाई मुकेश अग्रवाल की विशेष आभारी हूँ जिन्होंने मुझे हर क्षण पूर्ण सहयोग दिया। मैं अपने चाचा मृगेन्द्र अग्रवाल की अत्यधिक आभारी हूँ जिन्होंने समय पर पुस्तकें देकर मेरी मदद की ।

मैंने राजकीय पुस्तकालय झाँसी व उरई में बैठकर शोध विषय से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अध्ययन एवं अवलोकन किया है। इन स्थानों से मुझे अनेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ हासिल हुई है। मैं यहाँ के पुस्तकालयाध्यक्षों की हार्दिक आभारी हूँ जिन्होंने मेरे इस कार्य में पूर्ण सहयोग दिया।

मैं अपनी शोध सहपाठी श्रीमती ऋचा दीक्षित उनके पति सुधीर दीक्षित, शाइस्ता खान एवं मेरी बुआ शोधार्थी गीतांजलि अग्रवाल का हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ। इनसे मुझे साहित्य से संबंधित अनेक

पुस्तकें प्राप्त हुईं। इन्होंने टंकण की अशुद्धियों को ठीक करने में भी अपना सहयोग दिया। मैं आभारी हूँ भाई डॉ० नईम बॉबी का जिन्होंने मुझे साम्प्रदायिक सद्भाव से संबंधित विषय सामग्री उपलब्ध कराई।

मैं आभारी हूँ मित्र श्रीमती कल्पना चौरसिया, श्रीमती पूनम अग्रवाल एवं दीदी रुचि अग्रवाल, शालिनी अग्रवाल, रश्मि चौरसिया तथा डॉ० श्वेता दीक्षित की जिन्होंने समय-समय पर मुझे उपयोगी सुझांव दिए।

महाविद्यालय के पुस्तकालय लिपिक श्री नरेश चन्द्र द्विवेदी के प्रति भी मैं अत्यधिक आभारी हूँ। उन्होंने समय-समय पर पुस्तकें उपलब्ध कराकर मेरी सहायता की।

कम्प्यूटर द्वारा प्रिंट करके शोध प्रबंध को स्वच्छ और सुन्दर रुप देने में कु० सारिका गोयल का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। मैं इनकी बहुत-बहुत आभारी हूँ।

महाविद्यालय के हिन्दी विभाग में कार्यरत प्राध्यापक श्री जयशंकर तिवारी के द्वारा प्रदत्त सहयोग के लिए मैं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। जिन्होंने विषय सामग्री उपलब्ध कराने में मेरा सहयोग करते हुए मुझे शुद्ध लेखन की ओर प्रेरित किया।

मैं अमरचन्द्र महेश्वरी इण्टर कॉलेज के हिन्दी प्रवक्ता श्री हरि नारायण मिश्रा, सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कॉलेज के सुयोग्य शिक्षक श्री भोलाराम वर्मा, मथुरा प्रसाद महाविद्यालय की संस्कृत प्रबक्ता श्री मती मधुरलता द्विवेदी, फुन्दीलाल राजकीय महाविद्यालय जालौन की संस्कृत शिक्षिका डॉ. जेबा खान स्वं प्राचीन इतिहास संस्कृत एवं पुरातत्व इतिहास विभाग के रीडर डॉ. रामसजीवन शुक्ल, सरस्वती विद्या मन्दिर कोंच के उपाध्यक्ष श्री सियाराम आचार्य इमलौरी एवं श्री मुन्नालाल भारद्वाज ने मुझे अपना असीम सहयोग दिया।

इस शोध कार्य के दौरान मैंने पंजाब प्रान्त के जिलों जैसे जालन्धर, अमृतसर एवं लुधियाना जिलों का भ्रमण किया एवं वहाँ के कुछ सिक्ख परिवारों में सम्पर्क किया । उनके वयोवृद्ध सदस्यों से मुझे भारत विभाजन के समय की अनेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त हुई। इस सम्बन्ध में मैं सरदार हरभजनसिंह एवं उनके परिवार के सदस्यों की हार्दिक आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे अपने घर आमंत्रित किया और अपने पिता एवं पितामह से इस सम्बन्ध में वार्तालाप का अवसर दिया।

मैं अपने परम आदर्श प्रिय हितैषी मित्र एवं सहपाठी दीप कुमार अग्रवाल के प्रति अपना असीम हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने मुझे पग-पग पर अपना असीम सहयोग दिया और शोध प्रबन्ध लिखने में तथा पूर्ण करने में मुझे प्रोत्साहित किया।

हमारे मार्ग दर्शक आदरणीय डॉ. श्री सुरेन्द्र नारायण सक्सेना की जीवन संगिनी श्री मती मीना सक्सेना ने हर समय मेरा उत्साहवर्धन किया है। उन्होंने समय-समय पर विषय वस्तु के सम्बन्ध में अपने

अर्जित ज्ञान से मुझे मार्ग प्रशस्त किया है। मैं सदैव उनकी आभारी रहूँगी ।

मैं अपने शोध केन्द्र मथुराप्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच के प्राचार्य महोदय श्री वीरेन्द्र सिंह जी एवं समस्त प्राध्यापकों का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सहयोग एवं दिशा निर्देशन से यह कार्य अति सरल हो गया।

मैं उन सभी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ, जिनका सहयोग एवं सद्प्रेरणा मुझे सदैव उत्साहित करती रही।

कु. संगीता अग्रवाल

विषय सूची

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के विभिन्न साहित्यकारों में भीष्म साहनी का नाम ससम्मान लिया जाता है। वे प्रगतिशील परम्परा के सशक्त साहित्यकार हैं। इस ऊँचाई तक पहुँचने के लिए भीष्मजी को जिन्दगी के कई पड़ाव पार करने पड़े हैं। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भों में साम्राज्यवाद एवं समाजवादी रचना की भूमिका स्पष्ट करने में आप कुशल है। कई वर्षों की निरन्तर साधना के उपरान्त भीष्मजी ने हिन्दी साहित्य जगत में एक विशेष उपलब्धि प्राप्त की है।

भीष्म साहनी के शान्त और शालीन व्यक्तित्व में महान मानवता के दर्शन होते हैं। कबीर की मानवता तथा प्रेमचंद की मानवता का उन पर विशेष प्रभाव पड़ा है। उनका साहित्य जीवन की वैचारिक ऊँचाइयों के दर्शन करा देता है। भारत के मध्यवर्ग का मन अभी तक आधुनिक धर्म निरपेक्ष लोक भावना एवं चेतना से विरत है। जिसे बदलने का रचनात्मक प्रयास इन्होंने प्रभावी ढंग से किया है। उनके साहित्य में भारतीय जनता की आज़ादी के यथार्थ का, जीवन सिद्धान्तों का एवं समाज के भीतर चलने वाले व्यक्ति संघर्षों का मार्मिक चित्रण है। वे इतने नम्र स्वभाव के रहे है कि लोग उनकी नम्रता का गलत फायदा भी उठाते रहे हैं।

भीष्म साहनी का अधिकांश समय रावलपिंडी पाकिस्तान में बीता। उन्होंने लाहौर में अपनी पढ़ाई की। वे इस मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र में सौहार्द पूर्ण वातावरण में पढ़े लिखे। देश की आज़ादी में हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ने ही बराबर से योगदान दिया है। अंग्रेजी हुकूमत से संघर्ष करने में दोनों ने ही जान की बाजी लगाई है। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास उनके त्याग एवं बलिदान से भरा पड़ा है। भीष्मजी ने अपने युग के परिवेश को बहुत ही समीप से देखा एवं भोगा है। उसी का अनुभव कर उन्होंने 'तमस' जैसा श्रेष्ठ उपन्यास लिखा। जिस पर १९७५ में उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ।

स्वतन्त्रता संग्राम के समापन के साथ ही देश अनेक विसंगतियों से ग्रस्त होता गया। ब्रिटिश हुकूमत ने सत्ता तो छोड़ी, परन्तु मुल्क के साम्प्रदायिक परिदृश्य पर कालिख पोतने के बाद। अंग्रेजों ने 'फूट डालो शासन करो' की नीति अपनाकर हिन्दुस्तानियों में अलगाव के बीज बो दिए। परिणामतः देश की आज़ादी के साथ ही उसका विभाजन होना भी तय हो गया। कल तक जो लोग मुल्क की आज़ादी के लिए मर मिटने वाले थे, आज वे हिन्दू मुसलमानों में विभक्त होकर एक दूसरे के कट्टर शत्रु हो गए और अलग-अलग मुल्क की माँग करने लगे। अन्ततः अखण्ड भारत का विभाजन हुआ और नया मुल्क पाकिस्तान अस्तित्व में आया।

विभाजन की शुरुआत से ही देश का सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य बिगड़ने लगा। नए देश के सीमांकन के लिए अनेक विवाद उभरकर आए। पाकिस्तान का निर्माण मजहब एवं सम्प्रदाय के आधार पर हुआ था। अतः दोनों देशों से नागरिकों का सम्प्रदाय एवं मजहब के आधार पर पलायन प्रारम्भ हुआ। ये सब कुछ इतनी जल्दी में हुआ कि शताब्दियों से चला आ रहा पारस्परिक प्रेम और सौहार्द सद्यःप्रसूत वैमनस्यता

की आँधी में रेत के ढेर की तरह उड़ गया। दोनों सम्प्रदाय एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए। सर्वत्र लूटपाट, आगजनी, मारामारी, हिंसा, बलात्कार और कत्ल के घिनौने कारनामे अन्जाम लेने लगे। हमारे जिन बुजुर्गों ने इस दमघोटू घिनौने परिदृश्य को देखा अथवा भोगा है, आज भी वे उन दिनों की याद करके सिहर एवं सिसक उठते हैं।

भीष्म साहनी ने स्वतन्त्रता पूर्व एवं स्वातंत्रयोत्तर दोनों के ही परिवेश को समीप से देखा ही नहीं वरन् भोगा भी था। पाकिस्तान के निर्माण के बाद वे मार्मिक पीड़ा संजोए हुए भारत आए। आजादी के दौरान जलते हिन्दुस्तान की लपटों से वे झुलसे थे। उनका साहित्य स्वतन्त्रता पूर्व एवं स्वातन्त्रयोत्तर भारत के सामाजिक परिवेश का सजीव चित्र है। उन्होंने नारी संचेतना को अपने साहित्य का प्रमुख
आधार बनाया है। पुरुष प्रधान समाज में नारी की क्या दशा है? उसके विविध रुप क्या हैं? उसका यौन शोषण कैसे-कैसे होता है? इन सबको आधार बनाकर उन्होंने अपना साहित्य लिखा है। उन्होंने नारी जीवन के रोते-हँसते, कोमल व कठोर दोनों पक्षों को अपने साहित्य में रखा है। नारी संचेतना के कई दृश्य उनकी कड़ियाँ, माधवी, कुंतो, नीलू नीलिमा नीलोफ़र आदि उनके रचनाओं में दिखाई देते हैं। नारी को समाज से जो भी उत्तरदायित्व प्राप्त होते है, उन्हें वह कैसे निर्वाह करती है? उसे कैसे संघर्ष करना पड़ता है? यह सब हमें उनके साहित्य में देखने को मिलता है। स्त्री तथा पुरुष के क्रमशः परपुरुषों तथा परस्त्रियों से कैसे सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं? प्रेमी व प्रेमिकाओं के बीच मधुर सम्बन्ध कैसे स्थापित होते है तथा विवाह के अनेक स्वरुप इनके साहित्य में मुखरित हुए हैं।

धर्म के कारण हिन्दू और मुसलमानों में कैसे साम्प्रदायिकता फैली है? लोग कैसे एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए? ये सब परिदृश्य उन्होंने अपने उपन्यास 'तमस' व 'अमृतसर आ गया' कहानी में प्रस्तुत किए हैं।

भीष्म साहनी ने साम्प्रदायिक एवं जातीय सद्भाव व विद्वेष पर अपनी लेखनी चलाई है। उन्होंने कथा साहित्य में हर जगह यही दिखाने का प्रयास किया है कि विभिन्न सम्प्रदाय के लोग आपस में लड़ें नहीं। उन्होंने कहा कि आज सद्साहित्य को जनता के बीच लाने की आवश्यकता है जो हमारी पीढ़ी को जातीय एवं साम्प्रदायिक वैमनस्यता के दुष्प्रभावों से अवगत कराते हुए शान्ति एवं सद्भाव की ओर प्रेरित करें।

हिन्दी विषय में एम०ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के उपरान्त मुझे उच्च्व शिक्षा के क्षेत्र में कुछ और आगे बढ़ने की लालसा जगी। मैं प्रारम्भ से ही स्वाध्याय की ओर प्रवृत्त रही हूँ। परिणामतः अध्ययन-अध्यापन मेरी प्रमुख रुचि है, इसलिए मैंने पी-एच०डी० हेतु शोध करने का मन बनाया। इस सम्बन्ध में शीर्षक एवं विषय चयन करने के लिए मैंने मथुरा प्रसाद महाविद्यालय के हिन्दी-विभागाध्यक्ष अपने आदरणीय गुरुवर डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना से सम्पर्क किया। उन्होंने मुझे अनेक विषय सुझाए, जिन पर शोध कार्य किया जा सकता था। उन्होंने जातीय एवं साम्प्रदायिक सद्भाव जैसे कुछ ज्वलंत विषयों पर भी कार्य करने को प्रेरित किया।

साम्प्रदायिक सौहार्द मेरी विचारधारा का एक प्रमुख अंग रहा है। मेरा मानना है कि भारतवर्ष के चतुर्दिक विकास के लिए यह अति आवश्यक है कि इसमें निवास करने वाले विभिन्न जाति एवं सम्प्रदाय के लोगों में सद्भाव एक सूत्रता हो। रुचि के अनुकूल विषय अपने आदरणीय गुरुवर डॉ०सुरेन्द्र नारायण सक्सेना जी से प्राप्त होने पर मैंने साम्प्रदायिक सद्भाव पर कार्य करने का मन बनाया। हिन्दी के आधुनिक कथा साहित्य के अध्ययन के उपरान्त मैंने पाया कि भीष्म साहनी का साहित्य अपने युग की सामाजिक सचेतना को प्रस्तुत करने में पूर्ण सफल रहा है। उनके साहित्य में स्वतन्त्रपूर्व एवं स्वातन्त्रयोत्तर भारतवर्ष के साम्प्रदायिक सौहार्द एवं विद्वेष का बड़ा सजीव वर्णन हुआ है। अतः मैंने अपने आदरणीय मार्गदर्शक डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना जी से सम्पर्क करके भीष्म साहनी के कथा व नाट्य साहित्य पर कार्य करने का निर्णय लिया। शोध विषय स्वीकृत होने पर प्रारम्भ में तो कार्य मन्थर गति से चला, परन्तु विषय सामग्री के सागर में डुबकिया लगाते-लगाते कार्य की गति बढ़ती गई और तथ्य पूर्ण सामग्री की खोज करते हुए समाप्त हुई, जिसकी परिणति प्रस्तुत शोध प्रबन्ध है।

शोध कार्य के दौरान मैंने पंजाब प्रदेश के कुछ स्थानों का भ्रमण किया-जैसे जालन्धर, लुधियाना एवं अमृतसर में अनेक वयोवृद्ध सिक्खों से मैंने बार्तालाप किया और उनसे भारत विभाजन के दौरान की त्रासदियों पर चर्चा की। उन्होंने मुझे अनके महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया। मैं जलियावाला बाग के घटना स्थल को भी देखने गई। मैं सरदार श्री हरभजन सिंह जी की आभारी हूँ, जिन्होंने सहयोग प्रदान करते हुए अपने पिता एवं पितामह से बार्तालाप करने का अवसर प्रदान कराया।

कु. संगीता अग्रवाल

विनयावनत्

कु० संगीता अग्रवाल

अध्याय - १

समाज एवं सामाजिक चेतना

१.१ - समाज परिभाषा एवं स्वरुप

१.२ - व्यक्ति

१.३ - सामाजिक चेतना-अर्थ एवं स्वरुप

१.४ - सामाजिक चेतना और साहित्य

(१.१) समाज परिभाषा एवं स्वरुप -

साधारण अर्थ में 'समाज' शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के समूह के लिए किया जाता है। किसी भी संगठित समूह को समाज कह दिया जाता है, जैसे- आर्यसमाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, हिन्दू समाज, जैन समाज, विद्यार्थी समाज, महिला समाज आदि। यह 'समाज' शब्द का साधारण अर्थ है जिसका प्रयोग विभिन्न लोगों ने अपने ढंग से किया है। किसी ने इसका प्रयोग व्यक्तियों के समूह के रुप में, किसी ने समिति के रुप में, तो किसी ने संस्था के रुप में किया है। इसी वजह से समाज के अर्थ में निश्चितता का अभाव पाया जाता है।

समाज का अर्थ - समाजशास्त्र में 'समाज' शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थ में किया गया है। यहाँ व्यक्ति-व्यक्ति के बीच पाए जाने वाले सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर निर्मित व्यवस्था को समाज कहा गया है। यहाँ व्यक्तियों के समूह को साधारणतः समाज नहीं माना गया है।

व्यक्ति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्तियों के साथ अन्त क्रिया करते और सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। ये लोग विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों के आधार पर एक-दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं, कुछ क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ करते हैं। यह सब कुछ निश्चित नियमों के अधार पर ही होता है। इनमें कुछ पारस्परिक अपेक्षाएँ सम्मिलित हैं। इन सबसे मिलकर बनने वाली व्यवस्था को ही समाज कहा गया है। मैकाइवर एवं पेज ने समाज को सामाजिक सम्बन्धों के जाल या ताने-बाने के रूप में परिभाषित किया है। अपने सम्बन्धों की इस सदैव परिवर्तित होती रहने वाली जटिल व्यवस्था को ही समाज माना गया।

परिभाषा-

पारसन्स के अनुसार - "समाज को उन मानवीय सम्बन्धों की सम्पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो साधन-साध्य सम्बन्धों के रूप में क्रिया करने से उत्पन्न हुए हों, चाहे वे यथार्थ हों या प्रतीकात्मक ।"१

गिडिंग्स के अनुसार - "समाज स्वयं संघ है, संगठन है, औपचारिक सम्बन्धों का योग है जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक दूसरे के साथ जुड़े हुए या सम्बद्ध हैं।" २

र्‍यूटर के अनुसार - "समाज एक अमूर्त धारणा है जो एक समूह के सदस्यों के बीच पाएँ जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धों की जटिलता (सम्पूर्णता) का बोध कराती है।"३

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सभी विद्वानों समाज की अपने-अपने ढंग से परिभाषाएँ प्रस्तुत की। अतः कहा जा सकता है कि व्यक्ति व्यक्ति के सम्पर्क में आकर जो सम्बन्ध स्थापित करता हैं वह समाज हैं।

समाज के स्वरूप-

आदिकाल से ही भारत विभिन्न धर्मो, मतों, सम्प्रदायों, संस्कृतियों, प्रजातियों की कर्मभूमि रहा है। यहाँ की सामाजिक व्यवस्था और संगठन के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और उन्हें एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। जातिप्रथा, जनजाति, ग्राम व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्त औेर संस्कार भारतीय समाज के प्रमुख आधार हैं।

जनजातीय समाज -

वन्यजाति या जनजाति को आदिम, आदिवासी, वनवासी, गिरीजन तथा अनुसूचित जनजाति आदि नामों से सम्बोधित किया हैं। इन्हें आदिवासी इसलिए कहा है कि वे भारत के प्राचीनतम निवासी हैं। भारत में द्रविड़ों के आने से पूर्व यहाँ ये लोग ही निवास करते थे। वेरियर एल्विन भी इन्हें आदिम जाति के नाम से पुकारते हैं। **आपने लिखा है** - "आदिवासी भारतवर्ष की वास्तविक स्वदेशी उपज हैं जिनकी उपस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति विदेशी है। **ये वे प्राचीन** लोग हैं जिनकी उपस्थिति में अधिकार और दावे हजारों वर्ष पुराने हैं। वे सबसे पहले यहाँ आए। आदिवासियों के मसीहा ठक्कर बापा और भारतीय संविधान निर्मात्री सभा के सदस्य श्री जयपाल सिंह ने भी इन्हें आदिवासी के नाम से संबोधित किया।

(१.२) व्यक्ति -

आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि **'मनुष्य एक** सामाजिक प्राणी है, समाज से बाहर रहने वाला मनुष्य या तो देवता है, या पशु।

Man is a social animal, If a man does not live in the society them surely he is either a God of a beast. (Aristotle)

अरस्तू का यह कथन यह पूर्णतया सत्य है, क्योंकि मनुष्य स्वभावतः तथा आवश्यकतावश समाज में रहता है, दूसरे शब्दों में सामाजिक जीवन नितान्त स्वाभाविक है। मनुष्य समाज में जन्म लेता है, समाज में उसका पालन पोषण होता है, समाज में रहकर ही वह अपने व्यक्तित्व का विकास करता है तथा समाज में ही उसकी मृत्यु होती है। एकांकी जीवन मनुष्य के लिए कठोर दण्ड है। मनुष्य के लिए समाज तथा सामाजिक जीवन उतना ही आवश्यक है जितना कि मछली के लिए पानी। मैकाइवर का यह कथन पूर्ण रूप से सत्य है **"मनुष्य समाज में जन्म लेता है और समाज की आवश्यकता उसमें जन्म लेती है।"** Man is born in society and the need of the society is born in him (maciver)

वास्तव में मनुष्य समाज में जन्म लेता है, समाज में रहकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, अपने व्यक्तित्व का विकास करता है और समाज में ही चिरनिन्द्रा में सो जाता हैं।

बच्चा जब जन्म लेता है, तब वह अपने माता-पिता पर आश्रित रहता हैं। यदि माता-पिता उसका पालन-पोषण उचित ढंग से न करें तो वह जीवित नहीं रह सकता। **डॉ. बेनी प्रसाद** ने ठीक ही लिखा है- **"जब बच्चा पैदा होता है, तब वह कई वर्ष तक अपने** माता-पिता **की सहायता पर निर्भर रहता है। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति उन्हीं के द्वारा होती हैं। इसप्रकार जन्म लेते ही मनुष्य की स्थिति दूसरों पर निर्भर रहती है।"**

मनुष्य बिना भोजन के भी नहीं रह सकता। उसके लिए स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना पढ़ता है, इसलिए यह कहावत सत्य है **" स्वास्थ्य ही सम्पत्ति है"** "Health is wealth"

मानव के विचार-शक्ति निःसन्देह उसके विकास में सहायक रही है, परन्तु साथ ही उसकी विशिष्ट

शारीरिक बनावट का भी उसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। यदि चींटियों और मक्खियों में विवेक विकसित होता तो उससे हमारे उस सुपरिचित मानव, मानव जीवन के विवेक से भिन्न परिणाम निकलते।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समाज की तुलना में व्यक्ति का अधिक महत्व है। व्यक्ति की अनुपस्थिति में समाज का कोई अस्तित्व नहीं है, क्योंकि व्यक्ति ने अपनी ही सुरक्षा के लिए और जान बूझकर समाज का निर्माण किया है। इस प्रकार समाज व्यक्ति द्वारा संचालित एक संगठन मात्र है, जिसकी वास्तविक शक्ति व्यक्ति के हाथों में ही निहित हैं। व्यक्ति की अस्तित्व समाज के विना भी सम्भव है, क्योंकि समाज का निर्माण होने से पहले ही व्यक्ति अपने अधिकारों, सम्पत्ति के विकासं के लिए यह आवश्यक है कि **"व्यक्ति को अधिक से अधिक स्वतंत्रता दी जाए। व्यक्ति पर अधिक नियन्त्रण होने से उसका विकास रूक जाएगा, जो अन्त में समाज के विकास में ही घातक होगा।"**

(१.३) सामाजिक चेतना - अर्थ एवं स्वरुप

मानव स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी हैं। वह समाज में रहता ही नहीं बल्कि उसका ज्ञान भी प्राप्त करता है। ठीक वैसे ही जैसे वह प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करता है। समाज का सज्ञान मनुष्यों द्वारा उनके निकटतम सामाजिक वातावरण का बोध भर ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण सामाजिक जीवन की छानबीन है। मानव समाज एक पेचीदा वस्तु है जो मनुष्य और प्रकृति की ओर मनुष्यों में एक दूसरे की पारस्परिक क्रिया से उत्पन्न होती है। समाज के विषय में ज्ञान अर्जित करने का अर्थ है- मनुष्यों उनके सामाजिक क्रियाकलापों तथा पारस्परिक सम्बन्धों का ज्ञान। संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक संज्ञान मानव समाज की समस्त विविधता में उसका संज्ञान है।

'सामाजिक चेतना' का अर्थ- 'सामाजिक चेतना' शब्द का प्रत्यक्ष सम्बन्ध 'जागरूकता' से है इसे समूह के प्रति 'जागरुकता' अथवा समानता के प्रति 'जागरुकता' भी कहते है। तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति अपने समूह के हितों के प्रति जागरुक रहता है, उसके कार्यो को सरल बनाने की भरसक चेष्टा करता है तथा सामान्य हितों की दृष्टि में रखते हुए अपने कार्य करता है, तभी वह व्यक्ति 'सामाजिक' कहलाता है। जन्म के समय से ही व्यक्ति न तो सामाजिक होता है और न ही समाज विरोधी, बल्कि केवल उसमें ऐसी क्षमता होती है कि वह सामाजिक बन सके अर्थात् जैसे-जैसे वह अपनी परिस्थितियों से अनुकूलन करके समाज का हित करने का प्रयत्न करता है, वह अधिक सामाजिक होता जाता है।

किसी भी सामाजिक संरचना का अनिवार्य अंग सामाजिक चेतना होती है। ऐतिहासिक दृष्टि से, मानव किन-किन सामाजिक संरचनाओं को जन्म देता रहा तथा उनसे प्रभावित होता रहा। इसका अध्ययन सामाजिक चेतना का अभिन्न अंग है। सामाजिक चेतना का दूसरा पक्ष समाज का ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् उसके विषय में लिखा गया साहित्य है जिसे बौद्धिक उत्पादन भी कहा जा सकता है। सामाजिक चेतना इस दृष्टि से वर्तमान, भूतकालीन, सर्व भविष्य के समाज की चेतना से जुड़ी है।

'सामाजिक चेतना' के स्वरूप- जहाँ प्रकृति के नियमों की अभिव्यक्ति अन्धी, स्वतः स्फूर्त शक्तियों की परस्पर क्रिया

में होती है, वहाँ सामाजिक विकास के नियम केवल मानवों के कार्य कलाप के जरिए व्यक्त होते हैं। ऐसी हालत में अगर इतिहास के नियम मन और इच्छा युक्त प्राणियों द्वारा सम्पन्न होते हैं। इतिहास की गति का सही बोध एक नहीं हो सकता जब तक विचारों और आकांक्षाओं, भावों और चिंतन, अधिनियमों और मूल्यों यानि संक्षेप में उन तमाम बौद्धिक तत्वों को जिनसे मनुष्य अपने सारे जीवन और कार्यकलाप में निवेशित होते हैं, उन्हें नजर अन्दाज न कर दिया जाए।

सामाजिक चेतना सर्वप्रथम प्राकृतिक तथा सामाजिक यथार्थ का ही प्रतिविम्ब है। इसकी उत्पत्ति अनिवार्यतः हुई, क्योंकि इसके बिना श्रम, प्रकृति के तत्वों का उद्‌देश्यपूर्ण रूपांतरण तथा उद्‌देश्य पूर्ण कार्य कलाप आमतौर से असम्भव ही होता है। सामाजिक चेतना के क्षेत्र में कार्यकलाप - बौद्धिक उत्पादन, विचारों, सिद्धान्तों, धारणाओं तथा कलात्मक-कल्पना, इत्यादि का 'उत्पादन' है, परन्तु जो चीज एक और कार्यकलाप के रूप में प्रकट होती है, उसकी अभिव्यक्ति दूसरी और अस्तित्व के रूप में वस्तु-रूप में ही होती है। इसी प्रकार बौद्धिक कार्यकलाप के नतीजे भाषा, पुस्तकों, प्रविधि, इमारतों, कला की कृतियाँ तथा अन्य चीजों में भी भौतिक रूप धारण करते हैं।

समाज का बौद्धिक जीवन केवल विचारों का उत्पादन नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का अमल, यानि व्यक्तिगत चेतना से इसकी परस्पर क्रिया भी है। इसमें विभिन्न सामाजिक समूहों और वर्गो के बीच सैद्धान्तिक संघर्ष, विचारों तथा दृष्टिकोणों का विकास भी शामिल हैं।

सामाजिक चेतना एक ऐसी परिघटना है, जो बहुरूपी है और जिसमें ऐतिहासिक परिवर्तन होता है तथा इसके तीन मुख्य पहलू मिलते है- ऐतिहासिक औत्पत्तिक, संज्ञान शास्त्रीय और समाज शास्त्रीय।

प्रथम पहलू सामाजिक विकास की ऐतिहासिक मंजिलों के प्रसंग में इसके इतिहास का अध्ययन है जैसा कि मार्क्स ने कहा है कि बौद्धिक और भौतिक उत्पादन के सम्बन्ध के विश्लेषण के लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि स्वयं भौतिक उत्पादन पर एक निश्चित ऐतिहासिक रूप में विचार किया जाए।

"अगर स्वयं भौतिक उत्पादन को उसके विशेष ऐतिहासिक रूप में नहीं लिया जाए तो यह समझना असम्भव है कि बौद्धिक उत्पादन में उसके अनुरुप क्या विशिष्टताएँ है और एक का दूसरे पर पारस्परिक असर क्या पड़ता है।"

आदिम सामुदायिक संरचना में विचारों, धारणाओं तथा चेतना का उत्पादन प्रारम्भ में भौतिक कार्य कलाप से प्रत्यक्ष रूप में सम्बद्ध था। उस समय के व्यक्ति के लिए सामाजिक चेतना और समूह-गण कबीले की चेतना एक थी।

(१.४) सामाजिक चेतना और साहित्य

साहित्य- मानव स्वभाव से ही एक क्रियाशील प्राणी है। वह कुछ न कुछ करने और अज्ञात को जानने का इच्छुक रहता है। अपने मन में उठने वाले भावों को वह बिना प्रकट कि नहीं रह सकता। यही मन में उठने वाले भाव जब लेखनीवद्ध होकर भाषा के रूप में प्रकट होते हैं तो यही ज्ञानवर्धक अभिव्यक्ति साहित्य कहलाती है। विद्वानों ने साहित्य की अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं-

डॉ० श्यामसुन्दर दास के अनुसार - **"सामाजिक मस्तिष्क अपने पोषण के लिए जो भाव सामग्री निकालकर समाज को सौंपता है उसके संचित भण्डार का नाम साहित्य है।"**

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के अनुसार -**"ज्ञान राशि के संचित कोष का नाम ही साहित्य है।**

सामाजिक चेतना और साहित्य-

सभी कलाओं का केन्द्र मानव जीवन है। साहित्य के लिए भी यह मान्यता पूर्णतः सत्य है। साहित्य मानव संस्कृति का एक अविभाज्य अंग है। अतः साहित्य सामाजिक चेतना का भी एक अत्यन्त अनिवार्य तत्व है। बल्कि यह कहना अत्युक्ति न होगा कि साहित्य और समाज का परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध है। किसी देशकाल की संस्कृति की झलक तत्कालीन एवं तदद्देशीय प्रणीत साहित्य में स्पष्ट देखी जा सकती। इसी से साहित्य को समाज का दर्पण या प्रतिविम्ब कहा गया है। समाज के उत्थान पतन में साहित्य का अत्यधिक योगदान रहता है। इस बात का साक्षी न केवल भारतीय प्रत्युत विश्व का साहित्य है। देश में चेतना की चिन्गारी फूंक पर कान्ति की अग्नि प्रज्वलित करने का कार्य उस देश काल के साहित्य एवं साहित्यकारों ने ही किया है। फ्रांसीसी एवं रुसी क्रान्ति इसके उदाहरण हैं। हिन्दी के उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द ने साहित्य की प्रवृत्ति को सामाजिक कहा है। **उनके अनुसार - "साहित्य की प्रवृत्ति अहंवाद या व्यक्तिवाद तक परिमित नहीं रही, बल्कि वह मनोवैज्ञानिक और सामाजिक होती है। अब वह व्यक्ति को समाज से अलग नहीं देखती, उसे समाज के एक अंग के रूप में देखती है, इसलिए नहीं कि वह समाज पर हुकूमत करे, उसे अपने स्वार्थ-साधन का औजार बनाए, मानो उसमें और समाज में सनातन शत्रुत्व है, बल्कि इसलिए कि समाज के अस्तित्व के साथ उसका अस्तित्व कायम है और समाज से अलग होकर उसका मूल्य शून्य के बराबर हो जाता है।"**

निःसंदेह उनका यह अभिमत बड़ा ही अर्थसूचक है। साहित्यकार यदि सामाजिक है तो उसकी कृति भी सामाजिक होने को बाध है। साहित्य हमारे जीवन का, मानव जीवन का यथार्थ एवं जीवन्त इतिहास ही है, जिसमें तिथियों के अतिरिक्त सबकुछ सत्य होता है। निःसंदेह एक साहित्य विधा के रूप में उपन्यास मानव जीवन के निकटतम होने से समाज जीवन को अधिक यथार्थता स प्रस्तुत करता है।

यद्यपि समाज अपने आप में मनुष्यों की पूर्ण या समान व्यवस्था का बोधक है, तथापि उस व्यवस्था की पूर्णता राजनीति के कारण ही सम्भव है। समाज का सुचारू संचालन करने के लिए सामाजिक नीति नियमों को दृढ़ीभूत करने का कार्य राजनीति का होता है। देश कालानुसार राजनीतिक नियमों में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। यद्यपि सामाजिक नियमों के आधार पर राजनैतिक नियमों का निर्माण होता है, तथापि सामाजिक नियम उतने बन्धनकर्ता नहीं होते, जितने राजनैतिक नियम होते हैं। जाति या समाज का अपराध राजनीतिक दृष्टि से एकपात्र है ही, किन्तु सामाजिक व्यवस्था के कर्णधार उसे क्षमापात्र भी ठहरा सकते हैं। सामाजिक प्रगति में बाधक कार्य राजनीति की दृष्टि में अपराध हैं। अतः ऐसा दुष्कार्य करने वाला व्यक्ति निःसंदेह दण्डपात्र है। साथ ही सामाजिक परिवर्तन में राजनीतिक क्रान्तियों का योग भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। सन् १८७६ की फ्रांस की राज्य क्रान्ति तथा सन् १६०५ की रूसी लाल क्रान्ति ने वहाँ की प्रजा

के सामाजिक परिवर्तनों में दूरोगामी प्रभाव डाला था। यह और बात है कि ये क्रान्तियाँ रूसी, वाल्टेयर, गोर्की आदि जनप्रिय उपन्यासकारों की रचनाओं का ही परिणाम थी। देश के विशाल मानव समाज की सम्मति के बिना कोई भी राज्य व्यवस्था अस्वीकृत एवं अप्रभावपूर्ण ही रहती हैं। विदेशी राजनीतिक पद्धति विशाल भारतीय जनता की परम्परागत मान्यताओं के प्रतिकूल होने पर उनके अत्याचारों से आतंकित प्रज्ञा ने उनका मूक असहयोग ही किया था। इसी कारण विदेशी शासन व्यवस्था कोई स्थाई राजनीतिक प्रभाव डालने में असफल रही थी। अतः इन शासकों को अपने पुरोगामियों द्वारा प्रचलित की हुई जन प्रिय राजनीतिक पद्धति को ही मान्य रखना पड़ा था। आज भी चुनावों द्वारा जनता का मत मान्य रखा जाता है। राजनैतिक नेताओं द्वारा कानून की सहायता से किए गए सामाजिक सुधार उनके पक्ष या विपक्ष में गम्भीर आन्दोलनों का रूप ग्रहण करते हैं। विज्ञान के नित नए आविष्कारों ने विश्व के मानवों को एक समाज के रूप में निकट ला दिया है। आज किसी भी देश की राजनैतिक समस्याओं का प्रभाव अन्य देशों पर भी शीघ्रता से पड़ सकता है। इस प्रकार समाज और राजनीति का यह अटूट सम्बन्ध जागरुक साहित्यकार की उपेक्षा का विषय नहीं बन सकता ।

धर्म एवं संस्कृति प्रगतिशील समाज का अभिन्न अंग है। वास्तव में धर्म श्रद्धा का विषय है। विज्ञान धर्म के उसी स्वरूप में विश्वास करता है जिसमें सत्य की सत्ता है। धर्म के उस अंश या स्वरूप से सत्यान्वेषी, सत्याधार एवं सत्य स्वरूप विज्ञान का कोई सम्बन्ध नहीं जो केवल कपोल कल्पना या अतिवादी आडम्बरों पर आधारित है। वास्तव में मूलतः सभी धर्मों की भावना में समता और एकता है। साथ ही सभी धर्मो का साध्य लोक-कल्याण है, किन्तु उसे सिद्ध करने के साधन भिन्न-भिन्न है। साधनों की विषमता से समाज में उत्पन्न अनेक वर्गगत भेदभाव ही सामाजिक संघर्ष का मूल कारण है। विभिन्न देशों कालों के संघर्षों क्रान्तियों का कारण भी जाति, वर्ग और धर्मगत भाव वैषम्य ही है। जिस देश काल में धर्म के नाम पर जितने आडम्बर एवं पाखंड प्रवर्तमान है, वह देश और उसका जन समाज उतना ही पिछड़ा हुआ है अर्थात् उस देश काल की सामाजिक चेतना उतनी ही पंगु है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि हमने समाज का विभिन्न विषयों के सम्बन्ध में सिंहावलोकन किया, किन्तु समाज का सच्चा चित्र हमें उस युग-विशेष एवं देश विशेष के साहित्य में दिखाई देता है, इसलिए साहित्य को प्रभावित होता है और तदनुरूप समाज का दर्पण कहा गया है। सामाजिक प्रवृत्तियों में साहित्यकार साहित्य का निर्माण करता है। अतः हमें साहित्य में समाज के विभिन्न पहलुओं के स्पष्ट दर्शन होते हैं। युगीन समाज की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि विभिन्न परिस्थितियों के यथार्थ दर्शन हमें तत्कालीन साहित्य से प्राप्त होते हैं। परिवर्तित होने वाली सामाजिक प्रवृत्तियों के अनुसार साहित्य जगत में भी शनैः शनैः परिवर्तन होता रहता है। हमारा प्राचीन साहित्य, जो विशेष रूप से पद्य में निर्मित है, आदर्शवादी अधिक हैं। वर्तमान सर्वतोमुखी विकास के वैज्ञानिक युग में गद्य का भी सम्पूर्ण विकास हुआ है। अतः समाज का दिग्दर्शन वर्तमान साहित्य में हुआ है।

संदर्भ संकेत

१. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ०प्र० लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो. एम० एल० गुप्ता एवं डॉ० डी.डी. शर्मा, पृष्ठ सं० २६

२. वही „ २६

३. वही „ २६

- संदर्भ संकेत

अध्याय - २

भीष्म साहनी का जीवन परिचय

२.१ - जन्म स्थान एवं शैशव

२.२ - परिवार

२.३ - विवाह

२.४ - शिक्षा

२.५ - व्यवसाय

२.६ - साहित्य सृजन प्रेरणा

२.७ - व्यक्तित्व के विविध आयाम

(अ) खिलाड़ी

(ब) अभिनेता

(स) राजनेता

(द) व्यापारी के रुप में

२.८ - जीवन दर्शन

(अ) आदर्शवाद

(ब) सादगी

(स) सहनशीलता

(द) सेवाभाव

(२.१) जन्म स्थान एवं शैशव -

भीष्म साहनी की जन्मतिथि के विषय में मतभेद है। उनके माता-पिता भी उनके जन्म के विषय में एक राय नहीं थे। उन्होंने कहा कि मेरी माँ का कहना है कि मैं अपने बड़े भाई बलराज से एक साल, ग्यारहं महीने छोटा था, जबकि पिताजी ने स्कूल में मेरी जन्म की तारीख ८ अगस्त, १६१५ लिखवा दी थी, जो बलराज साहनी से कुछ महीने छोटा बताती है। पिताजी अपने पास एक रजिस्टर रखते थे, जिसमें वह जन्म, ब्याह-शादी, जात-विरादरी में लेन-देन के ब्योरे दर्ज किया करते थे। उनकी जन्म की तारीख इस रजिस्टर में कहीं भी नहीं है।

भीष्म साहनी ने स्वयं कहा कि जब बचपन में हम भाईयों की लड़ाई होती, तब बलराज ने कहा - कि तू तो मेरा भाई नहीं है, तुझे तो मेरे पिताजी 'घूरे' से उठा लाए हैं। मैं गोरा हूँ, तू कालटू है, मैं तगड़ा हूँ, तू मरियल है, मुझे सन्ध्या के सभी मन्त्र याद हैं, तुझे कुछ भी याद नहीं हैं। जब भी उनके जन्म की चर्चा होती, तब माताजी उँगलियों के पपोटों पर दिन-महीने गिनाकर हिसाब लगाने लगती हैं।

बात सन् १६१५ की है। रावलपिंडी पश्चिमी भारत का मशहूर शहर था, जो अब वर्तमान में पाकिस्तान में है। रावलपिंडी शहर में साहनी अपने परिवार के साथ रहते थे। उनका परिवार पेशे से व्यापारी था। वे कट्टर आर्य समाजी थे, लेकिन वे समाज सुधारक माने जाते थे। समाज सुधार में उनकी गहरी दिलचस्पी थी। उन्हीं के घर ८ अगस्त, १६१५ को भीष्म साहनी का जन्म हुआ। उस समय उनके परिवेश का चित्रण इस प्रकार है -

"उन दिनों घर के माहौल में कट्टरता आर्य समाजी थी बेशक, लेकिन उग्र कट्टरता नहीं थी। पिताजी कट्टर आर्य समाजी थे, पर समाज सुधार में गहरी दिलचस्पी रखते थे। आर्य समाज द्वारा संचालित अस्पताल, वनिता आश्रम, स्कूल-कालिज आदि में सक्रिय रुप से काम करते थे, जिसका असर अच्छा हुआ कि हम समाजोन्मुख हुए। आर्य समाज का आंदोलन उन दिनों जहाँ हिन्दू संगठन चाहता था, वहाँ हिंदू समाज से अनेक कुरीतियों का विरोध भी करता था, जैसे - बाल-विवाह, छुआछूत, जात-पाँत और विधवा विवाह, अछूतोद्धार, स्त्री शिक्षा आदि का समर्थन करता था। मूर्ति पूजन का खंडन करता था। उसके अतिरिक्त पिताजी की दृष्टि मध्यवर्ग के पढ़े-लिखे व्यापारी की दृष्टि थी जो अध्यवसायी भी है और भौतिक दृष्टि से आगे भी बढ़ना चाहते हैं और जो यह समझता है कि उसके बच्चों का भविष्य आधुनिक शिक्षा के सहारे अधिक उज्जवल हो पाएगा । कुल मिलाकर उनका दृष्टिकोण उदारवादी अधिक और कट्टरपंथी कम था।"१

इनके पिता का नाम हरवंशलाल और माता का नाम लक्ष्मीदेवी है। प्रसिद्ध सिने अभिनेता बलराज साहनी इनके बड़े भाई हैं। अनेक संस्कारों से युक्त भीष्मजी का जीवन फूला फला है।

भीष्म जी बचपन में बहुत घुमक्कड़ थे। उनके घर के सामने से जो ताँगा निकलता, वे ताँगे के पीछे पायदान पर खड़े हो जाते और दूर निकल जाते थे, जिससे पिताजी परेशान हो जाते है। उनके पिताजी ने उनके गले में पीतल का एक गोल बिल्ला सा लटका दिया था, जिसमें उनके घर का पूरा पता लिखा था। अगर वे कहीं भी खो जाते, तो कोई भी मुसाफिर उस पते को पढ़कर उन्हें घर पर छोड़ जाता है।

व्यक्ति का बचपन लड़कपन में शरारत करने में अँगड़ाई लेते-लेते गुजर जाता है, लेकिन भीष्म जी का बचपन ऐसा नहीं था। **स्वयं उन्होंने अपने बचपन के बारे में कहा है- "बचपन का माहौल अंधेरी गुफा जैसा लगता है। मैं अक्सर बीमार रहता था और उस खेल-कूद से वंचित था, जो बचपन का अधिकार है। खाट पर पड़ा सरकती धूप को देखता रहता, गली में गुजरते फकीरों, भिखमंगों, खोमचे वालों की आवाजें सुनता रहता।"२** शायद इसी एकाकीपन के कारण वे लेखक बने। मन की अन्तः चेतना में छिपी अभिव्यक्ति साहित्य के रुप में प्रकट हुई।

भीष्मजी के पिता कट्टर आर्य समाजी थे। स्वाभाविक है कि इसी वातावरण का उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। मुसलमान बच्चे उनकी दृष्टि में 'म्लेच्छ' समझे जाते थे। बचपन और धर्म भेद यह उनकी कल्पना के बाहर की बातें थीं। **उन्होंने स्वयं ही कहा है -**

"बचपन में मनुष्य विरोधाभासों को देखता और समझता है। अब सोचता हूँ कि यह विरोधाभास बहुत ही भयानक था कि बचपन में ही मन में रेखाएँ खिंच जाएँ कि तुम 'हिन्दू' हो वह 'मुसलमान' है, मैं आर्य हूँ, वह म्लेच्छ है।"३

भीष्म जी ने बचपन से देखा है, भोगा है, उसे अपने साहित्य में अंकित किया है। संस्कार और अनुभवों का यथार्थ चित्रण उन्होंने अपने साहित्य में किया है। अपनी रुढ़ि परम्परा का, अपने माता-पिता के विचारों का उन्होंने विरोध भी किया है। उनके बंधनों को तोड़कर वे मुसलमानों के बच्चों के साथ मित्रता करते या खेलते थे और उनके बचपन के दोस्त तो खासकर गरीब लड़के ही हुआ करते थे। **उन्होंने अपने दर्द भरे बचपन में कहा है "मेरे बचपन ने मुझे और दिया हो या नहीं दिया हो, पर थोड़ा दर्द जरुर दिया है। धनी परिवारों के बच्चों का जैसा** तिरतासा बचपन मेरा नहीं था।"४

(२.२) परिवार -

व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करने वाला एक सशक्त घटक होता है, उसका परिवार। पारिवारिक जीवन अनेक संस्कारों से युक्त होता है। भीष्म जी ने अपने पारिवारिक जीवन के बारे में लिखा है-**"पिताजी ने जिन्दगी गरीबी में शुरु की। वह आशावादी, पुरुषार्थ-प्रेमी आर्यसमाजियों में थे, जो उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण की उपज माने जाते हैं। उन्हें विश्वास था कि मनुष्य का चरित्र अच्छा हो, वह कर्मशील हो तो अपने भाग्य का निर्माण स्वयं कर सकता है। घर के अन्दर संध्या के मंत्र गूँजते थे। ईश्वर स्तुति के भजन गूँजते थे। घर के सदाचार के भी नियम थे।**

सादापन जीवन, सजावट मृत्यु है।
सदाचार जीवन, दुराचार मृत्यु है।"५

"पिताजी पुरुषार्थ व सादापन में विश्वास रखते थे। जिसका मतलब यह था कि प्रभातवेला में उठ जाओ, अगर नहीं उठोगे तो मुँह पर ठंडे पानी के छींटे पड़ेंगे। फिर घूमने जाओ। पिताजी के

पीछे-पीछे पर अक्सर पिताजी आगे निकल जाते और हम दोनों भाई बतियाते, पाँव घसीटते, दूर पीछे रह जाते। पुरुषार्थ की मद में सर्दी-गर्मी ठंडे पानी से स्नान भी आता था, सिर पर नाचती चुटिया भी, और क़रीब-क़रीब घुटे हुए सिर पर लगाने के लिए सरसों का तेल भी।"६ पिताजी की आज्ञा का कठोरता से पालन करना पड़ता था।

उनकी माँ का नाम लक्ष्मी देवी था। इनकी माता साक्षात् नाम की तरह लक्ष्मी ही थी। वह धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं तथा सत्संग में ज़ाती थीं। वह सेवा, प्रेम और त्याग की साक्षात् मूर्ति थीं। उनकी वात्सल्य और ममतामयी गोद में भीष्म जी का बचपन फूला फला। उनके जन्म से पूर्व उनकी तीन बहनें स्वर्ग सिधार चुकी थीं। उनके बचपन में एक बहन और जब वे कॉलेज में पढ़ते थे तो पाँचवी बहन ने भी विदा ले ली। उनकी छोटी बहन कम बोलती थी पर बड़ी बहन होशियार थी। उनकी बड़ी बहन बड़ी हँसमुख तथा प्यार दुलार करने वाली थी। भीष्म जी से पूर्व बलराज जी का जन्म हो चुका था। बलराज साहनी आगे चलकर सिने जगत् के विख्यात कलाकार हुए। घर में केवल दो भाई थे। उन्हें सिखाया गया था कि दोनों को राम लक्ष्मण जैसा रहना चाहिए। **उन्होंने कहा है- "घर में सबसे छोटा होने के कारण सभी हुक्म मुझ तक पहुँचते थे। बड़े भाई के साथ कदम मिलाकर नहीं चलते पीछे-पीछे चलते हैं। जैसे राम लक्ष्मण चला करते थे।"७**

भीष्म जी का जब जन्म हुआ, परिवार की स्थिति हरी-भरी थीं। माता-पिता के साथ-साथ बलराज जैसे भाई का साथ भी मिला। यद्यपि आगे चलकर भीष्म जी ने कभी बलराज जी का सहारा लेना उचित नहीं समझा और स्वयं अपने बलबूते पर फले-फूले और पल्लवित हुए। पिताजी की सामाजिक स्थिति अच्छी थी। रावलपिंडी में उन्हें सम्मान से देखा जाता था। उनके पिताजी की जीवनचर्या दो भागों में बँटी हुई थी। पहला व्यापार जो परिवार के लिए जीविकोपार्जन का साधन था और उसके बाद जो समय शेष बचता, वह आर्य समाज के कार्यों में व्यतीत होता। इससे एक बात तो तय थी कि उनके पिताजी समाजोन्मुख थे। समाज की बुराईयों को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए पूरी तन्मयता से कार्य करते। यद्यपि उनका कार्य क्षेत्र हिन्दू धर्म तक ही सीमिंत था। फिर भी ये कार्य बलराज और भीष्म जी के संस्कार बनते गए और मस्तिष्क में अमिट प्रभाव छोड़ते गए। शायद यही वजह है कि भीष्म जी का समूचा लेखन पूँजीवाद, सामंतवाद और शोषणवाद के विरुद्ध प्रतिपक्ष के रुप में खड़ा है।

(२.३) विवाह -

व्यक्ति कितना ही सुशील, सभ्य और शालीन हो, परन्तु किसी न किसी स्तर पर विरोध के लिए उसे भी खड़ा होना पड़ता है। उनके पिताजी ने उनकी सगाई अपने एक मित्र की लड़की से कर दी। लड़की पढ़ी-लिखी बिल्कुल नहीं थी। उन्होंने विरोध किया और अपने तर्क प्रस्तुत किये, पिताजी मान गए। शीलाजी उनके जीवन में जीवन-संगिनी बनकर कैसे आई, इस अतीत को उन्हीं के शब्दों में कुछ इस प्रकार हुआ कि भीष्म जी से पहली बार आमने-सामने होने के संदर्भ में बताते हुए शीला जी कहती हैं कि रावलपिंडी में मेरे पिताजी पुलिस में थे। एकबार भीष्मजी के **'भूतगाड़ी'** नामक नाटक को दिखाने ले गए। इसी नाटक में भीष्म जी को मैंने पहली बार देखा। यह नाटक मुझे काफी अच्छा लगा।

इसमें भीष्म जी ने अभिनय भी अच्छा किया था।

शीलाजी रावलपिंडी में डी.ए.वी. कॉलेज में बी.ए. (तृतीय वर्ष) की छात्रा थी। वहीं अंग्रेजी की क्लास में पढ़ाते हुए उनसे पहली मुलाकात हुई। उन्होंने शीलाजी को बहुत अच्छा पढ़ाया था। अंग्रेजी के नाटक का पहले उन्होंने सारांश बता दिया, फिर रोचक ढंग से नाटक पढ़ाया। इससे शीलाजी काफी प्रभावित हुई।

भीष्मजी शीला के बारे में बताते हैं - 'मैं तुम्हें देख तो लिया करता था। क्लास में बेंच पर बैठी अकेली ऐसी लड़की जिसके पाँव जमीन पर नहीं लगते थे।"८ (शीला कद में छोटी थी।)

शीलाजी जब दर्शनशास्त्र में एम.ए. की परीक्षा दे रही थीं, तब उसके १५ दिन बाद अर्थात् सन् १९४४ में भीष्म जी का विवाह शीलाजी से हुआ। इन दोनों में विवाह के पहले कोई रोमांस नहीं था, लेकिन **भीष्मजी ने कहा है** -

"विवाह से पहले हमारे बीच कोई रोमांस रहा हो, कोई प्रेमालाप, कोई चिट्ठी-पत्री, ऐसा कुछ भी नहीं रहा और अब अफसोस करता हूँ कि क्यों नहीं हुआ। रोमांस का मौका नाके तक तो दो-एक बार पहुँचता रहा, पर आगे नहीं बढ़ पाया।"९

शीलाजी ने विवाह के बाद भीष्मजी से कहा कि तुमने मुझे विवाह के पहले एक भी खत नहीं लिखे। हम लोग कम से कम एक दूसरे से मिल तो सकते थे। उन्होंने अपनी सफाई में कहा है - **"तुमसे क्या बात करता, मुझे दूर से ही आता देखकर तुम्हारा चेहरा लाल हो जाता था, पलकें ऊपर ही नहीं उठती थीं। तुमसे क्या बात करता।"१०**

शीला ने कहा कि मैं ऐसे आदमी से विवाह करना चाहती थी - **"जो हँसता-चहकता, मेरे साथ लाड़-प्यार करता, कुछ चुलबुला होता, हम एक साथ भागते-दौड़ते, घूमते-फिरते। इसका मुँह तो पहले दिन से ही लटक रहा है।"११**

भीष्म जी शीला जी से बहुत प्रेम करते थे। वे उनकी एक छोटी तस्वीर अपने बटुए में रखते थे। वे उस तस्वीर को कई बार देखते थे। उस तस्वीर को देखकर, वे अपने मन में विचार करते हैं - **"स्त्री की मुस्कुराहट उसके होठों के कोनों में छिपी रहती है, और मैं उस दबी मुस्कुराहट को ही देख पाने के लिए बार-बार उस चित्र को बटुए में से निकाल लिया करता था।"१२**

भीष्म जी को ऐसी अन्तःप्रेरणा हुई कि लाहौर जाया जाए। वह भी पुस्तकालय में और १२ बजे। जब वे पुस्तकालय में पहुँचे, तब वे क्या देखते हैं कि शीलाजी कई किताबें लिए आ रही हैं। उन्होंने सोचा कि वह मुझसे मिलने आएगी, शीलाजी ने सोचा कि भीष्म जी मुझसे मिलने आएँगे, लेकिन शीलाजी जा चुकी थी। उस समय वे बहुत पछताएँ। वे संकोची स्वभाव के थे। वे अपनी पत्नी को कभी भी अकेले घुमाने नहीं ले गए। अगर उनकी भानजी ने कह दिया कि मामाजी मैं भी साथ चलूँगी, तो वे मना नहीं कर सकते थे।

भीष्म जी गर्मी के मौसम में शीलाजी को श्रीनगर घुमाने के लिए ले गए। **"काश्मीर तो बना ही सैर-सपाटे के लिए है। हनीमून मनाने के लिए काश्मीर से बेहतर सैरगाह कौन सी होगी?"१३**

शीला और भीष्म जी दोनों ही खुली विचारधारा के थे। उन्हें रसोई में काम करना बहुत अच्छा लगता था।

एकबार शीलाजी ने अपने पति से कहा- **"भीष्म ! थोड़ा आटा गूंथ दो।" मैंने देखा, कोई प्रतिवाद किए बिना 'अच्छा शीला' कहकर भीष्म जी रसोई में चले गए।"**१४ शीला और भीष्मजी वास्तव में एक दूसरे के लिए बने थे। एक यदि भावावेग में बहने लगता तो दूसरा उसे विचार और व्यवहार से संतुलित कर देता था। हर सफल इंसान के पीछे किसी स्त्री का हाथ होता है। **उन्होंने स्वयं कहा कि - "इसका मुझे खेद है, क्योंकि वह बड़ी संवेदनशील, सूझ-बूझ वाली महिला थी। मेरे कार्यकलाप में उसने पूरा सहयोग दिया बल्कि अपनी महत्वाकांक्षाओं की आहुति दी। इसमें संदेह नहीं और इसके लिए मेरा रोम-रोम कृतज्ञ है।"**१५

शीलाजी अपने पति के बारे में बताती हैं - "पति के रुप में मेरी भीष्मजी के खिलाफ कोई शिकायत नहीं। भीष्मजी बहुत ही अच्छे पति हैं, बहुत ही considerate, गुस्सा उन्हें कभी नहीं आता और कोई बात इन्हें खिझाती नहीं। उनमें सहनशीलता बहुत ज्यादा है। उनकी Sence of humar बहुत ही बढ़िया है। इनमें काम करने की बहुत ज्यादा capacity है। घंटों काम करते रहते हैं।"१६

(२.४) शिक्षा -

भीष्म साहनी की प्रारंभिक शिक्षा गुरुकुल पोठोहार में हुई। उस समय गुरुकुल की परंपरा जोरों पर थी। गुरुकुल में भीष्मजी को हिंदी और संस्कृत का ज्ञान प्राप्त हुआ, जो अध्यापक घर पर पढ़ाने आते थे, वह भी हिंदी और संस्कृत ही पढ़ाया करते। स्कूल में शिक्षा का माध्यम उर्दू था। शायद यही वजह रही है कि उनके लेखन में उर्दू का प्रभाव काफी दिखाई देता है, परंतु घर पर पंजाबी, हिंदी और संस्कृत का माहौल था। उनको बचपन से पंजाबी, हिंदी, उर्दू और संस्कृत का सान्निध्य प्राप्त हुआ। इन भाषाओं के माध्यम से उन्होंने शुरु से विविध भाषाओं के साहित्य को जाना, परखा और आत्मसात किया।

भीष्मजी बचपन में बहुत खेलते व गालियाँ भी सीखते थे। उनको आबारा और बड़े भाई बलराज को शरीफ कहा जाता था। तब उन्होंने कुसंगति को छोड़कर पढ़ाई लिखाई में अधिक ध्यान दिया। उन्होंने अपनी पढ़ाई के संबंध में कहा है - **"मैं पढ़ाई में अच्छा था, हालाँकि उत्कृष्ट नहीं था। आठवीं जमात में जिले में चौथी नम्बर पर आया, जिसके लिए मुझे मैडल मिला। हमारे नगर में साल में एक बार घोड़ों की मंडी लगती थी, जिसमें फौज के लिए अच्छे नस्ल के घोड़े खरीदे जाते थे। अच्छे पले हुए घोड़ों को इनाम दिया जाता था। हुजूर डिप्टी कमिश्नर इनाम देते थे। ऐसे ही एक समारोह में मुझे एक मैडल से विभूषित किया गया। अंग्रेज बहादुर साहिब ने एक बढ़िया खच्चर के गले में मैडल डाला फिर मेरे गले में।"**१७

घर पर पिताजी और माताजी से ज्यादा ध्यान बलराज जी का भीष्मजी की पढ़ाई पर था। बलराज जी कभी-कभी भीष्म का और उनके दोस्तों का घर पर ही इम्तहान लिया करते। वाकायदा पेपर तैयार करते और परीक्षार्थियों की तरह सभी को बैठाकर पेपर देते। सभी लड़के उसी तरह उत्तर पुस्तिका में उत्तर लिखते जैसे परीक्षा हाल में छात्र परीक्षा देते हैं। उत्तर पुस्तिकाएँ जाँची जातीं, नंबर दिए जाते और परिणाम घोषित किया जाता। यह हम लोगों का खेल का खेल होता और पढ़ाई की पढ़ाई। उनकी शिक्षा बचपन से ही अच्छी रही। प्यार की जगह प्यार था, दुलार की जगह

दुलार था, परन्तु जहाँ विकास की बात थी, वहाँ कोई समझौता नहीं था, पढ़ाई का मतलब पढ़ाई थी। उसका स्थान खेलकूद, प्यार और पुचकार से सर्वोपरि था।

उन्होंने मॅट्रिकुलेशन और इंटरमीडिएट की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। वे १९३३ में बी.ए. करने के लिए लाहौर चले गए। सन् १९३७ में उन्होंने गवर्नमेंट कॉलेज (लाहौर) से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने सन् १९५८ में पंजाब विश्वविद्यालय (चंडीगढ़) से पी-एच.डी. की उपाधि हासिल की ।

उन्होंने जब एम.ए. कर लिया, तब वे पिताजी के साथ व्यापार करने लगे । जब वे विद्यार्थी के रूप में अध्ययनरत थे, तब देश में चारों तरफ स्वतंत्रता की मांग हो रही थी । बाहर जुलूस निकल रहे थे । गाँधीजी की आवाज़ पर लाखों लोग घर-बार छोड़कर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग ले रहे थे ।

उन्होंने कहा - "मैं स्कूल में था, जब भगतसिंह और उनके साथी फाँसी पर झूल गए थे। जितेनदास ने ६३ दिन की भूख-हड़ताल के बाद दम तोड़ दिया था। इन्हीं दिनों जेल के सीखचों के पीछे से एक कवि की आवाज़ सुनाई दी -

हमने जब वादी-ए गुरबत में कदम रखा था,
टूक तक याद- ए-वतन आई थी समझाने को।"[१८]

इस तरह भीष्म जी ने अपनी शिक्षा राष्ट्रीय उथल-पुथल के वातावरण में पूरी की ।

शिक्षा के क्षेत्र में उन्हीं दिनों कॉलिज के चारों ओर अंग्रेजी का बोल-बाला था। उनके सभी साथी बड़े-बड़े सरकारी अफसर वनने के सपने देखते थे; शायद इसीलिए उन्होंने अंग्रेजी विषय में एम.ए. की परीक्षा पास की। तदुपरान्त साहित्य सृजन हिन्दी भाषा में ही किया।

(२.५) व्यवसाय -

भीष्मजी ने जब एम.ए. कर लिया, तब वे रावलपिंडी वापस लौट आए। पढ़ाई पूरी करने के बाद जैसा कि हर युवा के मस्तिष्क में एक विचार उठता है कि अब आगे क्या किया जाए? वह विचार होता है, रोजगार से जुड़ा सवाल। यह सवाल उनके सामने भी उठ खड़ा हुआ कि आखिर अब क्या किया जाए? यद्यपि उनके परिवार में व्यापार विरासत से चला आ रहा था। उनके पिताजी भी एक अच्छे व्यापारी थे। बाजार में एक साख थी। परिवार में किसी भी नए सदस्य के लिए इस क्षेत्र में उतरना सुविधाजनक रहता, परन्तु एम.ए. अंग्रेजी से करने के बाद क्या कोई नवयुवक व्यापार करना पसंद करेगा? कदापि नहीं। उसकी कुछ और ही आकांक्षाएँ होती हैं, परन्तु कभी-कभी परम्परागत विवशताएँ होती हैं, जो इंसान को अपने आप उस ओर धकेल देती हैं, जिससे वह दूर भागना चाहता है। कुछ ऐसा ही भीष्म साहनी जी के साथ भी हुआ।

भीष्मजी के पिताजी कपड़े का व्यापार करते थे। उनके पिताजी दोनों भाइयों को व्यापार में लगाना चाहते थे, लेकिन बलराज का मन व्यापार में नहीं लगा। वे रावलपिंडी छोड़कर लाहौर चले गए। पिताजी का व्यापार भीष्मजी ने सम्हाला। इसी कारण उनकी शिक्षा भी रुक गई और सरकारी अफ़सर बनने का सपना भी टूटा, लेकिन गाँधी जी के

विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने ईमानदारी के साथ उत्साह से अपना काम शुरु कर दिया। वे कमीशन एजेन्ट थे। उनका कार्य बाजार में नमूने दिखाकर आर्डर लेना था। पिताजी विलायती कपड़ों का व्यापार करते थे। उनको विलायती कपड़े का व्यापार पसन्द नहीं था।

"मैं मुनाफे पर काम नहीं करना चाहता था, केवल कमीशन से सन्तुष्ट रहना चाहता था और मैं विलायती माल भी नहीं बेचना चाहता था।"१६

भीष्मज़ी को एक अच्छी एजेंसी मिल रही थी। टेक्सटाइल कमिश्नर रिश्वत के दस हजार मांग रहा था, पर भीष्मजी ने रिश्वत देने से मना कर दिया। जब पिताजी को इस बारे में पता चला, **तब पिताजी ने कहा कि "कुत्ते के मुँह में हड्डी दे देते तो क्या बुरा था।"२०**

यह एजेंसी भी उनके हाथ से चली गई। उनके पिताजी ने उनके लिए भारतीय एजेंसियाँ लीं। जो कानपुर के जुग्गीलाल कमलापत सिंघानिया कॉटन की थी, लेकिन जल्द ही उन्होंने अनुभव किया कि एजेंसी का काम करना सचमुच बड़ा कठिन है। मुनाफा कमाना, स्वयं माल खरीदकर मुनाफे पर बेचना उन्हें मंजूर नहीं था। वे व्यापार के क्षेत्र में व्यवहार की दुनिया में अपने अरमान पूरे करने के लिए निकम्मे साबित हुए।

इसी समय स्थानीय डी.ए.वी. कॉलेज में वे ऑनरेरी तौर पर पढ़ाते थे। वह भीष्म जी के लिए स्वर्ण अवसर के समान था। वे व्यापार के साथ-साथ कई काम कर रहे थे। वे सुबह पढ़ाने जाते, शाम को रिहर्सल और बीच में व्यापार करते थे।

"मेरा पहला दिन ठीक निकल गया। पढ़ाई के दिनों में डिबेटिंग में भाग लेता रहा था, स्टेज पर अभिनय भी करता रहा था। गाड़ी चल निकली। सुबह पढ़ाने जाता, शाम को रिहर्सल करता। दोनों मनपसन्द काम थे। उधर व्यापार का काम भी अधिक स्फूर्ति से करने लगा।"२१

कॉलेज का पढ़ाना या शिक्षा जगत से जुड़ जाने का मुख्य फायदा यह हुआ कि वर्षों से मन में बसे नाटक के शौक को फलने-फूलने का मौका हाथ आ गया। कॉलेज में ही नाटक शुरु हो गया। इससे उनके मन में व्यापार की जो उलझन थी, बहुत कुछ कम हो गई। वे साथ में कांग्रेस का काम भी करते थे। १३ अगस्त, १९४७ को वे दिल्ली चले गए। कुछ समय बम्बई में अपने बड़े भाई के साथ रहे। अम्बाला के एक कॉलिज में नौकरी भी की। सन् १९४९-१९५० में दिल्ली गए। वहाँ युवा रचनाकारों की एक साप्ताहिक गोष्ठी में नियमित रुप से भाग लेने लगे। इसी समय दिल्ली कॉलिज में बतौर शिक्षक कार्यरत हो गए।

सन् १९५७ में भारत सरकार द्वारा सोवियत संघ में अनुवादक के रुप में कार्य किया। वहाँ वे सात बरस तक काम करते रहे। सन् १९६३ में भारत लौटने पर फिर दिल्ली कॉलिज में पढ़ाने लगे। सन् १९६५-१९६७ तक **'नई कहानियों'** का सम्पादन किया। १९८० में अध्यापन से अवकाश प्राप्त कर स्वतन्त्र लेखन में जुट गए ।

(२.६) साहित्य सृजन की प्रेरणा -

आदमी का व्यक्तित्व उभरते समय अनेक संस्कारों के कारण प्रेरित होता है। घर-परिवार, समाज, गुरु,

मित्र, घटनाएँ, शत्रु आदि के द्वारा उसका व्यक्तित्व पनपने लगता है। भीष्म साहनी जैसे महान लेखक पर जिन घरेलू जिन्दगी के संस्कार पड़े, उनकी वजह से उन्हें साहित्य-सृजन की प्रेरणा मिली। समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं के कारण उनका साहित्य उभरता गया।

उन्होंने कहा है - **"घर का माहौल एक खास तरह का माहौल था। इसमें ब्रह्मचारी की पीली धोती थी। हवन, संध्या और उपदेश थे। यहाँ मांस खाना निषिद्ध था, स्त्री की ओर आँख उठाकर देखना निषिद्ध था, उपन्यास पढ़ना, फिल्म देखना निषिद्ध था।"२२**

स्कूल छोड़ने पर एक ऐसे व्यक्ति से साक्षात्कार हुआ, जिसने मेरी दुनिया बदल दी। वह गोरा-चिट्टा, स्वस्थ, सौम्य-सुन्दर व्यक्ति था। इस व्यक्ति ने मुझे दकियानूसी संकीर्ण, घुटन भरे वातावरण में से खींचकर बाहर निकाल लिया। जसवंतराय का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। उसे साहित्य से गहरा प्रेम था। कविता के मर्म समझाने में इसे विशेष पैठ थी, वह उस पीढ़ी का उदारवादी व्यक्ति था। मध्ययुगीन संस्कारों से स्वयं निकलकर छात्रों को भी निकालना चाहता था। उसका एक-एक शब्द मेरे लिए वेद वाक्य था। उसी के प्रभावाधीन में साहित्य रचना में कलम-आजमाई करने लगा।

अपने इस गुरु के कारण भीष्मजी ने साहित्य-सृजन की प्रेरणा ली। व्यक्तित्व को प्रभावी बनाने में तत्कालीन स्थिति का बड़ा योगदान रहता है। वे युवा थे तभी आज़ादी का आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। देश में राजनीतिक हलचल तेज थी। दूसरे विश्व युद्ध की हवा चल रही थी। देश में साम्प्रदायिकता का संकीर्ण वातावरण बनता जा रहा था। इसका असर उनके मनोमस्तिष्क को मथने लगा, जो साहित्य के रुप में प्रकट हुआ। उन्होंने अपने बारे में कहा है, **"घर में साहित्यिक वातावरण पहले से ही था। पिताजी शोख सादगी के प्रेमी थे। माँ के पास कहानियों, गीतों, लोकोक्तियों का खजाना था। बड़े भाई कॉलेज के दिनों अंग्रेजी और बाद में हिन्दी में लिखने लगे थे। मेरी बुआ की बेटी श्रीमती सत्यवती मलिक का घर साहित्यिक वातावरण से भर आया। इसी वातावरण में साहित्यकार न बनता तो अचरज की बात है।"२३** उनकी फुफेरी बहन पुरुषार्थवती भी कविता करती थी। भीष्मजी की माँ ने कहा कि तुम्हारी दादी भी कवित्त करती थी - **"तुम्हारी दादी भी कवित्त कहती थीं, ईश्वर भक्ति के। बड़ी नेम-धर्मवाली स्त्री थीं, पूजा-पाठ करने वाली। देवी थीं देवी ...." और माँ सुनातीं।"२४**

भीष्मजी के पिताजी जब हाईस्कूल में पढ़ते थे, तब उन्होंने एक उपन्यास लिखा था। उनके बड़े भाई बलराज साहनी भी साहित्य के प्रेमी थे। जब भगतसिंह आजाद को फाँसी दी गई। उस समय बलराज साहनी की उम्र १५ वर्ष की थी। **बलराज साहनी ने भगत सिंह के पक्ष में एक शेर लिखा-**

"गुलदस्ता से क्यों तूने ठुकरा के मुझे फेंका,
गो घास पे उगता हूँ, क्या फूल नहीं हूँ ।"२५

भीष्मजी व्यापार के सिलसिले में कानपुर जाते, दिल्ली बीच में पड़ता था। दिल्ली में वे अपनी फुफेरी बहिन सत्यवती मल्लिक के घर जाते है। वह घर उनके लिए साहित्यिक गतिविधि का केन्द्र था। वही पर उन्हें **जैनेन्द्र, विष्णु प्रभाकर, बनारसीदास चतुर्वेदी** और **अज्ञेय** मिले। जो कमी उन्हें रावलपिंडी में होती थी, वह इधर आकर पूरी हो

जाती। इन्होंने अपनी पहली कहानी **'अबला'** लिखी। जब वे दसवीं के छात्र थे। ये कहानी इण्टरमीडिएट कॉलेज की पत्रिका में छपी। यही कहानी आगे चलकर कॉलेज की पत्रिका **'रावी'** में छपी। उनका एक लेख **'संस्कृति और साहित्य'** विशाल भारत में छपा।

भीष्मजी जब लाहौर से एम. ए. करके लौटे, तब वे पिताजी के साथ व्यापार में हाथ बँटाने लगे, परन्तु उनका मन व्यापार में कम और इतर विषयों के प्रति ज्यादा था। वे शाम के वक्त अपने व्यापार से लौटकर घर की ओर जा रहे थे। जैसा कि रोज आना-जाना होता था। उस दिन भी लौट रहे थे। रास्ते में लौटते वक्त एक घटना घटती दिखाई दी। वे अन्य दर्शकों की भाँति वहीं रुक गए। भीड़ जमा थी और उसके बीच एक निरीह लड़की अपराधिनी की भाँति खड़ी थी। उसके पास ही एक अस्पताल था। अस्पताल के बरामदे में एक युवक बैठा था। युवक शक्ल से बीमार लग रहा था। बाद में पता चला कि दोनों युवक-युवती गाँव से भागकर शहर आ गए हैं। शहर में मेहनत मजदूरी करते हैं, परन्तु सिर छुपाने की जगह कहीं नहीं मिली है। लड़की बहुत ही सुन्दर लग रही थी। उसकी आँखें बहुत आकर्षक थी। लोग उससे छेड़छाड़ कर रहे थे। भीष्म जी ने उस घटना को देखकर **'नीली आँखें'** नाम की कहानी लिखी, जिसे अमृतराय ने **'हंस'** में छापकर भीष्मजी के साहित्य में पदार्पण कर दिया। यह **'नीली आँखें '** आम दर्शक के लिए मौज-मस्ती का साधन थीं, लेकिन उनके लिए वे आँखें साहित्य की आँखें साबित हुई। उन आँखों से उनको एक नई दृष्टि और आलोक मिला ।

भीष्मजी को पढ़ने का बहुत शौक था। उन्होंने **प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, सुदर्शन** आदि का साहित्य पढ़ा और उससे वे बहुत प्रभावित हुए। तथा इसी क्षेत्र की ओर आकर्षित होते गए। उन्होंने **पंचतन्त्र, हितोपदेश,** प्राचीन-अर्वाचीन बहुत सारा साहित्य पढ़ा। **तुलसी, सूर** की अपेक्षा वे कबीर से अधिक प्रभावित थे।

भीष्मजी प्रगतिशील साहित्यिक आन्दोलन के सबसे बड़े लेखक थे। वे एक नेक दिल इंसान थे। उनका व्यक्तित्व यह साबित करता था कि अच्छा साहित्य लिखने के लिए अच्छा इंसान होना जरुरी है, जो विरले लोगों में पाया जाता है। उनकी फुफेरी बहन पुरुषार्थवती जी के पति चन्द्रगुप्त विद्यालंकार तो ख्याति प्राप्त लेखक थे। वे अंग्रेजी के प्रोफ़ेसर थे, लेकिन उन्होंने अपनी लेखनी हिन्दी में चलाई थी, जबकि बलराज साहनी चाहते थे कि वे पंजाबी में लिखें। उन्होंने वैसा नहीं किया। एक बार उनसे पूछा गया कि आपने अंग्रेजी की बजाय हिन्दी में लेखन कार्य क्यों किया? उन्होंने कहा - **"मैंने यह महसूस किया कि मैं अपनी बातों को हिन्दी में बेहतर ढंग से व्यक्त कर सकता हूँ।"२६**

भीष्मजी के साहित्यिक व्यक्तित्व पर विदेशी साहित्यकारों का काफी प्रभाव पड़ा। उन्हें कीट्स, विक्टर, ह्युगो, टाल्सटाय, चेख व विशेषतः बहुत ज्यादा पसंद थे। कैथरीन मेन्स फील्ड, मोपासां, गोर्की ने भी उन्हें प्रभावित किया है। वे स्वयं सजगदृष्टा भोक्ता और आलोचक हैं। उनके पास सूक्ष्म दृष्टि है। जो अनेक घटनाओं को देख उन्हें अलौकिक बना देती हैं। उनकी कल्पना एवं प्रतिभा सजग है। वे १९५७ में मास्को गए। वहाँ सन् १९६३ तक रहकर उन्होंने मास्को में विदेशी भाषा प्रकाशन तह में अनुवादक के रुप में कार्य किया और रुसी भाषा की लगभग पच्चीस महत्वपूर्ण कृतियों का हिन्दी में अनुवाद किया। उनमें जागरुकता व संवेदनशीलता है। उनकी बुद्धि बहुत ही तीव्र और तर्क संगत है। उनकी वैचारिक उदात्तता बहुत ही महान है, जिसके आधार पर उन्होंने साहित्य-सृजन किया है।

अपने परिवार के सदस्यों के साहित्य-सृजन से वे बहुत प्रभावित हुए और उनके अन्दर हिन्दी में लेखन की प्रेरणा जाग्रत हुई। अंग्रेजी साहित्य में जुड़े होने पर भी उन्होंने हिन्दी कला लेखन में प्रवेश किया और कथा साहित्य के क्षेत्र में अनेक स्तरीय रचनाओं का सृजन किया। इनकी रचनाओं का पर्याप्त प्रचार एवं प्रसार हुआ और वे हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि बन गए।

(२.७) व्यक्तित्व के विविध आयाम -

(अ) खिलाड़ी (हॉकी) -

भीष्मजी को बचपन से ही हॉकी खेलने का बहुत शौक था। जब वे लाहौर पढ़ने के लिए गए, तब उनकी दोस्ती का सिलसिला शुरु हुआ। अपरिचित परिचित से लगने लगे और धीरे-धीरे दोस्तों की मंडली बननी शुरु हो गई। वे हमेशा अपने मन में विचार करते थे कि हम कब लाहौर जाएँ और हॉकी खेलें। उन्होंने हॉकी खेलने के लिए ही लाहौर के कॉलेज में दाखिला लिया था। कॉलेज के साथियों के बीच एक बार हॉकी टीम तैयार की गई। वे हॉकी के अच्छे खिलाड़ी माने जाते थे। गोल करने में उनका उत्साह देखते बनता था। जैसा कि उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है -

"वक्त-वक्त में आदमी तरह-तरह के सपने देखता है। पर यह उसकी स्थिति से कहीं न कहीं जुड़े होते हैं। जब हॉकी खेलता था तो गोल करने और मैडल जीतने के सपने देखता था।"२७

भीष्मजी का जब कॉलेज में दाखिले का दूसरा साल था, तब उन्हें कॉलेज की हॉकी टीम में ले लिया गया था। उस दिन वे बहुत खुश थे और उन्होंने कहा- **"उस दिन मुझे यूनिवर्सिटी टूर्नामेंट का पहला मैच लॉ कॉलेज के विरुद्ध खेलने जाना था। मेरा दिल बल्लियों उछल रहा था। आखिर मेरे दिल की साध पूरी हुई थी।"२८**

भीष्मजी को उस समय धक्का लगा, जब वे मैदान की ओर खेलने को बढ़ रहे थे, तब कप्तान ने उन्हें न बुलाकर किसी अन्य खिलाड़ी अताउल्लाह नून को बुला लिया। वे हैरान होकर देखते रहे। उसी समय भीष्मजी ने प्रतिज्ञा की कि आज के बाद मैं हॉकी नहीं खेलूँगा। जब वे थोड़ा आगे बढ़े, तब उन्हें टीम का पुराना खिलाड़ी मिला। उसने उनसे पूछा कि क्या मैच नहीं हो रहा है? तुम लौट क्यों रहे हो? उनका सहृदय अन्दर से रो पड़ा- **"मैंने केवल सिर हिला दिया। वह आगे निकल गया तो मेरा रोना निकल गया। मैं बेहद अपमानित महसूस कर रहा था और रोता हुआ घर पहुँचा।"२६**

कुछ दिन बाद जब उनको कॉलेज टीम का कप्तान चिरंजीव मिला, तब उसने कहा-

"तुम चले क्यों आए?"

"उस दिन हमने अतानून को खेलने का मौका दिया। यह कॉलेज में उसका आखिरी साल है इसलिए। उसे कॉलेज कलर मिल जाएगा।"३०

भीष्मजी जब एम.ए. में आए, तब उन्हें हॉकी में वापस लौटने के लिए कहा गया और उन्हें हॉकी टीम का सेक्रेटरी भी बनाने की बात की गई। उन्होंने कहा- **"पर मैं नहीं माना। हॉकी से नाता तोड़ना मेरे लिए पत्थर**

की लकीर बन चुका था। वह भी मेरे रवैए पर हैरान हुआ पर चुप हो गया।

यदि कॉलेज छोड़ने के बाद मुझे पछतावा न होने लगता और मैं अपने को वंचित महसूस नहीं करने लगता, तो यह मामूली सी घटना बनकर रह जाती। पर यह घटना तो बरसों तक दिल को कचोटती रही। आज भी कभी-कभी मैं नींद में, अपने को सपने में हॉकी खेलते देखता हूँ। इतना बढ़िया खेलता हूँ कि सपने में स्वयं ही अश-अश कर उठता हूँ। ऐसे दाँव खेलता हूँ कि ध्यानचन्द क्या खेलता रहा होगा।"३१

(ब) अभिनेता -

भीष्मजी जब चौथी कक्षा में पढ़ते थे, तब उन्होंने स्कूल में पहला नाटक खेला। नाटक का नाम **'श्रवणकुमार'** था। श्रवणकुमार की भूमिका उन्होंने अदा की थी। वे श्रवणकुमार की भूमिका को सही तरीके से प्रस्तुत नहीं कर पाए। जो कुछ उन्हें बोलना था । वे बोलते वक्त भूल जाते। तभी उनके कक्षा अध्यापक द्वारा उनके बड़े भाई बलराज जी के प्रति निम्नलिखित कथन द्रष्टव्य है -

"यह तेरा भाई क्या कर रहा है?" मेरी 'मृत्यु' के बाद अभी और संवाद बोले जाने थे- बूढ़े माँ-बाप के साथ राजा दशरथ के संवाद, अन्धे माँ-बाप को अभी शाप देना था पर नाटक का शेष भाग मुझे भूल गया और मैं झट से उठ बैठा । इससे हाल में हँसी के फौबारे फूट उठे । किसी ने आवाज़ कसी :

"लेटा रह ! लेटा रह !"

पर मैं इतना बेसुध हो गया था कि मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ ? मुझे और तो कुछ नहीं सूझा, मैं फिर लेट गया जिस पर ऐसी तालियाँ बजने लगी कि थमने में नहीं आती थीं । सीटियाँ, तालियाँ, ठहाके तरह-तरह की आवाजें देर तक चलती रहीं ।"३२

भीष्म जी ने दूसरा नाटक अपने कॉलेज के दिनों में खेला । उनके बड़े भाई बलराज ने उनको अंग्रेजी में लिखकर एक नाटक भेजा । नाटक का नाम **The Ghost Train** था तथा उसके लेखक **Arnold Ridlay** थे । उन्हें उस नाटक को खेलने की इच्छा हुई । उन्होंने वह नाटक जहाँ से उन्होंने इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की थी । उसी कॉलेज में उन्होंने वह नाटक खेला। वह नाटक काफी प्रसिद्ध हुआ, जिससे वे काफी प्रसन्न हुए। **उन्होंने कहा- "उस समय मुझे मालूम नहीं था कि मेरी जिन्दगी का काँटा बदल रहा है। घंटे-दो घंटे का सौजन्य अध्यापन बाद में मेरा व्यवसाय बन जाएगा और कॉलेज में खेला गया पहला नाटक एक श्रृंखला की पहली कड़ी साबित होगा और मुझे देशव्यापी सांस्कृतिक आन्दोलन की ओर खींच ले जाएगा।"३३**

भीष्मजी जब अम्बाला में अध्यापन कार्य कर रहे थे, तब अम्बाला से कुछ ही दूरी पर एक शरणार्थी शिविर था। एकबार वे और जसवन्त का बेटा रमेश उस शिविर को देखने जा रहे थे। उन्होंने क्या देखा कि शरणार्थी लोग पानी की तलाश में अपने वर्तन लिए इधर ही आ रहे हैं। उन्होंने जब शरणार्थियों की दशा को देखा, तब फैसला किया कि हम इन लोगों के ऊपर एक **'इप्टा'** शो करेंगे। उन्होंने जब शो किया, लेकिन तब वह शो ज्यादा सफल नहीं रहा। दर्शकों

की भीड़ लगातार बढ़ती जा रही थी। नाटक का नाम **'सड़क के किनारे था'**। उसमें एक बेरोजगार युवक की दारुण स्थिति का चित्रण था। यह नाटक शहरी था। छोटे कस्बों के लिए तो नाच गाने वाले तथा लम्बे नाटक होने चाहिए, जिससे उनका टाइम पास हो जाए -

"छोटे कस्बों के हमारे लोग एकांकी नाटक देखने के अभ्यस्त नहीं हैं, उन्हें तो भरे-पूरे, घंटों चलने वाले कार्यक्रमों, नाच-गाने में मजा आता है, जिनमें गीत-संगीत भी हो, भाव-विभोर करने वाले संवाद भी हों, हँसी-मजाक भी हो, भड़ैंत भी हो।"३४

एक लम्बी उम्र पार करके भी भीष्म जी का नाटक के प्रति क्या विचार है, असगर वजाहत के साथ बातचीत में उन्होंने अपने दिल की बात कह दी है -

"नाटक की दुनिया बड़ी आकर्षक और निराली दुनिया है। किस तरह धीरे-धीरे एक नाटक रुप लेता है और रुप लेने पर किस एक नए संसार की जैसे सृष्टि हो जाती है। यह अनुभव बहुत ही सुखद और रोमांचकारी होता है। नाटक खेलने वालों के सिरे पर एक तरह का जुनून छाया रहता है, जिसका मुकाबिला नहीं। मंच पर खेले जाने वाले नाटक से भी कहीं अधिक मनमोहक नाटक गृह का ग्रीन रुम होता है। अपनी-अपनी लाइनों तथा वेश-भूषा से उलझते अभिनेता किस रुप में प्रकट होंगे, जिंदगी में वे क्या हैं, यह गौण हो जाता हैं और नाटक में उसकी भूमिका जो अपने में छाया से भी अधिक कहीं महत्वपूर्ण हो जाती है। बरसों बाद 'हानूश' की रिहर्सलों के समय फिर से उस दुनिया में दाखिल होने का मौका मिला। एक दिन सुबह ग्यारह बजे निर्देशक महोदय से मिलने गया तो श्रीराम सेंटर की बाहरी दीवार पर कुछ लड़के-लड़कियाँ बैठे थे। उनके चेहरों पर अभी भी पिछली रात की खुमारी थी। कहीं-कहीं पर 'मेकअप' की सुर्खी भी थी। अभिनेताओं के लिए आस-पास की करोबारी दुनिया का कोई महत्व नहीं होता। जहाँ सुबह ग्यारह बजे लोग दफ्तर-बाजारों में कार्य कर रहे होते हैं, यहाँ सुबह ग्यारह बजे रिहर्सल की तैयारी थी। उनके लिए अस्तित्व होता है। नाटक की दुनिया का, जो महीने दो महीने में अस्तित्व में आएगी और आँख झपकते फिर टूट-फूट जाएगी। बरसों बाद भी यह दुनिया मुझे बड़ी हृदयग्राही लगी और मन चाहा कि सब काम छोड़कर फिर नाटक खेलूँ।"३५

भीष्मजी ने नाटकों के साथ फिल्मों में भी काम किया। उन्होंने चर्चित फिल्मों व सीरियल्स, जिनमें उन्होंने अभिनय किया है, निम्न हैं। **सईद मिर्जा** द्वारा निर्देशित फिल्म **'मोहन जोशी हाजिर हों'** और गोविन्द निहलानी द्वारा निर्देशित **'तमस'** सीरियल में बेहतरीन अदाकारी की है। गोविन्द निहलानी जो एक सफल और सशक्त निर्देशक के रुप में जाने जाते हैं, भीष्मजी के संदर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं जहाँ तक भीष्मजी द्वारा **'तमस'** में अभिनय करने की बात है, तो जब मैंने उपन्यास पढ़ा और **सरदार हरनाम सिंह** का चरित्र पढ़ा तो मुझे लगा कि भीष्मजी इस किरदार को बखूबी निभा पाएँगे, क्योंकि उस चरित्र में एक सादापन था, जिसे कहते हैं न, पैदाइशी ईमानदारी, वह थी और भीष्मजी में ये सारी बातें मुझे दिखाई दी। उनकी आँखों में आवाज में, मुझे ईमानदारी दिखी, इसलिए मैंने उन्हें चुना। जब हम शूटिंग कर रहे थे, तो मेरा अंदाज सही निकला। बेहद स्वाभाविक अभिनय किया उन्होंने। उनकी

'परफार्मेंस' ऐसी थी कि वो पूरी यूनिट को **'रच'** करते थे। सईद मिर्जा जी भी जो फिल्मी दुनिया के जाने-माने निर्देशक हैं, भीष्मजी को **'मोहन जोशी हाजिर हो'** में अनुबंधित कर शूटिंग के पश्चात् कुछ इस तरह विचार व्यक्त करते हैं –"मैंने भीष्मजी से अभिनय करवाने का निर्णय इसलिए लिया, क्योंकि मुझे उनके चेहरे पर बहुत कुछ नजर आया। साफ लवजों में कहूँ तो उनके चेहरे पर मुझे तवारीख (इतिहास) नज़र आई। एक तरह की डाक्यूमेंटरी और फिल्म इस बात की शाहिद (गवाह) है कि मेरी आँखों ने धोखा नहीं खाया था। कितनी गजब की परफारमेंस दी उन्होंने। मैं जितना सोचता था, उससे कहीं बढ़कर बेहतरीन काम किया। सबसे अहम बात यह रही कि मुझे उन्हें कुछ भी सिखाना नहीं पड़ा। एक बार भी यह नहीं कहना पड़ा कि मैं यह चाहता हूँ या आप ऐसा करिए। जबकि वो खुद मुझसे कहते थे कि तुम सबको कुछ न कुछ बताते हो, सिखाते हो, मझे भी सिखाओ, लेकिन बतौर निर्देशक मैं जानता था कि उन्हें कुछ सिखाने-बताने की कोई जरुरत ही नहीं है। यकीनन भीष्म साहनी जी में अद्भुत अभिनय क्षमता है, महान अभिनेता हैं वो।"३६

(स) राजनेता -

"यह बात उन दिनों की है, जब भारत आज़ादी की लड़ाई अपने हथियारों से लड़ रहा था। देश का हर नौजवान इस लड़ाई में अपने ढंग से भागीदारी निभा रहा था। खासकर पंजाब और सिंध ा प्रान्त अंग्रेजी हुकूमत की दमनकारी नीति का बेहद शिकार था। रावलपिंडी उसी प्रांत की एक छोटी जगह थी, जो हर दृष्टि से पिछड़ा था। इसके बाबजूद अंग्रेजी सरकार के रवैये से लोग काफी परेशान थे।

भीष्मजी सन् १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में कूद पड़े। उन्होंने कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की। यद्यपि वे कभी जेल नहीं गए, परन्तु उनकी लड़ाई अपने ढंग की थी। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम दंगे और अंग्रेजों का दमन अपनी आँखों से देखा है; शायद यही वजह है कि जब भीष्मजी ऐसे अपनी कहानियों और उपन्यासों में उठाते हैं तो ऐसा लगता है कि वे चित्रात्मक शैली में उसके रेशे-रेशे को उकेरते जाते हैं। उन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में खुलकर भाग लिया। उन्होंने बँटवारे की पीड़ा को भी जिया है। उनका उपन्यास 'तमस' जहाँ हिन्दू-मुस्लिम दंगे और अंग्रेजी हुकूमत की दोगली नीति का पर्दाफाश करता है, वहीं 'मय्यादास की माड़ी' उस कालखंड में हो रहे हिन्दुस्तानी चरित्र में लीपा-पोती का जीता-जागता दस्तावेज़ है।"३७

भीष्मजी को कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को नजदीक से देखने का अवसर मिला। उन्हें देशभक्त भी देखने को मिले, जिसने उन्हें प्रभावित व विचलित भी किया। वे एक घटना बताते हैं कि एक देशभक्त था। वह न तो नेता था और न ही पेशेवर कार्यकर्ता। उसके अन्दर कांग्रेस में काम करने की तड़प थी। जब प्रभातफेरी का काम हो चुकता, तब नालियाँ साफ करने का काम करता। मास्टर अर्जुनदास ने योगी जी से कहा कि मैं नालियाँ साफ नहीं करूँगा। योगीजी बोले कि और लोग नालियाँ साफ कर सकते हैं तो तुम नालियाँ साफ क्यों नहीं कर सकते? मास्टर बोला कि हमारा ब्राह्मण धर्म नष्ट हो जाएगा। मास्टर अर्जुनदास का मन नहीं माना और वह नालियाँ साफ करने लगा और बोला –

"ओ गाँधी बाबा, तेरे सामने पेश नहीं चलती। न जाने तू हमसे और क्या-क्या करवाएगा।"३८

भीष्मजी के पिताजी विलायती वस्त्रों का व्यापार करते थे, जबकि वे गाँधीवाद से प्रभावित थे। उन्होंने अपने पिताजी से कहा कि मैं विलायती वस्त्रों का व्यापार नहीं करुँगा, तो उनके पिताजी ने उनके लिए भारतीय एजेंसियाँ खरीदीं। **स्वयं साहनी जी के शब्दों में -**

"मैं गाँधीवाद का भी दामन थामे हुए था मैं मुनाफे पर काम नहीं करना चाहता था, केवल कमीशन से सन्तुष्ट रहना चाहता था और मैं विलायती माल भी नहीं बेचना चाहता था। अब बजार में ऐसे 'आदर्शवाद' को कौन पूछता है? विलायती माल के प्रति मेरी उदासीनता को देखते हुए पिताजी ने जगह-जगह पत्र व्यवहार करके दो-तीन एजेंसियाँ भारतीयय कारखानों की भी ले दीं जिनमें कानुपर की जुग्गीलाल कमलापत सिंघानिया कॉटन मिल्स की भी थीं।"३९

बलराज जब विलायत से लौटे, तब वे वामपन्थी विचारधारा के हो चुके थे। उस शाम कम्पनी बाग में मुस्लिम लीग का जलसा होने जा रहा था। उसमें फीरोजखान नून बोलने वाले थे। बलराज साहनी ने कहा कि हम उस जलसे में जाएँगे। उस समय पाकिस्तान की माँग जोरों पर थी। जब भीष्मजी ने यह बात सुनी तब वे हैरान रह गए। उन्होंने कहा कि -

"फीरोजखान नून तो उम्र-भर अंग्रेजों का पिट्ठू रहा था और अब मुस्लिम लीग में जा मिला था, क्योंकि मुस्लिम लीग का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा था। हर हालत में वह जलसा कांग्रेस के खिलाफ होगा और मेरी नजर में कांग्रेस की ऐसी जमात थी जो गाँधीजी के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर देश की स्वाधीनता के लिए संघर्ष कर रही थी।"४०

<u>(द) व्यापारी के रुप में -</u>

भीष्मजी ने जब एम.ए. कर लिया, तब वे रावलपिंडी वापस लौट आए। पढ़ाई पूरी करने के बाद जैसा कि हर युवा के मस्तिष्क में एक विचार उठता है कि अब आगे क्या किया जाए? वह विचार होता है, रोजगार से जुड़ा सवाल। यह सवाल उनके सामने भी उठ खड़ा हुआ कि आखिर अब क्या किया जाए? यद्यपि उनके परिवार में व्यापार विरासत से चला आ रहा था। उनके पिताजी भी एक अच्छे व्यापारी थे। बाजार में एक साख थी। परिवार के किसी भी नए सदस्य के लिए इस क्षेत्र में उतरना सुविधाजनक रहता है, परन्तु एम.ए. अंग्रेजी से करने के बाद क्या कोई नवयुवक व्यापार करना पसंद करेगा? कदापि नहीं। उसकी कुछ और ही आकांक्षाएँ होती हैं, परन्तु कभी-कभी परम्परागत विवशताएँ होती हैं, जो इंसान को अपने आप उस ओर धकेल देती हैं, जिससे वह दूर भागना चाहता है। कुछ ऐसा ही उनके भी साथ हुआ।

भीष्मजी के पिताजी कपड़े का व्यापार करते थे। उनके पिताजी दोनों भाइयों को व्यापार में लगाना चाहते थे, लेकिन बलराज का मन व्यापार में नहीं लगा। वे रावलपिंडी छोड़कर लाहौर चले गए। पिताजी का व्यापार उन्होंने सम्हाला, इसी कारण उनकी शिक्षा भी रुक गई और सरकारी अफसर बनने का सपना भी टूटा, लेकिन गाँधी जी के विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने ईमानदारी के साथ उत्साह से अपना काम शुरु कर दिया। वे कमीशन एजेन्ट थे। उनका कार्य

बाजार में नमूने दिखाकर आर्डर लेना था। पिताजी विलायती कपड़े का व्यापार करते थे। उनको विलायती कपड़े का व्यापार पसन्द नहीं था।

"मैं मुनाफे पर काम नहीं करना चाहता था, केवल कमीशन से सन्तुष्ट रहना चाहता था और मैं विलायती माल भी नहीं बेचना चाहता था।"४१

भीष्मजी को एक अच्छी एजेंसी मिल रही थी। टेक्सटाइल कमिश्नर रिश्वत के दस हजार माँग रहा था, पर उन्होंने रिश्वत देने से मना कर दिया। जब पिताजी को इस बारे में पता चला, पिताजी ने कहा - **"कुत्ते के मुँह में हड्डी दे देते तो क्या बुरा था?"४२**

यह एजेंसी भी उनके हाथ से चली गई। उनके पिताजी ने उनके लिए भारतीय एजेंसियाँ लीं, जो कानपुर के जुग्गीलाल कमलापत सिंघानिया कॉटन की थीं, लेकिन जल्द ही उन्होंने अनुभव किया कि एजेंसी का काम करना सचमुच बड़ा कठिन है। मुनाफा कमाना, स्वयं माल खरीदकर मुनाफे पर बेचना उन्हें मंजूर नहीं था। वे व्यापार के क्षेत्र में व्यवहार की दुनिया में अपने अरमान पूर करने के लिए निकम्मे साबित हुए।

(२.८) जीवन दर्शन -

(अ) आदर्शवाद -

भीष्म जी आदर्शवादी थे। वें दो भाई थे। वे छोटे थे। उन्हें बचपन में सिखाया गया था कि दोनों को राम लक्ष्मण जैसा रहना चाहिए। उन्होंने कहा है - **"घर में सबसे छोटा होने के कारण सभी हुक्म मुझ तक पहुँचते थे। बड़े भाई के साथ कदम मिलाकर नहीं चलते पीछे-पीछे चलते हैं जैसे-राम लक्ष्मण चला करते थे।"४३**

भीष्मजी गाँधीवाद से प्रभावित थे। उनके पिताजी विलायती व्यापार करते थे, पर उनको यह विलायती व्यापार पसन्द नहीं था। भीष्मजी ने कहा - **"मैं मुनाफे पर काम नहीं करना चाहता था, केवल कमीशन से सन्तुष्ट रहना चाहता था और मैं विलायती माल भी नहीं बेचना चाहता था। अब बाजार में ऐसे 'आदर्शवाद' को कौन पूछता है?"४४**

भीष्मजी को एक अच्छी एजेंसी मिल रही थी। टेक्सटाइल कमिश्नर रिश्वत के दस हजार मांग रहा था, पर उन्होंने रिश्वत देने से मना कर दिया था। उसमें बहुत ज्यादा मुनाफा था। जब भीष्मजी ने यह बात अपने पिताजी को बताई, तब वे उनसे बहुत नाराज़ हुए और कहा - **"कुत्ते के मुँह में हड्डी दे देते तो क्या बुरा था?"**

मतलब कि ऐसा आदर्शवाद किस काम का कि अपने ही पाँवों पर कुल्हाड़ी मार आए हो। अगर व्यापार करना है तो व्यापार में तो वही कुछ करोगे जो सब व्यापारी करते हैं। बाजार का चलन तो तुम्हारे बस का नहीं है।"४५

(ब) सादगी -

भीष्मजी का पूरा व्यक्तित्व सादगी से ओत-प्रोत है। उनके रहन-सहन और सलीके में इसके दर्शन होते हैं। वे अत्यधिक विनम्र हैं। उनकी विनम्रता के बारे में **उनकी पत्नी ने कहा है -**

"भीष्मजी की एक बात जो अब तक मुझे अच्छी नहीं लगती, उनकी अत्यधिक विनम्रता। विनम्र होना अच्छी बात है, परन्तु अति विनम्र होना तो अच्छा नहीं। लोग नाज़ायज़ फायदा उठाते हैं।"४६

(स) सहनशीलता -

व्यक्ति कितनी ही ऊँचाई क्यों न छू ले, परन्तु अगर वह एक अच्छा इंसान नहीं बन सका तो उसकी सारी उपलब्धि एकदिन नकार दी जाती है। इतिहास के पन्नों में इतने चरित्र भरे पड़े हैं, जिनकी उपलब्धि उन्हें ऐतिहासिक पात्र बनाती है, परन्तु स्वभाव की जड़ता, असहयोग की भावना, खुद को सब कुछ समझना और तंगदिली ने उन्हें हाशिये में ला दिया है, फिर भी लेखक साहित्यकार व कलाकार होने की पहली शर्त है कि वह व्यक्ति अच्छा इंसान हो।

भीष्मजी जितने बड़े कलाकार हैं, उससे भी बड़े इन्सान थे। उनका स्वभाव तो ऐसा था जैसे वाणी में मिश्री घुली हो। उन्होंने अत्यन्त कोमल, शालीन और मितभाषी आत्मा पाई थी। कम बोलना तो उनकी प्रकृति थी, परन्तु जितना बोलते हैं, ऐसा लगता है, जैसे फूल की पंखुड़ियाँ झर रही हों। उनके चेहरे पर एक खास सौम्यता और आँखों में करुणा पूर्ण भावों के दर्शन होते थे। वे सामने वाले पर कभी वजनी नहीं पड़ते है। उनसे बातें करने वाला व्यक्ति यह कभी नहीं महसूस कर सकता था कि भीष्मजी उससे बड़े व अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त लेखक हैं। उनमें सहनशीलता बहुत ज्यादा थी। उनका स्वभाव बेहद विनम्र था। वे गौ जैसे थे। उनका स्वभाव शान्त, विनयशील है। उनमें धैर्य और उदारता के गुण मौजूद हैं। उनके इस स्वभाव को करीब से देखने और परखने का सबसे ज्यादा मौका मिला है, उनकी पत्नी श्रीमती शीला साहनी जी को। शीला जी अपने पति के संदर्भ में बताती हैं - वे पति के रुप में बहुत अच्छे हैं, परन्तु व्यावहारिक विल्कुल नहीं हैं। वे साधु हैं, कर्मयोगी हैं, निष्काम कर्मयोगी हैं।

"भीष्मजी की आदत है शाम को लिखने की। उस वक़्त अक्सर कोई न कोई आ जाता। शीला जी बताती हैं कि भीष्म न चाहते हुए भी उसके सामने आकर बैठ जाते हैं। विचारों में इतना खोए रहते हैं कि मुझे मजबूरन सामने वाले से आकर बात करनी पड़ती है। भीष्म मेहनत बहुत करते हैं। एक बार लिखेंगे, फिर उसे ठीक करेंगे, फिर उसकी फेयर कापी बनाएँगे। एक ही चीज को कई बार लिखते हैं। इनमें पैसेन्स बहुत ज्यादा है। कई बार कहती हूँ कि टाइप करवा लीजिए, तो कहते हैं, हाथ से फेयर करने में एक फायदा है कि कई नई बातें सूझ जाती हैं।"४७

उनका व्यक्तित्व संयत, गम्भीर और विवादों से अलग था। वे अंकुठित और अजातशत्रु और संवेदनशील व्यक्ति थे।

(द) सेवाभाव -

भीष्म जी का एक विशेष गुण था सेवाभाव। विद्यार्थी जीवन से उन्होंने समाज सेवा की है। राष्ट्र भक्ति एवं प्रेम उनके व्यक्तित्व में ओत-प्रोत है। उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग भी लिया है।

हिन्दुस्तान में व्याप्त अंधश्रद्धाएँ, जात-पांत, ऊँच-नीच का भेद-भाव, रुढ़ियाँ, अस्पृश्यता, छुआ-छूत आदि परम्पराओं के प्रति विरोध प्रकट किया है। उनकी धारणा है कि धर्माडम्बर अहंकारी वृत्ति समाजहित में बाधक होती है। गरीब असहाय उत्पीड़ित व्यक्तियों के प्रति उनके मन में सहानुभूति दिखाई पड़ती है।

उन्होंने कहा है - यही तो हमारी कौम में कमजोरी है। व्याह-शादी में तो लाखों बहा देंगे, पर जब कौम पर खतरा मँडराने लगे तो पैसे गिनने लगते हैं। उन्होंने समाज में व्याप्त स्वार्थी वृत्ति का अंकन कर उन्हें त्याग देने का संकेत किया है।

वैसे तो समाज के प्रति हर लेखक का जो दायित्व होता है, उसे अच्छी तरह से उन्होंने निभाया है।

सम्मान -

भीष्म साहनी अपनी रचनात्मक यात्रा के दौरान अनेक अलंकरणों एवं सम्मानों से विभूषित हुए है।

उन्हें १९७४ में भाषा विभाग पंजाब द्वारा **'शिरोमणि लेखक'** पुरस्कार से विभूषित किया गया।

सन् १९७५ में 'तमस' उपन्यास पर **'साहित्य अकादमी पुरस्कार'** प्राप्त हुआ। १९८० में ऐफ्रो-एशियाई लेखक संघ की ओर से **'प्लोटस'** पुरस्कार प्राप्त हुआ। १९७९-१९८० में **'दिल्ली साहित्य कला परिषद'** द्वारा सम्मानित किया गया। १९८५ में उपन्यास **'बसन्ती'** उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान से पुरस्कृत किया गया।

१९९० में हिन्दी-उर्दू, साहित्य पुरस्कार तथा १९९० में **'मय्यादास की माड़ी'** उपन्यास के लिए हिन्दी अकादमी दिल्ली से पुरस्कार प्राप्त हुए।

'हानूश' तथा **'कबिरा खड़ा बजार में'** नाटक पर इनाम मिले।

संदर्भ संकेत-

१. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना एवं प्रताप ठाकुर, पृ० सं० ३०

२. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० १०

३. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० ११

४. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना एवं प्रताप ठाकुर, पृ०सं० ५५

५. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० १०

६. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० १५

७. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० १०

८. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० ११५

६. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० ११४

१०. वही , पृ०सं० ११५

११. वही , पृ०सं० ११६

१२. वही , पृ०सं० ११६

१३. वही , पृ०सं० ११८

१४. आजकल, (फरवरी २००४) - **'एक पल आखिरी लम्हा तेरी दिलदारी का'** केवल गोस्वामी, पृ०सं०७

१५. वही , पृ०सं० ७

१६. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना एवं प्रतापठाकुर, पृ०सं० ६६-६७

१७. वही , पृ०सं० ३४

१८. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० १३

१६. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० ६४

२०. वही , पृ०सं० १०६

२१. वही , पृ०सं० ६६

२२. तमस : एक अध्ययन, शैलजा पाटील, पृ०सं० १७

२३. अपनी बात, भीष्म साहनी, पृ०सं० २६

२४. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० ५५

२५. वही , पृ०सं० ५६

२६. आजकल, (फरवरी २००४) - **'एक सफल जीवन के प्रतीक'**- राजीव रंजन, पृ०सं० २७

२७. भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, विवेक द्विवेदी पृ०सं० २३

२८. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० ८१

२६. वही , पृ०सं० ८१

अध्याय - ३

भीष्म साहनी का साहित्य

३.१ - भीष्म साहनी का युग

३.२ - रचनाओं का कालक्रमानुसार उल्लेख

(अ) उपन्यास

(ब) कहानी

(स) नाटक

(द) अन्य

३.३ - उपन्यासों का कथावस्तु

३.४ - कहानियों की कथावस्तु

३.५ - नाटकों की कथावस्तु

३.१) भीष्म साहनी का युग -

<u>राजनैतिक परिस्थितियाँ-</u>

भीष्म साहनी के युग में कांग्रेस के नेतृत्व में सम्पूर्ण राष्ट्र का उद्देश्य बन गया था कि पूर्ण स्वराज्य ही प्राप्त करना है। इस युग में महात्मा गाँधी प्रमुख नेता के रूप में स्थापित इन्होंने भारतीय राजनीति में एक नई विचारधारा का सूत्रपात किया। कांग्रेस ने छुपकर षड्यंत्रों की नीति की निन्दा की और अन्याय का स्पष्ट और सामने से विरोध करने का आह्वान किया। उन्होंने सत्याग्रह अर्थात् सरकार के प्रति अहिंसात्मक असहयोग की नीति अपनाई। गाँधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस आन्दोलन एक सार्वजनिक आन्दोलन बन गया। कांग्रेस संगठन को अधिक सुदृढ़ बनाया गया और उसे अधिक जनतान्त्रिक बनाया गया। कांग्रेस का उद्देश्य भारतीय समाज का सर्वांगीण विकास था। महात्मा गाँधी इस उद्देश्य से लोगों को पाँच व्रत लेने को कहते थे- चर्खा काटना, अस्पृश्यता मिटाना, मादक वस्तु निषेध, हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्त्रियों के प्रति समानता का व्यवहार। इन व्रतों का भी अहिंसा द्वारा ही प्रचार करना था।

सन् १६१६ के भारत सरकार अधिनियम के कार्य की समीक्षा करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने १६२७ में एक आयोग जिसे प्रायः साईमन आयोग कहा जाता है, नियुक्त किया। लार्ड बिरकनहैड ने भारतीयों को इस आयोग में सम्मिलित न करने का कारण यह बताया कि भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों मे अत्यधिक भेद है और कहा कि यदि सभी दल मिलकर एक संविधान प्रस्तुत करें तो अंग्रेजी संसद उस पर विचार कर सकती है। भारतीयों ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया और सभी दलों ने एक सम्मेलन में पं० मोतीलाल नेहरू के नेतृत्व में एक उपसमिति को एक संविधान का मसबिदा तैयार करने को कहा। इस उपसमिति ने सुप्रसिद्ध नेहरु रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें अंग्रेजी साम्राज्य में स्वशासित प्रदेशों की नाई एक उत्तरदाई सरकार का सुभाव दिया गया था, परन्तु इसका कुछ भी नहीं बना। दिसम्बर १६२६ में कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें भारत में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने का ध्येय निश्चित किया गया।

जून १६४५ में लार्ड बेवल ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों को शिमला में एक सम्मेलन में आमंत्रित किया ताकि संवैधानिक गतिरोध दूर किया जा सके। साम्प्रदायिक गतिरोध के कारण ये प्रस्ताव असफल हुए। सितम्बर १६४५ में एटली जो नए अंग्रेज प्रधानमंत्री थे, उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के अधिकार को स्वीकार कर लिया। एक ब्रिटिश मंत्रिमण्डल का शिष्टमण्डल जिसमें लार्ड पैथिक लारेन्स, सर स्टेफर्ड क्रिव्स तथा ए.वी. एलेक्जैण्डर थे, भारत भेजा गया। इस शिष्टमण्डल ने मुस्लिम-लीग की माँग कि एक स्वशासित पाकिस्तान राज्य बनाया जाए, अस्वीकार कर दी क्योंकि उनके अनुसार यह असाध्य थी, परन्तु उन्होंने यह स्वीकार कर लिया कि केन्द्रीय सरकार के पास केवल विदेशी मामले, रक्षा तथा संचार व्यवस्था रहे और शेष सभी मामले प्रान्तों के पास रहें। इन प्रान्तों को यह अधिकार होगा कि यदि वे अपना एक छोटा भिन्न संघ भी बनाना चाहें तो बना लें। मुस्लिम लीग को यह योजना स्वीकार नहीं थी। उसने १६ अगस्त, १६४६ को एक सीधी कार्यवाही दिवस मानने की योजना बनाई। यह साम्प्रदायिक दंगों का आरम्भ था जो बंगाल में आरम्भ हुआ और फिर शनैः-शनैः समस्त भारत में फैल गया, फिर भी ३ दिसम्बर, १६४६ को भारत में एक अन्तरिम सरकार बना दी गई, जिसमें पं० जवाहरलाल नेहरू को प्रधानमंत्री बनाया गया। भारत में संविधान बनाने के लिए एक संविधान सभा स्थापित की जिसने ६ दिसम्बर, १६४६ को अपना प्रथम अधिवेशन आरम्भ किया।

Assessment of Gandhi's Role in Indian struggle for Independence-

हात्मा गाँधीजी भारतीय राजनीति में मसीहा की नाई १९१६ में उभरे और फिर १९४७ तक भारतीय राजनीति पर छाए रहे। यह प्रभाव कितना अधिक था, वह **पं० नेहरू जी** के मूल्यांकन से पता चलता है। १९४५ में उन्होंने लिखा था – **"गाँधी जी का प्रभाव उन लोगों तक सीमित नहीं जो उन्हें राष्ट्र नेता मानते हैं अथवा उनसे सहमत हैं। यह तो उन लोगों पर भी पड़ा दिखाई देता है जो उनसे असहमत हैं अथवा उनकी आलोचना करते हैं भारत के असंख्य लोगों के लिए वह भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त करने की इच्छा तथा उग्र राष्ट्रवाद के प्रतीक हैं तथा गर्वपूर्ण शक्ति के सामने झुकने से इंकार करते है अथवा ऐसी किसी आज्ञा को स्वीकार नहीं करते जिसमें देश का अनादर होता है। यद्यपि भारत के बहुत से लोग सैकड़ों बातों में उनसे सहमत नहीं हैं..... परन्तु जब भारत की स्वतंत्रता की बात आती है तो वे सब उन्हीं के पास भागते हैं और उन्हें अपना अपरिहार्य नेता मानते है।"१**

गाँधी जी ने न केवल प्रत्येक भारतीय के दिल में दासता से घृणा और स्वतंत्रता से प्यार उत्पन्न किया, अपितु साम्राज्यवादी भी अनुभव करने लगे कि भारत पर अंग्रेजी अधिकार अन्यायपूर्ण और गलत है। उन्होंने अनुभव किया कि गाँधी और कांग्रेस जब चाहें भारतीय प्रशासन का चलना असम्भव बना सकते हैं। एक बार अंग्रेज प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल से बातचीत करने के पश्चात् सम्राट जार्ज ने अपनी डायरी में २८ जुलाई सन् १९४२ को यों लिखा था कि उस (चर्चिल) ने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया है यह कहकर कि उसके सभी सहयोगी और संसद के तीनों दल युद्ध के पश्चात् भारत को भारतीयों के हाथों में छोड़ने को उद्यत हैं। वे यह अनुभव करते है कि वे सब के सब इस बात को मान गए हैं। क्रिप्स समाचार पत्र और अमरोका का लोकमत सभी ने उनके मन में यह भावना भर दी है कि हमारा भारत पर राजकरना गलत है और सदैव से भारत के लिए भी गलत रहा है।"

तो इस प्रकार गाँधी जी के ढंगों से शासकों को यह मानना पड़ा कि भारतीयों के हाथों में शक्ति हस्तान्तरण करना अपरिहार्य ही नहीं अपितु इसे अब देर तक रोकना असम्भव है।

<u>सामाजिक–</u>

भारत अपनी जनसंख्या एवं क्षेत्र विस्तार से एक विशाल देश है। सदियों से विभिन्न रीति-रिवाज, आचार-विचार, भाषा, धर्म आदि मानने वाली अनेक जातियाँ इस देश में आक्रामक एवं विस्थापित बनकर आई और स्थाई रूप से यहाँ बस गई।

समाज में पुरूष की सर्वोपरिता थी। मध्ययुग में विदेशियों के लगातार आक्रमण की स्थिति में ग्रामीण समाज में कड़े सामाजिक बन्धनों के साथ जातिप्रथा व छुआछूत की भावना बढ़ती गई। कर्म पर आधारित वर्ण-व्यवस्था नष्ट होते ही अनेक जातियाँ और उपजातियाँ अस्तित्व में आई। समाज में ब्राह्मण सर्वोपरि ही रहे। इससे ऊँच-नीच की भावना अधिक बढ़ी। परिवर्तित परिस्थितियों में समाज परिवर्तन के लिए नवीन विचारधारा और साहसाभाव के कारण युवक-वर्ग का हमारे सामाजिक कुरीति-रिवाजों से खिन्न रहा। शिक्षित युवक-वर्ग के सामने नए शासक-वर्ग के समाज और धर्म का आदर्श था, इसलिए हिन्दू धर्म की जड़ता से ऊबे हुए अनेकों ने ईसाई धर्म को अपनाया। यही नहीं शिक्षितों ने पाश्चात्य फैशन, संस्कृति, भाषा, वाणी, व्यवहार आदि का अनुकरण किया। वे भारतीय तत्वज्ञान, नैतिकता और संस्कारों को छोड़कर

ेक बात में पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करते हुए सगर्व यूरोपीय तत्वज्ञान तथा साहित्य के अध्ययन में अपना समय तीत करने लगे। भारतीय समाज-परिवर्तन के आन्दोलनों की यही पूर्व भूमिका थी। पाश्चात्य प्रभाव से आधुनिक आर्थिक रेस्थितियाँ उत्पन्न हुई और गाँव टूट कर नए औद्योगिक केन्द्र स्थापित होने लगे। नगरों में गाँवों-सी कर्मानुसार जातीय जड़ता म्भव न थी। ब्राह्मण, वैश्यों-सा व्यापार करने लगे और जातियाँ छोटी-बड़ी नौकरी था व्यापार में जुट गई। जातीय ऊँच-नीच ा भेद-भाव यहाँ टिक न सका। रेल के डब्बों, होटलों, ट्रामों और गलियों की भीड़ में छूत-छात का पालन असम्भव था। रकारी नौकरियों में भी कोई भेद-भाव नहीं था। इन परिस्थितियों में खान-पान, जाति गौरव, अन्तर्विवाह आदि के बन्धन ीले पड़ने लगे। स्वातन्त्र्य-पूर्व तक शिक्षित एवं अधिकारों के लिए अधिक जागरूक मध्यम-वर्ग अपनी जातीय जड़ता को दूर करने में गाँधी जी, स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा राममोहनराय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, भारतेन्दु नर्मद आदि समाज-सुधारकों को पूर्ण सहयोग देता रहा।

अंग्रेजों से पूर्व विदेशी आक्रमणकारियों की विषय-लोलुप दृष्टि से बचाने के लिए नारी पर कड़े बंधन लगाकर उसे घूँघट-पर्दे में रखा गया था। स्त्री शिक्षा से वंचित रही, इसका भी प्रभाव समाज पर पड़ा। नारी जीवन के वे स्वर्ण-दिन अब न रहे जब वह **'स्वयंवर'** में अपना पति स्वयं चुनती थी। पिता बाल-विवाह कर मानो कन्या को लेकर उत्पन्न होने वाली भावी आपदों से शीघ्र छुटकारा पाना चाहता था। साथ ही सती- प्रथा, एक पतिव्रत आदि स्त्री के आदर्श थे। पुरूष सर्वोपरि होने से इन सबसे मुक्त था। बाल विवाह के दूषण रूप छोटी उम्र में बीमार बच्चे पैदा होने, कम उम्र के पति-पत्नी गृह-संचालन में अनाड़ी से रहते, खाने वालों की संख्या बढ़ते रहने से दरिद्रता बढ़ती और यथोचित पोषणाभाव में रोग का भोग हो शीघ्र मौत का शिकार बनते।

बालविधवाएँ भी पुनर्विवाह से वंचित थीं। नारी पर अपार अत्याचार भी होते। ब्रह्मसमाज के संस्थापक राजाराममोहनराय ने समाज में व्याप्त धार्मिक अंधश्रद्धा, क्रियाकांड, जातिप्रथा, छुआ-छूत के साथ बाल-विवाह सती प्रथा आदि के द्वारा स्त्री पर होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध समाज को जाग्रत किया। अनेक सुधारकों ने विधवा-विवाह का समर्थन किया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने तो सिर्फ वाणी द्वारा ही नहीं, अपितु कर्मद्वारा भी विधवा-विवाह करके अपने प्रशंसकों को प्रेरणा दी।

"नारी पर सामाजिक अत्याचार, उसकी हीन आर्थिक अवस्था, विधवाओं की करूण दशा एवं दक्षिण भारत में देवदासी-प्रथा के कारण वेश्यावृति को प्रोत्साहन मिला।"[२] समाज में वेश्याओं की करूण स्थिति तथा अनैतिकता का वातावरण देखकर अनेक समाज-सुधारकों के आग्रह से मद्रास सरकार ने देवदासी प्रथा को १६३४ ई० के देवदासी अधिनियम द्वारा नष्ट कर दिया। उसके अनुसार सहयोग देने वाले लोगों के लिए भी दंड एवं कैद की व्यवस्था थी। मैसूर राज्य, बम्बई राज्य तथा अन्य राज्यों ने भी इस प्रथा को नष्ट कर दिया और देवदासी एवं वेश्या को विवाह करके समाज में सम्मानीय जीवन व्यतीत करने के वैद्यानिक अधिकार दिए। आन्ध्र राज्य ने भी विवाह के अवसर पर बारात में; जुलूस मे औरतों के नाचने की प्रथा को अधिनियम द्वारा बन्द करवाया। भारतीय हिन्दू नारी से भारतीय ईसाई समाज में नारी की स्थिति कुछ अधिक उन्नत थी, किन्तु मुस्लिम नारी की करूणतम दशा थी। देशव्यापी नारी सुधार आन्दोलन के अन्तर्गत मुस्लिम नारी-सुधार भी आ जाता था। १८३६ ई० के **'डिस्साल्यूशन आव् मुस्लिम**

मैरेज ऐक्ट ८' के अनुसार मुस्लिम नारी को भी संरक्षण दिया गया। इस प्रकार आलोच्ययुग में नई परिस्थितियों में नारी को अधिकार से वंचित रखना देश के लिए घातक सिद्ध हो सकता था। अतः स्त्रियाँ काफी मात्रा में मिलों, दफ्तरों, स्कूलों आदि स्थानों में नौकरियाँ करने लगी और उनकी नौकरियों के अलग अधिनियम भी अस्तित्व में आए। यों नारी ने सामाजिक जड़ता के होते हुए भी समाज में इस युग में प्रतिष्ठापूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था।

आर्थिकः-

अंग्रेजों के आगमन-पूर्व भारत सुसम्पन्न कृषि प्रधान एवं औद्योगिक देश था। गाँव देश की समृद्धि की आधार शिला थे। भारत की अधिकांश जनसंख्या गाँव में निवास करती थी। भारत को 'सोने की चिड़िया' कहा जाता था। गाँवों में खेती तथा उद्योग धन्धों का सुसंकलित विकास हुआ था। भारत एक कृषि प्रधान देश था। अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आश्रित थी। सभी लोग खेती अच्छी तरह से करते थे। उस समय कृषि की दशा खराब नहीं थी। जो लोग खेतों को हानि पहुँचाते थे। उन्हें कड़ी से कड़ी सजा दी जाती थी। गाँव में आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु उत्पन्न की जाती और व्रत त्यौहारों पर लगने वाले मेलों में गाँव की ये चीजें नगरजनों के लिए उपलब्ध होती थीं।

ब्रिटिश शासकों की औपनिवेशिक नीति के फलस्वरूप इस देश में कृषि का कोई विकास नहीं हुआ। इन शासकों ने जमीदारों का एक नया वर्ग खड़ा कर दिया, जिसका मुख्य कार्य ही किसानों का शोषण करना था। यह वर्ग मध्यस्थों व परजीवियों का वर्ग था। जमींदार कुल कृषि उत्पादन का एक बहुत बड़ा हिस्सा लगान के रूप में काश्तकारों व किसानों से छीन लेते थे, जिससे वास्तविक काश्तकार के पास केवल-जीवन निर्वाह योग्य साधन ही बच पाते थे, इसलिए जहाँ एक ओर उनकी स्थिति बदत्तर होती चली गई; वहीं साधनों के अभाव में कृषि में निवेश भी बढ़ नहीं पाया। जमींदार चाहते तो कृषि में निवेश कर सकते थे, परन्तु वे अधिकतर साधनों का अपव्यय विलासिता की उपभोग वस्तुओं पर कर देते थे। इस प्रकार स्वतंत्रता से पूर्व कृषि व्यवसाय जीवन निर्वाह का साधन मात्र बनकर रह गया। जमींदार और महाजन ऋणों के भुगतान की आड़ में किसानों की जमीन हड़प जाते थे।, इससे खेतिहर मजदूरों का एक नया वर्ग पैदा हो गया। मजदूरी का स्तर बहुत ही कम होता था। किसानों का एक बहुत बड़ा वर्ग कृषि से केवल जीवन-निर्वाह योग्य आय ही अर्जित कर पाता था। यह स्थिति काफी समय तक बनी रही।

आज़ादी के समय कृषि पिछड़ी अवस्था में थी। उसमें श्रम और भूमि की उत्पादिता कम थी। खेती का ढंग परम्परागत था। अधिकांश किसान पीढ़ियों पुरानी रीतियों से खेती करते थे। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग नाममात्र था। किसान प्रायः जीवन निर्वाह के लिए ही खेती करते थे। दूसरे शब्दों में बड़े पैमाने पर कृषि का वाणिज्यीकरण नहीं हुआ था। मुद्रा का महत्व गाँव की अर्थव्यवस्था में कितना कम होगा। १९५१-५२ में भी किसानों के उपभोग में लगभग ४५ प्रतिशत अंश उनके ही द्वारा उत्पादित वस्तुओं का होता था।

गरीबी एक बहुत बड़ा अभिशाप माना गया हैं। औपनिवेशिक काल में बढ़ती हुई गरीबी इस देश के आर्थिक पिछड़ेपन का ही प्रमाण थी। यद्यपि ब्रिटिशकाल में गरीबी के बारे में आँकड़े नहीं मिलते, लेकिन सरकारी दस्तावेजों में इस तरह के तथ्यों का उल्लेख है। जिनसे साबित होता है कि अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत गरीबी बढ़ी है। राष्ट्रवादियों में सबसे पहले इस ओर दादाभाई नौरेजी ने ध्यान दिया। उन्होंने लिखा है कि देश लगातार गरीब और पंगु बनता जा

रहा है।

भारत में भूमि का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। मानव तथा अन्य जीवजन्तु इस पर निवास करते हैं। भूमि पर सड़क, रेल, यातायात, नहरें, कुएँ, तालाब, हैडपम्प, पोखर, झरने सब भूमि पर ही बनाए जाते हैं। वनसम्पदा को बढ़ाने और पशुपालन के लिए चरागाहों का विकास करने के लिए भूमि की आवश्यकता पड़ती है। ऊबड़-खाबड़, बंजर, दलदली तथा रेतीली भूमि अधिक उपयोगी नहीं होती है।

भारत का विश्व में सातंवा स्थान है, जबकि जनसंख्या के हिसाब से दूसरा भारत का कुल भौगेलिक क्षेत्र ९२.७ प्रतिशत क्षेत्र के आकड़े उपलब्ध हैं। बनों के अधीन ६ करोड़ ३७ लाख हैक्टर भूमि हैं, जो रिपोर्टेड क्षेत्र का २०.६ प्रतिशत है।

सांस्कृतिक-धार्मिक परिस्थितियाँ-

अंग्रेजों के आगमन-पूर्व भारतीय समाज सामंती व्यवस्था, राजनीतिक अस्थिरता एवं प्राकृतिक संकटों से अपरिवर्तनशील एवं भाग्यवादी हो चुका था, परन्तु भारतीयों को संसार में अनुकरणीय गौरव-प्राप्त और प्राचीनतम अपनी संस्कृति एवं धर्म पर अभिमान था। भला वे आक्रामकों की संस्कृति का अनायास ही आधिपत्य कैसे मान लेते? किन्तु इस विदेशी संस्कृति का भारत-प्रवेश राजनीतिक आधिपत्य के बल पर हुआ था। अतः प्रश्न शासक-शासित का था और शासित को कहने-सुनने का अवसर ही नहीं था। शासक अपना व्यापारिक लाभकारी वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा निजी धर्म-प्रचारक मिशनरियों को लाया था। फलतः इससे दोनों संस्कृतियों में संघर्ष की तीव्रता के साथ अनिवार्य आकस्मिक देशव्यापी परिवर्तन भी यहाँ के जनजीवन में दृष्टिगोचर हुए। **“यह सांस्कृतिक नवोत्थान दिनकरजी के अनुसार सबसे अधिक शक्तिशाली और श्रेष्ठ था।“**३ **“गीता में विराट के भयानक संहारक विश्वरूप-दर्शन से अर्जुन की जो विह्वल दशा हुई, वैसी ही स्थिति अंग्रेजों के द्वारा पाश्चात्य संस्कृति के आगमन पर भारतीयों की हुई।”**४ पाश्चात्य संस्कृति ने सभी क्षेत्रों में हमारे कूप-मण्डूक विश्वासों को धक्का पहुँचाया। सम्पूर्ण सत्य-दर्शन के अभाव में जिसे जो सत्य लगा उसी को लेकर देश में अनेक सुधारवादी आंदोलन आरम्भ हुए, जिनमें तीन प्रकार की विचारधारा वाले सांस्कृतिक आंदोलनकारी दिखाई पड़ते हैं। प्रथम प्रकार के वे लोग थे, जिन्होंने सभी दृष्टियों से भारतीय हिन्दू संस्कृति को श्रेष्ठ बताया और उसे दूसरों से कुछ भी प्राप्त करने की अनावश्यकता घोषित कर सभी दिशाओं के ज्ञान-विज्ञान के सारे द्वार-झरोखे बंद करके भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता के गुणगान में आत्मसंतोष माना। इनमें **‘आर्यसमाज’** के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती, अरविन्द घोष, ऐनीबेसन्ट, बालगंगाधर तिलक आदि थे, परन्तु ये अपने दोषों के प्रति जागरूक थे, अतः सांस्कृतिक गुणगान के साथ मानव को केन्द्र में रखकर इन्होंने अनिवार्य सुधार भी किए। इसी समय प्राचीन संस्कृति के गौरव पर सांस्कृतिक खोज-ग्रंथों के द्वारा मैक्समूलर एवं सर चार्ल्स विकिन्स जैसे पाश्चात्य विद्वानों और रामकृष्ण भाण्डारकर एवं राजेन्द्रलाल जैसे प्रसिद्ध भारतीय इतिहासकारों ने भारत के सांस्कृतिक गौरव एवं संस्कृत साहित्य के अमूल्य भण्डार पर प्रकाश डाला, जिससे संस्कृति के समर्थकों को और बल मिला।

दूसरा दल विदेशी संस्कृति का अंधानुकरण करने वालों का था। सांस्कृतिक लघुताग्रन्थि से पीड़ित ये लोग

रूप-रंग में भारतीय होते हुए भी सभी दृष्टि से यूरोपीय थे। सरकार-परस्त अंग्रेजीदाँ यह विशाल वर्ग अंग्रेजों को हर प्रकार से समर्थक ही रहा। ब्रह्मसमाज के **केशवचन्द्रसेन** ऐसे ही व्यक्ति थे, जो भारतीय संस्कृति की प्रत्येक बात से घृणा करते थे। इन दो अतिवादी दलों के बीच स्वस्थ-मना मध्यमार्गी जागरूक विचारकों का तीसरा दल था, जिन्होंने दोनों संस्कृतियों के अच्छे तत्वों का समन्वयकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। साथ ही पाश्चात्य संस्कृति के श्रेष्ठ तत्वों का भारतीयकरण करके अनावश्यक द्वेषभावना एवं संघर्ष को दूर किया। ऐसे उदारमना मनीषियों में **राजा राममोहनराय, स्वामी विवेकानंद, रानाडे और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर** का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने अपने विभिन्न 'समाजों' द्वारा भारतीय संस्कृति के सभी उपयोगी तत्वों को आकर्षक रूप देकर जनता में सांस्कृतिक आत्मगौरव एवं आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न करके देश के पुनः निर्माण के लिए यूरोपीय भौतिक सिद्धियों से लाभ-प्राप्ति के लिए दोनों संस्कृतियों का सहयोग अनिवार्य बतलाया। इन चिंतकों में सर्वधर्मसमन्वय की भावना बलवती थी। **राजा राममोहनराय** ने समानाधिकार से बोल सकें ऐसा तीनों धर्मों का गहन अध्ययन किया था। **"हिन्दुत्व की पवित्रता इस्लाम की रूचि और विश्वास तथा ईसाईयत की सफाई तर्क उन्हें बेहद पसन्द थी।"**[५] इस उदारनीति से सभी **"समाज प्रत्येक धर्म-जाति के लिए खुले थे। राजा राममोहनराय से गाँधीजी तक के सामाजिक सुधार-आन्दोलन एवं स्वाधीनता आन्दोलन के नेता मध्यमार्गी विचारधारा से प्रभावित एवं धार्मिक संकुचितता से मुक्त थे। इन मनीषियों के आन्दोलन भी प्रगतिशील एवं विपरीत परिस्थितियों से मुठभेड़ लेने वाले थे।"**[६] **"साम्राज्यवादी शासक प्रारम्भ में धर्म एवं समाज के मामले में तटस्थ रहे, परन्तु पाश्चात्य संस्कृति के समर्थकों के दबाव तले भारत में यूरोपीय संस्कृति का प्रचलन किया गया और विदेशी पादरी पाश्चात्य साम्राज्यवाद के सहायक रहे।"**[७] इससे पाश्चात्य संस्कृति एवं धर्म के प्रति घृणा बढ़ती गई एवं राजनैतिक स्वातंत्र्य की भावना दृढ़तम होती गई। प्रत्येक विदेशी वस्तु धिक्कार-पात्र है इस भावना से विदेशी इस्लाम धर्म की उपेक्षा भी बढ़ी। यहाँ मुसलमानों ने इस्लाम को सर्वांग सम्पूर्ण धर्म बताकर विधर्मियों से कुछ न लेने की बात प्रकट की और इस्लाम में भारत के योगदान की उपेक्षा कर अरब राष्ट्रों से ही प्रेरणा-प्राप्त कर हिन्दू धर्म की प्राचीनता के प्रति भी अरूचि प्रकट की गई। सरकार से प्रोत्साहित लोग तथा **मि० जिन्ना** ने मुसलमानों में हिन्दुओं के प्रति सफलता से धिक्कार की भावना उत्पन्न की, परन्तु कांग्रेस एवं **गाँधी** जी के कारण देश में धार्मिक ऐक्य की स्वस्थ भावना बनी रहे।

"भौतिक उन्नति के इस काल में रेल, तार रेडियो, हवाईजहाज, सिनेमा आदि आविष्कारों के कारण देश और काल पर विजय स्थापित हुई और संसार के विभिन्न देश एक दूसरे के बहुत समीप आए।"[८] भारत की ओर से सर सी०वी०रामन ने 'प्रकाश' सम्बंधी एवं जगदीशचन्द्र बोस ने वनस्पति मनोविज्ञान पर नवीन आविष्कारों द्वारा विज्ञाम जगत में योगदान दिया। अब चिंतन में भी वैज्ञानिकता के मेल से वैज्ञानिक-बौद्धिकता की भावना प्रबल हुई। भारतीय पूँजीपतियों ने आर्थिक दृष्टि से ही स्वातन्त्र्य-आन्दोलन का समर्थन किया था और इसी कारण विदेशियों से व्यापारी समझौते भी किए। स्वार्थांध पूँजीपतियों ने युद्धकाल में काफी धन कमाया, इससे भारत में भी यथार्थवादी भौतिक समाजवादी या मार्क्सवादी विचारधारा सशक्त होती गई। कार्लमार्क्स ने अपने विचारों का वैज्ञानिक विश्लेषण कर सामाजिक क्रियात्मक परिवर्तन पर जोर दिया, इसलिए इसे मार्क्सवाद की संज्ञा मिली। मार्क्सवाद को वैज्ञानिक

समाजवाद की श्रेणी प्राप्त हुई और इसके दार्शनिक दृष्टिकोण को **'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद'** भी कहा गया। यह वर्ग-संघर्ष पर आधारित है। एक है शोषक, दूसरा है शोषित। शोषक समाज में आर्थिक एवं राजनीतिक शासन करता है। शोषित अपने शारीरिक श्रम-फल से भी वंचित रहता है। इसी से शोषक-शोषित वर्ग में संघर्ष अनिवार्य हो जाता है। संघर्ष के बाद क्रांतिकारी प्रगतिशील एवं शक्तिशाली वर्ग के हाथ में समाज व्यवस्था की नई बागडोर आती है। तब सर्व प्रकार के शोषणों से समाज मुक्त हो जाता है। रूस में लेनिन एवं स्टेलिन, चीन में माओत्सेतुंग और वियतनाम में होचीमिन्ह ने मार्क्सवाद के समाजवादी दृष्टिकोण को क्रियात्मक रूप दिया। इन साम्यवादी देशों की सफलता का प्रभाव भारतीय विचार धारा पर भी पड़ा। स्वातंत्र्य पूर्व तक भारत में समाजवादी दृष्टिकोण को जनप्रिय बनाने में कम्युनिस्ट पार्टी ने समाजवादी साहित्य द्वारा काफी योग दिया, परन्तु पार्टी के अप्रतिभाशाली नेतागण एवं अपरिपक्व प्रचार-कार्य से इसे गति न मिली। कांग्रेस के समाजवादी प्रगतिशील नेताओं ने यह कार्य अधिक तीव्रता से किया। आलोच्यकाल में मार्क्सवाद के साथ चिंतन के क्षेत्र में फ्रायडवाद का भी काफी प्रभाव पड़ा। फ्रायड ने कामवृत्ति और उसके अचेतन रूप से दमन को ही व्यक्ति एवं समाज की समस्याओं का मूल कारण बताया। साथ ही एडलर की मनोवैज्ञानिक मनोविश्लेषणात्मक पद्धति भी मान्य हुई। शिक्षित वर्ग पर इस चिंतनधारा का पूर्ण प्रभाव पड़ा और यौन-मान्यताओं में परिवर्तन के साथ नैतिकता के बंधन भी ढीले पड़े। इसका प्रभाव समाज, साहित्य और संस्कृति पर लक्षित हुआ। इससे आध्यात्मिकता की अपेक्षा भौतिकता का महत्व बढ़ा, परन्तु भारत की धर्म-निरपेक्षता के कारण नई भारतीय संस्कृति में आध्यात्मवाद एवं भौतिकवाद का समन्वय दृष्टिगत हुआ, जिसके कारण विश्व बंधुत्व एवं विश्व शान्ति-भावना को शक्ति प्राप्त हुई।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भीष्म साहनी के युग में आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक और सामाजिक चेतना से संबंधित इन आंदोलनों के केन्द्रस्थान बहुधा नगर एवं शिक्षित समाज ही रहे, किन्तु शोषित कृषक तथा श्रमिक भी इनसे पूर्णतः अलिप्त नहीं थे। इस युग में भारतीयों की दशा सोचनीय थी और नारी का शोषण होता था। अंग्रेजों का उद्देश्य **'फूट डालो शासन करो'** की नीति थी। हमारी अर्थव्यवस्था बहुत पिछड़ी हुई थी। जो देश कभी **'सोने की चिड़ियाँ'** कहा जाता था; वह अंग्रेजों की गुलामी के कारण परतन्त्र हो गया, फिर १५ अगस्त, १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ। हमारे समाज के प्रातः स्मरणीय पूज्यनीय श्रेष्ठ बुद्धिजीवी **महात्मागाँधी, राजा राममोहनराय, भगतसिंह, सरोजिनी नायडू,** विजयालक्ष्मी पंडित, सुभद्राकुमारी चौहान, **मद्रास की रूक्मिणी लक्ष्मीपति, कमला नेहरू, हन्नाह सेन, मृदुला साराभाई, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, कस्तूरबा गाँधी, जवाहरलाल नेहरु** आदि महान आत्माओं ने सभी प्रकार के शोषणों के प्रति आवाज बुलंद की, जिससे तत्कालीन समाज में चेतना एवं गति दृष्टिगोचर हुई।

(३.२) रचनाओं का कालक्रमानुसार उल्लेख-

कथासाहित्य

अ- उपन्यास

उपन्यास का नाम		सन्

१- झरोखे १६६७

२- कड़ियाँ १६७०

३- तमस १६७३

४- बसंती १६८०

५- मय्यादास की माड़ी १६८८

६- कुंतो १६६३

७- नीलू नीलिमा नीलोफ़र २०००

ब- कहानी का संग्रह

	कहानी का नाम	सन्
१-	भाग्यरेखा	१६५३
२-	पहला पाठ	१६५६
३-	भटकती राख	१६६६
४-	पटरियाँ	१६७३
५-	वाङ्चू	१६७८
६-	शोभायात्रा	१६८१
७-	निशाचर	१६८३
८-	पाली	१६८६
६-	डायन	१६६८
१०-	मेरी प्रिय कहानियाँ	२००२

स- नाटक

	नाटक का नाम	सन्
१-	हानूश	१६७७
२-	कबिरा खड़ा बजार में	१६८१
३-	माधवी	१६८४
४-	मुआवजा	१६६३
६-	आलमगीर	१६६६

द- अन्य

निबंध संग्रह

	निबंध का नाम	सन्
१-	अपनी बात	१६८६

हो। यह बात को सुनकर घर के सभी सदस्य व रिश्तेदार दुखी हुए। उन्होंने अपनी छोटी बेटी का विवाह धनपत के बड़े बेटे पागल कल्ले से करना चाहा। जब विवाह का मुहूर्त निकाला जा रहा था, तब उसी समय मलिक मंसाराम की पत्नी को चक्कर आ गया। पुरोहित रामदास उसी समय एक खेलती बच्ची को उठा लाया और उसी क्षण आसन पर बैठाकर विवाह के मंत्र पढ़ने लगा। जब यह बात हरनारायण की बेटी वीरावली को पता चली, तब उसने रामदास को खूब गालियाँ दी - **"इससे कहो जी, चला जाए यहाँ से। इस द्वार पर इसका साया भी नहीं पड़े, जिसने मेरी बेटी को कुएँ में झोंका है, वह तिल-तिलकर मरे, उसे बावले कुत्ते काटे; उसे फनियर साँप डस-डस जाए...... ।"**११

रुक्मणी के लिए माड़ी एक नई जगह थी। वह जगह-जगह घूमती रहती थी। माड़ी की नींव दीवान मथरादास ने रखी थी। एक महामारी में मथरादास की मृत्यु हो गई। मथरादास के बाद उसका बेटा मय्यादास माड़ी का मालिक बना। मय्यादास का जवान बेटा मर गया। वह इस मुसीबत को झेल तो अवश्य गया, परन्तु जमाने से उसका दिल टूट गया। उसका छोटा भाई गोकुलदास था, जिसे मय्यादास के प्रभाव से काबुल दरबार में कारदार नियुक्त कर दिया गया। गोकुलदास ने एक रखैल को रख लिया था। दो तीन साल बाद उसे माड़ी से बाहर निकाल दिया। उस रखैल से एक पुत्र हुआ, जिसका नाम धनपत था। धनपत का दीवान मय्यादास ने काफी अपमान किया। उसने दीवान मय्यादास से अपना हिस्सा माँगा, लेकिन मय्यादास ने उसे कुछ नहीं दिया और उसका सामान बाहर फिंकवा दिया। धनपत गम्भीरता से बोला - **"कोई फ़िक्र नहीं ताऊजी, फेंक दो सामान, पर मैं भी दीवान हूँ और अपना हक़ लेकर रहूँगा।"**१२

धनपत अंग्रेजों से जा मिला। वह कस्बे का पहला व्यक्ति था, जो साहिब बहादुर के पास कुछ माँगने गया था। उसने अपना परिचय बड़ा संक्षिप्त दिया- **"हुजूर ने मुझे किसी छावनी में देखा होगा। ख़ादिम ने बहुत छावनियाँ छानी हैं"** और यह कहते हुए उसने हाथ बढ़ाकर अपनी पोटली खोल दी- **"यही हमारे कागजात हैं, हुजूर, यही हमारी वफादारी का सबूत है।"**१३

पोटली में ऊँटों की छोटी-छोटी दुमें, जिनके एक सिरे पर काले-काले बालों का छोटा-सा गुच्छा था और पीछे सूखी, बेंत की तरह अकड़ी हुई, धूसर रंग की पूँछा साहिब बहादुर ने मन ही मन सोचा था - **"तो यह है वह आदमी जो जंग के दिनों में ब्रिटिश सरकार को ऊँट सप्लाई किया करता था और मरे हुए ऊँटों की पूँछ काट-काटकर नए-नए आर्डर लिया करता था।"**१४

धनपत की लाटरी खुल गई थी। साहिब बहादुर ने उसे तीन गाँव की जागीरदारी की सनद सौंपी थी। यद्यपि कस्बे के रईस साहूकारों को भी सनदें मिली थी, परन्तु पलड़ा भारी धनपत ही का था।

धनपत ने माड़ी पर कब्जा किया और मय्यादास का सामान बाहर फिंकवा दिया था। वह अब दीवान धनपत बन चुका था। उसके तीन बेटे थे। बानप्रस्थी जी ने कस्बे में एक स्कूल खोला था। उनकी एक बेटी सुमित्रा थी, जो असमय विधवा हो गई थी। उसने अपने पिता से कहा था कि अगर मैं पढ़ना जानती तो शायद अपने पति की चिठ्ठी पढ़कर उन्हें बचा पाती और इसी गम में एक दिन वह भी चल बसी थी। उसी क्षण वानप्रस्थी ने प्रतिज्ञा की थी कि वह

स्कूल खोलेगा। वानप्रस्थी के स्कूल का धनपत ने खूब विरोध किया। रुक्मणी ने उस स्कूल में अपना नाम लिखवाया। उसको देखकर दो लड़कियों ने और नाम लिखवाया। दीवान धनपत जब कचहरी की ओर जा रहा था, तब उसे उसका मझला बेटा मिला। उसने अपने पिता को खूब बुरा भला कहा। बेटे का अपने पिता के प्रति यह कथन इस प्रकार है - **"रुक्मणी को पालकी में स्कूल भेजते हैं? तुम्हारी माँ लगती है, क्या ?"१५**

दीवान धनपत की मृत्यु हो चुकी थी। रूक्मणी ने कल्ले को लाहौर अस्पताल में भरती करवा दिया। उसे यह विश्वास हो गया था कि जब वह ढ़ाई माह बाद अमरनाथ से लौटेगी, तब वह पूर्णतः ठीक होगा।

दीवान धनपत के छोटे बेटे का नाम हुकूमत राय था। हुकूमत ने अपने मझले भाई को खेतों की रखवाली के लिए खेतों में भेज दिया। स्वयं दीवान हुकूमत बना। उसने कस्बे की एक लड़की लाजो से विवाह किया, फिर उससे उसका मोह हट गया। हुकूमत राय उसे तिल-तिलकर जलाने लगा। लाजो ने एक दिन आत्महत्या कर ली। हुकूमत राय जनता पर अत्याचार करता था। फिरंगियों के विरोध में जुलूस निकालने में विरोध पैदा करता फिर तिलकराज आज़ाद हुकूमत राय को आकर माड़ी में धमका गया- **"कल फिर लाठी-चार्ज करवाना। लाठी नहीं, गोली चलवाना। कुछ लोग आज घबराकर भागे हैं, पर कल नहीं भागेंगे। --- सुना है तुम रायबहादुर बनोगे?"१६**

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भीष्म जी इस उपन्यास के माध्यम से यह बताने का पूर्ण प्रयास करते हैं कि अंग्रेजी शासन व्यवस्था ने भारत के संसाधनों की कैसी लूट की है? उनके थोड़े ही समय के शासन में यहाँ कितने अकाल पड़े और पुरानी सामंती व्यवस्था की जगह जहाँ खेती की भूमि पूरे गाँव की होती थी और लगान भी राजा उपज के अनुसार ही लेता था, वहाँ अंग्रेजों द्वारा स्थापित जमींदारी व्यवस्था ने किस प्रकार ग्रामीण पंचायती समाज को निजी खेतिहरी की शोषणकारी व्यवस्था में बदलकर उसे रैयत और जमींदार के रूप में बाँट दिया, लेकिन 'मय्यादास की माड़ी' एक सामाजिक दस्तावेज ही नहीं, यह नाटकीय उतार-चढ़ावों के साथ अनेक चरित्रों के घात-प्रतिघात की मानवीय कथा है। **'तमस'** में श्वेत-श्याम रंग की प्रधानता है तो यहाँ संभवतः अंग्रेजों के आगमन से पहले भारत की समृद्धि के प्रतीक स्वरूप नीले-पीले, हरे अंगरखों, मणि-मालाओं, रेशमी, पगड़ियों, मुश्की घोड़ों के साथ आकाश और प्रकृति के रंगों की छटा आदि से अंत तक छाई रहती है। मय्यादास की माड़ी निःसंदेह हमें मुग्ध ही नहीं करता, बल्कि हिन्दी उपन्यास साहित्य की प्रौढ़ता और समृद्धि प्रदान करता है।

'झरोखे'-

'झरोखे' की कथावस्तु एक मध्यवर्गीय हिन्दू परिवार से जुड़ी है, जो पूरी तरह से आर्य समाजी है। भीष्मजी ने इस उपन्यास के माध्यम से एक छोटे-से बालक की आँखों से एक परिवार में घटने वाली छोटी-छोटी घटनाओं को देखने और उनका उल्लेख करने की अविस्मरणीय कथा प्रस्तुत की है। उसके सामने घटित प्रत्येक घटना उसके भीतर एक प्रबल संस्कार बन कर आती है और परिवार में बच्चों के भावी चरित्र की रूपरेखा गढ़ती चली जाती है।

बालक अक्सर अस्वस्थ रहता है। बड़ा भाई हर जगह घूमने जाता है, लेकिन वह कहीं नहीं जा पाता है।

बालक दो भाई और दो बहनें हैं। उसकी बहनें विद्या और विमला है। विमला कम हँसती है और विद्या जो बड़ी बहन है, सारा वक्त हँसती रहती है। बालक के घर तुलसी नामक एक नौकर है। दोनों बहनें तुलसी को देखकर जोर से हँसती हैं। बालक को पंडित जी पढ़ाने आते है। वह उन्हें हिन्दी और संस्कृत पढ़ाते हैं। बालक का मन खेलने में ज्यादा; पढ़ने में कम लगता है। भाई पंडित जी को बता देता है कि बालक पेशाबवाली जगह में हाथ लगाता है – **"जी" मैं सिर हिलाकर कहता हूँ, "मैं उसे लम्बा भी कर सकता हूँ।"**१७ पंडित जी बालक को पीटते हैं, भला-बुरा कहते हैं। तुलसी उन्हें मलाई की लस्सी पिलाता है। बालक ने चिढ़ाने के अंदाज से कहा- **"आपके नाक पर से रेलगाड़ी गुजरी थी?"**१८ बालक के पिता तुलसी को पढ़ाना चाहते है, लेकिन माँ मना करती है **"घंटा-भर से बैठा यहाँ किताब पढ़-मर रहा है और इसे ढूँढ़-ढूँढ़कर मेरी टाँगें टूट गई हैं। ..... नौकरों को पढ़ाई से मतलब ? जो पढ़ना-मरना था तो यहाँ क्यों आया ?"**१६

एक दिन तुलसी ने माँ से कहा कि क्या मैं जिन्दगी भर बर्तन माँजता रहूँगा? तुलसी की नौकरी घर से छूट जाती है। तुलसी कई जगह नौकरी करता है, लेकिन वह कहीं पर भी सफल नही हो पाता। बालक का वीर्यपात होने लगा था। वह भाई को बताता है। भाई चितिंत होकर धीरे से कहता है- **"मैं अपने प्रोफ़ेसर साहब से पूछूँगा। जैसा वह कहेंगे, वैसा करेंगे। इन छुट्टियों में मैं तेरा वीर्यपात बन्द करके जाऊँगा।"**२०

तुलसी पुनः घर लौट आया है। उसकी पत्नी का नाम देवकी है। उसके दो बच्चे हैं। तुलसी की नौकरी छूट चुकी है। बालक के पिता ने तुलसी की नौकरी बैंक में लगवा दी थी, परन्तु स्वयं तुलसी अपने हाथों अपने पाँव में कुल्हाड़ी मार लेता है- **"उठ, एक गिलास पानी ले आ।" वह फिर बोला- " यह थूथना क्यों सूजा हुआ है तेरा ? क्या बात हुई है? ज़रा हाथ हिलाया कर, चुस्ती से काम किया कर।"**२१ बड़ा भाई बलदेव बाहर जाना चाहता है। वह स्वतंत्र रूप से बाहर जाकर कुछ करना चाहता है। पिताजी के हाथ में एक्जिमा फूट निकलता है। अपने दोनों हाथ भाई के सामने करके भरे गले से कहा – **"तेरे दिल में दर्द मर गया है? तू यह भी नहीं देख सकता?" माँ पिताजी पर गुस्सा हो जाती है, "देखो जी, मैं बेवकूफ़, अनपढ़, आप लोग दाना, सियाने, अक्लमंद। पर सीधी-सी बात है। बच्चा व्यापार करना नहीं चाहता तो तुम ज़बरदस्ती क्यों करते हो, तुमने अपना फ़र्ज़ निभा दिया है। इन्हें अच्छा पढ़ा दिया है, अपने पैरों पर खड़ा होने लायक बना दिया है। अब जो आगे इनकी क़िस्मत।"**२२

पिताजी खामोश हो जाते है। भाई चला जाता है व्यापार का सारा का सारा भार उसके ही कंधे पर आ जाता है। बालक की बहन विमला मर चुकी है। विद्या के लड़का हुआ है। घर में खुशियाँ फिर से आ जाती है। बैंक से जब तुलसी को निकाल दिया जाता है, तब वह गाँव चला जाता है। गाँव से लौटकर तुलसी पुनः घर जाता है, तो उसके साथ उसका बेटा बेद भी आता है। तुलसी चाहता है कि उसका बेटा उसी घर में रहे जहाँ उसने अपनी सारी जिन्दगी गुजारी है- **"बेटे को अपने पास क्यों नहीं रखते ?"**

यहाँ रहेगा तो कुछ पढ़-लिख जाएगा, अच्छी बातें ग्रहण करेगा।"

पढ़-लिख जाएगा! लगता है जैसे तुलसी व्यंग्य में कह रहा है।"२३ पिछवाड़े में कुछ बच्चे खेल

रहे थे। विद्या का बेटा भी वहाँ खेलने जाता है। तुलसी का बेटा उसकी देखभाल के लिए उसके साथ है। बच्चों की आवाजों में मैं राजीव की आवाज पहचानने की कोशिश कर रहा हूँ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीष्म साहनी ने **'झरोखे'** में प्रवृत्ति दमन और व्यक्तित्व दमन का सूक्ष्म चित्रांकन किया है। छोटे-छोटे अनुभवों को पूरी संवेदन-शीलता के साथ उभारा है और यह स्पष्ट किया है कि ऐतिहासिक परम्परा, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और चली आ रही परंपरावादी मूल्यों के यथास्थिति वादी भ्रमों से तभी मुक्त हुआ जा सकता है, जब मनुष्य को सामाजिक विकास के यथार्थवादी दृष्टिकोण से परिचित कराया जा सके। मनोविज्ञान के सजीव चित्रण से लेखक ने यह भी स्पष्ट किया है कि वीर्यपात और स्वप्न-दोष से भयग्रस्त तरूण अपना यथार्थ विकास नहीं कर पाता है। धर्मनीति के नाम पर जो अत्याचार व्यक्ति पर किए जाते हैं, वे अमानवीय होते हैं, जिसके कारण व्यक्ति का जीवन, ग्लानि एवं हीनताग्रस्त बनता है।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' -

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' भीष्म साहनी द्वारा रचित एक सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में जीवन की वास्तविक स्थिति को दर्शाया गया है और नारी की करूण दशा का वर्णन किया गया है। नीलू और सुधीर एक दूसरे से बहुत प्रेम करते हैं। नीलू मुसलमान और सुधीर हिन्दू है। ये लोग अपने परिवार वालों के खिलाफ शादी करते हैं। ये लोग शादी करके शिमला में रहने लगते हैं, इधर नीलू के परिवार वाले नीलू से बहुत परेशान है, क्योंकि मर्यादाओं और रुढिओं में जकड़ा हुआ समाज अन्तर्जातीय विवाह जैसे साहसिक कार्य को बर्दास्त नहीं कर पाता। परिवार तथा सम्बन्धित समाज के लोग उसके खिलाफ बगावत कर देते हैं। अगर एक मुस्लिम लड़की किसी हिन्दू लड़के से विवाह कर ले, तो परिवार की क्या स्थिति होगी, वह नीलू के परिवार वाले ही जानते हैं ?

सुधीर जब नीलू को अपने घर लेकर जाता है, तब उसके पिता जी ने अग्नि में से जलती लकड़ी निकाल ली और कहा कि दफा हो जा यहाँ से जो इस लड़की को घर लेके आया। मुझे पहले बताया नहीं, अब बता रहा है। सुधीर की माँ भी इस विवाह को देखकर धक्क रह गई।

नीलू जब सुधीर के साथ शिमला में अच्छी तरह से रहने लगती है, तब वह तरह-तरह के सपने बुनती है और अपनी मस्ती में रहती है। जब शिमला में नीलू को उसकी सहेली नीलिमा मिलती है, तब दोनों एक दूसरे को देखकर बहुत खुश होती हैं। नीलिमा अपने मित्र अल्ताफ का परिचय सुधीर से करवाती है। नीलिमा का सुधीर के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **''अल्ताफ़ से मिलो,'' नीलिमा बोली, ''तुम तस्वीरें बनाते हो, अल्ताफ़ इमारतें बनाता है। नहीं-नहीं, बनाएगा।'' फिर अल्ताफ़ की ओर मुँह करके बोली, ''यह कूची चलाता है। इसका नाम सुधीर है और यह नीलू है। नीलू उर्फ़ नीलोफ़र उर्फ नीलू ......।''**[२४]

नीलू जब सुधीर के साथ अच्छी तरह से रहने लगी थी, तब नीलू का भाई हमीद उसे ढूँढ़ता हुआ उसके घर आ पहुँचा और उसने कहा कि हमने तुम्हें कहाँ-कहाँ नहीं ढूँढ़ा। नीलू तुम कैसी हो, जब से तुम यहाँ पर हो। तुमने घर आने का नाम ही नहीं लिया है? माँ तुम्हारे लिए दिन-रात रोती रहती है। तुम उससे मिल आओ। जब हमीद समझा

बुझाकर अपनी बहन को घर ले जाने को होता है, तब रास्ते में उसे बुरा भला कहता है कि सुनो नीलू - **"तुम उसे ख़त डाल सकती हो कि वह दीन कबूल कर ले। कलमा पढ़ ले। हम लोग उसे छाती से लगा लेंगे। वह हमारा अपना हो जाएगा, पर वह अगर दीन कबूल नहीं करे तो उसके साथ हमारा रिश्ता अपनों जैसा नहीं हो सकता।"२५**

नीलू ने जब हमीद के कड़वे शब्द सुने, तब वह रोने लगी। मैं क्यों इसके साथ चली आई? सुधीर ने मुझे बहुत रोका कि बच्चा हो जाने दो फिर चलेंगे। उसको माँ की याद आ रही थी, वह चली गई। उसके भाई ने रास्ते में गर्भपात करवाने के लिए ड्योढ़ी में ले जाकर उसका बच्चा निकलवा दिया। नीलू चिल्लाने लगी - **"मुझे यहाँ से ले चलो, हमीद भाई। मैं बच्चा नहीं निकलवाऊँगी । मैं तुम्हारे पाँव पड़ती है।"२६**

"बच्चा तो तुम्हें निकलवाना होगा। एक काफ़िर का तुख़्म तुम्हारे अंदर पल रहा है। उसे अपने पेट में लिए हुए तुम हमारे घर के अन्दर दाख़िल नहीं हो सकती।"२७

नीलू अपने मन में विचार करती है कि माँ मुझे पहले जैसा प्यार करेगी। जब वह माँ के पास जाती है और नीलू के बारे में माँ को जब पता चलता, तब माँ और पिता हमीद को खूब डाँटते है कि तुमने उसका बच्चा क्यों गिरवा दिया ? अल्लाह ने पहली बार उसकी गोद भरी थी। हमीद ने कहा- **"काफ़िर की औलाद इस घर में नहीं आएगी। माँ, तुम भी कान खोलकर सुन लो। अगर इसके खावन्द ने कलमा पढ़कर दीन कबूल कर लिया होता तो बात दूसरी थी, तब बच्चा हमारा होता, दीन का होता, मगर उस काफ़िर ने दी कबूल नहीं किया, इसलिए उस काफ़िर का बच्चा इस धर में पैदा नहीं हो सकता ।"२८**

इधर आस पड़ोस के लोग भी नीलू को बुरा-भला कहने लगे थे। यह भागकर अपना मुँह काला करके आई है। एक मौलवी का नीलू के पिता के प्रति यह कथन रेखांकित है- **"मैं सोचता हूँ, अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। लड़की समझदार है। अल्लाह के फ़ज़ल से अच्छा पढ़ी-लिखी है। उसके भाई ने उसे हमल गिरवाने को कहा तो वह मान गई। उसने वक्त की नज़ाकत को समझ लिया है और आपका फ़र्जन्द कहता था कि वह उसे इस बात पर भी रजामंद कर लेगा कि वह अपने शौहर को दीन कबूल करने पर भी राज़ी कर ले या फिर, किसी दूसरी जगह उसके निकाह का वंदोवस्त हम करेंगे...।"२९**

इधर नीलिमा और अल्ताफ़ का प्रेम बढ़ता ही जा रहा था। जब नीलू ने नीलिमा से कहा कि तुम अल्ताफ़ से विवाह कब करोगी, तब नीलिमा ने कहा कि जब मेरे पिताजी हरी झंडी दे देंगे। तुम्हारे पिताजी हरी झंडी कब देंगे? जब दादी माँ हामी भर दें। नीलिमा के पिताजी चाहते हैं कि मेरी बेटी जहाँ चाहे हम वहाँ उसका विवाह करें पर नीलिमा की दादी को अल्ताफ़ पसन्द नहीं था। दादी अल्ताफ़ को लेकर अपने बेटे को समझाती हैं -**"अक्ल से काम लो, बेटा! लड़का भलामानुस है, सब ठीक हैं, पर तुम्हारी बेटी को सारी उम्र काटनी है। व्याह होने की देर है कि हमारी बेटी पर्दे में चली जाएगी। उन लोगों का रहन-सहन, खाना-पीना, उठना-बैठना और तरह का . .... आँखें खोलकर चलते हुए भी तुम गड्ढे में कूद रहे हो।"३०**

दादी और डैडी की जब बहुत लड़ाई होती और पिताजी नीलिमा के कारण चिन्तित रहते, तब नीलिमा

अल्ताफ़ को भूलकर सुबोध से विवाह कर लेती है। नीलिमा के डैडी उसे बहुत समझाते पर वह डैडी को खुशी देखना चाहती थी। सुबोध समय का बहुत पाबंद था। वह अपनी पत्नी को यातनाएँ देता रहता था और मारता-पीटता भी था। वह जब सुबोध का घर छोड़कर अपने मायके आ गई, तब उसे कुछ शान्ति मिली। पत्नी ने पति के घर में आत्महत्या करने की कोशिश की, पर बच गई और इलाज करबाने के लिए शिमला आ गई। वहाँ नीलिमा को उसकी सहेली मिली और उसने अपने सुख-दुख की बातें कहीं, जिससे नीलिमा थोड़ी बहुत चहकने लगी और ठीक होकर अपने घर वापस आ गई। इधर जब सुधीर की कला प्रदर्शनी लगनी थी, तब नीलू मायके से सुधीर के पास चली गई और उसने पति को अपने बारे में सब कुछ बताया। नीलिमा अब सुबोध को ताने सुनाती है। वह अब कुछ कुछ सुधरने लगा था। सुबोध ने नीलिमा से कहा कि बड़ी ज़ुबान, खुलने लगी है तुम्हारी। नीलिमा नीलू को चिट्ठी में लिखती है कि जब से मैंने श्रीमती वर्मा का नाम लिया था, तब से सुबोध का रबैया मेरे प्रति बदलने लगा था। मैं समझ गई थी कि वह नहीं चाहता है कि मैं श्रीमती वर्मा से मिलने जाऊँ। सुबोध ने कहा कि तुम कहाँ चली गई थी, तब नीलिमा ने कहा कि अल्ताफ़ से मिलने, तब सुबोध का चेहरा उतर जाता है और फिर नीलिमा से प्रसन्न हो जाती हूँ? नीलिमा का अपने पत्र में नीलू के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"नीलू, मेरी जान, अगर इन्सान में साहस आता है तो यातनाएँ भोगने पर ही और वह साहस बड़ा बेजोड़ होता है। अगर उस रोज़ थप्पड़ न खाया होता और सड़क पर लुढ़कते पत्थर की तरह भटकती न रही होती और अल्ताफ़ के घर के अन्दर से ढोलक की आवाज़ न सुनी होती और आंटी और डैडी का बार्तालाप नहीं सुना ह़ोता या फिर, तुमसे न मिली होती तो इस समय मैं सुबोध के सामने उसकी खिल्ली नहीं उड़ा रही होती।"**३१

यह उपन्यास लिखकर भीष्म साहनी जी ने समाज को नई दिशा दी है और समाज में फैली कुरीतियों, रूढ़ियों, अनुपयोगी परम्पराओं को दूर करने का प्रयत्न किया है। इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने साम्प्रदायिकता को हटाकर साम्प्रदायिक सद्भाव लाने का प्रयत्न किया है। उन्होंने अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन दिया है कि अगर अन्तर्जातीय विवाह होंगे तो हिन्दू और मुसलमानों के बीच जो दूरियाँ है और आपसी मतभेद है वे दूर होंगे, तभी यह नारा कहना सार्थक होगा- **"हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आपस में है भाई-भाई"**

'तमस' -

भीष्म साहनी के बहुचर्चित उपन्यास **'तमस'** का प्रथम प्रकाशन १६७३ में हुआ। १६७५ में 'तमस' की रचना पर भीष्म साहनी को 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार प्राप्त हुआ।

'तमस' शब्द का अर्थ है, अंधकार; अज्ञान का अंधकार 'तम' शब्द से इसकी व्युत्पत्ति हुई है। तम गुणों से युक्त व्यक्ति बुरे से भी बुरा कार्य करता है। उपन्यास का कथानक देश-विभाजन की पृष्ठभूमि एवं साम्प्रदायिक दंगों पर आधारित हैं। इसमें केवल कल्पना नहीं है बल्कि सच्ची घटनाओं के आधार पर इसका ताना-बाना बुना है, जो हमारे हृदय को झंकृत करता है। साम्प्रदायिकता का स्टोन दिखलाकर जिन पशुवृत्तियों के दर्शन होते हैं, उसका यथार्थ एवं हृदयग्राही चित्रण भीष्मजी ने किया है।

नत्थू जानवरों की खाल बेचता था। सलोतरअली को एक सुअर की जरूरत थी। मुरादअली सलोतरअली का नौकर था। मुरादअली ने सुअर को मारने के लिए नत्थू को ५ रूपए का नोट दिया। वह सुअर मारने का कार्य नहीं करता था। नत्थू को **"मुरादअली से रोज काम पड़ता था, नत्थू कैसे इंकार कर देता। जब कभी शहर में घोड़ा मरता, गाय या भैंस मरती तो मुरादअली खाल दिलवा दिया करता था, अठन्नी .... रूपया मुरादअली को भी देना पड़ता मगर खाल मिल जाती। बड़े रख-रखाववाला आदमी था, मुरादअली, कमेटी का कारिन्दा होने के कारण बड़े-छोटे सभी लोगों को उससे काम पड़ता था।"३२**

मुरादअली ने नत्थू को चेतावनी भी दी थी कि यहाँ का इलाका मुसलमानी है। अगर किसी मुसलमान ने देख लिया, तो लोग बिगड़ेगे। नत्थू ने सुअर को खूब मारने की कोशिश की। उसे चाकू से गोदा, लेकिन सुअर को कुछ भी असर नहीं हुआ। सुअर नत्थू के ऊपर झपटा। अपनी थूथनी से नत्थू के पैरों को चाटा। बंद कमरे में कूड़ा-करकट पड़ा होने से उसमें से गंध आ रही थी। कमरे में हवा का कोई नामो निशान नहीं था। जैसे-जैसे दीये की लौ झपकती, वैसे-वैसे नत्थू का दिल धड़कता जाता। रात काफी बीत चुकी थी। सुबह के तीन बज चुके थे। जमादार अभी छकड़ा लेकर आता होगा। नत्थू क्या देखता है कि सुअर की आँखों की रोशनी धीमी होती जा रही थी। सुअर वहीं पर लुढ़ककर गिर गया।

नत्थू उस कोठरी में रहकर इतना घबरा चुका था कि उसके यह समझ में नही आ रहा था कि वह क्या करे ? जब उसने अपने पैर गली से बाहर रखे तब उसे बाहर की शुद्ध हवा व शान्ति मिल। वह अपने आपको हल्का महसूस करने लगा। सभी के सुबह के दैनिक क्रिया-कलाप शुरू हो चुके थे। कांग्रेस की प्रभात फेरी शुरू होनी थी। सभी देर से आए थे। सभी लोग एक दूसरे की खींचा-तानी कर रहे थे। मेहता जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। सचिव बख्शीजी थे। समय की पाबंदी अजीज थे। जब मेहता और बख्शीजी दोनों लेट आते, तब अजीज बख्शीजी को हाथ में हरीकेन लैम्प देखकर गुनगुना उठता है- **"मुल्ला मियाँ मिशालची, तीनों एक समानः**

लोकाँ नू दस्सण चाणना, आप हनौ जाण।"

कोई आदमी जब आया, तब किसी ने कहा कि आज प्रभातफेरी नहीं होगी। आज गलियाँ साफ करेंगे। मेहताजी बिल्कुल नेताजी जैसे कपड़े पहने थे। वे जो पोशाक पहने थे। उसमें बहुत अच्छे लग रहे थे। उनकी इच्छा नहीं थी कि हम लोग गलियाँ साफ करें, लेकिन कांग्रेस का प्रचार करना था। कश्मीरीलाल जरनैल थोड़ा सनकी था। वह जिधर जाता वहीं शुरू हो जाता। वह दो तीन लोगों से पिट भी चुका था।

नत्थू इमामदीन मोहल्ले के मैदान से गुजर रहा था। वहाँ आए दिन कुछ न कुछ कार्यक्रम होते रहते थे। वह अपने मन में विचार कर रहा था कि यहीं पर मुरादअली का मकान है। उसने देखा कि रोमी टोपी वाले के पीछे नत्थू खड़ा है। वह सिर से पाँव तक शकपका गया। उसने सोचा कि मुरादअली कहीं मुझे देख न ले। नत्थू वहीं से खिसक गया। इधर रिचर्ड एक चतुर प्रशासक था। लीजा उसकी पत्नी थी। वह लीजा को बहुत चाहता था। उसकी पत्नी को भारत देश पसन्द नहीं था। वह भारत से बोर होकर वापस इंग्लैंड चली जाती थी। जब वह इंग्लैंड से काफी आशाएँ लेकर आती थी। रिचर्ड लीजा को हर तरह से खुश रखना चाहता था। लीजा के पति को हमेशा इस बात का डर लगा रहता था कि

कही वह इंग्लैण्ड वापस न चली जाए। वह लीजा को भारत की काफी नई जानकारी देता है। वह लीजा को गौतम बुद्ध के स्तूप के बारे में बताता है। रिचर्ड ने कहा कि मैं तुम्हें कभी पिकनिक स्पॉट पर ले चलूँगा।

लीजा ने कहा कि तुम मुझे वहाँ कब ले चलोगे। रिचर्ड लीजा को वहाँ नहीं ले जाना चाहता था। वहाँ हिन्दू और मुस्लिमों में तनाव बना हुआ है। लीजा ने कहा- **"मैं तो अभी तक हिन्दू और मुसलमान को अलग-अलग से पहचान भी नहीं सकती। तुम पहचान लेते हो रिचर्ड कि आदमी हिन्दू है या मुसलमान ?"**३३

कोई आदमी मस्जिद के बाहर सीढ़ियों पर मरा सुअर डाल गया था, जिससे शहर में दंगा मच गया था। लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए थे। बाहर निकलना भी मुश्किल हो गया था। गाय को काट दिया गया था। सभी जगह सुअर की चर्चा थी। हिन्दू और मुसलमान भड़क उठे थे। वे एक दूसरे के खून के प्यासे थे। मुसलमान सुअर का मांस नहीं खाते थे। हिन्दू गाय का मांस नहीं खाते थे। जब मुसलमानों ने सुना कि मस्जिद में सुअर मरा पड़ा है, तब मुसलमान बहक उठे। नत्थू को जब सुअर के बारे में पता चला कि मेरे कारण शहर में दंगा हो गया। नत्थू अन्दर से बहुत घबराया हुआ था। बख्शी चाहते थे कि शहर में दंगा न हो। जब दंगे की बात रिचर्ड तक पहुँची, तब रिचर्ड शान्त रहा। जब सभी लोग रिचर्ड के पास आए, तब वे उनसे बड़े प्रेम से मिले। कांग्रेस के लोगों ने अपनी सारी बात रिचर्ड से कही। रिचर्ड ने कहा कि ताकत तो इस वक्त पण्डित नेहरू के हाथ में हैं। बख्शीजी ने रिचर्ड से कहा - **"अगर आप फौज बैठा देंगे तो मामला काबू में आ जाएगा।"**३४ रिचर्ड का कांग्रेस के लोगों के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"मुस्लिम लीग और कांग्रेस, दोनों के लीडर यहाँ पर मौजूद हैं। आप सरदारजी को साथ ले लीजिए और सब मिलकर अमन कमेटी बनाइए और काम शुरू कर दीजिए। सरकार आपकी हर तरह से मदद करेगी।"**३५ शहर में स्थिति सँभल नहीं रही थी। लोग अपने अपने घरों के अन्दर छिपे हुए थे। कोई आदमी बाहर नहीं निकल रहा था। अगर किसी को कोई आदमी दिख जाता, तो उसे गोली से उड़ा दिया जाता। कहीं पर घर जलते नजर आ रहे थे, कहीं आग की लपटें एक दूसरे को छू रही थी। कोई छत पर बैठा दुश्मनों को मार रहा था। कई औरतें अपने घर छोड़कर गुरूद्वारे में चली गई थी। साथ में अपने बच्चों को ले गई। जब गुरूद्वारे के नजदीक तक तुर्क आ गए। जितनी भी औरतें थी वे कुएँ में जाकर कूद गई। **"सबसे पहले जसबीर कौर कुएँ में कूद गई। उसने कोई नारा नहीं लगाया, किसी को पुकारा नहीं, केवल 'वाह गुरू' कहा और कूद गई। उसके कूदते ही कुएँ की जगत पर कितनी ही स्त्रियाँ चढ़ गईं। हरिसिंह की पत्नी पहले जगत के ऊपर जाकर खड़ी हुई, फिर उसने अपने चार साल के बेटे को खींचकर ऊपर चढ़ा लिया, फिर एक साथ ही उसे हाथ से खींचती हुई नीचे कूद गई। देवासिंह की घरवाली अपने दूध पीते बच्चे को छाती से लगाए ही कूद गई। प्रेमसिंह की पत्नी खुद तो कूद गई, पर उसका बच्चा पीछे खड़ा रह गया। उसे ज्ञानसिंह की पत्नी ने माँ के पास धकेलकर पहुँचा दिया। देखते-ही-देखते गाँव की दसियों औरतें अपने बच्चों को लेकर कुएँ में कूद गईं।"**३६

किशनसिंह गुरूद्वारे की छत से लोगों को ताक रहा था। निहंगसिंह वर्छा लिए हाथ में बैठा था। कोई आए तो मैं उस पर वार करूँ। जहाँ देखो औरतों की चूड़ियाँ, बच्चों के कपड़े नजर आ रहे थे। ऊपर एक हवाई जहाज उड़ रहा था। गोरे लोग नीचे के लोगों के साथ हाथ हिला-हिलाकर अभिवादन कर रहे थे। **"सभी हाथ थम गए, अब**

और कुछ नहीं होगा, अंग्रेज तक फिसाद की खबर पहुँच गई है, अब कोई आग नहीं लगाएगा, बन्दूक नहीं चलाएगा। मोटे कसाई के बेटे ने, जिसने गुरूद्वारे की खिड़कियों पर तेल छिड़क दिया था और बस दियासलाई लगाने की ही देर थी, अपने हाथ खींच लिए। लोग मुँह बाये हवाई जहाज की ओर देखते जा रहे थे।"३७

अब हिन्दू और मुसलमान, सिक्ख सभी एक हो गए। लोगों को सलाह दी जाने लगी कि अभी वे लड़ें नहीं। जिन लोगों के पैसे, बच्चे, जमीन, जायदाद दंगे में छीन लिए गए सरकार उनके आँकड़े इकट्ठे कर रही थी। इधर रिचर्ड, लीजा से परेशान हो उठा था। जब वह डियूटी पर से रात को आठ बजे आता, तब लीजा शराब के नशे में सोफे पर पड़ी रहती। वह अपने मन में सोचता कि इसके विवाह को तोड़ दें या बनाए रखें। एक पण्डित की बेटी प्रकाशो को अल्लाहरक्खा अपने घर ले गया। प्रकाशो उसे पसन्द नहीं करती थी। वह जानती थी कि मेरे पिता कमजोर है, इससे मेरा वश चलने वाला नहीं है। प्रकाशो अल्लाहरक्खा को न चाहते हुए भी उसे अपनाना पड़ा। इधर एक अमन कमेटी बनाई गई। जिससे रणवीर ने अपनी मेहनत से सभी को इकट्ठा किया। उस अमन कमेटी में सभी लोग मौजूद थे। सभी अपनी-अपनी राय दे रहे थे। उधर सियासी लोग एक हिन्दू, एक मुसलमान का, एक सिक्ख का बनाना चाहते थे - **"यहाँ हिन्दू-मुसलमान का सवाल न लायें, यह अमन कमेटी है।" देवदत्त फिर आगे बढ़ आया - "मैं दरख्वास्त करूँगा कि सभी सियासी पार्टियों के रूकन इस कमेटी में शामिल हों। मेरी तजवीज़ है कि जनाब हयातबख्श साहब मुस्लिम लीग की तरफ से, वख्शी जी कांग्रेस की तरफ से और भाई जोधसिंहजी, गुरूद्वारा प्रबन्धक कमेटी की तरफ से वाइस प्रेसिडेण्ट चुने जाएँ।"३८**

एक बढ़िया मोटर बनाई गई, जिसमें सभी लोग बैठकर नारे बाजी लगाने लगे। कहीं पर हिन्दू और मुसलमान न लड़ें। सभी लोग मिल जुलकर रहें। उधर नत्थू को मार दिया गया था। अगर नत्थू होता, तो वह जरूर यहाँ पर नजर आता।

रिचर्ड और लीजा बहुत स्वस्थ दिखाई दे रहे थे। रिचर्ड इस पूरे फिसाद को लीजा को सुनाना चाहता था, लेकिन लीजा ने अपने कंधे विचका दिए थे, जैसे कह रही हो, सुनाओ या न सुनाओ, अब कोई खास फर्क नहीं पड़ता।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि यह उपन्यास एक साम्प्रदायिक उपन्यास हैं। इसमें लेखक ने आज़ादी के समय की घटनाओं को चित्रित किया है। उस समय देश का विभाजन भारत और पाकिस्तान में हो गया था। उस समय अंग्रेज लोग **'फूट डालो शासन करो'** की नीति अपना रहे थे, जिससे हिन्दू और मुसलमानों में साम्प्रदायिक हिंसा व विद्वेष इतना बढ़ गया था कि उसे संभालना मुश्किल हो गया था, इसलिए भीष्म जी ने अपने उपन्यास का नाम 'तमस' रखा। उस समय सभी लोग 'अज्ञान' रूपी अंधकार में डूबे हुए थे। उन्हें उस अंधकार से प्रकाश में लाना था।

'कुंतो' -

'कुंतो' काल विस्तार की दृष्टि से स्वतंत्रता के पच्चीस वर्ष पूर्व से स्वतंत्रता के ठीक कुछ दिनों बाद तक के बीच का कथानक है। इस उपन्यास के माध्यम से भीष्म जी ने उस समय-विशेष का कथानक व्यक्त किया है, जब

लगने लगा था कि हम इतिहास के निर्णायक मोड़ पर खड़े हैं और जिन्दगी करवट लेती एक दिशा विशेष की ओर बढ़ती जान पड़ती है। जहाँ एक ओर देश आज़ादी की ओर और आज़ादी मिलने पर स्थायित्व की ओर शनैः-शनैः आगे बढ़ रहा था, वहीं आपसी रिश्ते, सामाजिक सरोकार घटना-प्रवाह के उतार-चढ़ाव उपन्यास के विस्तृत फलक पर उसी कालखण्ड के जीवन का चित्र प्रस्तुत करते हैं। इस उपन्यास का कथानक लाहौर से लिया गया है। अविमार्जित भारत का लाहौर जो वर्तमान में पाकिस्तान का एक शहर है। उपन्यास का प्रारम्भ प्रोफ़ेस्साब और जयदेव के वार्तालाप से शुरू होता है -

"प्रोफ़ेसर को खेतों की ओर घूमना ज्यादा पसंद था, जबकि उनका युवा शिष्य जयदेव कैंटोनमेंट में घूमना ज्यादा पसंद करता था। कैंटोनमेंट में रौनक ज्यादा रहती थी, गहमागहमी, साफ-सुथरी सड़कें, जगमग करती दुकानें, अंग्रेज अथवा एंग्लो-इंडियन औरतें, कदम मिलाकर चलते गोरे फौजी अथवा बाँह में बाँह डाले प्रेमी युगल। प्रोफ़ेस्साब को प्राकृतिक स्थलों का शान्त वायुमण्डल और एकान्त अधिक प्रिय थे, जबकि जयदेव उत्तेजना चाहता था। उत्तेजना और स्फूर्ति और कसमसाहट।"३९

प्रोफ़ेसर पाँच भाई थे। उनकी दो बहिनें थीं। बड़ा भाई जर्मनी चला गया। वह लौट कर नहीं आया। एक भाई वकील तथा एक भाई बम्बई में रहता था। एक सिंगापुर डाक्टरी पढ़ने के लिए गया था। सभी के विवाह हो चुके थे। बहिन की ससुराल अमृतसर में थी। उनकी एक छोटी बहिन कुंतो दशवीं की छात्रा थीं। प्रोफ़ेस्साब के माता-पिता का देहान्त हो चुका था। सभी भाइयों ने मिलकर कुंतो का पालन पोषण किया था। प्रोफ़ेस्साब अंग्रेजी पढ़ाते थे। उनके एक शिष्य का नाम जयदेव था। जयदेव का एक भाई सहदेव था। जयदेव तथा सहदेव से बड़ी एक बहिन विद्या थी, जिसका विवाह श्रीनगर हुआ था। उसके चार बच्चे थे, पाँचवा बच्चा गर्भ में था। जयदेव की मौसी उसी शहर में रहती थी। उसके परिवार तथा उसकी मौसी के परिवार में बड़ी घनिष्ठता थी। जयदेव और सुषमा दोनों बचपन से ही साथ-साथ खेले और पढ़े थे। जयदेव सुषमा को बहुत चाहता था। वह सुषमा को पढ़ाई के बहाने उसे अपने घर में ले आया था। उन दोनों में घनिष्ठ प्रेम था। वह सुषमा पर अपना अधिकार जमाता था - **" जयदेव कोई नाटक नहीं खेल रहा था। वह अपनी मौसेरी बहिन पर रोआब भी नहीं गाँठ रहा था। कहीं गहरे में वह उसके प्रति अपने को जवाबदेह महसूस करने लगा था, उसके प्रति अपने दायित्व को महसूस करने लगा था। वह इस बात को नजरंदाज़ कर रहा था कि सुषमा के प्रति उसका आकर्षण ही दायित्व का जामा ओढ़ रहा है, ताकि उसकी अपनी नज़र में भी वह आकर्षण न रहकर दायित्व-बोध ही बना रहे और वह मन के अंतर्द्वंद्व से बचा रहे। वास्तव में, अपने अंदर तेजी से बढ़ते द्वंद्व से वह आँखें मूँदे रहना चाहता था। वह अपने को झुठलाना चाहता था कि यह आसक्ति नहीं, दायित्व-बोध है, वह अपनी छोटी, मौसेरी बहिन के प्रति अपना फ़र्ज निभा रहा है।"४०**

जयदेव प्रोफ़ेस्साब की बहुत बात मानता था। उन्हें वह अपना इष्ट समझता था। उनसे अपनी कोई भी बात नहीं छिपाता था। उसने अपने व सुषमा के बारे में प्रोफ़ेस्साब को बताया। प्रोफ़ेस्साब ने कहा कि हमारे समाज में मौसेरी बहिन से विवाह नहीं होता है। उन्होंने अपनी बहिन कुंतो के बारे में कहा कि क्या तुम कुंतो से विवाह करना

चाहोगे? "देर तक वे बतियाते रहे थे। जयदेव उसे नाटक की कहानी सुनाता रहा और कुंतो उसे अपने घर के लोगों के बारे में बताती रही और बीच-बीच में तरह-तरह के चुटकुले और तरह-तरह की टिप्पणियाँ चलती रहीं। कुंतो आँखें उठाकर उसकी ओर देखती, फिर पलकें झुका लेती। उसकी साँस धौंकनी की तरह चलने लगी थी, पर जयदेव को अपने निकट पाकर उसे अपार तृप्ति का भास होने लगा था और जब जयदेव ने साहस करके अपनी दोनों बाँहें उसके गले में डाल दीं तो उसे हल्की-सी कँपकँपी हुई, पर उसने अपना सिर जयदेव के कंधे पर रख दिया, और एक लम्बी ठंडी साँस ली। दोनों का सामीप्य उत्तरोत्तर गहरा रहा था।"४१

प्रोफ़ेस्साब का भाई धनराज सिंगापुर से लौट आया। वह पाँच साल कहकर गया था, लेकिन सात साल में लौटकर आया। धनराज वहाँ एक लड़की से प्रेम करने लगा था। उस लड़की का नाम मोना था। मोना के हर हफ्ते पत्र आते थे। वह अपनी पत्नी थुलथुल को नहीं चाहता था। उसे बहुत कष्ट देता था। वह सिंगापुर अपनी प्रेमिका के पास जाना चाहता था। प्रोफ़ेस्साब ने अपने किसी परिचित के द्वारा उस लड़की के बारे में पता लगवाया। मोना को धनराज के बारे में बताया गया कि वह विवाह कर चुका है। वह अपनी पत्नी को बहुत कष्ट दे रहा है। मोना के पत्र आने बन्द हो गए। जब धनराज को अपनी प्रेमिका के पत्र नहीं मिले, तब वह और छटपटाने लगा। प्रोफ़ेस्साब ने उसकी प्रेमिका जैसी एक कोकिला लड़की से उसे मिलवाया। धनराज को कोकिला में उसकी प्रेमिका नजर आने लगी। वह उसे चाहने लगा। इधर थुलथुल जलकर मर चुकी थी और कोकिला धनराज की पत्नी बनकर आई। धनराज एक बच्चे का पिता भी बन गया था।

जयदेव और कुंतो ने सुषमा का विवाह गिरीश से करवा दिया, लेकिन वह दाम्पत्य जीवन सफल नहीं रहा, क्योंकि गिरीश सुषमा को घोर कष्ट देता था। कुंतो ने एक बार जयदेव को सुषमा को चूमते हुए देख लिया था, जिससे कुंतो जयदेव से चिड़ने लगी थी। वह अन्दर से स्वयं में अटपटा महसूस करने लगी थी। अगर जयदेव सुषमा को चाहता था।, तो उसने मुझसे शादी क्यों की? एक दिन जयदेव ने कुंतो को सच-सच बता दिया कि मैं सुषमा के बिना नहीं रह सकता। गिरीश ने उसे छोड़ दिया है। वह अकेली रह गई है और वह शान्ति निकेतन में रहने लगी है।

इधर घर के सभी लोग श्री नगर घूमने गए। विद्या की मृत्यु हो चुकी थी। जयदेव और कुंतो बम्बई आकर रहने लगे। जयदेव दिनभर काम करता और शाम को रिहर्सल में चला जाता है। कुंतो भी कुछ काम करने लगी थी; जिससे घर का खर्च चलता था। वह रात-दिन काम करती है। बच्चों को पड़ोस मे छोड़ जाती है। उसको रक्ताल्पता की बीमारी हो गई थी। एक दिन कुंतो इस दुनिया से चल बसी।

देश का बँटवारा हो चुका था। भारत-पाकिस्तान सीमा में दोनों तरफ के तंबू गड़ने लगे थे। हीरालाल शरणार्थियों के लिए तंबू गाड़ने में मस्त था। वहीं पर उसकी मुलाकात सहदेव से हुई। पूरा लाहौर खाली हो चला था। जयदेव के पिता लालाजी ने न जाने का निर्णय ले लिया था। चारों ओर कत्लेआम का दृश्य देखकर उनका मन सशंकित अवश्य होता , फिर भी उन्होंने कहा -

"यों भी कभी हुआ है, बेअंतसिंह? हाकिम बदलते हैं, अमलदारियाँ बदलती हैं, पर रिआया

तो अपनी जगह पर ही बनी रहती है।"४२ लेकिन हालात अच्छे न होने से उन्हें भी लाहौर छोड़ना पड़ा। उनका घर छोड़ना था कि एक दाढ़ी वाले ने उस घर में अपने बच्चों सहित जाकर कब्जा कर लिया, फिर धीरे-धीरे सभी एक-एक करके जयदेव के पास बंबई पहुँच गए थे। माँ जी, लालाजी और सहदेव भी। कुंतो को दुनिया छोड़े साल भर बीत गया। जयदेव की दयनीय स्थिति देखकर माँ बहुत दुखी होती है। वह बार-बार सुषमा से विवाह के लिए प्रेरित करती है और उसे समझाती है - **"सुषमा भी बहुत ठोकरें खा चुकी है। तेरा घर भी सूना हो गया है। छोटे-छोटे बच्चों के साथ कैसे ज़िंदगी गुज़ार पाएगा? कुंतो अपने छोटे-छोटे बच्चे तेरे हवाले कर गई है। तू जो फ़ैसला करे, मुझे मंजूर है---"४३**

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भीष्म जी अपना मत इस ओर इंगित करते है कि इन्सान की एक गलती उसकी ज़िन्दगी के लिए रिसता फोड़ा बन जाती हैं। अगर जयदेव अपने दिल की बात माँ से कह देता तो विरोध के वावजूद उसका विवाह सुषमा से ही हो जाता, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। जिसका परिणाम यह निकला कि न तो वह सारी जिन्दगी कुंतो का ही बन सका और न ही सुषमा का। जयदेव की माँ का जयदेव के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है - **"देख बच्चा, तू सुषमा के साथ ब्याह करना चाहता है तो बेशक उसे बुला ले। मैं उसे छाती से लगाकर रखूँगी। मुझे सब मंजूर है। मुझे तुम्हारी खुशी चाहिए।"४४** जैसे **"जयदेव की माँ के रूप में हिन्दुस्तान की धरती बोल रही है कि अगर जाति और धर्म के नाम पर ही बँटवारा करना था तो पहले ही कर लेना था; शायद यह खून न होता। फिर भी, अगर आगे भी यही करना है तो अभी वक्त है, जो एक दूसरे की धरती में बचे हैं, उन्हें अपने पास बुला लो (अर्थात् सुषमा को बुला लो)। वैसे भी बहुत कुछ नष्ट हो चुका है। निश्चित रूप से भीष्म साहनी जी का 'कुंतो' उपन्यास एक श्रेष्ठ कृति है, जो बदलते मूल्यों का जीता-जागता दस्तावेज है।"४५**

'कड़ियाँ' -

भीष्म साहनी के उपन्यासों में 'कड़ियाँ' दूसरे क्रम का सामाजिक और पारिवारिक उपन्यास है। यह उपन्यास पति, पत्नी और प्रेमिका के अंतः सम्बंधों को लेकर लिखा गया है। इसकी कथावस्तु मानवीय सम्बंधों के टूटते-जुड़ते रिश्तों पर आधारित है।

महेन्द्र अधिकारी के पद पर दफ्तर में कार्य करता है। महेन्द्र शादी-शुदा है। उसकी पत्नी का नाम प्रमिला है और एक मात्र पुत्र पप्पू है, जिसकी उम्र लगभग सात साल की है। महेन्द्र के ही कार्यालय में सुषमा नाम की एक प्रौढ़ महिला कैशियर के पद पर कार्य करती है। सुषमा और महेन्द्र एक-दूसरे के प्रेम-सूत्र में बँधे हुए हैं, लेकिन सुषमा से सम्बंध बनाने के बाद महेन्द्र संशय में जीता है। जब भी वह उसके फ्लैट में जाता है, तब उसका हाथ घंटी दबाने के पहले ठिठक जाता है। सुषमा महेन्द्र की मनःस्थिति को समझती है, परन्तु दिल नहीं मानता तो जब महेन्द्र उसके फ्लैट पर पहुँचता है, तब वह कह उठती है -**"मैं तुम्हें किसी से छीन तो नहीं रही हूँ,"** सुषमा की आवाज़ पहले से भी ज्यादा अलसा गई थी - **"मैं तुमसे कुछ नहीं माँगती, महेन्द्र ! केवल कभी-कभी तुम्हारे साथ**

दो घड़ियाँ बिताना चाहती हूँ। बस, इतना ही । इसमें किसी को क्या एतराज़ होना चाहिए ? तुम्हारे वक्त से जो दो घड़ियाँ टूटकर मेरी गोद में पड़ जाएँ मैं उन्हीं से सन्तुष्ट हूँ।''४६

महेन्द्र सुषमा से गहरा प्रेम करने लगा था। महेन्द्र ने अपने प्यार की बात प्रमिला को बता दी। यह बात सुनकर वह रात भर सो न सकी। उसने महेन्द्र को बुरा-भला कहा कि तुम बहुत बुरे हो। तुम पराई स्त्री से प्रेम करते हो और उसके घर जाते हो। महेन्द्र ने प्रमिला से माफी माँगी कि आगे मैं ऐसा कार्य नहीं करूँगा।

महेन्द्र जब एक बार घर में देर से आया, तब प्रमिला ने पूछा कि तुम्हें आने में देर क्यों हो गई? क्या तुम सुषमा के पास गए थे? उससे ऐसे शब्द सहन नहीं हुए। उसने प्रमिला के गाल में एक जोर से थप्पड़ मार दिया। प्रमिला के मुँह से चीख निकली और चौंककर घूम गई - **'' तुम्हारा मतलब क्या है?'' महेन्द्र ने गुस्से से काँपते हुए कहा, ''तुम अपने को समझती क्या हो?''४७** महेन्द्र ने प्रमिला को थप्पड़ तो मार दिया, लेकिन वह अन्दर से बहुत दुखी था। जब से शादी हुई है, तबसे उसके मुँह से एक बार भी प्यार का शब्द नहीं निकला - **''औरत चाहे तो मर्द को अपनी मुठ्टी में रख सकती है। अगर यह सलीके वाली होती तो मैं सुषमा के पास जाता ही क्यों? यह भी कोई ढंग है जीने का? मैं कुछ माँगता नहीं, बोलता नहीं, इसलिए मेरे साथ बेरूखी की जाती है। जाए जहन्नुम में -----मैं जरूर सुषमा के पास जाऊँगा। जहाँ से प्यार मिलेगा, लूँगा।''४८**

प्रमिला ने अपने जन्म दिन की बात महेन्द्र से कही। महेन्द्र ने उसकी बात पर कोई रूचि नहीं लिया वह अपनी सहेली सतवंत से उसके घर मिलने गई। प्रमिला ने अपनी सारी बात सतवंत से कही। सतवंत ने कहा कि उसके चाटा मारने वाली बात बहुत बुरी है। अगर महेन्द्र को उस बंगालन के पास जाना है, तो खूब जावे, लेकिन प्रमिला को बच्चे के सामने मत मारा करे। अगर तुमने मेरे ऊपर दुवारा हाथ उठाया, तो मैं तुम्हारी सारी बात दफ्तर में जाकर अफसर से कह दूँगी। सतवंत ने प्रमिला से कहा कि तुम डरो नहीं और हिम्मत से परेशानी का सामना करो। महेन्द्र ने प्रमिला से कहा कि अब हमारी और तुम्हारी निभा नहीं सकती है। यह शादी मेरे लिए भूल है। अब तुम अपने पिता के पास चली जाओ। वह अपने ससुर को एक खत लिख देता है कि हम दोनों अलग-अलग रहना चाहते हैं। आप कचहरी के चक्कर न काटे तो ज्यादा अच्छा है और आपको जाना है तो मुझे कोई ऐतराज नहीं। वह यह सुनकर चौंक और घबरा जाती है। महेन्द्र प्रमिला को ५० रूपए देकर उसे उसके पिता के घर के लिए रवाना कर देता है।

प्रमिला जैसे ही अपने पिता के दरवाजे पर कदम रखती है। उसी वक्त प्रमिला के पिता नारंग साहब महेन्द्र की चिट्ठी पढ़ते हैं और अन्दर से बहुत दुखी होते है। वे अपनी बेटी को उसी घर में रहने की सलाह देते है। बेटी तुम्हें वह घर छोड़कर नहीं आना चाहिए था। प्रमिला ने कहा कि महेन्द्र की चाची ने मुझ पर बहुत अत्याचार किए और मुझे घर से निकालने की बात कही। वह अपने पिता के घर रहने लगी। प्रमिला की चाची का प्रमिला के प्रति यह कथन रेखांकित है - **''सुन प्रमिला, औरत के पास उसका जिस्म ही जिस्म है और कुछ नहीं। मर्द को रिझाने के लिए कभी औरतें बाल छोटे करवाती फिरती हैं, कभी लम्बे, कभी पतलून पहन लेती हैं, कभी तंग सलवारें। मर्दों को उनकी छातियाँ पसन्द हैं, इसीलिए औरतें उन्हें उघाड़कर दिखाती फिरती हैं। यह तो मर्द की दुनिया है, यहाँ वही होगा जो मर्द चाहता है।''४६**

पिता ने पुत्री से कहा कि महेन्द्र की बहिन से मिल; शायद वह तेरी मदद करे। बहिन ने महेन्द्र के दोस्त नाटे के घर एक रात के लिए उन दोनों को वहाँ मिलवा दिया। आगे तुम्हें जो उचित लगे, वह करो। महेन्द्र ने जब प्रमिला को देखा, उसकी कामभावना की उत्तेजना बढ़ती चली गई। वह स्वयं को रोक न सका, जिससे प्रमिला गर्भवती हो गई। जब वह सुबह जागी, तब महेन्द्र वहाँ पर नहीं था। सुषमा अपने ऑफिस के किसी ऑफिसर पर डोरे डालने लगी। इधर सुषमा और महेन्द्र में पट नहीं रही थी। दोनों एक दूसरे से अलग रहना चाहते थे। महेन्द्र अन्दर ही अन्दर घुटता चला जा रहा था। उसे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे ? प्रमिला को पागलपन जैसा दौरा पड़ने लगा था। उसे पागलों के अस्पताल में भर्ती करा दिया गया। नाटा के सहयोग से महेन्द्र ने प्रमिला की स्थिति देखी। डायरेक्टर का महेन्द्र के प्रति यह कथन अद्योलिखित है - **''धीरे-धीरे जब पेट में बच्चा बड़ा होता जाएगा तो इनकी मानसिक स्थिति बेहतर होती जाएगी। अभी से इनका मन सुधरने लगा है।''५०**

प्रमिला को देखकर महेन्द्र अन्दर से अटपटा सा महसूस करने लगा। वह जानता था कि उसके पेट में मेरा ही बच्चा है, लेकिन शंका-कुशंका के घेरे में चक्कर लगाने लगा। हो सकता है कि यह बच्चा किसी और का हो। क्या भरोसा पूरे दिन तो घूमती रहती थी, परन्तु नाटा इस रहस्य को ताड़ गया? वह सारा रहस्य समझ रहा था। नाटा ने कहा कि यह तेरा बच्चा है। तू बाहर औरतों से प्रेम भले करता रहे, लेकिन अपना घर मत तोड़। उसके लड़का हुआ। वह लड़के को लेकर खुश रहने लगी। प्रमिला ने सतवंत से कहा कि मैं एक दवाई की दुकान खोल रही हूँ। मेरे पिताजी के एक दोस्त है। मैं उनके पास दवाई बेचना, उनके पर्चे बनाना सीखती हूँ। मैं आगे चलकर नर्स का काम भी सीखूँगी। मैं दवाई की दुकान में साबुन, ब्रुश बगैरह रक्खा करूँगी। मुझे जो मुनाफा होगा, उससे मैं उनके पैसे चुकाती रहूँगी। सतवंत ने महेन्द्र के बारे में पूछा कि उसे कभी देखा है? उसका अता-पता कुछ मालूम है। कभी मिला है तुझे? प्रमिला का सतवंत के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **''मुझे मालूम करके क्या लेना है। वह जाने उसका काम। सच पूछो तो सत्तो, अब वह मेरे मन पर से उतर गया है। उसके पीछे बहुत भागी-भटकी हूँ, पर अब मन नहीं करता।''५१**

सतवंत ने बीच में पूछ ही लिया - ''अगर महेन्द्र तुझे पुनः बसा लेने की बात कहे तू चली जाएगी'' **प्रमिला ने बड़ी सहजता से जवाब दिया- ''कभी लगता है कि बच्चे बड़े होंगे तो क्या कहेंगे, हमारा बाप था फिर भी हम अनाथों की तरह पले हैं पर अब उसके पीछे मारी-मारी नहीं फिरूँगी। रूखी-सूखी खिलाकर पाल लूँगी।''५२**

प्रमिला ने बातों-बातों में यह भी स्पष्ट कर दिया कि तुम्हारी तरह पिताजी इस बच्चे को गलत समझते थे, परन्तु उन्हें विश्वास हो गया है कि यह बच्चा महेन्द्र का ही है। प्रमिला ने पहले उसे कहीं फेंकने की कोशिश की भी, परन्तु उसकी ममता ने उसके इस कठोर कदम में बेड़ियाँ डाल दीं। प्रमिला अपनी स्थिति से खुश थी। सतवंत ने बच्चे की ओर देखा। इस बीच वह मुँह में अंगूठा डाले प्रमिला की छाती से लगा सो गया था। जिंदगी का फासला लम्बा था। सतवंत को विश्वास था कि वह चल पाएगी, अपने पैरों पर चलती हुई बहुत सी मंजिलें काट डालेगी।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीष्म साहनी के उपन्यास से हमें यह सत्प्रेरणा मिलती है कि नारी का शोषण युगों-युगों से होता चला आ रहा है, लेकिन प्रमिला ने अपने स्वरूप की पहचान कर ली है। उसने मोह जाल से

मुक्ति पा ली है। अब उसके लिए महेन्द्र अतीत का पन्ना बन चुका है, जिसका पुस्तक में लगा रहना या न रहना कोई मायने नहीं रखता था। प्रमिला अपने पैरों पर खड़ी हो गई। वर्तमान परिवेश में नारी की आर्थिक आत्मनिर्भरता ही उसकी सशक्तता की पहचान है, जिसे प्रमिला ने जीत लिया था। जीवन की टूटी हुई कड़ियाँ को वह एकबार स्वयं जोड़ने में सफल हो गई थी। निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय समाज की विसंगतियों को उजागर करने में भीष्मजी ने उत्कृष्ट सफलता प्राप्त की है।

'बसन्ती' -

'बसन्ती' भीष्म साहनी का एक सामाजिक उपन्यास है, जो मानवीय सम्बंधों के जुड़ते-टूटते रिश्तों का सूक्ष्म चित्रांकन है। राजस्थान में सूखा पड़ने के कारण लोग दिल्ली रहने के लिए आए। उन्होंने सड़क के किनारे अपनी झोपड़ी बनाई, लेकिन पुलिस वालों ने उन झोपड़ियों को हटाने को कहा। सभी लोग अपना सामान लेकर मैदान में चले गए। बसन्ती चौधरी की लड़की है। उसका पिता नाई का कार्य करता है। चौधरी अपनी बेटी का विवाह बुलाकीराम से करना चाहता है। बुलाकीराम साठ वर्षीय एक लँगड़ा दर्जी है, जबकि बसंती ने चौदहवें वर्ष में प्रवेश किया है। वह अपनी बेटी का रिश्ता बुलाकीराम से १३०० रुपए लेकर करता है। वह इस विवाह का विरोध करती है। उसने कहा कि चूहे मारने की दवा खाकर मर जाना उचित है, लेकिन यह विवाह करना मंजूर नहीं है। वह दीनू से प्रेम करती है। दीनू लड़कों के हॉस्टल मे नौकरी करता है और वह उसे बताती है कि वह श्यामा बीबी के घर में काम करती है। दीनू उसे बताता है कि उसे हॉस्टल में कमरा भी मिला है।

बसंती दीनू के साथ भाग जाती है। वह उसे हॉस्टल में ले जाता है। वह एक स्वार्थी व्यक्ति है। जब वह बसंती को देखता है, तब उसके ऊपर कामविकार शुरू हो जाता है। वह बसंती के स्तनों को पकड़कर उसे बाँहो में भर लेता है। बसंती ने धीमी आवाज में कहा - **''ऐसा नहीं कहते। भगवानजी के सामने हम दोनों खड़े होंगे। हाथ जोड़कर सिर नवाएँगे। ऐसे ब्याह करेंगे। तू मेरे माथे पर टीका लगाना, मैं तेरे माथे पर टीका लगाऊँगी। है तेरे पास भगवान की तस्वीर?''**५३

दीनू ने कहा कि मेरा विवाह पहले ही हो गया है। उसकी पत्नी का नाम रूक्मी है। वह बसंती को बरडू के हाथ ३०० रूपए में बेचकर अपने गाँव चला जाता है। बसन्ती बरडू का पल्ला छोड़कर दरदर भटकती रहती है। उसके पेट में दीनू का बच्चा था। उसको रखने के लिए कोई तैयार नहीं होता है। उसे अपने पिता के घर रहने के लिए जाना पड़ता है। चौधरी ३०० रूपए उसके पेट के बच्चे का और १२०० रूपए उसका, कुल १५०० रूपए बुलाकीराम से लेकर उसके साथ बसंती की विदाई कर देता है। वह बुलाकीराम के साथ अच्छी तरह से रहने लगती है। वह पुत्र को जन्म देती है। उसके बच्चे का नाम पप्पू है। एकबार वह बुलाकीराम के साथ बाजार से सामान खरीदकर लौट रही थी कि रास्ते में उसे दीनू मिल गया। उसने उसे अपना पूरा किस्सा सुना दिया। वह अपने बच्चे को लेकर दीनू के साथ चल दी। बुलाकीराम चिल्लाता रह गया- **''लौट आ, हरामजादी! लौट आ!''**५४ बसंती और रूक्मी दोनों अच्छी तरह से रहने लगी। रूक्मी के कोई संतान नहीं थी। करीब १२-१३ साल बाद रूक्मी के लड़का हुआ। रूक्मी को अब बसंती

सौत नजर आने लगी। बसंती बर्तन मांजकर पूरे घर का खर्च चलाती थी। दीनू रूक्मी को पत्नी का दर्जा देता और बसन्ती को मारता और उससे काम करवाता है। बसंती की जिन्दगी में काले बादल मडराने लगे। वह गृहस्थी का बोझ ढ़ोने में ढ़ीली पड़ने लगी। रूक्मी की नजर में ईर्ष्या और अविश्वास झलकने लगा था और दीनू पहले जैसा कड़वा बोलने लगा था। वह जिस बात से घबराती थी, आखिर वही हुआ। दीनू रूक्मी व अपने बच्चे को लेकर गाँव चला गया। एक दिन श्यामा बीबी कहने लगी कि बसंती - **"मैंने पहले दिन ही कहा था यह आदमी अच्छा नहीं है। यह एक दिन तुझे बर्बाद करके छोड़ेगा।"**५५ बसंती फीकी मुस्कुराहट के साथ पप्पू को गोद में लिए पिछली सड़क की ओर चल दी।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'बसन्ती' उपन्यास में भीष्मजी ने निम्नवर्गीय मटमैले परिवेश को चित्रित किया है। उन्होंने सादगी पूर्वक बदरंग जीवन को स्वाभाविक ढ़ंग से चित्रित किया है। व्यक्ति गाँव के सूखा, अकाल और भुखमरी से तंग आकर शहर आता है और बार-बार बस कर उजड़ जाता है। बसंती हारी हुई पात्र है, परन्तु वह हारकर भी जीती हुई है। उसने उस जाति के एकाधिकार को तोड़ा है, जो वर्षों से नारी के ऊपर अपना सर्वाधिकार सुरक्षित समझता था। बसंती आने वाली पीढ़ी के लिए एक प्रेरणा है और पुरूष सामंती वर्ग के लिए चेतावनी। निश्चित रूप से बसंती उपन्यास भीष्मजी की एक सफल कृति है।

(३.४) कहानी की कथावस्तु -

'झुटपुटा' -

'झुटपुटा' कहानी १९८४ में घटित सिख विरोधी दंगों की पृष्ठभूमि पर आधारित है। यह कहानी उस विरोधी माहौल की भीतरी परतों को हटाती है। **'झुटपुटा'** कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

आए दिन शहर में दंगे होते रहते थे, पर यह पता नहीं चल पा रहा था कि दंगे किस लड़ाई के कारण हो रहे थे। जब दंगे की खबर शहर में फैलती है, तब दुकानें पहले से ही बन्द हो जाती हैं। ऐसा लगता है कि पूरे शहर में कर्फ्यू लगा हुआ हो। दूधवालों व सब्जियों की भी दुकानें बन्द हो जाती थीं। इधर बच्चे दूध से व्याकुल हो रहे थे। घर में खाने के लिए साग सब्जी भी नहीं थी। दंगे का कारण सिक्खों को माना जा रहा था, अगर कस्बे में सरदार रह रहा है, तो उसका सारा सामान नष्ट कर दिया जाएगा, अगर हिन्दू है तो उसका बाल बाँका नहीं होगा।

दंगे के कारण दूध की व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। थोड़ा बहुत दूध शहर में आया तो इतनी बड़ी लाइन थी कि वह पार्क तक जा पहुँची थी। सब्जी वालों की दुकानें भी थोड़ी देर के लिए ही खुली थीं। प्रोफेसर कन्हैयालाल क्या देखते है कि शहर पूरा बन्द है डबलरोटी व मक्खन तक की दुकानें थोड़ी देर के लिए खुली थी, वह भी बन्द हो गई। प्रोफेसर कन्हैयालाल अपने मन में विचार कर रहे थे कि एक दिन में ही सारा माहौल बदल गया। बूथ से थोड़ा हटकर चौराहे के बीचोंबीच एक जली हुई मोटर पड़ी हुई है। सड़क के आस-पास जो दवाई की दुकानें थी, उसको भी जला दिया गया। प्रोफ़ेसर कन्हैयालाल ने कुछ सौदा लिया तो दुकानदार कहने लगा - **"और कुछ भी लेना हो तो अभी ले जाइए, क्या मालूम दुकानें फिर कब खुलें।"**५६

थोड़ी ही देर बाद सारी दुकानें बन्द हो गई। पता चला कि पिछली बस्ती में आग लग गई। आग की लपटें बहुत ही ऊँची उठ रही थी। दिन मे धुँए के कारण दिखाई नहीं पड़ रहा था, जबकि रात को बहुत ऊँची -ऊँची लपटें उठ रही थी और साँप सी लह लहा रही थी। सभी लोग छतों पर जाकर लपटों का मजा ले रहे थे, लेकिन सिक्खों की ही छतें खाली थी। कन्हैयालाल ने यह सब देखा तो वे भौचक्के से रह गए।

इधर लठैतों के एक गिरोह ने एक हलवाई की दुकान को जला डाला और यह जल कर खाक हो गई। कन्हैयालाल अपने मन में विचार कर रहे थे। **"मैंने कल रात ही कहा था कि गड़बड़ होगी, मुहल्ले की एक कमेटी बना लो। जब कोई गुंडे आएँ तो उन्हें मुहल्ले के अन्दर ही नहीं घुसने दो।"**५७

एक समय था, जब कहीं भी झगड़ा होता था, तब कन्हैयालाल सबकी मदद करते थे, कहीं पर कुछ बात हो जाए तो उन्हें समझा-बुझाकर घर ले आते थे और कहीं ज्यादा बात बिगड़ जाती तो अपनी जान जोखिम में डालकर दूसरों की मदद करते थे। अगर अब कोई कन्हैया से मदद भी माँगता, तो वह सीधा टक-टकी लगाए सुनते रहते थे। तभी लठैतों का एक गिरोह फिर आ गया और अपनी मस्ती मे झूमकर दवाइयों की दुकान में घुस गए और वहाँ का सारा सामान अस्थि पंजर कर दिया। उन लोगों को कोई रोकने वाला नहीं था कि वह दुकान को बर्बाद न करे। वहाँ पर खड़े कई लोग इस बरबादी को देखकर बड़े प्रसन्न हो रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो कोई मेला देखने आए हो। लूटने वाले बड़े आराम से एक-एक सामान लूट रहे थे। उधर कन्हैयालाल की पड़ौसिन श्यामा भी दुकान में घुसकर एक पाउडर का डिब्बा उठा लाई और उसने अपनी बेटी को देकर कहा, **"मर जाणिए, जा, भागकर जा, देर करेगी तो कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।"**५८

उधर कुछ लोग अन्दर से एक अलमारी को घसीट कर सड़क के बीचोंबीच ले आए और उसे जला डाला और उसमें से आग के शोले निकलने लगे। साइनबोर्ड को तोड़ने वाला अभी भी उसको तोड़ने में लगा हुआ था। तभी वहीं पर खड़े एक आदमी ने उससे कहा कि आप यह क्या कर रहे है? **"दुकान सरदार की है मगर घर तो हिन्दू का है" इसके पीछे एक ड्राईक्लीनर रहता है आपने उसकी दुकान में आग क्यों नहीं लगाई - "क्योंकि उसमें एक हिन्दू और एक सिख दोनों भाईवाल हैं।"**५९

कन्हैयालाल ने क्या देखा कि बगलवाली सड़क से कुछ मनचले एक कार धकेलकर ला रहे थे? कुछ लड़के कार की छत पर बैठे हुए थे। वे लड़के उस छत पर से उतरकर उन्होंने कार का एक बाजू उलट दिया और मोटर की जो टंकी थी उसमें एक छड़ मार दी, जिससे उसमें से पेट्रोल निकल पड़ा। सभी कहने लगे अरे सेठी की कार गई पर वास्तव में वह सेठी की कार नहीं थी। वह तो सेठी के दामाद की कार थी। वह कार जलकर राख हो गई।

कृष्णलाल की माँ (बुढ़िया) जो सड़क पर श्यामा की फटकार लगा रही थी - **"किस बदनसीब का सामान उठा लाई है। बेटी को भी ऐसे पाप करना सिखा रही है। लाख लानत है तुम पर! अभी जाओ, और जहाँ से यह सामान उठाया है, वहीं पर फेंककर आओ।"**६०

कन्हैयालाल जब दूध की लाइन में लगा था, उधर दो लड़के आपस में बार्तालाप कर रहे थे। कन्हैयालाल उन दोनों लड़कों की बात सुन रहा था। एक लड़का कह रहा था कि यह बताओ क्या यह मुँह में लगाने वाली क्रीम है।

तभी वहाँ कुछ आदमी खड़े थे। उन लोगों ने मुझे सामान उठाने नहीं दिया। एक मद्रासी युवक ने चौधरी से पूछा कि आप यह बताइए कि दूध आऐगा या नहीं। चौधरी ने कहा कि मैंने अभी-अभी सेंटर से बातचीत की थी। उन्होंने कहा कि ड्रम के ड्रम भरे हैं। आप आइए और दूध ले जाइए। मद्रासी ने कहा कि हम क्यों दूध लेने जाए, वही हमें भेज जाएँ? चौधरी कहने लगा कि सभी ड्राइवर सरदार है। उन्हें नहीं भेजा जा सकता खतरा है ना। अगर कोई हिन्दू हो तो जाकर ले आए।

इधर पीछे एक सरदार को भून डाला गया। वह कौन था? वह बढ़ई था, अपनी बेटी से मिलने आया था। रास्ते में किसी का दूसरे से झगड़ा हो गया। वह उसे बचाने लगा और उस बढ़ई को भून डाला गया।

इधर कई लोग नए थे। उन्हें यहाँ के बारे में कुछ भी जानकारी नहीं थी। एक सरदार को रोज घूमने की आदत थी। वह घुमने जाने लगा तो एक व्यक्ति ने मना किया कि आप न जाए। बाहर बहुत दंगा है, आपको कुछ भी हो सकता है। सरदार बोला कि मैं अपने घर में प्रतिदिन जाता हूँ। मेरा मन नहीं लग रहा है। बड़ी जबरदस्ती की तब वह माना। चौधरी साहब ने क़हा - **"अभी शुरूआत है, साई, अभी शुरूआत है। जब सीख जाएँगे तो ऐसी गलतियाँ नहीं करेंगे। हम लोग अभी नौसिखुआ हैं ना, इसीलिए। जब सीख जाएँगे, तब तुम देखना। दूर से ही एक-दूसरे को देखकर रौंगटे खड़े हो जाया करेंगे। अभी तो बच्चा पैरों के बल पर खड़ा होना सीख रहा है।"**६१

कही भी दंगा होता। सरदार हमेशा यही विचार करता कि जो भी हुआ बुरा हुआ, ऐसा नहीं होना चाहिए था। पहले आतंकवादियों द्वारा हत्यायें हो रही थीं। इंदिरा गांधी की हत्या हुई इन सब घटनाओं को सुनने से हृदय घबरा रहा था। उसकी जवान से शब्द नहीं निकल रहे थे। बढ़ई की मृत्यु की खबर सुनकर वह ओर जोर से घबरा रहा था। कन्हैयालाल क्या देखता है कि एक लड़की दूध लेने के लिए तीन-तीन डोलचियाँ ले आई। उससे रहा नहीं गया। उसने पूछ ही लिया कि बेटी तुम यह बताओ कि यहाँ दूध सभी को उपलब्ध नहीं है और तुम तीन डोलचियाँ लाई हो। **लड़की झेंप गई और बोली - "एक डोलची साथ वालों की है, सरदार अंकल की, दूसरी ऊपरवालों की, एक हमारी"**६२ कन्हैयालाल का मन कौंध गया- 'अरे लड़की सरदारों के लिए दूध लेने आई'।

कन्हैयालाल ने क्या देखा कि एक आदमी एक सरदार का पता पूछ रहा है। वे उस आदमी को जानते थे, उसका नाम बलराम था। बलराम, कन्हैयालाल को अपने पिता का दोस्त बताता है। वह कहाँ रहते है? हमें उनसे मिलना है कन्हैयालाल को लगा जैसे हम लोग इतिहास के झुरमुटे, में जी रहे है। आपसी जो हमारे रिश्ते थे, उनका पन्ना पलटा जा रहा है और दूसरा खुल रहा है। पता नहीं आने वाले पन्ने पर क्या लिखा होगा?

इधर सरदार जी बच्चों के लिए दूध की लारी लाते है। सभी देखकर आश्चर्य करते हैं कि सरदार जी आप लारी लाएँ। सरदार जी ने मुस्कराकर कहा - **"बाबा, बच्चों ने दूध तो पीना है ना! मैंने कहा, चल मना; देखा जाएगा जो होगा। दूध तो पहुँचा आएँ।"**६३

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भीष्म जी ने सभी वर्गो के लोगों को यह सन्देश दिया है कि आपस में द्वेष की जगह प्रेम के सम्बंध को बढ़ाएँ। हम सब ईश्वर की एक संतान है; सभी के अन्दर एक ही रंग का

रक्त प्रवाहित होता है, तो फिर आपस में बैर किस बात का? हमें उन बच्चों से सीख लेनी चाहिए जो सारे वैर दूर करके भाई चारे का पाठ पढ़ाते हैं जैसे उपर्युक्त कहानी में, **"लड़की झेंप गई। फिर धीरे-से-बोली - "एक डोलची साथवालों की है, सरदार अंकल की, दूसरी ऊपरवालों की, एक हमारी।"**६४ पाली जिसके प्रति कन्हैयालाल के हृदय में, जो कुलषित भाव थे उससे ऊपर उठकर प्रेम और सौहार्द के भाव में बदल गए।

'आवाजें' -

'आवाजें' कहानी ऐसे अभागे मानवों की कहानी है, जो पाकिस्तान से विस्थापित होकर हिंदुस्तान आते हैं। यहाँ भी वह ठुकराए जाते है, क्योंकि आगामी पीढ़ी उन्हें उपेक्षा से देखती है। वे समूचे विस्थापित लोग अपने अतीत और वर्तमान में एक साथ विस्थापन के दर्द को झेलते हैं। 'आवाजें' कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

एक मुहल्ला पूरी तरह बस गया था। पहले यहाँ कोई नहीं रहता था। धीरे-धीरे बहुत से लोग यहाँ पर रहने लगे। मुहल्ले में चहल-पहल होने लगी। मुहल्ले में सभी लोग अपरिचित थे। कोई सिंध से आया, कोई पश्चिमी बंगाल से। सभी का पहनने का ढंग अलग था। सभी की भाषाएँ, रीति-रिवाज, वेषभूषा अलग थी। सभी का खानपान अलग था।

मक्खनलाल और माणिकलाल दोनों मिंटगुमरी से आए थे। जब दोंनो मिंटगुमरी मे रहते थे, तब वे एक दूसरे से अपरिचित थे। जब वे दिल्ली आए, तब दोनों की पहचान हुई। मक्खनलाल खूब सिगरेट पीता और तहमद पहनकर घूमता था। वह अपने साथ गाय और गाय का बछड़ा लाया था - **"वकील माणिकलाल ने उससे कहा भी कि देखो मक्खनलाल इन नई बस्तियों में सरकार गाय-भैंस नहीं रखने देगी। इस पर मक्खनलाल ने गाय के गले मे हाथ डालकर उसे दुलारते हुए कहा था इस बुलबुले को तो यहाँ से कोई निकाल नहीं सकता जी, इसके दूध की लस्सी तो आप सबको भी पिलाएँगे।"**६५

वकील माणिकलाल सदा तनकर चलते थे। वे सड़क के बीचोंबीच चलते थे। उनका यह उद्देश्य था कि सभी लोग मुझे पहचानें। मेरे पास मुकदमे ज्यादा आने लगे।

वे अपनी पहचान बनाना चाहते थे। लाला दीवानचंद जब अपने शहर जेहलम में रहते थे, तब उनके परिवार की बहुएँ सिर ढ़ककर रहती थी। जब से जेहलम छोड़कर आए, तब वे अपनी मर्यादाएँ भूल गई है।

डॉ० मोहकमचंद अपनी बस्ती में अपनी धाक जमाने में लगे हुए थे। वे चाहते थे कि पूरे इलाके में मेरी शान हो। उन्होंने अपने घर के बड़े फाटक बदलवा दिए, जो जगह कच्ची थी। उसको पक्का करवा दिया। बस्ती वाले चाहते थे कि कहीं ऐसी व्यवस्था हो जहाँ हम लोग कुछ समय बिता सकें। किसी ने कहा कि इंजीनियर अहूजा के यहाँ करें। उनकी दो बेटियाँ हैं, जो हम लोगों की मदद करेंगी।

माणिकलाल ने कहा - "बैठक करोगे तो वही पानी-बिजली का रोना रोते रहोगे? करना है तो चाय-पार्टी करो। चलो, तुम मेरे घर आओ, मैं पार्टी करूँगा।"६६

सभी ने कहा कि पार्टी केवल चाय बिस्कुट वाली हो, जिससे किसी को बोझ न लगे। वकील **माणिक ने**

से दूर रहना पसन्द करती थी। सरला इंग्लैड में रहकर आई थी। वे दोनों एक दूसरे के पास जाकर अपना एकाकीपन बाँटती थी। बाहर के लोग व पड़ौसी लोग उसे परेशान करते थे। सरला मन में सोचती है कि इन लोगों से लड़ना अपना मूड खराब करना है। वह इसी को अपना रक्षा कवच मानती थी। **"सरला बीबी अपनी भारतीयता बनाए रखती और चिल्लाती, झगड़ती, हाथ पसार-पसारकर गालियाँ देती तब शायद कोहली के कारिंदे उसकी खिड़की के नीचे 'कमीना हरकत' नहीं करते। चंडी का रूप ही शायद स्त्री का सबसे बड़ा सुरक्षा कवच है। मुहल्ले में यहाँ-वहाँ जितनी भी स्त्रियाँ चंडी का रूप धारण किए हुए हैं, सभी ज्यादा सुरक्षित हैं।"**[७२]

कोहली दिन भर शराब, जुएँ में मस्त रहता है। पिताजी की मृत्यु हो गई। घर के बँटवारे के कारण घर में लड़ाई झगड़ा शुरू हो गया। भाई ने अपनी बहन को थप्पड़ भी मारा। जायदाद बँट गई। पत्नी अपने घर के दरबाजे बन्द कर लेती है। बेटा अपने पिता पर कभी हाथ उठाता है सारा मुहल्ला तमासा देखता है।

देवका का पति उसको तथा अपने बच्चों को छोड़कर चला गया। देवकी की नौकरी पक्की है। उसके पति ने दूसरी शादी कर ली तथा पत्नी का धर्म स्वीकार कर लिया। सास देवकी को घर से निकालने पर तुली हुई है। देवकी निश्चय कर लेती है- **"अब या तो नीचे पाताल में या फिर अपने बल-बूते अपने पाँवों पर। इस बीच इसकी नौकरी भी पक्की हो गई। अब तो सास भी इसके मुँह नहीं लगती बल्कि सुबह-शाम मंदिर जाने लगी है। मतलब कि मन की शान्ति के लिए इसे पूजा-पाठ की जरूरत पड़ गई है।"**[७३] चड्ढ़ा की बहू जल कर मर गई। उसकी दुकान पर लोग पत्थर फेंकने लगे हैं। कोई चिल्लाता है -

"मुर्दाबाद! मुर्दाबाद!
दहेज का क्रीड़ा मुर्दाबाद !
मुर्दाबाद ! चड्डा मुर्दाबाद ! मुर्दाबाद !"[७४]

चड्ढा की बहू के माता-पिता बहुत दुखी थे। उस बहू को दहेज के कारण जलाया गया। बाहर के लोगों ने कहा -**"हमारे घर आई थी। इतनी बच्ची-सी तो थी। उससे तो किनारी-गोटेवाला दुपट्टा ही नहीं सँभाला जा रहा था। बड़ी हँसमुख। हमने कहा, गाना सुनाओ तो झट से गाने लगी। बड़ी-जल्दी हिलमिल गई। यहीं बैठे-बैठे हमारे बच्वो के साथ 'गीटे' खेलने लगी थी। पता नहीं, अंदर खाते क्या हुआ है, अंदर की भगवान जाने। ----"**

नहीं, नहीं, पकड़ा गया है। बाप-बेटा दोनों पकड़े गए हैं और यह भी गलत है कि लड़की खुद जल मरी थी। तफतीश में लड़के ने कबूल किया है कि उसने बहू के कपड़ों को आग लगाई थी। उसने पीछे से आकर लड़की के सिर पर मिटटी का तेल उँड़ेला था। तफतीश के दौरान पुलिस अफसर ने उससे पूछा कि पीछे से आकर तेल क्यों उँड़ेला तो लड़का बोला पहले वह समझी, मैं उस पर पानी डाल रहा हूँ। वह हँसने लगी थी। जब उसे तेल की बू आई, तब भी नहीं समझी। --- कचहरी में खड़ा लड़का नीम पागल-सा लग रहा था।"[७५]

पूरा मुहल्ला शान्त हो गया था। रात को ग्यारह बजने वाले थे। सभी लोग सो गए। सभी की बिजलियाँ

बन्द हो गई। जो पढ़ने वाले बच्चे थे वे पढ़ने लगे। पिता ने अपने बच्चे से कहा कि बेटा ८० % से अंक कम मत लाना। अगर तुम्हें आगे बढ़ना है। तुम्हारा भविष्य अब तुम्हारे हाथ में है। अगर तुम्हारी द्वितीय श्रेणी आई, तो मैं कुछ नहीं कर सकता।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीष्म साहनी इस कहानी के माध्यम से हमें यह बताना चाहते है कि मानव को आगे बढ़ने के लिए उसे अपना रास्ता स्वयं खोजना होगा। जीवन में सुख-दुख के बादल आएँगे। उनको आपको चीरना होगा। जैसे देवकी व महारानी लक्ष्मी बाई ने चीरा।

"जहाजों से जो टकराए, उसे तूफ़ान कहते हैं।
तूफानों से जो टकराए, उसे इन्सान कहते हैं।"
" हमें रोक सके से ये जमाने में दम नहीं।
हमसे है जमाना, जमाने से हम नहीं।"
"खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर से पहले।
खुदा बन्दे से यह पूछे बता तेरी रजा क्या है।"७६

'मरने से पहले' -

'मरने से पहले' कहानी भारतीय न्याय-व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। अदालतों में वादी को न्याय जल्दी नहीं मिल पाता। जब कभी एक-दो दशकों में मिलता है तब तक न्याय का उसके लिए कोई अर्थ नहीं रह जाता। न्याय मिलने पर प्रतिवादी आसानी से अपने पक्ष को नहीं छोड़ता। इसी भाव भूमि पर लिखी यह कहानी एक बूढ़े व्यक्ति की लाचारी एवं वेबसी को व्यक्त करती है; जिसकी कथावस्तु इस प्रकार है-

एक वृद्ध व्यक्ति था। उसे पता नहीं था कि उसकी मृत्यु उसके नजदीक डोल रही है। वह किराए के मकान में रहता था। उसके दो बेटे थे। वह बहुत गरीब था। उसकी ७३ वर्ष की उम्र हो चुकी थी। उसकी एक जमीन का मुकदमा चल रहा था, जिसे लड़ते-लड़ते बीस वर्ष हो चुके थे। मुक़दमा उसके पक्ष में ही था। बस कोर्ट से आर्डर मिल जाए और जमीन मालिक से दस्तखत हो जाए और वह कब्जा कर सके।

वृद्ध आदमी अपने सपने संजो रहा था कि मैं एक दिन अपनी जमीन पर कब्जा कर सकूँगा। मैं हमेशा किराए के मकान में रह रहा हूँ। यद्यपि मेरी स्वयं की जमीन है, फिर भी उसमें नहीं रह पा रहा हूँ । जब मैं तीसरी मंजिल पर चढ़ता हूँ, तब मेरे पैरों में दर्द होने लगता है। अब सोचता हूँ कि कितनी जिन्दगी अवशेष है? अब थोड़ा समय अपनी जमीन पर निवास कर लूँ। वह मन में यही आस लगाए रहता कि एक दिन मुझे मेरी जमीन जरूर मिलेगी। इसी हाल में वह चिलचिलाती धूप में कचहरी के चक्कर काटता रहता है और सोचता है कि मुझे वहाँ १ बजे के पहले पहुँचना है, वहाँ पर सही काम १ बजे तक होता है। एक बजे के बाद वहाँ अफ़सर लोग उठ जाते हैं, कारिंदे सिगरेट, बीड़ियाँ सुलगा लेते हैं, फिर सभी लोग उठ जाते हैं। बूढ़ा धूप में चलकर कचहरी जाता, पर वहाँ कोई न मिलने पर वहाँ से वापस लौट आता है। ऐसा वह कई बार कर चुका था। वह वहाँ पूछ-ताछ करता है, तो किसी ने कहा कि वे

अभी नहीं आएँगे। किसी ने कहा कि उनके आने का कोई भरोसा नहीं है। उसे कोई निश्चित सूचना नहीं मिल रही थी। वह तहसीलदारों को कचहरी में तीन-तीन कारिन्दों को रिश्वत दे चुका था, पर कोई भी काम नहीं बन पाया। वृद्ध व्यक्ति ने सभी की जेबें भरी, सभी को मनमाने पैसे दिए पर कोई जवाब सही नहीं मिला। वह गुस्से में आकर कचहरी की सीढ़ियों पर बैठ गया। उसका गला सूख रहा था, क्षुधा सता रही थी, सिर चकरा रहा था, पैरों से चला नहीं जा रहा था। उसकी हालत जर-जर होती जा रही थी और मुँह में कड़ुवाहट होती जा रही थी। वह सिगरेट पीने लगा। यद्यपि वह जानता था कि खाली सिगरेट पीने से धुआँ सीधा फेफड़ों में जाएगा, फिर भी सिगरेट की कश लेते हुए वह अपनी जिन्दगी के बारे में सोचने लगा। मैं कुछ काम का नहीं हूँ। पहले किसी को पैसे दे देते थे, तो काम हो जाता था, अब चाहे पैसे दो कुछ भी नहीं होता। अगर मुझे जमीन का टुकड़ा मिल भी गया, तो वह मेरे किस काम का? वह वकील अच्छा हैं, घर बैठे काम करता है; कचहरी में भी नहीं जाता है। उसकी उम्र ८० साल हो चुकी है। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। घुटनों में गठिया रोग हो गया है, पेचिश की पुरानी तकलीफ है। आँखों से साफ दिखाई नहीं देता है। वह पैसों के लालच में पड़ना भी नहीं चाहता। वह जानता है कि जिन्दगी के कुछ ही वर्ष बचे हैं। उन्हें आराम से गुजार लेना चाहिए और एक मैं हूँ कि जमीन के लालच में पिसता ही जा रहा हूँ। जब वृद्ध व्यक्ति काफी थक जाता है, वह सीधे वकील के घर जाता है और वह क्या देखता है कि वृद्ध वकील **"छोटे से लकड़ी के खोखे में वह बड़े इत्मीनान से लोहे की कुर्सी पर बैठा था। उसका चौड़ा चेहरा दमक रहा था और सिर के गिने-चुने बाल बिखरे हुए थे। उसे लगा, जैसे बूढ़े वकील ने नया सूट पहन रखा है और उसके काले रंग के जूते चमक रहे हैं।"७७**

वह अपने पैर घसीटता हुआ उनके करीब जा पहुँचा, वह क्या देखता है कि जमीन पर खड़ा अधेड़ उम्र का कारिंदा हाथ में नोटरी की मोहर उठाए, एक-एक दरख्वास्त पर दस्तखत हो जाने पर ठप्पा लगा रहा था। वह वृद्ध चिल्ला पड़ता है। तुम यहाँ आराम से कुर्सी पर बैठे हो, पैसे बटोर रहे हो और मैं कचहरी के चक्कर लगा रहा हूँ। तुम चाहो तो मेरा सारा कार्य करवा सकते हो। वकील ने वृद्ध से कहा कि यह काम मैं नहीं कर सकता। यह कार्य जमीन के मालिक को ही करना होता है। वृद्ध को बहुत गुस्सा आ रहा था। पहले मैं तुम्हें मुँह माँगे पैसे देता रहा हूँ, अब मुझे जमीन के मालिक से काम करने को कह रहे हो। वृद्ध अपना गुस्सा पीकर बोला - **"वकील साहिब, आप मुकदमे के एक एक नुक्ते को जानते हैं। आप ही की कोशिशों से हम यहाँ तक पहुँचे हैं। अब इसे छोटा सा धक्का और देने की जरूरत है, और वह आप ही दे सकते हैं।"७८**

वकील साफ मना कर देता है। वृद्ध ने कहा कि एक मेरा छोटा-सा काम कर दो। वकील ने कहा कि यह मुश्किल का काम है। वह करवद्ध विनती करता है। आप ही मेरी बिगड़ी बना सकते हैं। वृद्ध थोड़ी देर तक सोचता रहा फिर बोला - **"अगर आप जमीन पर कब्जा हासिल करने की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लें, तो कब्जा मिलने पर मैं आपको जमीन का एक-तिहाई हिस्सा दे दूँगा।"७९**

वकील ने जब यह सुना उसके अन्तःकरण में विद्युत सी दौड़ गई और उसके हाथ में गुदगुदी सी होने लगी। शरीर में ताकत सी आ गई और उसका चेहरा खिल उठा और उसका मुँह बन्द हो गया।

"मैं आपसे इसलिए कह रहा हूँ कि केस की सारी मालूमात आपको है। अपना सुझाव सबसे पहले आपके सामने रखना तो मेरा फर्ज बनता है। आपके लिए कुछ भी मुश्किल नहीं है और अदालत का फैसला हमारे हक में हो चुका है। अब केवल कब्जा लेना बाकी है।"८० जब वृद्ध ने यह बात कही, तब वह वकील का चेहरा दमकता देखकर सोचने लगा कि तीर निशाने पर लगा है। अब आप अपना फैसला हमें शाम तक बता दें। वृद्ध वकील के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"अगर मंजूर हो तो मैं अभी मुआहिदे पर दस्तखत करने के लिए तैयार हूँ।"**८१

वह वृद्ध पार्क में बैठकर हल्की-हल्की धूप का आनन्द ले रहा था और अपनी थकान उतार रहा था। वह मन ही मन आश्वस्त था कि उसे बड़े बोझ से छुटकारा मिल गया। वह रात भर इसी सोच में था कि बेटे हमेशा यही कहते रहे कि आपने हमारे लिए क्या किया? जब वृद्ध वकील उसके केस के लिए कचहरी जाने लगा और बस पर चढ़ गया, तब उसके घुटनों में दर्द होने लगा, उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। वह बाँल-बाँल गिरने से बचा था। एक बार वह अपने पैर नहीं सँभाल पाया और एक युवती के ऊपर गिर गया, जिससे आस-पास के लोग ठहाका मारकर हँस दिए। वह अपना संतुलन खोता जा रहा था। कुछ ही देर में वकील को यह महसूस होने लगा, जैसे किसी जन्तु ने अपने दाँत उसके शरीर में गाड़ दिए हैं और उसे झिंझोड़ने लगा है। न जाने तहसील तक पहुँचते-पहुँचते मेरी क्या हालत होगी और वह हाय-हाय कहकर जमीन पर बैठ गया? वह बस उस बस्ती को पार कर रही थी कि जहाँ बेंत के पेड़ों के झुरमुट के बीच नाले में किनारे-किनारे सड़कें चल रही थी।

वृद्ध जब पार्क में किसी मेज पर बैठ गया, तब वह अपनी थकान दूर करने लगा और ऊँघने लगा। उसे पता नहीं पार्क में उसकी मौत कुछ ही मिनट में हो जाएगी। वह वकील के बारे में विचार कर रहा था, न जाने मैंने कैसे उसे एक तिहाई जमीन दे दी। अदालत का फैसला तो मेरे हक में हो चुका था। मैंने अपनी लाखों की जमीन उसे दे दी। यदि थोड़ा और प्रयास करता, तो वह जमीन मुझे मिल जाती, लेकिन मैं अब क्या करूँ ? मेरी बुद्धि कहाँ फिर गई थी? ऐसा विचार करते-करते उसे थोड़ा सा धक्का लगा और जोर से दर्द उठा। एक बार, दो बार, तीन बार, वह बेंच पर से लुढ़ककर ओस से भीगी हरी-हरी घास पर औंधे मुँह जा गिरा और उसके जीवन का अन्त हो गया।

यह कहानी हमें यह सत्प्रेरणा देती है कि हमें तृष्णा नहीं करनी चाहिए। यद्यपि यह जमीन मेरी थी, तो भी इस पर २० वर्षों से मुकदमा चल रहा था और मुकदमा निपटने का कोई आसार नजर नहीं आ रहा था। मेरा कोई सहारा नहीं था, शरीर वृद्ध हो चुका था और शरीर में कार्य करने की शक्ति नहीं थी। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर ईश्वर ने हमें जो कुछ दिया। हमें उसी में संतुष्ट रहना चाहिए।

'झूमर' -

'झूमर' कहानी इस संग्रह की सबसे लंबी और मार्मिक कहानी है। भीष्म साहनी कहानी के नायक अर्जुनदास के माध्यम से एक ऐसे पात्र को सामने रखते हैं, जो स्वतंत्रता के संघर्ष के उच्चादर्शों को जीता है। त्याग, बलिदान और देशप्रेम के भावाकुल अंतस को लिए प्रस्तुत होता है। अर्जुनदास जो कल तक देश की आज़ादी के लिए जीवन

तक को भी दाँव पर लगाता है, वही अर्जुनदास आज़ादी के बाद पतनशील मूल्यों के बीच आर्थिक अभाव और मानसिक यंत्रणा में जीता है। **'झूमर'** कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

अर्जुनदास एक सच्चा देशभक्त था। वह नाटक का अभिनय करता था। समाज में जो बुरी दशाएँ फैली थीं, अंग्रेज लोग भारत पर अत्याचार कर रहे हैं। जनता जो गरीबी में पिसती चली जा रही थीं। उन सबको समाज के सामने लाना था। लोगों में देश के लिए क्रान्ति के बीज बोने थे। **छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने कहा है -**

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती।

स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती।''

अर्जुनदास की पत्नी का नाम कमला था। उसके दो बच्चे थे। उसका अपने परिवार के प्रति बिल्कुल ध्यान नहीं था। उसकी पूरी जवानी नाटक का अभिनय करते बीत गई। जब उसकी वृद्धावस्था आ गई, तब वह एक मंच के नीचे बैठा पिछले दिनों को याद कर रहा था। उसके पैरों में मच्छर काट रहे है। वह विचार कर रहा था कि एक झूमर की खातिर मेरी पूरी जिन्दगी बर्बाद हो गई। उस वक्त मैंने न तो सोचा और न ही जल्दबाजी में कोई निर्णय लिया। अगर मुझे पहले वाला समय फिर मिल जाए, तो मैं अपना समय फिर से कैसे गुजारूँगा? नाटक के अभिनय में कमला भी आई थी। अर्जुनदास को रंगमंच का **'खलीफा'** बनाया गया था। उन्हें पुरस्कार भी दिया जाना था।

उस कार्यक्रम में उनके वृद्ध साथी भी आए थे। कुछ वृद्ध महिलाएँ भी थीं, जो उस समय अभिनय में कार्य करती थीं। सभी अपने पुराने दिनों को याद कर रहे थे। अर्जुनदास ने अपना एक अनुभव सुनाया।

बस्ती में जब **'शिखरिणी'** नाटक खेला गया। रात को शो देर में खत्म हुआ। सभी लोग जा चुके थे। सभी बसें व गाड़ियाँ भी बन्द हो गई थीं। मैं और रमेश बचे थे। हम लोगों ने अपनी रात मंच पर बिताई। जब सुबह हुई, तब हम लोगों ने सारा सामान बाँधकर बैलगाड़ी में रख दिया और हम दोनों उसमें बैठ गए - **''बैलगाड़ी धीरे-धीरे एक सड़क से दूसरी सड़क और हम सामान के ऊपर बैठे गीत गा रहे थे, एक गीत के बाद दूसरा गीत। बैलगाड़ी रेंगती हुई, सुबह दस बजे की निकली दोपहर चार बजे कार्यालय के सामने जाकर रूकी। सारा दिन इसी में निकल गया, पर उसी शाम को शो भी हुआ और शो के बाद हम लोग घर पहुँचे। ऐसे भी दिन थे।''८२**

वही पर अर्जुनदास की पत्नी बैठी थी। वह बोली - **''तुम तो दिन भर बैलगाड़ी पर बैठे गीत गा सकते थे, शहर भर की सैर कर सकते थे। तुम्हें मैं जो मिली हुई थी, घर में पिसनेवाली।''८३**

अर्जुनदास के पीछे पुलिस लगी हुई थी। कोई वारंट नहीं था। उन्हें केन्द्रीय कार्यकारिणी की मीटिंग में पहुँचना था। वे छिपकर उस मीटिंग में पहुँचे। जब उनको पता चला कि वहाँ पुलिस पहुँच गई है, तब वे वहाँ से रफू चक्कर हो गए। जब बेटी बीमार पड़ी, तब कमला ने अपने पति को याद करती है कि वे अब आएँ और बेटी को दिखाने जाएँ। अर्जुनदास को नाटक तथा देश-सेवा का भूत सवार था। वे अपने परिवार पर बिल्कुल ध्यान नहीं दे रहे थे। पुलिस उनके पीछे पड़ी हुई थी। उन्हें दो साल की सजा हो गई। कमला दोनों बच्चों का पालन पोषण करती है। वह अपने पति से कह चुकी थी। हम जहाँ रहते हैं, वह अच्छी जगह नहीं है। बेटी बड़ी हो चली है। अर्जुनदास को अपने काम के

आगे कुछ भी दिखाई नहीं देता है। जब अर्जुनदास ने देश की खूब सेवा की, तब उसे इसके बदले में कुछ भी नहीं मिला। जिन लोगों ने अपना पूरा जीवन देश की सेवा में लगा दिया था। सरकार उन पर बिल्कुल ध्यान नहीं दे रही थी। वे भीख का कटोरा लेकर घूम रहे थे। "उसकी आँखों के सामने बोधराज का चेहरा घूम गया। बोधराज स्वतंत्रता संग्राम के विलक्षण सेनानी रह चुके थे। जीवन के सोलह व़र्ष जेलों में काट चुके थे, पर आज़ादी के बाद एक ही झटके से मानो घूरे पर फेंक दिए गए थे। आज़ादी के बाद एक नई पौध उभरी थी। सियासतदानों की। सियासतदान उभरने लगे थे और देशभक्त घूरे पर फेंके जाने लगे थे। एक नहीं, दो नहीं, बीसियों की संख्या में। बोधराज उनके शहर के प्रतिष्ठित देशसेवियों में से थे। आजादी के बाद पाँचेक साल में ही, वह आदमी जो कभी घर-घर जाकर स्वतंत्रता-संग्राम के लिए लोगों को उत्प्रेरित किया करता था, अब अपने मुहल्ले में पड़ा सड़ रहा था, देश को कहीं भी उसकी जरूरत नहीं रह गई थी। अब और तो क्या करता, घर-घर जाकर तंबाकू नोशी के नुकसान समझाता फिरता था और लोगों से वचन लेता फिरता था कि वे सिगरेट नहीं पिएँगे।"८४

इधर कमला ने जिन्दगी से समझौता कर लिया था। वे मेरी नहीं मानेगे। अर्जुनदास कहीं पर जा रहे थे? उन्हें देवराज मिला। देवराज आकाशवाणी में नौकरी करते थे और अच्छे पद पर थे। उस समय देश का बँटवारा हो गया था। शरणार्थी सड़को पर इधर-उधर भ्रमण कर रहे थे। अगर तुम्हें आकाशवाणी में नौकरी करना हो, तो मैं बात करूँ सरकारी नौकरी है। अर्जुनदास ने कहा- " देवराज को इस बात का खयाल ही कैसे आया कि मैं नौकरी के लिए दर्ख्वास्त दूँगा, और उसने देवराज को नाटक देखने का न्यौता दिया था।"८५

कमला स्कूल में पढ़ाने लगी और दुकान बन्द कर दी। अर्जुनदास ने एक किताबों की दुकान खोली। दुकान में किताबें कम बिकती थी। लोगों की भीड़ ज्यादा लगी रहती थी। एक दिन कमला ने गुस्से में आकर कह दिया कि हमें अब आपकी जरूरत नहीं है। वहाँ अर्जुनदास के पास एक पत्र और फार्म आया। पत्र में उनका बुलावा था। फार्म मे पूछा गया था - "स्वतन्त्रता संघर्ष में आपका क्या योगदान रहा है? उनके प्रश्न थे कितने-कितने दिन जेल काटी, कभी भूख हड़ताल की, जेल के अन्दर, जेल के बाहर, कभी किसी लाठी-चार्ज में जख्मी हुए, किसी गोली-कांड में, रचनात्मक कार्य में कैसा योगदान रहा, कभी पदाधिकारी रहे, रहे हों तो किस समिति के, स्थानीय, जिला अथवा प्रादेशिक? आदि-आदि।"८६

अर्जुनदास जब राजधानी से लौट रहे थे, तब प्लेटफार्म पर कुछ लोग नारे लगा रहे थे। ट्रेन मे बैठे लोग इन्कलाब ज़िन्दाबाद के नारे लगा रहे थे, फिर देश का मजाक उड़ा रहे थे। जब गाड़ी तेज चलने लगी, तब वयोवृद्ध देशभक्तगीत एक आवाज़ होकर गाने लगे -

"जरा वी लगन आज़ादी दी
लग गई जिन्हाँ दे मन दे विच्च।
ओह मजनूँ बता फिर दे ने
हर सहरा, हर वन दे विच्च।"८७

अर्जुनदास को गुस्सा आ गया और उसने उन लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा - **"आपने शर्म-हया बेच खाई है। ये लोग जो यहाँ बैठे हैं, सब देशभक्त हैं, इन्होंने कुर्बानियाँ दी है, जेलें काटी हैं, देश आजाद हुआ तो इनके बल पर और आज---"८८**

अर्जुनदास को उस वक्त धक्का लगा, जब उसका बेटा उससे दूर हो गया। बेटी की शादी हो गई। बेटी मुझसे नाराज थी कि मैंने माँ को बहुत दुख दिया या मैं अपने आदर्शवाद और देशभक्ति में ही भटकता रहा था। अब पहले जैसा शरीर नहीं रहा था। थोड़ी-थोड़ी देर में थकावट आ जाती थी। जब वह और उनकी पत्नी एक नाटक में शो देखने गए। जब नाटक खत्म हो गया। उस नाटक ने सभी के हृदय को द्रवित कर दिया। जब युवक झोली फैलाए, सभी के पास जाने लगा, तब उन्होंने क्या देखा कि **"जब वही युवक, झोली फैलाए, अर्जुनदास के निकट, सामनेवाली पाँत के सामने से गुजर रहा था तो एक स्त्री ने भावविह्वल होकर अपने दोनों हाथ उठाकर अपने कानों में से सोने के झूमर उतारकर युवक की झोली में डाल दिए। "अर्जुनदास चौंका। उसने ध्यान से देखा, उसकी पत्नी कमला ने झूमर उतारकर उस युवक की झोली में डाले थे एकमात्र झूमरों का जोड़ा, जो बेटी की शादी के समय उसने अपने लिए बनवाया था। झूमर चुकने के बाद कमला सिर पर अपना पल्लू ठीक कर रही थी और अपनी आँखें पोंछ रही थी।"८६**

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीष्म साहनी ने झूमर कहानी के माध्यम से हमें यह समझाने का प्रयास किया है कि यद्यपि अर्जुनदास देशभक्त था। देश के लिए मर मिटने वाला था। उसने न अपनी जिन्दगी देखी और न परिवार की और देश के कार्य में ही अपनी पूरी जवानी लगा दी। वह पहले चप्पल चटकाता था और लास्ट में चप्पल चटकाता रहा, पर उसे मिला क्या एक बार उसकी पत्नी कमला ने कहा था - **"तुम्हें घर-परिवार की चिन्ता होती तो तुम नौकरी करते। तुम तो आदर्श वाद के घोड़े पर सवार तीसमारखाँ बने घूम रहे थे। जमीन पर तुम्हारे पाँव ही नहीं टिकते थे।"६०**

'नौसिखुआ' -

'नौसिखुआ' कहानी आतंकवादियों की संवेदनहीनता को चरितार्थ करने वाली कहानी है। आतंक का कोई धर्म नहीं होता है। आतंक के मूल में धर्म का आवरण हो सकता है। ये कहानी इस तथ्य को उजागर करती है। 'नौसिखुआ' कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

अमरजीत एक अच्छा युवक था। शैशवावस्था में उसे अच्छे संस्कार मिले थे। वह सायंकाल को दादी माँ की गोद में बैठकर कहानियाँ सुनता था। दादी माँ उसको सदैव अच्छे संस्कार देती थी। दादी माँ वीर महापुरूषों की कहानियाँ सुनाती थी, जिससे उसका हृदय वीर महापुरूषों की गाथा सुनकर द्रवित हो उठता था।

अमरजीत ने जब अमृतजल को पिया **"उसका रोम-रोम पुलकित हो उठा। भावना का ज्वार-सा उसके अंतस से उठा और उसे सराबोर कर गया। उसे भास हुआ, जैसे अमृतजल छकने भर से ही वह किसी ऊँचे आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच गया है, जैसे उसका समूचा व्यक्तित्व, उसका अंग-प्रत्यंग, उसके**

दिल में उठने वाले उद्‌गार, उसकी सोच, उसके सभी राग-द्वेष, सभी एकीभूत होकर किसी लौ पर केन्द्रित हो गए हैं। अपने आप ही जैसे अमृतजल के दो घूँट गले में से उतरने पर ही उसके नाते-रिश्ते, घर-बाहर, अपने-पराए, सब उससे झटककर अलग हो गए हैं और वह हाथ बाँधे, सभी बंधनों से मुक्त पंथ की सेवा के लिए दत्तचित, उपस्थित हो गया है।"६१

अमरजीत ने जब पुराना कड़ा उतारकर नया कड़ा धारण किया ऊँचे लंबे युवक ने कहा - **"आज से तुम पंथ के सेवक हो। तुम्हारा तन-मन, तुम्हारा सर्वस्व, पंथ पर निछावर है।"६२**

अमरजीत को अपने अन्दर हल्का महसूस हो रहा था। वह अब आतंकवादियों की टोली में सीधा धर्म के रास्ते आया था। उनके अन्दर साहस के गुण आ गए थे और अन्याय के विरूद्ध लड़ना आ गया था।

दादी माँ उसे एक कहानी सुनाती है। वह कहानी गुरू तेगबहादुर की थी। दादी माँ का अमरजीत के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"पहले, आतताइयों ने गुरू महाराज के चेले मतिराम को, सिर से पैर तक, आरे से चीर डाला। गुरू महाराज की आँखों के सामने। फिर, दूसरे चेले, भाई दयालदास को रूई में लपेटकर, उबलते पानी के कड़ाहे में झोंक दिया---"६३**

गुरू महाराज की देह सड़क पर पड़ी रही। सड़क पर तेज आँधी चल रही थी। एक बहादुर सिक्ख उनके शीश को कपड़े में लपेटकर अपने घर ले गया। जब आँधी रूकी, तब बादशाह के अधिकारियों ने देखा, वहाँ धड़ व सिर नहीं है। लखी नाम के एक व्यापारी ने गुरू जी के धड़ को देखा। वह गुरूजी का भक्त था। उससे रहा नहीं गया कि गुरूजी का धड़ यही पड़ा रहे। अगर मैं गुरू का धड़ ले जाऊँगा, तो पुलिस मेरे पीछे पड़ जाएगी। **"पर उसने एक तरकीब सोची। माल ढ़ोनेवाला अपना ठेला लिया उसने। उस पर कुछ माल रखा और आँधी के बवंडरों के बीच जा पहुँचा। महाराज के शरीर को उठाया और ठेले पर, माल के बीचोंबीच रख लिया और फिर उसे खींचता हुआ बाहर निकल आया और वहाँ से सीधा अपने घर की ओर चल दिया। देखनेवालों ने समझा, अपना सौदागरी का सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जा रहा है।---"६४**

लखीदास उस धड़ को अपने घर के ड्योढ़ी में ले गया और पूरे घर में आग लगा दी, जिससे धड़ जलकर राख हो गया।

अमरजीत ऐसी कहानियाँ सुनकर द्रवित हो उठता है। उसके अन्दर गुरू के मार्मिक चित्र उभरने लगते है। उसका रक्त खौलने लगता तथा तन-मन में आत्म बलिदान की भावना हिलोरें लेने लगती है।

अमरजीत को एक दुकानदार को मारने का हुक्म मिला। वह किताब की दुकान करता था। उससे कहा गया था कि तुम उससे गुरू गोविन्दसिंह की जीवनी की किताब माँगना। जैसे ही वह पीछे मुड़े तुम गोली चला देना, वैसे ही दोनों स्कूटर पर बैठकर वापस आ जाना।

अमरजीत जब उस दुकानदार के पास पहुँचा, तब उसने दुकानदार से कहा, **"आपके पास 'गुरू गोविन्दसिंह की जीवनी है? लेखक हैं, डाक्टर हरभजन सिंह।"६५**

दुकानदार ने कहा, "हाँ! जैसे ही दुकानदार किताबें देखने लगा। उसने अपना निशाना उसके ऊपर लगाया

और उसका साथी उसके बगल में खड़ा रहा। जब दुकानदार हरवंशलाल ने उस ऊँचे लम्बे युवक ने पूछा कि आपको क्या चाहिए? ऊँचे लम्बे युवक ने कहा कि मैं इनके साथ हूँ। जब उसकी नजर हरवंशलाल के कड़े पर पड़ी, तब वह चौंक गया। अमरजीत जैसा कड़ा पहने हुए था। वैसा ही कड़ा हरवंशलाल पहने हुए था।

अमरजीत को दुविधा में कुछ भी समझ मे नहीं आ रहा था। उसके हाथ से बन्दूक नहीं चली। **"तभी धाँय की आवाज आई। फिर एक और दुकानदार के हाथ से किताब छूट गई और वह घबराकर घूम गया। किताब माँगने वाला युवक फर्श पर पड़ा छटपटा रहा था और खून के छींटे उड़ रहे थे, जबकि दूसरा युवक, दुकान के चबूतरे पर से कूदकर बाहर की ओर भाग रहा था।**

सब पलक झपकते ही हो गया। दुकानदार बेहद घबरा गया था। काँपती टाँगो से जब वह काउंटर के पीछे से निकला तो स्कूटर कहाँ से कहाँ पहुँच चुका था और युवा ग्राहक की आँखें पथराने लगी थीं।"६६

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अमरजीत एक संस्कारी युवक था। जब उसने महापुरूषों की वीर गाथाएँ सुनी, तब उसका हृदय अन्याय से लड़ने को प्रेरित हो गया। जब उसने हरवंशलाल के हाथ में कड़ा देखा, तब उसने अपने मन में सोचा कि यह मेरा गुरू भाई है। मैं इसे कैसे मार सकता हूँ? उसकी बन्दूक उस पर नहीं चली और स्वयं मरकर अपने धर्म की रक्षा की और बदला लेने की भावना साम्प्रदायिकता को अपने प्राण देकर साम्प्रदायिक सद्भाव में बदल दिया। भीष्म साहनी ने यह कहानी लिखकर हमें यह संदेश दिया कि जिस प्रकार अमरजीत ने अपने धर्म के लिए प्राणों की आहुती दे दी। उसी प्रकार हमें अपने हिन्दू धर्म की रक्षा करनी चाहिए।

राष्ट्रकवि माखनलाल चतुर्वेदी ने (अमरजीत) को फूल बनाकर अपने धर्म की रक्षा के लिए कहा है -

" चाह नहीं सम्राटों के शव पर, हे हरि डाला जाऊँ ।
चाह नहीं देवों के सिर पर, चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ ।।
मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ मे देना तू फेंक ।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक"।।६७

ये फूल (अमरजीत) ने अपने धर्म की खातिर मर जाना स्वीकार किया, लेकिन किसी दूसरे धर्म को स्वीकार नहीं किया।

'प्रादुर्भाव' -

भीष्म साहनी की 'प्रादुर्भाव' कहानी वस्तुतः मनोवैज्ञानिक कहानी है। व्यक्ति के मानसिक उथल-पुथल और क्रोध को शान्त एवं अक्रोध से जीता जा सकता है। अपनी प्रशंसा किसे अच्छी नहीं लगती है। प्रशंसा का वह रूप जो व्यक्ति को आत्म गौरव से भर देता है। उसके सभी गिले व शिकवे दूर हो जाते हैं। बशर्ते प्रशंसा दिल से की गई हो मात्र चापलूसी नहीं। इसी विश्वास को चरितार्थ करती हुई 'प्रादुर्भाव' कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

रेडियो स्टेशन के डायरेक्टर अपनी कुर्सी पर बैठै ही थे कि उन्होंने अचानक अन्दर से शोर सुना।

डायरेक्टर ने स्टेनो को बुलाया और कहा कि यह शोर क्यों हो रहा है? दस बजे बाला रिकार्डिंग अभी हुआ या नहीं। स्टेनो ने मुस्कराया और कहा कि यह उसी का शोर है।

शोर इतना बढ़ता जा रहा था कि डायरेक्टर ने सोचा कि ये सारे लोग दफ्तर के अन्दर ही न आ जाए। डायरेक्टर बाहर कान लगाए सुन रहे थे, जो शोर मचा रहा था, वह अन्दर आ गया। स्टेनो ने कहा कि यह शिवानंद है। यह एक लेखक है। डायरेक्टर समझ गए थे कि यह शोर क्यों मचा रहा है? इसको बन्द लिफाफे में चेक नहीं दी गई होगी। शिवानन्द का चेहरा तमतमा रहा था। शिवानन्द ने डायरेक्टर से कहा - **"यह सरासर अपमान है। यहाँ हमारा अपमान करने के लिए बुलाते हैं।"**९८

डायरेक्टर ने कहा कि क्या गलती हो गई? शिवानन्द ने कहा - **"आप बार्ता के लिए चार लेखकों को बुलाते हैं और सभी को अलग-अलग पारिश्रमिक देते हैं? यह धाँधली नहीं तो क्या है?" "आप आराम से बात कीजिए। आकाशवाणी के कुछ नियम है, मैं आपको समझा दूँगा।"**

"आप क्या समझा देंगे? यह देखिए चेक। चालीस रूपए! और लोगों को आपने सौ-सौ रूपए चेक दिए और मुझे चालीस"९९

शिवानन्द का पारा बढ़ता ही जा रहा था। डायरेक्टर उसे समझाने की कोशिश कर रहे थे। डायरेक्टर ने अपनी बगल की कुर्सी थोड़ी आगे रखी और शिवानन्द के प्रति डायरेक्टर का यह कथन रेखाकिंत है कि - **"आप ध ैर्य धारण कीजिए और आराम से बैठिए। शिवानन्द ने कहा - "आप लोग जान बूझकर लेखकों का अपमान करते हैं मुझे मालूम होता है कि सभी को अलग-अलग पारिश्रमिक दिया जाएगा तो मैं आता ही नहीं।"**१००

शिवानन्द ने कहा कि आपने रिकार्डिंग के वक्त मुझसे क्यों नहीं कहा? कांट्रेक्ट पर कुछ भी लिखा हो पर सवाल उसूल का है। मुझे ४० रूपए दिए गए बल्कि सभी को सौ-सौ रूपए दिए गए। उन्होंने बार्ता में थोड़े शब्द बोले, जबकि मुझसे ज्यादा बुलवाया गया। यह रेडियोस्टेशन तो जन संपर्क का विभाग होता है। डायरेक्टर ने कहा कि आप अपने ऊपर काबू रखिए। अभी हम फाइल मँगवाते है। तभी डायरेक्टर प्रोग्राम सहायक को बुलाकर उसके साथ बाहर चले जाते है, इधर शिवानन्द स्टेनो को काफी बुरी भली सुनाता है - **"इसमें दर्याफ्त करने की क्या बात है? मैंने अपनी आँखों से देवराज का चेक देखा है। बात उसूल की है, आप लोग स्वयं लेखकों के बीच बड़े और छोटे का भेद करते हैं, उनमें फूट डालते है।"**१०१ स्टेनो ने कहा है कि आप छोटी-सी बात पर इतने बिगड़ रहे है। शिवानन्द बोला कि यह आपको छोटी बात लग रही है। जब डायरेक्टर आ जाते हैं, तब उनका अनुमान सही था यह गलती प्रोग्राम सहायक की थी।

डायरेक्टर साहब ने शिवानन्द को आराम से बैठाया और चाय पिलवाई एवं उसकी रचनाओं की खूब प्रशंसा की। चाय की चुस्कियाँ लेकर शिवानन्द का पारा धीमे-धीमे उतरता जा रहा था। डायरेक्टर ने कहा कि आपने कौन सी कहानी लिखी है? शिवानन्द ने कहा कि **'प्रादुर्भाव'**। आप तो बहुत अच्छा लिखते है। जब मैंने प्रादुर्भाव पढ़ी, तब से हमें आपसे मिलने की इच्छा हो रही है। यह सरकारी कामकाज बड़ा ही नाक में दम का है। अच्छा हुआ थोड़ा समय

डायरेक्टर ने स्टेनो को बुलाया और कहा कि यह शोर क्यों हो रहा है? दस बजे बाला रिकार्डिंग अभी हुआ या नहीं। स्टेनो ने मुस्कराया और कहा कि यह उसी का शोर है।

शोर इतना बढ़ता जा रहा था कि डायरेक्टर ने सोचा कि ये सारे लोग दफ्तर के अन्दर ही न आ जाए। डायरेक्टर बाहर कान लगाए सुन रहे थे, जो शोर मचा रहा था, वह अन्दर आ गया। स्टेनो ने कहा कि यह शिवानंद है। यह एक लेखक है। डायरेक्टर समझ गए थे कि यह शोर क्यों मचा रहा है? इसको बन्द लिफाफे में चेक नहीं दी गई होगी। शिवानन्द का चेहरा तमतमा रहा था। शिवानन्द ने डायरेक्टर से कहा - **"यह सरासर अपमान है। यहाँ हमारा अपमान करने के लिए बुलाते हैं।"**९८

डायरेक्टर ने कहा कि क्या गलती हो गई? शिवानन्द ने कहा - **"आप बार्ता के लिए चार लेखकों को बुलाते हैं और सभी को अलग-अलग पारिश्रमिक देते हैं? यह धाँधली नहीं तो क्या है?" "आप आराम से बात कीजिए। आकाशवाणी के कुछ नियम है, मैं आपको समझा दूँगा।"**

"आप क्या समझा देंगे? यह देखिए चेक। चालीस रूपए! और लोगों को आपने सौ-सौ रूपए चेक दिए और मुझे चालीस"९९

शिवानन्द का पारा बढ़ता ही जा रहा था। डायरेक्टर उसे समझाने की कोशिश कर रहे थे। डायरेक्टर ने अपनी बगल की कुर्सी थोड़ी आगे रखी और शिवानन्द के प्रति डायरेक्टर का यह कथन रेखाकिंत है कि - **"आप ध ैर्य धारण कीजिए और आराम से बैठिए। शिवानन्द ने कहा - "आप लोग जान बूझकर लेखकों का अपमान करते हैं मुझे मालूम होता है कि सभी को अलग-अलग पारिश्रमिक दिया जाएगा तो मैं आता ही नहीं।"**१००

शिवानन्द ने कहा कि आपने रिकार्डिंग के वक्त मुझसे क्यों नहीं कहा? कांट्रेक्ट पर कुछ भी लिखा हो पर सवाल उसूल का है। मुझे ४० रूपए दिए गए बल्कि सभी को सौ-सौ रूपए दिए गए। उन्होंने बार्ता में थोड़े शब्द बोले, जबकि मुझसे ज्यादा बुलवाया गया। यह रेडियोस्टेशन तो जन संपर्क का विभाग होता है। डायरेक्टर ने कहा कि आप अपने ऊपर काबू रखिए। अभी हम फाइल मँगवाते है। तभी डायरेक्टर प्रोग्राम सहायक को बुलाकर उसके साथ बाहर चले जाते है, इधर शिवानन्द स्टेनो को काफी बुरी भली सुनाता है - **"इसमें दर्याफ्त करने की क्या बात है? मैंने अपनी आँखों से देवराज का चेक देखा है। बात उसूल की है, आप लोग स्वयं लेखकों के बीच बड़े और छोटे का भेद करते हैं, उनमें फूट डालते है।"**१०१ स्टेनो ने कहा है कि आप छोटी-सी बात पर इतने बिगड़ रहे है। शिवानन्द बोला कि यह आपको छोटी बात लग रही है। जब डायरेक्टर आ जाते हैं, तब उनका अनुमान सही था यह गलती प्रोग्राम सहायक की थी।

डायरेक्टर साहब ने शिवानन्द को आराम से बैठाया और चाय पिलवाई एवं उसकी रचनाओं की खूब प्रशंसा की। चाय की चुस्कियाँ लेकर शिवानन्द का पारा धीमे-धीमे उतरता जा रहा था। डायरेक्टर ने कहा कि आपने कौन सी कहानी लिखी है? शिवानन्द ने कहा कि **'प्रादुर्भाव'**। आप तो बहुत अच्छा लिखते है। जब मैंने प्रादुर्भाव पढ़ी, तब से हमें आपसे मिलने की इच्छा हो रही है। यह सरकारी कामकाज बड़ा ही नाक में दम का है। अच्छा हुआ थोड़ा समय

निकालकर मुलाकात हो गई, फिर तनिक रूककर, गदगद होते हुए बोला - **"आजकल कहानियाँ तो ढ़ेरों लिखी जाती हैं, पर ऐसी कहानियाँ बहुत कम देखने को मिलती हैं, जो दिल पर गहरा असर छोड़ जाएँ। जब (प्रादुर्भाव) पढ़ी तो आपको खत लिखना चाहता था।"१०२**

आपने उपन्यास वगैरह लिखे है। हाँ **'अनासक्त'** डायरेक्टर ने कहा कि मैंने **'अनासक्त'** की एक प्रति अपने पास रख ली है कि इसे मैं पढूँगा और आज ही आपसे मुलाकात हो गई। शिवानन्द उस दिन को याद करने लगा। जब वह रेल में सफर कर रहा था, तब उसे कहीं जगह नहीं मिल रही थी। एक युवती शिवानंद की **'प्रादुर्भाव'** कहानी पढ़ रही थी। शिवनान्द उस युवती की तरफ देख रहे थे कि उसकी कहानी के बारे में उस युवती की क्या प्रतिक्रिया है? वह कहानी नीचे गिर गई और युवती सो गई। डायरेक्टर ने कहा - **"जब प्रादुर्भाव' पढ़ी थी, तो लगा था जैसे एक नई आवाज़ सुनाई पड़ने लगी है।"१०३**

शिवानन्द की मुस्कुराहट वापस लौट आई और वह बहुत प्रसन्न था। शिवानन्द ने ४० रूपए का चेक अपनी जेब में रख लिया। डायरेक्टर ने कहा - **"सच है, जो लोग सरस्वती के उपासक हैं, वे लक्ष्मी के आँगन में पाँव ही नहीं रखते। लिखिए साहिब, खूब लिखिए, अपनी साधना में रमे रहिए। आप तो जानते ही होंगे कि प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास 'प्रेमाश्रम' की पांडुलिपि सत्तर रूपए में बेच दी थी। मात्र सत्तर में। वाह, लेखक का जवाब नहीं, साहिब! दुनिया में हर व्यवसायी अपने काम को पैसे के तराजू पर तौलता है, पर अकेला लेखक ही है, जो मात्र लिखने के लिए जीता है, वाह।"१०४**

चपरासी अन्दर गया और पुर्जा मेज पर रखकर चला गया। शिवानन्द ने कहा कि मैं आपका समय बेकार ही खराब कर रहा हूँ। अब मुझे चलना चाहिए।

शिवानन्द ने हाथ जोड़े, सिर नवाया और तिरते हुए से बाहर आ गए। डायरेक्टर ने प्रोग्राम सहायक को तलब किया।

"आगे से यह भूल मत करना। चेक हमेशा बन्द लिफाफे में दो, ताकि एक को पता न चले कि दूसरे को क्या मिला है।"१०५

डायरेक्टर काफी खुश हुआ और सोचने लगा कि उसकी कहानी व उपन्यास पढ़ेंगे, देखे तो जरा वह लिखता कैसे है? प्रोग्राम सहायक ने कहा - "सर !"

"इन मूँजी को कुछ दिनो के लिए जरा दूर ही रखो, फिर भी कभी झगड़ा कर सकता है और किसी लेखक के साथ कभी उलझा न करो।" १०६

उपर्युक्त कहानी **'प्रादुर्भाव'** के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भीष्म साहनी जी ने समाज को लेखक शिवानन्द व डायरेक्टर के मध्य बार्तालाप द्वारा यह दर्शाया है कि लेखक शिवानन्द को चालीस रूपए की चेक व देवराज को सौ रूपए की चैक की असमानता व खुले लिफाफे के कारण लेखक को अपना अपमान महसूस हुआ व कष्ट हुआ। डायरेक्टर ने सूझ-बूझ एवं धैर्य से लेखक शिवानन्द को सम्मान से बैठाया व चाय पिलाई एवं अच्छे वर्ताव के द्वारा उसका दिल जीत लिया। लेखक ने यह संदेश दिया कि समाज में असमानता व किसी को अपना अपमान महसूस न हो, इसलिए

बंद लिफाफा में ही भेंट देना चाहिए एवं पीड़ित को सांत्वना व अच्छे व्यवहार से संतुष्ट करना चाहिए, जिससे अच्छे समाज का निर्माण हो सके, इसलिए कहा जा सकता है कि -

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित दुःख भाग्भवेत।।"१०७

'अमृतसर आ गया' -

ये कहानी साम्प्रदायिक कटुता को विम्बित करने वाली महत्वपूर्ण कहानी है। विभाजन की त्रासदी को लेकर लिखी गई ये कहानी हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। 'अमृतसर आ गया' कहानी की कथावस्तु इस प्रकार है-

"यह कहानी उस समय की है। जब भारत स्वतंत्र हो चुका था। वे दिल्ली में स्वतन्त्रता दिवस देखने जा रहे थे। उन्हीं दिनों, पाकिस्तान बनाए जाने का ऐलान किया गया था। उस समय गाड़ी धीमी गति से चल रही थी। सभी मुसाफिर आ जा रहे थे। उनकी बगल में एक दुबला-पतला बाबू बैठा था। उनकी सीट के सामने एक सरदारजी बैठे हुए थे। सरदारजी बर्मा की लड़ाई में भाग ले चुके थे। वे अंग्रेज लोगों की खूब हँसी उड़ा रहे थे। उसी डब्बे में तीन पठान व्यापारी भी बैठे थे। एक पठान ऊपर वाले बर्थ पर लेटा हुआ था। वह हरे रंग की सर्ट पहने हुए था। वह आदमी बहुत ही हँसमुख था।

सरदार जी उनसे प्रश्न पूँछ रहे थे कि जिन्ना साहिब बम्बई में रहेंगे या फिर पाकिस्तान में। किसी ने कहा कि बम्बई में रहेंगे या फिर पाकिस्तान में आते जाते रहेंगे।

भारत जब स्वतंत्र हो चुका था, तब सभी लोग इधर-उधर भटक रहे थे। किसी को ठहरने का कोई स्थान नहीं मिल रहा था। किसी को कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि हम कहाँ जाएँ? देश के बँटवारे के कारण यह समझ में नहीं आ रहा था कि कौन सा शहर पाकिस्तान में है कौन भारत में है? जब कुछ लोग घर छोड़कर जा रहे थे, तब लोग उनका मजाक उड़ा रहे थे। किसी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि कौन सा रास्ता सही है, कौन सा गलत? **"एक ओर पाकिस्तान बन जाने का जोश था तो दूसरी ओर हिन्दुस्तान के आज़ाद हो जाने का जोश। जगह-जगह दंगे भी हो रहे थे और योम-ए-आज़ादी की तैयारियाँ भी चल रही थीं। इस पृष्ठभूमि में लगता, देश आज़ाद हो जाने पर दंगे अपने-आप बन्द हो जाएँगे। वातावरण के इस झुटपुटे में आज़ादी की सुनहरी धूल-सी उड़ रही थी और साथ-ही-साथ अनिश्चय भी डोल रहा था और इसी अनिश्चय की स्थिति में किसी-किसी वक्त भावी रिश्तों की रूपरेखा झलक दे जाती थी।"१०८**

एक पठान ने अपने साथियों से कहा कि तुम उबला मांस व नान-रोटी खा लो। सभी साथियों ने खाया, लेकिन बाबू ने नहीं खाया। साथी कहने लगे कि तुमने हाथ नहीं धोए और खाना खाने लगे, इसलिए वह खाना नहीं खा रहा है। गाड़ी में पठान लोग उसकी बहुत हँसी उड़ाने लगे। तू बहुत दुबला पतला है। मैं तेरी बीबी से नहीं कहूँगा कि तुमने मांस खाया है।

गाड़ी मे बैठे लोग बतिया रहे थे। कहीं दंगे हो रहे थे तो कहीं आग लगी हुई थी। कुछ यात्री डब्बे से उतरकर नल पर पानी भर रहे थे। उन्होंने जैसे ही पानी भरा, वे लोग भाग खड़े हुए। रेलगाड़ी के डब्बे पूरे भर चुके थे। लोग एक दूसरे को धक्के दे रहे थे। बाहर का मौसम बहुत सुहावना था। हरे-हरे खेत लहलहा रहे थे। मुसाफिर गाड़ी के अन्दर घुसने का प्रयत्न कर रहे थे। गाड़ी के अन्दर बैठे लोग मना कर रहे थे कि जगह नहीं है। जब लोग जबरजस्ती घुस जाते, तब वे उसी डब्बे के निवासी हो जाते हैं, जो दूसरे लोग आते हैं। उन्हें वह मना करते हैं कि जगह नहीं है। एक आदमी स्वयं व उसकी पत्नी व १६-१७ बरस की लड़की अन्दर घुस जाती है। वे साथ में गठरी और बोरा घुसा लाते है। डब्बे के अन्दर जगह नहीं थी। बर्थ के ऊपर बैठे पठान ने बहुत कहा, जगह नहीं है। जब वह नहीं माना, तब पठान से सहन नहीं हुआ। उसने उस मुसाफिर के ऊपर लात मार दी। वह लात उसकी पत्नी के कलेजे पर लगी - **"उस आदमी के पास मुसाफिरों के साथ उलझने के लिए वक्त नहीं था। वह बराबर अपना सामान अन्दर घसीटे जा रहा था। पर डब्बे में मौन छा गया। खाट की पाटियों के बाद बड़ी-बड़ी गठरियाँ आई। इस पर ऊपर बैठे पठान की सहन-क्षमता चूक गई। निकालो इसे, कौन ए ये? वह चिल्लाया। इस पर दूसरे पठान ने जो नीचे की सीट पर बैठा था उस आदमी का सन्दूक दरवाजे में से नीचे धकेल दिया जहाँ लाल वर्दी वाला एक कुली खड़ा सामान अन्दर पहुँचा रहा था।"१०९**

रेलगाड़ी जब अमृतसर के प्लेटफार्म पर रूकी, तब पूरा प्लेटफार्म रेलगाड़ी से भरा हुआ था। प्लेटफार्म पर खड़े लोग डब्बों के अन्दर झाँक झाँककर देख रहे थे कि पीछे क्या हुआ है? अपना सामान बाहर फेंकते देखकर गाड़ी में से उतर गए। उन्हें बाहर से कुछ आवाज़ सुनाई दे रही थी। जब उन्होंने खिड़की के पास जाकर देखा, तब एक आदमी अन्दर कुछ सामान लिए अन्दर घुसने का प्रयत्न कर रहा था। बाबू ने अन्दर से मना किया कि जगह नहीं है।

बाबू ने जब दरवाजा खोला, तब उसने चैन की सांस ली - **"और उसी वक्त मैंने बाबू के हाथ में छड़ को चमकते देखा। एक ही भरपूर वार बाबू ने उस मुसाफिर के सिर पर किया था। मैं देखते ही डर गया और मेरी टाँगे लरज गई। मुझे लगा, जैसे छड़ के वार का उस आदमी पर कोई असर नहीं हुआ। उसके दोनों हाथ अभी भी जोर से डंडहरे को पकड़े हुए थे। कन्धे पर से लटकती गठरी खिसककर उसकी कोहनी पर आ गई थी।"११०**

उसके सिर में से खून निकलने लगा। वह रेलगाड़ी से गिर गया। उसकी पत्नी जो दौड़ लगा रही थी, उसका चलना भी रूक गया। बाबू ने अपनी छड़ बाहर फेंक दी और अपने हाथों को सूँघा कहीं उनमें से खून की गंध न आ रही हो। वह बाबू कभी आगे देखता तो कभी पीछे देखता। बाबू फिर आकर मेरे बगल में बैठ गया। सरदार ने बाबू से कहा - **" दुबले-पतले हो, पर बड़े गुर्दे वाले हो। बड़ी हिम्मत दिखाई है। तुमसे डरकर ही वे पठान डब्बे में से निकल गए। यहाँ बने रहते तो एक-न-एक की खोपड़ी तुम जरूर दुरूस्त कर देत... और सरदारजी हँसने लगे।"१११**

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि शरणार्थी अपने देश में वापस आ गए थे। उनका उद्देश्य अपने शहर में पहुँचना था। देश का बँटवारा होने से और चारों तरफ दंगे, हिंसा होने से सभी अपना-अपना बचाव ढूँढ़ने

का प्रयत्न कर रहे थे। जब शरणार्थी अमृतसर पहुँचते, तब उनको काफी सान्त्वना मिलती है, इसलिए कहा गया **"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा।"**

'वाङ्चू'-

'वाङ्चू' एक ऐसे बौद्ध भिक्षु की कहानी है, जो चीन से भारत बौद्ध धर्म को जानने, समझने और महाप्राण की जन्मस्थली में रहकर उसके सम्बंध में कार्य करने आता है। भारत के बौद्ध धर्म सम्बंधी अवशेषों और संस्थाओं में घूमनेवाला भावुक चीनी बौद्ध वाङ्चू समकालीन जीवन-प्रवाह से बिल्कुल कटा हुआ रहता है। लगभग पन्द्रह वर्षो तक भारत में रहने के बाद वाङ्चू को अपने देश लौटने की इच्छा होती है और वह चीन कुछ दिनों के लिए चला जाता है। दुर्भाग्य की बात यह होती है कि भारत के अत्यंत महत्वपूर्ण राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तनों से वह निर्लिप्त नहीं रहता बल्कि चीन की गतिविधियों से भी अनजान बना अपने ध्येय में मग्न रहता है; शायद इसी वजह से भारत और चीन के बीच तनावपूर्ण राजनीतिक वातावरण और युद्ध के दौरान भारत से चीन जाना और चीन से पुनः भारत लौटने का अव्यावहारिक निर्णय लेता है। फलस्वरूप चीन के अधिकारी उसे भारत का जासूस समझते हैं और भारत के अधिकारी उसे चीन का। वाङ्चू इसी शक के दोनों पाटों के बीच बुरी तरह से पिसता रहता है और एक दिन उन मुट्ठी भर लोगों का प्रतिनिधि, जो सार्वभौमिकता की भावना को जीने के कारण निर्वासन की जिन्दगी जीते-जीते भूख और यातना की गोद में दम तोड़ देता है। प्रस्तुत कहानी वाङ्चू साहनी जी की व्यापक और गहन दृष्टि की परिचायक है। देशकाल-निस्संग मानवता के प्रति इतनी गहरी सहानुभूति को सफलता के साथ अंकित करने वाली हिन्दी में कोई दूसरी कहानी शायद ही लिखी गई हो। साथ ही, शिल्प की दृष्टि से भी कहानी अत्यन्त सफल है। दो देशों के सामाजिक-राजनीतिक परिवेशों को इतने संक्षेप में और इतने अधिकार के साथ अंकित कर देना, इतने संयम और तटस्थता के साथ वर्णन प्रस्तुत करते हुए भी पाठक में वाङ्चू के प्रति संवेदना उत्पन्न कर देना और इतनी लम्बी कहानी में भी उत्सुकता का अवाध निर्वाह शिल्प की दृष्टि से कहानी की उत्सुकता का ही परिचय देते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'वाङ्चू' कहानी का नायक न चीनी है न भारतीय वह एक मनुष्य है। राजनीति ने इसे संदेह की दृष्टि से देखा है और जीवन उसके लिए विडम्बना बन गया है।

(३.५) नाटकों की कथावस्तु

'हानूश' -

चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग की एक मीनारी घड़ी के बारे में प्रचलित तरह-तरह की कहानियों में वर्णित घटना को आधार बनाकर भीष्म साहनी ने अपने इस नाटक में एक मानवीय स्थिति के तीखेपन को हमारे अनुभव का केन्द्र बनाया।

लगभग पाँच सौ वर्ष पहले प्राग नगर में हानूश नामक एक कुफ़्लसाज रहता था। उसका भाई एक पादरी था। परिवार में पत्नी कात्या और एक बेटी यान्का बच्ची थी। हानूश को घड़ी बनाने की धुन के कारण गहरे आर्थिक संकट

का शिकार होना पड़ा, क्योंकि घड़ी के आविष्कार में उलझा हानूश अपने परम्परागत काम के लिए पूरा समय नहीं दे पाता है। घड़ी बनाने की धुन उस पर पिछले १०-१२ साल से सवार है और इस बीच अच्छे भोजन, गर्म कपड़ों और दवा के बिना उसका इकलौता बेटा मौत के मुँह में जा चुका है। कात्या नहीं चाहती कि हानूश देश की पहली घड़ी बनाने की धुन में अपने परिवार को अभावों की भट्टी में यों झोंकता चला जाए। वह अपनी इस वेदना को हानूश के पादरी भाई के सामने व्यक्त करती हैं। पादरी कात्या को समझाता है कि तुम्हें हानूश का हौंसला नहीं तोड़ना चाहिए, क्योंकि वह एक बड़ा काम कर रहा है। तुम्हें अपने पति के बारे में ऐसे तिरस्कार पूर्ण शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। कात्या का पादरी के प्रति यह कथन अद्योलिखित है- **"उसमें पतिवाली कोई बात हो तो मैं उसकी इज़्ज़त करूँ। जो आदमी अपने परिवार का पेट नहीं पाल सकता, उसकी इज़्ज़त कौन औरत करेगी।?"**११२

पादरी जब कात्या की बात सुनता है, तब उससे रहा नहीं जाता है। वह पहले हानूश को घड़ी बनाने में बहुत हौंसला देता था। पादरी का भाई पहले ताला बनाकर बेचता था, जिससे परिवार का खर्च चलता था। कात्या के पति ने ताला बनाना छोड़ दिया, घर की हालत बिगड़ गई थी। उसे घड़ी का आविष्कार करने में १५ साल बीत गए, लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। पादरी ने उससे कहा कि तुम्हें घड़ी बनाने का ख्वाब छोड़ देना चाहिए। तुम्हें गिरजे से जो माली इमदाद मिलती थी, वह भी बन्द हो गई। जब तुम्हें गिरजेवालों से मदद मिलने लगे, तब तुम घड़ी पुनः बनाना शुरू करना। हानूश ने अपने पादरी भाई से कहा कि आप मेरा हौंसला बढ़ाते थे, अब आपको क्या हो गया? कात्या जेकब नाम के एक आदमी को अपने घर काम करने के लिए रख लेती है। कात्या का हानूश के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है - " **मैं तुमसे कुछ नहीं कहती हानूश। जो तुम्हारे मन में आए करो, मैंने अगर इस लड़के को रखा है तो, इसलिए कि तुम्हें घर की जिम्मेदारी से बिल्कुल छुटकारा मिल जाए। यह ताले बना दिया करेगा और मैं बेच आया करूँगी। तुम्हारा जो मन आए करो।"**११३

नगरपालिका के लोग हानूश की घड़ी के साथ षड्यंत्र रच रहे थे। वे चाहते थे कि घड़ी को नगरपालिका में लगाया जाए। बादशाह पादरी की हर बात को मानता है। बादशाह सलामत की ओर से उसे बहुत इज़्ज़त मिलने वाली है। ऐसे समय में हमें हानूश का साथ बनाए रखना चाहिए। उसने एक घड़ी बनाई है, तो आगे भी पुनः बनाएगा और हमारे व्यापार में चार चाँद लग जाएँगे। हानूश न जाने कितने घात-प्रतिघात झेलने के बाद, पारिवारिक विपन्नता और अभावग्रस्तता की सीमाओं से गुजरने के बाद, आशा और निराशा के अनेक झटके खाने के बाद, अन्ततः हानूश घड़ी बनाने में सफल हो जाता है। वह घड़ी की टिकटिक आवाज़ को सुनता है। उसकी पत्नी, बेटी, मित्र एवं बाहर से कई लोग आकर पादरी हानूश को बधाई देते हैं। उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा है। उसने कहा - **" (धीमी आवाज़ में) मेरी इस कामयाबी के पीछे तुम्हारी कुर्बानी है। हर काम के पीछे किसी औरत की प्रार्थना होती है, उसकी कुर्बानी होती है, उसकी प्रेरणा होती है।"**११४

इधर हानूश को नगरपालिका में बादशाह बुलाते हैं। उन्होंने हानूश से कहा कि तुम्हें घड़ी बनाने के लिए बधाई हो। बादशाह ने खुश होकर महामंत्री से कहा - **"इसे एक हज़ार सोने के मोहरे दे दिए जाएँ। इसका महीना बाँध दो और यह घड़ी की देखभाल किया करे और आज से इस आदमी का रूतबा एक दरवारी**

का रूतबा होगा। यह हमारे दरबार में बैठा करेगा।"११५

बादशाह ने क्रोध में आकर कहा कि तुमने यह घड़ी मुझसे बिना पूँछे नगरपालिका में क्यों टंगवाई? तुम्हें यह घड़ी बनाने में कितना समय लगा है? हानूश ने कहा कि करीब १७ साल लगे है, फिर राजा ने हानूश से कहा कि तुम्हें दूसरी घड़ी बनाने में कितना समय लगेगा?तब हानूश ने उत्तर दिया कि करीब २-१ साल। तुमने यह घड़ी मेरी आज्ञा के खिलाफ गिरजाघर में क्यों टंगवाई? तुम्हें घड़ी बनाते हुए १७ साल हो गए और हमें पता नहीं कि हमारे राज्य में घड़ी बन रही है। तुमने हमारी आज्ञा का उल्लंघन किया है। आगे चलकर भी तुम बिना बताए हुए घड़ी बनाओगे। तुम्हारी बातों का कोई विश्वास नहीं है कि तुम किसके साथ विश्वासघात करो? दुनिया में ऐसी घड़ी नहीं बने, हमें यह मंजूर नहीं हैं, जिससे हमारे राज्य की घड़ी की कदर कम हो जाए। बादशाह ने सिपाहियों को आदेश दिया - **"(हाथ ऊँचा उठाकर) हमें नगरपालिका से कहीं ज़्यादा एतबार हानूश कुफ़्लसाज़ पर है। इस आदमी को और घड़ियाँ बनाने की इज़ाज़त नहीं होगी। इस हुक्म पर अमल करवाने के लिए ----- (थोड़ा ठिठककर) हानूश कुफ़्लसाज़ को उसकी आँखों से महरूम कर दिया जाए। उसकी दोनों आँखें निकाल दी जाएँ। उसकी आँखें नहीं होंगी तो और घड़ियाँ नहीं बना सकेगा।"११६**

हानूश अन्धा होकर अपने अन्दर ही अन्दर कुढ़ता रहता था। वह घड़ी के कारण स्वयं को अन्धा मानता था। वह मन ही मन सोचता है कि मैं मर जाऊँ और इस घड़ी को तोड़ दूँ। ऐमिल हानूश का दोस्त था। उसने कात्या से कहा कि तुम हानूश को लेकर तुला चली जाओ। वह वहाँ जाकर खुश रहेगा और घड़ी बनाएगा, लेकिन वह सड़क से आते हुए गिर जाता है और उसे काफी चोट पहुँचती है। उसको हरदम घड़ी की टिकटिक की आवाज़ सुनाई देती थी। एक बार जब घड़ी नहीं बजती, तब राजा के अधिकारी हानूश को घड़ी सही करने के लिए लेने आते है। उसने कहा कि महाराज राजा ने मेरी आँखें छीन ली है। मैं घड़ी कैसे सही करूँगा।? कात्या ने कहा कि तुम्हें जाना चाहिए। उसने कहा कि तुम जेकब को हमारे साथ ले चलो। वह घड़ी के सभी पुर्जो के बारे में जानता है। जेकब मेरी आँखें है। वह मुझे पुर्जे बताता जाएगा। मैं घड़ी ठीक कर दूँगा। हानूश को मदद करने के लिए कोई नहीं मिला। फिर एक लोहार ने उसकी मदद की। घड़ी का लीवर खराब था। उसने घड़ी में लीवर बदलकर लगा दिया। वह घड़ी की ओर देखते हुए बुदबुदाता है कि मुझे विश्वास है, अब घड़ी बन्द नहीं होगी, कभी बन्द नहीं होगी और जिस समय सिपाही हानूश को पकड़कर सीढ़ियों की ओर ले जा रहे हैं, उसी समय घड़ी बज उठती है। उसकी आँखों में खुशी के आँसू चमक उठते हैं और वह मुस्करा उठता है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि हानूश लगनशील, जिज्ञासु, कर्तव्यपरायण, कर्मठशील व्यक्ति है। क्रान्ति, सृजन मनुष्य और उसके भविष्य में विश्वास इस नाटक का मूल बिन्दु है। भीष्म जी ने इस नाटक के सम्बंध में कहा है कि **"यह नाटक एक मानवीय स्थिति को मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में दिखाने का प्रयास मात्र है।"** पर इससे यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि नाटक की संवेदना भी **'मध्य युगीन परिप्रेक्ष्य'** तक ही सीमित है। क्या हमारे समकालीन जीवन की यह भी एक विडम्बना नहीं है कि सारी प्रगति के बावजूद शोषक के मध्ययुगीन अन्दाज कई रूपों में आज भी जहाँ के तहाँ हैं। हानूश नाटक हमारे अपने वक्त के ऐसे ही अन्दाजों की कलई खोलता है।

माधवी-

'माधवी' नाटक की कथावस्तु महाभारत से ली गई है। यह नाटक सन् १६८४ में लिखा गया। यह एक सम्पूर्ण नाटक है। इस नाटक को लिखने का मुख्य प्रयोजन था कि **"आज की स्त्री की समस्या और समाज में जो उसका स्थान है उसे दिखाना"** 'माधवी' नाटक में पुरूष प्रधान सामंती समाज में नारी के प्रति हुए अन्याय और शोषण का मर्मान्तक चित्रण है।

भीष्म साहनी ने महाभारत के एक प्रसंग से नायिका माधवी के माध्यम से पुरूष-प्रधान समाज में स्त्री की त्रासदी के सत्य को अनाव्रत किया है। आदर्शो, मूल्यों और कर्तव्यपरायणता की ओट में स्त्री का शोषण होता है, उसे वस्तु के रुप में पुरूष अपनी ऐषणाओं एवं महत्वाकांक्षाओं की तृप्ति के लिए प्रयुक्त करता है। पुरूष सदैव से दम्भी, हठी और आत्मकेन्द्रित रहा है। पिता, पति, गुरू, प्रेमी हर रूप में, हर युग में वह उसको अपने मनोरथ का निमित्त बनाता रहा है। स्त्री को वस्तु बनने से इन्कार करना है। भीष्म साहनी ने स्त्री को पुरूष का असली चेहरा दिखाने का प्रयत्न किया है।

नाटक का प्रारम्भ कथावाचक के द्वारा कथा प्रसंग के वाचन से होता है। देवलोक में ध्यान-मग्न भगवान् विष्णु का एक बार सहसा ध्यान भंग हो जाता है। दिव्य चक्षु से उन्होंने देखा कि गंगा तट पर आत्महत्या को तत्पर उनका एक भक्त उन्हें स्मरण कर रहा है। भगवान ने अपने वाहक गरूड़ को भेजा। गरूड़ ब्राह्मण का वेश धारण कर युवक से पूछते है कि तुम्हें क्या कष्ट है? गालव ने कहा कि मैं विश्वामित्र ऋषि का शिष्य हूँ। मैंने विश्वामित्र ऋषि से १२ विधाएँ सीखी हैं । मैंने ऋषि विश्वामित्र से गुरूदक्षिणा के लिए कहा। ऋषि ने गुरू दक्षिणा लेने के लिए मना कर दिया। तुम १२ विद्याओं में निपुण हो गए हो। यही मेरी गुरूदक्षिणा है, लेकिन मैंने गुरूजी से हठ की। ऋषि ने क्रोध में आकर मुझसे ८०० अश्वमेध घोड़े लाने को कहा। मैं यह बात सुनकर घबरा गया कि मैं ऐसे घोड़े कहाँ से लाऊँगा, इसलिए मैं आत्महत्या करने जा रहा हूँ? ब्राह्मण ने ययाति राजा के बारे में बताया कि वे बहुत दानवीर है। आज तक उनके द्वार से कोई भी खाली हाथ नहीं गया। गालव राजा ययाति के आश्रम में जाता है। उन्हें अपनी सारी बात बताता है। ययाति राजा ने कहा कि आपने सही सुना है, लेकिन मैं अपना राजपाठ छोड़कर वन में रहता हूँ। अब मेरे पास कुछ भी नहीं है। मेरे पास ८०० अश्वमेध घोड़े नहीं है। तुम विश्वामित्र के पास जाकर उनसे क्षमा माँग लो। वे तुम्हें माफ कर देंगे। गालव ने कहा कि मैं उनके पास नहीं जाऊँगा। मैं अपना वचन पूरा करूँगा। राजा ने कहा कि तुम बहुत हठी हो। गालव ने कहा कि मैं दानवीर ययाति के पास आया था; शायद मैं कहीं और आ गया हूँ। राजा को अपने आत्मसम्मान में ठेस पहुँचती है। राजा अपने मन में विचार करते है -

"स्वतः अब अभ्यर्थी भी मुझ पर दया करने लगे हैं। उन्हें मुझसे निराशा होने लगी है। अब ययाति दानवीर, उदारमना नहीं, एक क्षुद्र साधारण जीव कहलाएगा। कर्ण दानवीर हैं, युधिष्ठिर उदात्तमना हैं, हरिश्चन्द्र सत्यव्रती हैं, पर ययाति -----?११७ ययाति ने कहा कि मेरी पुत्री माधवी विशिष्ट लक्षणों वाली है। उसको चिर कौमार्य का वर प्राप्त है। इसे तुम किसी राजा को सौंप देना, जिससे तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

माधवी ने अपने पिता से कहा कि यदि इस समय मेरी माँ जीवित होती तो इस समय वह मुझे नहीं जाने

देती। राजा ने कहा कि इस समय यही मेरा धर्म सर्वोपरि हैं। ययाति अपने यश की खातिर अपनी पुत्री का दान कर देते है। गालव अपनी गुरूदक्षिणा को पूरा करने के लिए माधवी को निमित्त बनाता है। वह अपने पिता व गालव के कर्त्तव्य को पूरा करने के लिए अपना पूरा यौवन दाँव पर लगा देती है। वह मन ही मन गालव को चाहने लगती है। वह अपने मन में विचार करती है कि गालव का जब संकल्प पूरा होगा, तब मैं स्वतंत्र हो जाऊँगी और गालव को अपना पति बनाऊँगी। यही विचार वह अपने मन में लाकर गालव के संकल्प को पूरा करने में लग जाती है। गालव भी अपने मन में विचार करता है कि मैं कहाँ आत्महत्या करने जा रहा था और कहाँ माधवी मेरा भाग्य बनकर आई? आकाशवाणी गालव को सूचित करती है कि कहाँ तुम आत्महत्या करने जा रहे थे और कहाँ अब तुम राजा चक्रवर्ती बनने के सपने देख रहे हो। तुम्हें अपने कर्तव्य पथ की ओर जाना चाहिए। माधवी गालव को समझाती है कि तुम्हें ऋषि विश्वामित्र से माफी माँग लेना चाहिए। गालव ने कहा कि यदि ऋषि ने मुझे माफ कर दिया, तो तुम अपने पिता के पास लौट जाओगी। माधवी का गालव के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"मैं दान में दी जा चुकी हूँ गालव! पिताजी को तो इस बात की अपेक्षा भी नहीं है कि मैं उनके पास लौट आऊँगी। दान में दी हुई चीज भी कभी वापस ली जाती है।"**११८

गालव को जब पता चलता है कि अयोध्या के राजा हर्यश्च के पास २०० अश्वमेध घोड़े हैं, तब गालव अयोध्या के राजा के पास जाता है । उन्हें अपनी पूरी कथा सुनाता है। इस लड़की से एक चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न होगा। राजा हर्यश्च को गालव की बात पर विश्वास नहीं होता है। उन्होंने ज्योतिषी को बुलाकर माधवी के अंगों की जाँच करवाई। ज्योतिषी ने कहा कि यह लड़की एक चक्रवर्ती पुत्र को जन्म देगी। वे माधवी को अपने रनिवास में रखने के लिए तैयार हो जाते हैं। उन्होंने कहा कि मेरे पास केवल २०० अश्वमेध घोड़े हैं। गालव राजा कि इस शर्त से इन्कार कर देता है। गालव ने माधवी से कहा कि मैं बाकी ६०० घोड़े कहाँ से लाऊँगा और मेरी प्रतिज्ञा पूरी होने में वर्षों लग जाएँगे और तुम्हें न जाने किस-किस राजा के रनिवास में रहना पड़ेगा? माधवी गालव को समझाती है कि तुम्हें इस शर्त को मंजूर कर लेना चाहिए। बच्चे को जन्म देकर मैं मुक्त हो जाऊँगी। जब एक वर्ष बीत जाता है, तब वह एक पुत्र को जन्म देती है। अपने वचन के अनुसार माधवी गालव के साथ हो जाती है। जब माधवी माँ नहीं बनी थी, तब वह दिन-रात गालव के बारे में विचार करती थी। अब वह बार-बार अपने बच्चे बसुमना के बारे में सोचती है। उसने गालव से कहा कि देखो बच्चे की रोने की आवाज़ आ रही हैं। गालव ने माधवी से कहा कि अब तुम बहुत बदल गई हो। अब तुम पहले वाली माधवी नही हो तुम पहले अपने कर्तव्य के लिए दृढ़ रहती थी, परन्तु तुम अब अपने कर्तव्य पक्ष से हट रही हो। माधवी ने कहा कि मुझे तुम माफ कर दो, मैं बच्चे के मोह में अपना कर्तव्य भूल गई थी। गालव खुश होकर २०० घोड़े विश्वामित्र के आश्रम में पहुँचवा देता है।

अब माधवी काशी के राजा दिवोदास के रनिवास में रहती है। उसके १७ बेटियाँ हैं। उसे किसी भी रानी से पुत्र प्राप्त नहीं हुआ है। उस राजा को पुत्र की कामना थी। वह बहुत ही कामी राजा था। वह जिस स्त्री को देखता है, उसी स्त्री पर अनुरक्त हो जाता है। दिवोदास ने कहा कि अगर माधवी के पुत्र न होकर पुत्री हुई तो मैं तुम दोनों को कारावास में डाल दूँगा, लेकिन कुछ समय वाद माधवी के पुत्र हुआ। उसने अब अपने पुत्र का मुँह नहीं देखा और

वहाँ से २०० घोड़े लेकर गालव के साथ चल दी। तापस, गालव का मित्र था। उससे गालव की दशा देखी नहीं जा रही थी। वह विश्वामित्र के पास गया और कहा कि गुरूवर आप गालव को क्षमा कर दीजिए। विश्वामित्र बोले कि गालव बहुत ही हठी है। वह मर जाएगा, लेकिन अपना वचन नहीं तोड़ेगा। उसका दम्भ तोड़ने के लिए, उसे इतनी बड़ी परीक्षा में डाला है। वह आत्महत्या करे, मैं यह नहीं देख सकता। समस्त आर्यावर्त में केवल ६०० घोड़े हैं। सैकड़ों घोड़े वितस्ता नदी में डूब गए। बाकी घोड़े आपके आश्रम में हैं। आप आप ही बताए कि वह बाकी घोड़े कहाँ से लाएगा? जब गालव मुझे मिलेगा, तब मैं उससे यही कहूँगा कि वह अपने को मुक्त समझे।

अब माधवी भोजनगर के वृद्ध राजा उशीनर के रनिवास में रहकर एक पुत्र को जन्म देती है। वह अब गालव का साथ छोड़कर भाग जाती है। गालव माधवी की तलाश हर जगह करता, पर वह उसे नहीं मिलती है। वह अपने अन्दर ही अन्दर घबराने लगता है कि मेरे वचन का क्या होगा? वह कहाँ मुझसे प्रेम करती थी? अब मुझे बीच मँझधार में छोड़कर चली गई। क्या मालूम अपने पिता के यहाँ चली गई हो? **“कहा है कि स्त्री रहस्यों की गुथली होती है। उसे देवता नहीं समझ पाए तो मनुष्य क्या समझेगा? जो मनुष्य स्त्री को समझ पाया है, समझिए कि वह संसार की सभी विद्याओं में पारंगत हो गया।**

पुरूष को भगवान ने धीर-गम्भीर बनाया है, पर स्त्री के स्वभाव में चंचलता होती है, इसीलिए कहा है कि नारी की चंचलता पर पुरूष का अंकुश सदा बने रहना चाहिए। इसमें अन्ततः स्त्री का ही लाभ है।”११९

माधवी बहुत ही आदर्शों वाली स्त्री थी। वह इतनी मायावी होगी, इसका मुझे पता नहीं था। कहाँ मुझे पति बनाने को तैयार थी? कहाँ इतना बड़ा धोखा? गालव ने तापस से पूछा कि तुमने माधवी को कहीं देखा है । तापस ने कहा कि मैंने माधवी को नहीं देखा है। तापस बोला कि पूरे आर्यावर्त में केवल ६०० घोड़े है। बाकी घोड़े वितस्ता नदी में डूब गए। मैं तुम्हें यही बताने आया था।

इधर माधवी विश्वामित्र के पास जाती है। विश्वामित्र ने कहा कि तुम यहाँ किस प्रयोजन से आई हो? माधवी ने कहा कि तीनों राजाओं से मुझे पुत्र लाभ हुआ। पूरे आर्यावर्त में केवल ६०० घोड़े है। शेष घोड़े आपके पास हैं। आप मुझे शेष २०० घोड़ों के लिए अपने पास रख लें। मैं भी आपको एक पुत्र दूँगी। आप जैसा चाहेंगे, मैं वैसा ही करूँगी।

विश्वामित्र के दोनों कंधे पकड़ लेते हैं। क्या तुम सच कह रही हो ? ऋषि ने कहा कि तुम ऐसा क्यों कर रही हो? क्या तुम गालव से प्रेम करती हो? तुम गालव से प्रेम करके भी मेरे साथ रहना चाहती हो। मैं तीनों राजाओं के पास रह चुकी हूँ। मुझसे गालव की हालत देखी नहीं जाती, अगर वह गुरू-दक्षिणा नहीं जुटा पाया, तो वह आत्महत्या कर लेगा। विश्वामित्र माधवी को देखकर प्रसन्न हो जाते है, उनके अन्दर कामवासना जाग्रत हो जाती है- **“मैंने गुरू-दक्षिणा पा ली, माधवी । मैं गालव का दम्भ तोड़ना चाहता था, तुमने मेरा दम्भ तोड़ दिया।---- आश्रम में प्रवेश करो, माधवी।”१२०**

इधर विश्वामित्र और ययाति बहुत ही प्रसन्न हो रहे थे। ययाति ने कहा कि आपका शिष्य अपनी परीक्षा

में उत्तीर्ण हो गया। विश्वामित्र ने कहा कि यह सब आपके सहयोग से हुआ है। अब आपका यश चारों दिशाओं में गूँज रहा है। वह भी अपने वचन को पूरा करके वह बहुत ही खुश है। राजा ययाति ने अपने वन में दीक्षांत समारोह व स्वयंकर का आयोजन किया। वह अपनी बेटी का विवाह धूम-धाम से करवाना चाहते थे। मेरी बेटी जिस को भी अपना पति बनाना चाहे, वह बना सकती है। गालव जब माधवी से मिलता, तब वह बहुत खुश होता है। माधवी तीन बच्चों को जन्म देकर स्थूलकाय हो गई थी, उसकी देह शिथिल पड़ गई थी। अब वह पहले जैसी सुन्दर नहीं रह गई थी। गालव ने कहा कि तुम्हें चिर-कौमार्य का वर प्राप्त था, तुमने अनुष्ठान क्यों नही किया, जिससे तुम पहले जैसी सुन्दर दिखने लगो? माधवी ने कहा कि अब तुमसे क्या छिपाना? तुम्हें मेरे बारे में सब पता है। माधवी अनुष्ठान करने से मना कर देती, तब गालव ने कहा कि हमने अपना कर्तव्य पूरा किया, तुमने अपना कर्तव्य पूरा किया। अब तुम स्वतंत्र हो उसने जब गालव के मुख से यह वचन सुने, तब वह अन्दर से टूट गई। क्या तुम मुझे छोड़ कर जा रहे हो? माधवी का गालव के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है - **"चलते नहीं, दूसरों को चलाते हैं, गालव यही तो विडम्बना है और संसार तुम्हें ही तपस्वी और साधक कहेगा, मेरे पिता को दानवीर कहेगा और मुझे? चंचलवृत्ति की नारी, जिसका विश्वास नहीं किया जा सकता। यही ना ------?"१२१**

माधवी ने कहा कि तुम जिस माधवी के लिए छटपटाते थे, मैं वही हूँ। मैं तुम्हें गलत समझ बैठी थी। तुमने तो केवल अपने आप से प्रेम किया है। मैं तो तुम्हारी केवल निमित्त मात्र थी। अब तुम पूरी तरह स्वतंत्र हो। अब मुझे संतान को धारण करने में भी डर लगने लगा है। तुम्हें एक सुन्दर युवती मिल जाएगी। तुम उससे शादी कर लोगे। अब मैं यहाँ से बहुत दूर जा रही हूँ। गालव अब मेरा दिल छलनी हो चुका है। अब मेरे अन्दर सहन शक्ति नहीं है। गालव ने कहा कि तुम मेरी बात मान जाओ। तुम अनुष्ठान करके फिर से सुन्दर बन सकती हो। मैं तुम्हें बहुत चाहता हूँ, लेकिन इतना कहकर माधवी वहाँ से चली जाती है।

इस नाटक में भीष्म साहनी ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि पुरूष प्रधान समाज चाहे आदिम युग का रहा हो, प्राचीन मध्य या आज का हो, नारी उसके लिए सदैव भोग और इस्तेमाल की वस्तु रही है। उसका हमेशा शोषण होता रहा है। गालव के एक मात्र हठ ने सभी को संशय में डाल दिया और उसका निमित्त बनी माधवी। माधवी का गालव के प्रति यह कथन निम्नलिखित है- **"मैं सारा वक्त यही समझती रही कि गालव सच्ची साधना और निष्ठावाला व्यक्ति है। तुम भी गुरूजनों जैसे ही निकले, गालव----। तुम सचमुच एक दिन ऋषि गालव बनोगे। ------ तुम स्वतंत्र हो गालव।"१२२**

यह नाटक हमें संदेश देता है कि हमें कभी भी हठ नहीं करना चाहिए और देशकाल, रीति, परिस्थिति के अनुसार खूब सोच समझकर सही निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए। हमें अपने स्वार्थ की खातिर किसी भी नारी का शोषण नहीं करना चाहिए। तभी मनु जी का यह कथन- **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता'** कहना सार्थक होगा।

'कबिरा खड़ा बजार में' -

कबीर किसी भी सार्थक जीवन जीने का प्रयास करने वाले मनुष्य के लिए आलोक पुंज हैं। मन, वचन

और कर्म की एकता के प्रति उनकी अखंड प्रतिबद्धता अप्रितम हैं। प्रतिबद्धता की इसी स्फुरित शक्ति ने पेशे से जुलाहे और निरक्षर कबीर को कवि, गायक, दार्शनिक, भक्त और अन्ततः सन्त के शिखर तक पहुँचा दिया। अपने ही समय में वे किवदन्ती पुरूष हो गए। उनकी इस प्रतिबद्धता ने उन्हें जीवन की जो गूढ़ समझ दी उसकी बेबाक अभिव्यक्ति से वे सार्वभौमिक और सर्वकालीन हो गए।

'कबिरा खड़ा बजार में' एक ऐसी महत्वपूर्ण नाट्यकृति है, जो एक स्तर पर कबीर के तत्कालीन समाज; उस समाज में उनके निर्भय, सत्यभाषी और अन्याय के खिलाफ लड़ने वाले प्रखर व्यक्तित्व की पुनर्रचना करती है। साथ ही दूसरी ओर वह हमारे समकालीन समाज, उसमें युद्धरत सम्प्रदाय विरोधी, फासिज्म विरोधी और बाह्याचार शक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका की ओर इशारा कर देती है।

कबीर एक जुलाहा है। उनके माता-पिता का नाम नूरा और नीमा है। उनके दोस्त रैदास, सेना, पीपा,बशीरा हैं। वे कपड़ों के थान बना-बनाकर बाजार में बेचते हैं। उनकी माँ नीमा उन्हें बहुत चाहती है। वह उन्हें पलकों में बैठाकर रखती है। उनके माता-पिता उनकी आदतों से बहुत परेशान हैं। जब वे थान लेकर बाजार में बेचने जाते हैं, तब वे थान तो नहीं बेच पाते, लेकिन कई लोगों से लड़ाई झगड़ा करते हैं। बाहर के कई लोग उनकी शिकायत, उनके माता-पिता से करते हैं। नूरा ने अपनी पत्नी से कहा - **"न जाने किसको उठा लाई। तब तो बड़ी मोहगर बनी थी, अब किए को भुगतो। यह तो साँप पालते रहे। न दीन के रहे, न जहान के"**[१२३]

कबीर जब यह बात सुन लेते है, तब उन्होंने अपनी माँ से पूछा कि माँ मैं किसका बेटा हूँ? माँ इस बात को टालने का प्रयास करती है, लेकिन मजबूरन माँ ने कहा कि तुम एक ब्राह्मणी के बेटे हो। नीमा ने कहा - **"जिस दिन तू मुझे मिला, उस दिन मैं ब्याह कर तेरे बाप के घर आई थी। यह मुझे ब्याह कर पालकी में ला रहा था। हम गंगा पार कर जुलाहों की बस्ती की तरफ जा रहे थे। तभी मैं पानी पीने के लिए एक तालाब के पास उतरी। तू मुझे वहाँ पड़ा मिला। तेरे ओठों पर अभी भी तेरी माँ का दूध लगा था। तेरा बाप और मैं तुझे निहारते ही रह गए। मेरी गोद तो अल्लाह-ताला ने मेरे ब्याह के पहले दिन ही भर दी थी।"**[१२४]

कबीर हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों धर्मों की जड़ परम्पराओं, बाह्यकर्मकांडों, थोथी मान्यताओं पर निर्ममता से प्रहार किया है। उनमें मानवता अभीष्ठ थी, दिखावा नहीं। धर्मो के मूल का अवगाहन कर उसके विकृत तत्वों को उखाड़ फेंकना उनका महान लक्ष्य था। उन्हें कट्टरता असह थी। चाहे वह हिन्दुओं की हो या मुसलमानों की। कबीर द्वारा हृदय में उठने वाली भावनाएँ और मस्तिष्क में उभरने वाले विचार हूबहू भाषा के ढाँचे में ढल जाते थे। एकबार नगर में महन्त की सवारी निकल रही थी। एक साधु ने चाबुक से एक बच्चे को मारा, उन्होंने उस बच्चे को वहाँ से हटाया। उलटे साधु व पण्डों ने उनके ऊपर कोड़े बरसाए। वे बहुत अच्छे कवित्त गाते थे। उनके कवित्त को सभी लोग ध्यान से सुनते थे। एकबार मौलवी कोतवाल से कबीर की शिकायत कर रहे थे। यह मस्जिद की सीढ़ियों पर खड़ा होकर दीन की तौहीन करता है और आप खामोश हैं। जब एक भिखारी कोतवाल के घर के सामने कबीर का कवित्त गा रहा था, तब कोतवाल ने उसके ऊपर कोड़े बरसाए, जिससे वह मर गया। कोतवाल ने कहा - **"इससे सभी को कान हो जाएँगे। जब उसकी लाश गली-गली से जाएगी और साथ में सरकारी आदमी होगा तो अपने-आप**

दहशत फैलेगी। तुम लोग जा सकते हो।"१२५

भिखारी की एक अन्धी माँ थी। जब उसने अपने बेटे के मौत के बारे में सुना, तब उसने कबीर से कहा कि मैं भी तुम्हारे कवित्त गाऊँगी। रैदास ने कहा कि माँ अगर उन लोगों ने आपके ऊपर कोड़े बरसाए तो। अन्धी माँ ने कहा - "जो कोड़े नन्दू की पीठ पर पड़े थे, वह मेरे ही पीठ पर पड़े थे, बेटा । बच्चे पर पड़नेवाले कोड़े माँ की ही पीठ पर पड़ते हैं, पर मैं मरी नहीं, नन्दू मर गया। मैं सह लूँगी कबीरा। नन्दू का मरना सह लिया। तो कोड़े न सहूँगी। मैं गली-गली गाती फिरूँगी अब मैं गाऊँगी और वह सुनेगा। जहाँ पर भी है, सुनेगा। सुनेगा ना, कबीरा?"१२६

कबीर अपने मन में विचार करते कि हम लोग शहर में घूम गाया करेंगे और सत्संग किया करेंगे। जब उन्होंने व उनके दोस्त रैदास ने शहर में घूमकर कवित्त गाया, तब रैदास के पिता ने रैदास को घर से निकाल दिया। उन्होंने सड़क के किनारे सत्संग शुरू किया, तो उनको यह सूचना मिली कि तुम्हारी पूरी झोपड़ी जल गई और आग बस्ती में फैल रही है। कबीर ने कहा - "आज नहीं होता, कल होता। एक दिन यह होना ही था।"१२७

मस्जिद में जब अजान होने लगती है, तब कबीर ने एक मुल्लाजी से कहा - "आप खुदा को जगाने पहुँच गए।" आपकी आवाज़ सातवें आसमान तक नहीं पहुँचेगी। अब अल्लाह ताला कुछ ऊँचा सुनने लगे है। मुल्ला जी, जरा और ऊँचा।

"काँकर पाथर जोर करि ।मस्जिद लयी चुनाय।
ता चढ़ मुल्ला बांग दे क्या बहरो भयो खुदाय?"१२८

कबीर के माता-पिता ने उनका विवाह लोई से कर दिया। उन्होंने लोई से कहा कि हम तुम्हें कैसे घर में लाए कि घर में रहने को छत भी नहीं है? लोई ने अपने पति से कहा कि तेरा घर-दुवार नहीं था तो तैंने विवाह क्यों किया, पहले छप्पर छवाता, बाद में हमें लाता? कबीर ने अपनी पत्नी से पूछा -

"तेरे बाप ने जबरदस्ती तेरी शादी की है? तू मेरे साथ रहना नहीं चाहती थी?

लोई : यह भी कोई पूछने वाली बात है ?

कबीर : क्यों ?

लोई : बापू ने हमसे पूछा थोड़े ही था।

कबीर : और अगर हम पूछें तो ?

लोई चुप रहती है।

क्यों? चुप क्यों हो गई? अगर हम पूछें तो?

लोई : पूंछ भी रहा है तो शादी के बाद। अब क्या तुक है? फिर भी बता दूँ? सुनेगा?

कबीर : बता दे।

लोई : हमारे पिछवाड़े एक साहूकार का छैल-छबीला बेटा रहता था। वह हमें ब्याहना चाहता था। उससे हमारा परेम था।

कबीर : फिर?

लोई : बापू हमसे पूछता तो हम तो सच्चा कहतीं हम उससे ब्याह करेंगे। उससे हमारा परेम है। उसे पता चला कि तुमसे हमारा ब्याह होने जा रहा है तो उसने कहा, भागकर हमारे यहाँ चली आओ और क्या मालूम हम चले भी जाते।"१२६

कबीर ने लोई से कहा कि यह अनर्थ हो गया, तुम्हें अपने प्रेमी के पास चले जाना चाहिए। जब लोई अपने कपड़े की गठरी लेकर थोड़ी दूर जाती, तब वह लौटकर आ जाती है। लोई के पति ने कहा कि तुम कुछ भूल गई थी क्या? कबीर की पत्नी ने कहा कि अब मैं कहीं नहीं जाऊँगी, मेरे जाने के बाद लोग तुम्हारी हँसी उड़ाएँगे, तुम्हें गंगा में फेंकेगे। यह मुझसे नहीं देखा जाएगा। उन्होंने कहा कि तेरा मन इतनी जल्दी कैसे पलट गया? लोई ने कहा - **"मन पलट गया। हमें लगा, हम तेरे ही संग रहेंगी। तू जोर-जबरदस्ती नहीं करता। तू खरा आदमी है। तुझे देखा नहीं होता तो और बात थी।"१३०**

कबीर उसे अपनी बाँहों में भर लेता है और अपने हाथ से बनी हुई चुनरी उसके सिर पर डाल देता एवं उसको एक कवित्त सुनाता है-

"भीजै चुनरिया प्रेम रस बूँदन
आरती साज के चली है सुहागिन
प्रिय अपने को ढूँढ़न।"१३१

कायस्थ ने कबीर से कहा कि दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी काशी आ रहे हैं। तुम उनके यहाँ रहते बाजारों में नहीं घूमो। किसी को अपने कवित्त नहीं सुनाओ और न ही सत्संग करो। कबीर ने कहा कि सत्संग तो होगा। कायस्थ ने कहा कि तुम इतने बड़े नहीं हो, तुम्हें अपनी हैसियत में रहना चाहिए। कोतवाल साहब कबीर व उनके साथियों को हवालात में बन्द कर देते है। जब सिकन्दर लोदी काशी में आ जाते है, तब कोतवाल साहब के अधिकारी उनका भव्य स्वागत करते है। कोतवाल ने अधिकारियों से कहा कि बादशाह का आदर सत्कार करो। उनकी जो इच्छा हो हम से कहो। अधिकारी ने कोतवाल से कहा - **"बादशाह सलामत ने ख्वाहिश जाहिर की है कि काशी में अपने निवास के दिनों वह कबीरदास नाम के फकीर से मिलना चाहते हैं।"१३२**

कोतवाल साहब कबीर को व उनके साथियों को जेल से रिहा कर देते हैं। कोतवाल साहब ने अपने अधिकारियों से कहा कि कबीर को हमने बहुत नुकसान पहुँचाया है, अब उसको कोई नुकसान न पहुँचाए। उसके सत्संग स्थल को थोड़ा सजा देना, वहाँ की सफाई वगैरह कर देना। जब सिकन्दर लोदी कबीर से मिलते है, तब लोदी ने कहा कि हम आपको दिल्ली ले जाना चाहते है। हमने शेख तक्की से आपका काफी नाम सुना है। आप क्या करते है? उन्होंने कहा कि हम जुलाहे है। लोदी ने कहा कि आपको कपड़ों की हालत देखकर हमें ऐसा लगता कि आप भिखारी है। उन्होंने कहा -**"मेरा परवरदिगार मेरे चारों ओर है, वह मेरे दिल में बसता है। उसकी नजर में न कोई हिन्दू है, न तुर्क। मैं अल्लाह का नूर हर इन्सान में देखता हूँ, इन्सान के दिल में दिखता हूँ।"१३३**

सिकन्दर को कबीर की बातों से क्रोध आने लगता है। उन्होंने कहा कि हमने सोचा था कि हम तुम्हें अपने

साथ दिल्ली ले चलेंगे, लेकिन तुम यहाँ उल्टी-सीधी बात करके लोगों में बदअमनी फैला रहे हो। कोतवाल का कबीर के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"उठ फकीर, आज के बाद कभी मुझे शिकायत मिली कि तूने दीन की तौहीन की है तो मैं तेरी टाँगे चीर दूँगा।**

सहसा गुस्से से

इस आदमी को शहर से बाहर निकाल दो और इन सबको हटा दो यहाँ से।"१३४

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि आज से कई शताब्दियों वर्ष पूर्व भी समाज में जाति-पाँति, छुआछूत, भेदभाव, हिन्दू और मुसलमानों में वैमनष्यता बहुत फैली हुई थी। साहनी जी ने कबीर के जीवन को वर्तमान परिवेश में ढालकर उसको चित्रित करने का प्रयत्न किया तथा कबीर के माध्यम से ईश्वर की सर्वव्यापकता पर बल देते हुए उसे देवालयों में न ढूँढ़ने की सलाह दी।

"मो को कहाँ ढूँढ़े वन्दे, मैं तो तेरे पास में।

ना मैं देवल, ना मैं मस्जिद, ना काबे कैलास में।"१३५

संदर्भ संकेत-

१- J.L. Nehru : The Discovery of India, P. 422

२. विमैन इन माडर्न इण्डिया, पृ०सं० १७६

३- संस्कृति के चार अध्याय- दिनकी जी, पृ०सं० ४४६

४- वीर नर्मद- विश्वनाथ एम० भट्ट (गुजराती), पृ०सं० ६

५- संस्कृति के चार अध्याय, पृ०सं० ४४६-४५०

६- इण्डिया थ्रू दि एजिस - ५१० के०सी० व्यास पृ०सं० ३१३

७- भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास-सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ०सं० ६११

८- भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास-सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ०सं० ६२०

९- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २४

१०- भीष्मसाहनी उपन्यास साहित्य, विवेक द्विवेदी, पृ०सं० ११३

११- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७३

१२- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०८

१३- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६६

१४- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६७

१५- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २६६

१६- मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३३३

१७- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३२

१८- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३४

१९- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६६

२०- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०१

२१- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२३

२२- झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२६

२३ झरोखे, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १३०

२४- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५३

२५- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७१

२६- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७५

२७- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७५

२८- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ८७

२९- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ९२

३०- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७६

३१- नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २००

३२- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६

३३- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३८

३४- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७७

३५- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७८

३६- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २१६

३७- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २२१

३८- तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २५६

३६- भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, विवेक द्विवेदी, पृ०सं० १२७

४०- कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५१

४१- कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२७

४२- कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३२६

४३- कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३३२

४४- कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३३२

४५- भीष्मसाहनी उपन्यास साहित्य, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४१

४६- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० ६

४७- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० ३६

४८- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० ४१

४६- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० ७१

५०- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० १५६

५१- कड़ियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० १६४

५२- भीष्मसाहनी उपन्यास साहित्य, विवेक द्विवेदी, पृ०सं० ८२

५३- बसंती, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६७

५४- बसंती, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४०

५५- बसंती, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १८४

५६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४५

५७- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४७

५८- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४८

५६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४८

६०- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५०

६१- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५४

६२- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५५

६३- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५६

६४- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५५

६५- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६६

६६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०३

६७- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०३

६८- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०५

६९- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०५

७०- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ११३

७१- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ११७

७२- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२१

७३- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२४

७४- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२५

७५- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२७

७६- बाल संस्कार, श्री योग वेदान्त सेवा समिति संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद, पृ०सं०२४

७७- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६२

७८- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६३

७९- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६५

८०- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६६

८१- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६६

८२- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५०

८३- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५०

८४- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६०

८५- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५६

८६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६१

८७- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६५

८८- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६६

८९- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७३

९०- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५९

९१- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४०

९२- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४१

९३- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४२

९४- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४३

९५- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४५

९६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४६

९७- धर्म निरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता, पृ०सं० १३६

९८- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३६

९९- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३६

१००- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३६

१०१- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३७

१०२- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३९

१०३- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४१

१०४- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४१

१०५- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४२

१०६- पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४३

१०७- आधुनिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना, गोपाल प्रसाद मुद्गल, मोतीलाल विजयवर्गीय, निर्मल वर्मा ,पृ०सं० २९८

१०८- पटरियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २२

१०९- पटरियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २५

११०- पटरियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३३

१११- पटरियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३५

११२- हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २६

११३- हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५५

११४- हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७८

११५- हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ९५

११६- हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ९८

११७- माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

११८- माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २७

११९- माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७५

१२०- माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ८१

१२१- माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६३

१२२- माधवी, भीमष्मसाहनी, पृ०सं० ६५

१२३- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १३

१२४- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २०

१२५- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४१

१२६- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४५

१२७- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५४

१२८- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६३

१२६- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७३

१३०- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७६

१३१- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७७

१३२- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ८५

१३३- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६५

१३४- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६७

१३५- कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६७

- संदर्भ संकेत

अध्याय - ४

भीष्म साहनी का युग परिवेश

४.१ - आर्थिक परिस्थितियाँ

४.२ - राजनीतिक परिस्थितियाँ

४.३ - सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ

४.४ - सामाजिक परिस्थितियाँ

४.५ - भीष्म साहनी के साहित्य पर युगीन प्रभाव

(४.१) आर्थिक परिस्थितियाँ -

ब्रिटिश सरकार ने सदैव इस नीति का ध्यान रखा- **'Divide and rule'** और वह अपने इस तथ्य में किसी सीमा तक पलसफ भी रही । उसने अपनी शोषण प्रकृति निरंतर स्थिर रखी, क्योंकि भारत को जर्जर बनाना और सदैव के लिए अपंगु कर उसका शोषण करना उनका परम लक्ष्य था ।

कृषकों की स्थिति दिनानुदिन इतनी दयनीय हो गई। कि उन्हें जमीदारों, ताल्लुकेदारों तथा महाजनों की शरण लेनी पड़ी। इस सन्दर्भ में डॉ. चंडी प्रसाद जोशी ने लिखा है- उनकी स्थिति इतनी दयनीय हो गई थी कि उन्हें जीवित रहने के लिए महाजनों की शरण लेनी पड़ती थी, जिसका अन्तिम परिणाम यह हुआ कि किसानों को भूमि बेचकर मजदूर बनना पड़ा। किसानों से भूमि छीनी जाने लगी और महाजन भूमि के मालिक बनते गए। पुराने जमीदार गाँव में रहते थे, अतः किसानों के प्रति कुछ उत्तरदायित्व भी निभा लेते थे, लेकिन यह नए भूमि-मालिक खेती को एक व्यापार समझते थे, जिसका भार वह कारिन्दों पर छोड़ देते थे, जिससे किसानों का दुहरा शोषण होने लगा और खाद्यान्न का उत्पादन इतना गिर गया कि भारत को विदेशों की खाद्यान्न सहायता पर निर्भर रहना पड़ता था। उस समय किसानों का शोषण तीन दिशाओं से हो रहा था -

१. महाजनों एवं साहूकारों का कर्ज २. जमीदारों तथा ताल्लुकेदारों का लगान ३. आवश्यक वस्तुओं पर करों की अभिवृद्धि ।

स्वतन्त्रता- प्राप्ति के उपरान्त राष्ट्रीय सरकार ने सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य जो किया, वह जमीदारी उन्मूलन था। जमीदारी समाप्त कर दी गई और कृषक स्वयं अपनी भूमि का स्वामी बन गया। इस प्रकार मध्यस्थ की स्थिति को सरकारों ने सदैव के लिए परिसमाप्त कर दिया ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद ब्रिटिश सरकार ने यह निश्चय किया कि भारत में औद्योगिक विकास किया जाय और उस सामान से मित्र राष्ट्रों की सहायता की जाए । इस औद्योगिक-विकास का एक और भी कारण था। द्वितीय महायुद्ध में फ्राँस का पतन हो चुका था, ब्रिटेन के कारखानों एवं जहाजों का अत्यधिक मात्रा में विध्वंस हो चुका था। उधर जापान भारतीय सीमा पर अपनी सेनाएँ लगा चुका था। अस्तु ऐसी स्थिति में ब्रिटिश सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया था कि भारत में कारखानों की स्थापना की जाएँ।

देश के स्वतन्त्र होते ही अनेक समस्याएँ प्रश्न चिहन बनकर सम्मुख आ खड़ी हुई, जिनमें प्रमुख हैं - देश का विभाजन, काश्मीर का प्रश्न तथा शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्याएँ। इन सभी समस्याओं का संदर्भ आर्थिक दृष्टि से संश्लिष्ट है, जिसे हम नकार नहीं सकते।

शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्या आर्थिक दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं थी। येन-केन प्रकारेण उन्हें बसाया तो अवश्य गया, किन्तु उनके मन में अपनी संपत्ति के प्रति एक ज्वाला जल रही थी। यहाँ बस जाने के पश्चात् उन्हें उपलब्ध क्या हुआ- यही उनके विक्षोभ का कारण था। कहाँ वे मकान मालिक थे, लाखों की **'प्रापरटी'** उनके हाथ में थी और कहाँ अब उन्हें अपने उदर की पूर्ति करनी कठिन पड़ रही थी ।

(४.२) राजनीतिक परिस्थितियाँ -

भीष्म साहनी के युग में अंग्रेजों की अंग्रेजी सत्ता की साजिश, जिन्ना की जिद, हिन्दू-मुस्लिम अलगाववाद की विभाजनकारी कार्य-नीति और राष्ट्रीय नेतृत्व की अधीरता की बजह से देश ने विभाजन की त्रासदी को भोगा था, लेकिन आखिर जिन्ना मुस्लिम अलगाववाद के चहेते और पाकिस्तान की मांग के मूल प्रेषक कैसे बन गए? जिन्ना पहले ऐसे नहीं थे । उनकी राजनीति की शुरूआत कांग्रेस के मंच से हुई थी । सन् १६०६ में कांग्रेस के नव निर्वाचित अध्यक्ष **दादा भाई नौरोजी** के निजी सचिव चुने गए जिन्ना ने कभी मुस्लिम लीग के ढाका सम्मेलन में शिरकत करने से परहेज किया था। राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार **लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक** को गिरफ्तार कर लिए जाने पर जिन्ना ने उनके एडवोकेट के रूप में जोरदार वकालत की। १६१८ में **भारत कोकिला सरोजनी नायडू** ने जिन्ना के लेखों और भाषणों का एक संकलन संपादित किया था, जिसकी भूमिका में सरोजनी नायडू ने जिन्ना को हिन्दू मुसलमान एकता का अग्रदूत कहा था।

महात्मा गाँधी के उदय के साथ कांग्रेस की राजनीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आ गया। जिन्ना ने महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन का जमकर विरोध किया। कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन (१६२०) में जिन्ना को छोड़कर तमाम मुस्लिम नेता गाँधीजी के साथ थे। कांग्रेस ने सत्य,अंहिसा और सत्याग्रह की गाँधीवादी शैली को अपना लिया। जिन्ना कांग्रेस से अलग हो गए और वायसराय लार्ड रीडिंग से उनके मधुर संबंध खुलकर सामने आ गए। लंदन प्रवास के बाद जिन्ना १६३४ में भारत आ गए और वह मुस्लिम अलगाववाद के नए पुरोधा बनने की कवायद में जुट गए। इस तरह राष्ट्रवादी जिन्ना का रूपांतरण सांप्रदायिक धर्मोमादी के रूप में हो गया। इसे स्वराज्य के आंदोलन की शोकांतिका ही कहा जा सकता है। एक राष्ट्रभक्त ब्रिटानी सत्ता की **'बाँटो और राज करो'** की कार्यनीति का मोहरा बन गया। २३ मार्च, १६४० को मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की माँग का प्रस्ताव पास किया। प्रस्तावक बंगाल के फजलुलहक थे और अनुमोदन लखनऊ के चौधरी खलीकुज्जमा ने किया था। इस तरह अलगावादी मजहब के आधार पर देश को बाँटने की ब्रिटानी सत्ता की रणनीति के सहयोगी बनने के लिए राजी हो गए । इसे इतिहास का दुःखद अध्याय ही कहा जा सकता है कि भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान, बंगाल, सिंध और सीमा प्रांत में बनी मुस्लिम लीग सरकार में हिन्दू महासभा के सदस्य भी शरीक थे। फजलुलहक जिन दिनों बंगाल के प्रीमियर थे। उस समय कांग्रेस और गाँधी ने **'दो राष्ट्र सिद्धान्त'** का प्रतिवाद किया था। गाँधी ने **'हरिजन'** के ३० मार्च, १६४० अंक में लिखा था - **"विभाजन एकदम असत्य पर टिका है। मेरी समूची आत्मा इस विचार से चीत्कार कर उठती है कि हिन्दू और इस्लाम,दो परस्पर विरोधी संस्कृति और सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करते हैं।"**[१] **डॉ० राजेन्द्र प्रसाद** ने भविष्यवाणी की कि विभाजन से सद्भाव नहीं बढ़ेगा, बल्कि दोनों फिरकों में दुर्भावना बढ़ना सुनिश्चित है। मुस्लिम लीग ने अपनी मुंबई बैठक में सीधी कार्यवाही करने का प्रस्ताव पास किया और १६ अगस्त, १६४६ को सीधी कार्यवाही करने का फैसला लिया। इस तरह जिन्ना कानून के राज के अपने सिद्धान्त से पीछे हट गए और रक्तपात और हिंसा की राह पर चल पड़े। तब अकेले कलकत्ता में एक ही दिन में दस हजार निरपराध लोग मौत के आगोश में सुला दिए गए। इसके बाद देश में धर्मोन्माद की आँधी ने इतिहास के स्याह अध्याय की शुरूआत कर दी। असंख्य लोग मौत के घाट उतार दिए गए। तब

नेहरू ने कहा था कि किसी भी स्थिति में कांग्रेस मुल्क के बँटवारे को मंजूर नहीं करेगी। इस धरती पर पाकिस्तान नहीं बन सकता, जिसे जिन्ना बनाने पर तुले हुए है। ३१ मार्च, १६४७ को गाँधीजी ने कहा कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा। बाद में पाकिस्तान बनने पर नेहरु ने सुर बदला। इस समस्या का कोई दूसरा विकल्प नहीं है। कांग्रेस अधिवेशन में १४ जून, १६४७ को पं. गोविन्द बल्लभ पंत और सरदार पटेल ने देश विभाजन का प्रस्ताव पेश किया। तब खान अब्दुल गफ्फार खां और मौलाना आज़ाद ने कांग्रेस अधिवेशन में मुल्क के बँटवारे पर अपना विरोध दर्ज किया, पर बहुमत ने पाकिस्तान को मान लिया था। सत्ता हस्तांतरण की अवधि का प्रत्येक गवाह जानता है कि विभाजन के आधार पर सत्ता हस्तांतरण को सरदार पटेल और जवाहर लाल नेहरू ने स्वीकार किया था। ५ जून, १६४७ के एक पत्र में बिड़ला ने सरदार पटेल से पूछा था कि वायसराय की घोषणा से मुझे इसकी प्रसन्नता है कि सब आपकी इच्छा के अनुरूप हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि यह हिन्दुओं के लिए बहुत अच्छा हुआ और अब हमें सांप्रदायिक नासूर से छुटकारा मिल जाएगा। अलग हुआ क्षेत्र निश्चय ही मुस्लिम राज्य बनेगा। उस समय ऐसा प्रश्न रखा गया कि हम हिन्दुस्तान को हिन्दू राज्य बनाएँ और हिन्दू धर्म को राज्य का धर्म बनाएँ?

सरदार पटेल ने अपने उत्तर में लिखा - **" मैं नहीं समझता कि हिन्दुस्तान को हिन्दू राज्य और हिन्दू धर्म को राज्य का धर्म बनाया जा सकता है। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि देश में अल्पसंख्यक वर्ग है, जिनकी रक्षा हमारी प्राथमिक जिम्मेदारी है। राज्य सबके लिए होगा, फिर वह चाहे किसी भी जाति या धर्म का हो।"**२ जिन्ना के अंतिम दिनों के संस्मरण में ले० कर्नल डॉ. इलाही बख्श ने लिखा था कि जिन्ना ने गहरी उदासी के आलम में कहा था -

"डाक्टर पाकिस्तान मेरी जिंदगी की सबसे बड़ी भूल है।"३ जिन्ना को यह भी मान लेना पड़ा कि गाँधी ने उनके या हिंदुस्तान के मुसलमानों के साथ कभी भी बुरा नहीं किया। गाँधी का मुसलमानों के एक सच्चे मित्र के रुप में जिन्ना का आकलन एक नए पहलू को उजागर करता है। गाँधी अपनी जिन्दगी का शेष भाग लाहौर में बिताना चाहते थे। गाँधीजी की हत्या और जिन्ना की मौत हो जाने के कारण सद्भावना का यह सेतु बन नहीं सका।

(४.३) सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ -

आलोच्यकाल में सांस्कृतिक दृष्टिकोण से **'नगर-संस्कृति'** एवं **'ग्राम-संस्कृति'** के दो रुपों के बीच रहन-सहन, रीति-रिवाज, यातायात, जीवनादर्श आदि को लेकर कल्पनातीत खाई थी। नगर के शिक्षित समाज को भौतिक सुख-सुविधा के सभी साधन प्राप्त थे। दूसरी ओर ग्राम का अशिक्षित समाज इन साधनों से वंचित प्राचीन परंपरा में ही जी रहा था। इसी से ग्रामीण जीवन की नीरसता तथा कठोरता से ऊबे हुए थोड़ी बहुत शिक्षा प्राप्त ग्रामीण युवक वैज्ञानिक विभूतियों से सुसज्जित नगरों में ही रहना चाहते और गाँव को लौटना उन्हें खलता।

देश के विभाजन पर पाकिस्तान संकुचित कटु धार्मिकता लेकर आया, किंतु भारत धर्मनिरपेक्ष नवराष्ट्र के रुप में विश्व के राष्ट्रों में सम्मानित हुआ। उसकी इस धर्म निरपेक्षता को नष्ट करने के लिए आंतरिक व बाह्य प्रबल आक्रमणों का उसे सामना करना पड़ा। भाषा पर आधारित राज्य पुनर्रचना से सीमित प्रांतीयता एवं भाषा-भेद की समस्या

उत्पन्न हुई, जो राष्ट्रीय ऐक्य के लिए बाधा रुप सिद्ध हुई। रामधारी सिंह दिनकरजी के मत से इसका हल तभी मिलेगा, जब हिंदी-भाषी क्षेत्रों में अहिंदी भाषाओं तथा अहिंदी-भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा का अच्छा प्रचार हो जाए। उनका मत है कि अनेक गुणयुक्त नदियों-पहाड़ों में एक अवगुण भी होता है, वे देश के भीतर अलग-अलग क्षेत्र बना देते हैं और इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के भीतर एक तरह की प्रांतीयता या क्षेत्रीय जोश पैदा हो जाता है। देश में इस प्रांतीय बैर-भाव व फूट की संकुचितता को मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा, जनसंघ, आर०एस०एस०, कम्युनिस्ट पार्टी, सोश्यालिस्ट पार्टी आदि दक्षिण-पंथी साम्प्रदायिक एवं वामपंथी दलों ने फैलाकर देश को विश्व में बदनाम किया। पाकिस्तान, अमरीका, ब्रिटेन आदि भारत को **'हिन्दू भारत'** ही पुकारते थे और मौका मिलते ही उसकी बदनामी करते थे, परंतु देश के अभूतपूर्व खंडन तथा पाकिस्तान के दो हिस्सों के बीच दो हजार मील की दूरी पर भी उसका स्वीकार करना यह भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता की भावना देश के आलोचकों की समझ के बाहर की बात थी।

नवीन बौद्धिक उन्मेष एवं चिन्तन के परिणाम स्वरुप जनता में एक नवीन चेतना का जन्म हुआ, जिसका परिणाम यह हुआ कि मध्ययुगीन सांस्कृतिक मूल्यों पर प्रश्न चिन्ह लग गए। धर्म, अन्धविश्वास तथा रुढ़िवादिता मध य-युगीन संस्कृति के मुख्य तत्व थे तथा मध्य-युगीन व्यक्ति का जीवन-दृष्टिकोण भी इन्हीं तत्वों द्वारा निश्चित होता था। बौद्धिक उन्मेष ने मध्य-युगीन धार्मिक दृष्टिकोण तथा अन्धविश्वास को ध्वस्त किया तथा सामाजिक चेतना ने रुढ़िवादी दृष्टिकोण को तिरस्कृत कर दिया।

जनता के इस युग से आकर प्रेमचन्द्र के इस कथन को सत्य स्वीकारा। धर्म का मुख्य स्तंभ यह है कि अनिष्ट की शंकर को दूर कर दीजिए फिर तीर्थ यात्रा, पूजा-पाठ, स्नान-ध्यान, रोजा-नमाज किसी का निशान भी न रहेगा। मस्जिदें वाली नजर आएगी और मन्दिर वीरान।

जनता ने धर्म के नाम पर प्रचलित रुढ़िवादिता का तिरस्कार किया। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे ये ध र्म के ठेकेदार निर्धन जनता का धर्म के नाम पर दोहन करना चाहते हैं, जिसका परिणाम यह हुआ कि धर्म से उसका विश्वास हटने लगा। इस विश्वास के हटने का एक और कारण भी देखा जा सकता है। मार्क्सवादी विचारधारा से संपूर्ण विश्व प्रभावित हो रहा था। ऐसी स्थिति में यह संभाव्य न था कि उसका प्रभाव भारत की जनता पर न पड़ता। मार्क्स ने धर्म तथा ईश्वर पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया था, जिसका परिणाम यह हुआ कि भारत के तरुणों पर भी इसका एक व्यापक प्रभाव पड़ा। अब वह धर्म के नाम पर रुढ़ि जाने के पक्ष में न था।

(४.४) सामाजिक परिस्थितियाँ -

अंग्रेजों के राज्य-स्थापन के समय इस देश का विशाल जन-समूह गाँवों में बसा हुआ था। नेहरु जी के अनुसार इस समाज के मुख्य लक्षण थे, स्वावलम्बी ग्रामीण-वर्ग, जातियाँ और संयुक्त कुटुम्ब व्यवस्था। भारतीय समाज की ये तीनों मुख्य संस्थाएँ परस्पर अवलम्बित थीं।

समाज में पुरुष की सर्वोपरिता थी। मध्ययुग में विदेशियों के लगातार आक्रमण की स्थिति में ग्रामीण समाज में कड़े सामाजिक बन्धनों के साथ जातिप्रथा व छुआछूत की भावना बढ़ती गई। कर्म पर आधारित वर्ण-व्यवस्था नष्ट

होते ही अनेक जातियाँ और उपजातियाँ अस्तित्व में आई। समाज में ब्राह्मण सर्वोपरि ही रहे। इससे ऊँच-नीच की भावना अधिक बढ़ी।

अंग्रेजों से पूर्व विदेशी आक्रमणकारियों की विषय लोलुप दृष्टि से बचाने के लिए नारी पर कड़े बंधन लगाकर उसे घूँघट-पर्दे में रखा गया था। स्त्री शिक्षा से वंचित रही, इसका भी प्रभाव समग्र समाज पर पड़ा। नारी जीवन के वे स्वर्ण-दिन अब न रहे जब वह **'स्वयंवर'** में अपना पति स्वयं चुनती थी। पिता बाल-विवाह कर मानों कन्या को लेकर उत्पन्न होने वाली भावी आपदों से शीघ्र छुटकारा पाना चाहता था। बालविधवाएँ भी पुनर्विवाह से वंचित थी। नारी पर अपार अत्याचार भी होते।

विवाह संस्था हिन्दू समाज में सदा से आदरणीय रही है। विवाह करना अनिवार्य था और उसमें युवक-युवतियों की इच्छा की उपेक्षा की जाती थी।

नारी पर सामाजिक अत्याचार, उसकी हीन आर्थिक अवस्था, विधवाओं की करुण दशा एवं दक्षिण भारत में देवदासी-प्रथा के कारण वेश्यावृति को प्रोत्साहन मिला। समाज में वेश्याओं की करुण स्थिति तथाा अनैतिकता का वातावरण देख कर अनेक समाज-सुधारकों के आग्रह से मद्रास सरकार ने देवदासी प्रथा को १६३४ ई० के **'देवदासी अधिनियम'** द्वारा नष्ट कर दिया।

विश्व के कई राष्ट्रों ने स्वातंत्र्य-प्राप्ति से पूर्व रक्त बहाया है, किंतु हमने आज़ादी के बाद ही अधिक रक्त बहाया है। स्वातंत्र्य के उदय-काल में ही भारतीय रंगमंच पर मानव-जाति के इतिहास का एक अभूतपूर्व करुण नाटक खेला गया। मानवता मर चुकी थी और जंगलियत का नग्न-नृत्य हो रहा था।

यद्यपि दोनों पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि-उत्पादन व ग्रामीण-विकास की ओर अधिक ध्यान दिया गया था, तथापि ग्राम व नगर के बीच का अंतर बढ़ता ही जा रहा था।

आलोच्यकाल में भारतीय नारी की स्थिति पहले से अधिक उन्नत हुई थी, पर ग्रामीण नारी-समाज परम्परानुसार संकुचित मनोवृति से घिरा हुआ, कुसंस्कारी, अशिक्षित एवं रुढ़िवादी था। स्त्री की कोई स्वतंत्र इच्छा का प्रश्न ही नहीं था। घूँघट-पर्दे की प्रथा के कारण श्रमिक-वर्ग की नारियों के सिवाय स्त्री घर से बाहर काम करने नहीं जाती थी। इसके विपरीत नगरों में शिक्षित स्त्रियों की संख्या बढ़ती जा रही थी। अनेक स्त्रियाँ दफ्तर, स्कूल आदि में काम करती थीं एवं आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हो रही थी।

(४.५) भीष्म साहनी के साहित्य पर युगीन प्रभाव -

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में हमें तद्‌युगीन भारत के 'आर्थिक परिदृश्य' का दिग्दर्शन होता है। उनके 'तमस' नामक उपन्यास में देश की आर्थिक स्थिति का कई स्थानों पर चित्रांकन हुआ है।

<u>'तमस'</u> -

जीवन में जब विपत्ति आती है, तब कोई भी मदद नहीं करता है। न ही जीवन में कोई किसी का साथी

होता है। मानव के पास अगर पैसा है, तो उसके पराए भी अपने हो जाते हैं। वे उनके घर सुख-दुख में साथ देते हैं। जब उसके पास पैसा नहीं होता है, तब अपने भी पराए हो जाते हैं और वे उनसे मुँह मोड़ लेते हैं। ऐसा ही एक परिदृश्य 'तमस' में देखने को मिलता है।

बाबू जो आकड़े तैयार कर रहा है। किसका कितना नुकसान हुआ है। एक सरदार बाबूजी के पास अपनी फरियाद लेकर आता है कि कुएँ में मेरी बीबी गिर कर मर गई है। मेरी बीबी दोनों हाथ में ५ तोले के सोने के कंगन पहने है। गले में जंजीर पहने हुए हैं। मुझे अपने कड़े व जंजीर चाहिए। बाबू ने कहा कि मैंने लिख लिया है, मैं तुम्हारा काम करवा दूँगा।

बाबू ने कहा कि वैसे यह काम मेरा नहीं है। जब कोई गाड़ी जाएगी, तब तुम उसमें चले जाना। सरदार बाबू को लालच दे रहा था कि गाड़ी में हम और तुम चलें, हथौड़ा रख लेंगे। **बाबू ने कहा -**

"ओ सरदारजी, लाशें फूलकर ऊपर तक आ गई हैं। फूली हुई लाश की कलाई पर से आप कड़े उतार सकते हैं? कोई अक्ल की बात किया करो। क्या सरकार आपको उतारने देगी?"४

आप तो साथ है। हम आपका मुँह मीठा करवाएँगे। आप ही यह काम करेंगे -

"ओ सरदारजी, कुछ सोच-समझकर बात करो। पहले सरकार शनाख़्त माँगेगी, गवाहियाँ माँगेगी, फूली हुई लाश को पहचानना क्या आसान काम है?"५

सरदार बाबू जी गुस्सा से तमक उठे कि मेरा काम आकड़े दर्ज करना है। कितना आपका नुकसान हुआ है। यह मैंने दर्ज कर लिया है। वह मैं आपका काम नहीं कर सकता-

"बाबू ने मुँह फेर लिया। थोड़ी देर बाद सरदार की आवाज आई, कुछ तो रहम करो हम लोगों पर, हम बर्बाद होकर आए हैं।"६

चूंकि दंगे में मुसलमानों ने सभी सिक्खों के सामान लूट लिए। स्त्रियों व बच्चों ने कुएँ में गिरकर आत्महत्या कर ली। उनके घर जला दिए। जो अपनी जान बचा सकते थे, वे वहाँ से भाग गए। अगर सरदार के पास पैसा होता और दंगे में उसका कुछ भी लुटा व जला नहीं होता, तो शायद उसे बाबू के पास गिड़गिड़ाना नहीं पड़ता।

भारत **'सोने की चिड़िया'** कहलाता था। यहाँ दूध-दही की नदियाँ बहती थीं। लोग चैन की नींद सोते थे। रोजी रोटी की समस्या नहीं थी। घर-घर में कुटीर धन्धों का जोर था, लेकिन अंग्रेजों ने यहाँ आकर सब चौपट कर दिया। **'सोने की चिड़िया'** के पंख कतर डाले। **'फूट डालो शासन करो'** की नीति अपनाकर हिन्दू, सिक्ख और मुसलमानों को आपस में लड़ा दिया, जिससे साम्प्रदायिक दंगे हुए। इसमें गरीबों का शोषण हुआ।

निर्धनता दुनिया का सबसे बड़ा अभिशाप है। वह क्या-क्या नहीं करा देती है। प्रकाशो जिसके माता-पिताा गरीब है। दंगे में माता और बेटी दोनों पहाड़ी के नीचे लकड़ियाँ चुन रही थी। अल्लाहरक्खा प्रकाशो को उठा ले जाता और उससे निकाह कर लेता है। जब ब्राह्मण माता-पिता दोनों अपनी लड़की की खोज के लिए बाबू जी से कहते हैं, तब बाबू ने कहा कि आप बता दीजिए कि आपकी बेटी कहाँ गई? माता ने कहा कि उसे तो गाँव के किसी गाड़ीवान ने रख लिया है -

"अब हमारे पास आकर क्या करेगी जी, बुरी वस्तु तो उसके मुँह में उन्होंने पहले से ही डाल दी होगी।"

इस पर पण्डित बोला "हमसे अपनी जान नहीं सँभाली जाती बाबूजी, दो पैसे जेब में नहीं है, उसे कहाँ से खिलाएँगे, खुद क्या खाएँगे।"७

प्रकाशो व उसके माता-पिता बहुत गरीब थे। प्रकाशो भी अल्लाहरक्खा के यहाँ से भाग जाना चाहती थी। वह अपने माता-पिता के पास आना चाहती थी - **"लेकिन प्रकाशो जानती थी कि अल्लाहरक्खा के मुकाबले में वे बहुत ही दुबले, बहुत ही दीन-हीन लोग हैं।"८**

प्रकाशो जानबूझकर अपने माता-पिता के पास नहीं आई। वह जानती थी कि मेरे माता-पिता बहुत गरीब हैं। यदि वह जाएगी भी, तो उसके माता-पिता उसका खर्च नहीं उठा पाएँगे। अगर अल्लाहरक्खा बिगड़ गया तो माता-पिता उसका सामना नहीं कर पाएँगे। मानव के जीवन में कितनी विपरीत परिस्थितियाँ आती हैं। वह चाहते हुए भी कि हम ये काम न करें, लेकिन उसे ये काम करना ही पड़ता है। निर्धनता कितना बड़ा अभिशाप है कि वह अपने माता-पिता के पास आना चाहती है, लेकिन निर्धनता ने उसे इतना जकड़ लिया कि उसे अपना घर भी बेगाना लगने लगा।

'कड़ियाँ' -

निर्धनता जीवन का एक बहुत बड़ा अभिशाप है। वह मानव को कहीं का नहीं छोड़ता है। निर्धनता के कारण व्यक्ति आत्महत्या तक कर बैठता है। अपने बच्चों तक को बेच देता है।अपनी बेटी का ब्याह बूढ़े से भी कर देता है, लेकिन जीवन में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं। जिनके पास दो वक्त का भोजन नहीं है, फिर भी अपनी संतान को रहने के लिए पनाह देते हैं। **ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्मसाहनी के कड़ियाँ नामक उपन्यास में देखने को मिलता है।**

प्रमिला भगवानदास नारंग साहब की बेटी है। नारंगसाहब बी.ए., एल.एल.बी. हैं। उनकी दो संतानों में से प्रमिला छोटी लड़की है। प्रमिला की शादी महेन्द्र के साथ हुई थी। दोनों की शादी को १५ साल हो गए थे। प्रमिला और महेन्द्र के बीच एक बेटा पप्पू था। प्रमिला एक अनपढ़ स्त्री थी। उसे घर गृहस्थी में ज्यादा आनन्द आता था। वह बाहर की दुनिया से बिल्कुल अंजान थी। पति जब भी पत्नी से काम (संभोग) की इच्छा करता है, तब वह हमेशा मना कर देती थी। वह अपना रहन-सहन एक भँवारिन की तरह रखती थी। वह बर्तन भी सुहागा से माँजती थी। पति को उसकी यह हरकतें बिल्कुल पसंद नहीं थी। जब महेन्द्र को प्रमिला से प्रेम नहीं मिल पाता है, तब वह दूसरी औरत को चाहने लगता है। उसने प्रमिला को उसके पिता के घर छुड़वा दिया था। पिता ने कहा कि बेटी तुम्हें तुम्हारे पति ने यहाँ पर भेज तो दिया, लेकिन खर्चा कौन देगा, कौन सा खर्चा पिताजी? पप्पू का और तुम्हारा। पप्पू का खर्चा तो वह देंगे। मेरे खर्चे के बारे में उन्होंने कुछ भी नहीं कहा। जब नारंग साहब कचहरी जाने लगे, तब उन्होंने बेटी को अठन्नी बढ़ाते हुए कहा -

"यह आठ आने रख लो। मैं जाते हुए ढाबेवाले से कहता जाऊँगा कि तुम्हें थाली पहुँचा दे।

यह आठ आने उसे दे देना। मैं उधार नहीं रखता। साथ-साथ, रोज़-के-रोज़ पैसे देता हूँ। इसमें गड़बड़ नहीं होती।"९ पर प्रमिला ने वह अठन्नी नहीं ली। वह बोली पिंताजी मेरे पास पैसे हैं। पिताजी ने बेटी से कहा कि बहुत कम पैसे हैं, इसलिए इंकार कर रही हो। बेटी मेरा व्यवसाय अच्छा नहीं चलता है। मेरे पास ज्यादा पैसे होते, तो मैं तुम्हें जरुर दे देता। प्रमिला को अन्दर से जाने क्यों घुटन सी हो रही थी? उसके अन्दर गाँठें पड़ती जा रही थी। पिताजी बोले कि बेटी तुम्हें यहाँ पर नहीं आना चाहिए था। वही तुम्हारा घर है। कहीं कोई अपनी बीबी को निकालता है। पिताजी उनकी चाची ने मुझे बहुत परेशान किया है। पिताजी ने कहा कि बेटी! मैं आज हूँ; शायद कल न रहूँ। तुम कहाँ जाकर दर-दर की ठोकरें खाती फिरोगी? नारंग साहब पहले बच्ची को डाँटते, फिर बेटी से माफी माँगते। बेटी तुम परेशान मत हो -

"दुखी न हो, प्रमिला, मेरी बच्ची, मैं तेरा दुख समझता हूँ। मुझसे जो बन पड़ेगा, मैं करुँगा। पर ज़मानाा ऐसा आया है, किसी को कुछ सूझता नहीं कि क्या करे।"१०

पिता बेटी को अपने ही घर में एक दुकान खुलवाने की सोच रहे थे। उसे अपने एक दोस्त के यहाँ भेजते कि तुम वहाँ दवाई लेने-देने तथा पर्चे बनाना सीखो। मैं तुम्हें नर्स का काम भी सिखवा दूँगा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि पिता एक निर्धन वृद्ध है। वह चाहते तो अपनी बेटी को घर से निकाल सकते थे। माँ मर गई थी। व्यवसाय अच्छा चलता नहीं था। शरीर में दम नहीं थी। उसमें फिर भी बेटी को सहारा दिया।

'बसंती' -

'बसंती' उपन्यास में निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति तो बहुत ही शोचनीय एवं दयनीय है। रोज का कमाना और रोज का खाना है। मजदूर वर्ग के ये प्रतिनिधि धोबी, नाई और मोची आदि एक दिन काम न करें तो शाम को चूल्हा नहीं जल सकता। राज मजदूर लोग मकान बनाने का काम करते हैं तथा उनकी स्त्रियाँ भी पहले मजदूरी ही करती थीं, परन्तु अब रमेश नगर में रहने वाले बाबू लोगों के घरों में चौका-बर्तन का काम करती थीं। इस तरह कमाने-खाने का कार्यक्रम चलता था -

"कहीं नए मकानों की नीवें खोदी जाने लगतीं तो आस-पास के राज-मजदूरों की छोटी-छोटी अनगिनत झोंपड़ियाँ खड़ी हो जातीं, लोहा-सीमेंट-ईंट-पत्थर के ढेरों के बीच, इन झोंपड़ियों में मोटी-मोटी रोटियाँ सेंकी जाने लगतीं, बच्चे रेत-मिट्टी के ढेरों पर खेलने-सोने लगते और मजदूरी के काम से निबटकर स्त्रियों की टोलियाँ गाती हुई अपनी-अपनी झोंपड़ियों में लौटने लगतीं।"११

भीष्म साहनी ने अपने 'हानूश' नाटक में आर्थिक परिस्थितियों का वर्णन किया है।

'हानूश' -

'हानूश' बड़े कैनवेस पर विश्वव्यापी चेतना का नाटक है। एक नाटककार की आन्तरिक उथल-पुथल,

उसके निरन्तर जूझते हुए मन, उसकी अन्तःक्रिया और रचना-प्रक्रिया को समझने का बहुत बड़ा आधार है। १९६० के आस-पास चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग में घूमते हुए वहाँ के पुराने गिरजाघर, सड़कें, मध्ययुगीन इमारतें देखकर उन्हें लगा जैसे वह मध्ययुगीन यूरोप के कालखण्ड में पहुँच गए हों। चेक भाषा और संस्कृति के जानकार निर्मल वर्मा साथ में थे। उन्होंने मुझे एक मीनार घड़ी दिखाई, जिसके बारे में तरह-तरह की कहानियाँ प्रचलित थीं कि यह प्राग में बनाई जाने वाली पहली मीनारी घड़ी थी और इसके बनाने वाले को उस समय के बादशाह ने अजीब तरह से पुरस्कृत किया था। बात कही भीष्मसाहनी के मन में अटककर रह गई और सर्जनात्मक मूल्यों के **'अजीब पुरस्कृत'** होने की कसक सम्भवतः हानूश की रचना का कारण बनी। भीष्म ने स्वयं लिखा -

"यह नाटक एक मानवीय स्थिति को मध्य युगीन परिप्रेक्ष्य में दिखाने का प्रयास मात्र है।"

लगभग पाँच सौ वर्ष पहले प्राग नगर में हानूश नामक एक कुफ़्लसाज रहता था। परिवार में पत्नी कात्या और एक बेटी यान्का थी। हानूश का एक ख्वाब था कि वह दुनिया की सबसे पहली घड़ी बनाएँ। हानूश को घड़ी बनाने की धुन के कारण गहरे आर्थिक संकट का शिकार होना पड़ा। घड़ी बनाने के चक्कर में अपने परिवार को अभावों की भट्टी में झोंकता चला गया। कात्या ने हानूश को बुरा भला कहा। कात्या ने अपने दुख की बात पादरी से कही कि आप उन्हें समझाएँ। पादरी ने कात्या से कहा कि तुम्हें हानूश का हौंसला नहीं तोड़ना चाहिए, क्योंकि वह एक बड़ा काम कर रहा है। तुम्हें अपने पति के बारे में ऐसे तिरस्कार पूर्ण शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। कात्या का पादरी के प्रति यह कथन अधोलिखित है -

"उसमें पतिवाली कोई बात हो तो मैं उसकी इज़्ज़त करूँ। जो आदमी अपने परिवार का पेट नहीं पाल सकता, उसकी इज़्ज़त कौन औरत करेगी?

पिछले दस साल से यही सुन रही हूँ। (तड़पकर) मैं बहुत उपदेश सुन चुकी हूँ। क्या मैं अपने लिए उससे कुछ माँगती हूँ? घर में खाने को न हो तो मैं अपनी बच्ची को कैसे पालूँ? मुझे सभी उपदेश देते रहते हैं। मेरा बेटा सर्दी में ठिठुरकर मर गया। जाड़े के दिनों में सारा वक्त खाँसता रहता था। घर में इतना ईंधन भी नहीं था कि मैं कमरा गर्म रख सकूँ। हमसायों से लकड़ी की खपचियाँ माँग-माँगकर आग जलाती रही।

पिछले दरवाज़े में, कात्या की दुबली सी, पन्द्रह साल की बेटी आकर सहमी-सी खड़ी हो जाती है।

छः महीने तक मैं बच्चे को छाती से लगाए घूमती रही। किधर गया मेरा मासूम बेटा? मैं इसकी घड़ी को क्या करूँ? क्या मैं इससे कुछ अपने लिए माँगती हूँ? मैंने अपने लिए कभी इससे जेवर माँगा है, या कपड़ा माँगा है? पर कौन माँ अपने बच्चों को अपनी आँखों के सामने ठिठुरता देख सकती है?"१२

भीष्म साहनी की कहानी 'आवाजें' में आर्थिक परिदृश्य का सुन्दर वर्णन अधोलिखित है -

'आवाजें' -

भारतवर्ष में पुरुषार्थ का सबसे अधिक महत्व है। पुरुषार्थ में धर्म,अर्थ, काम और मोक्ष का महत्व दिया गया है। अर्थ एक ऐसी आवश्यकता है, जहाँ मानव भूखों मर रहा है। वह अपना दो वक्त का भोजन नहीं जुटा पा रहा है। भारत का आम आदमी जी तो रहा है, मगर यह जीना मरने से ज्यादा बुरा है। दिन-रात रोटी, कपड़ा और मकान की चिन्ता से ग्रस्त मानव बेहाल हो रहा है। मँहगाई की स्थिति इतनी विकराल हो चुकी है कि **'जीने'** से भी अधिक महँगा (मरना) हो गया है। इससे भी बुरी स्थिति यह है कि समाज के विभिन्न वर्ग एक दूसरे का निर्दम शोषण करने पर उतारु है।

भीष्म साहनी ने अपनी कहानी 'आवाजें' में मानव की जो आर्थिक स्थिति है, उसको दर्शाने का प्रयत्न किया है। मक्खनलाल और माणिकलाल दोनों एक ही जगह से आए है। पहले जहाँ वे रहते थे। एक दूसरे से अपरिचित थे। अब एक दूसरे को जानने लगे हैं। जब **'डब्बू'** वकील माणिकलाल की पार्टी में जाता है, तब वह सभी से बातें करता है। **'डब्बू'** बहुत ही निर्धन व्यक्ति था। 'डब्बू' के दो बच्चे, पत्नी तथा माँ थी। जब 'डब्बू' की मुलाकात इंजीनियर अहूजा से हुई, तब 'डब्बू' ने कहा -

"कहीं छोटा-मोटा काम हमें भी दिलवा दो, इंजीनियर साहिब, आप लोगों की तो ऊपर तक पहुँच है।"१३

मक्खनलाल दिल्ली में करोलबाग के निकट ठेला लगाता है। वह चिल्ला-चिल्लाकर कपड़े बेचता था। पर माणिकलाल को उसका ऐसा चिल्लाना अखर रहा था। मक्खनलाल बोला -

"ओ बादशाहो, वह भी कोई काम है। बेसवा की तरह सारा दिन ग्राहकों को बुलाते रहो- 'लट्ठा, चाभी........चार आने। छींट जापानी..........चार आने।"

उसने मुँह टेढ़ा करके, अपनी ही नकल उतारते हुए ऊँची आवाज में कहा - "बोल-बोलकर मेरा तो मुँह टेढ़ा हो गया है और आवाज़ ऐसी बैठ गई है कि ठीक ही होने में नहीं आती।"१४

मक्खनलाल ने अपनी तर्जनी सामने करके इंजीनियर से कहा कि चाकरी करना सबसे बेकार है-

"नौकरी में कोई फिकर-फाका तो नहीं ना, साफ-सुथरी चीज है। वक्त पर गए, वक्त पर घर लौट आए। क्यों जी? पर ठेला लगाओ तो माँ.........याँ, न दिन को चैन, न रात को आराम।"१५

वह गरीबी की आर्थिक स्थिति के कारण इतना थक चुका था कि वह अपने बीबी बच्चों का पेट नहीं भर पा रहा था। वकील माणिकलाल को ऐसा लग रहा था कि 'डब्बू' के बोलने से उसकी पार्टी खटाई में जा रही है। अगर हम कमाएँगे नहीं, तो घर में बैठे कितने दिन तक खा लेंगे -

"घर में से निकाल-निकालकर आदमी कितने दिन तक खा सकता है क्यों जी? बीबी के जेवर बेचकर तो घर की आधी किस्त चुकाई है, फिर घर में चार जीव खाने वाले, क्यों जी?"१६

अपने बच्चों की पढ़ाई, रोटी, दाल, भाजी, कपड़े आदि में कहां तक पैसे खर्च नहीं होते। अगर मुझे कोई नौकरी दिलवा दे, तो मैं उसकी अच्छी खिदमत करुँगा।

इधर **'डब्बू'** की माँ और पत्नी की नहीं पटती थी। **'डब्बू'** की पत्नी बड़े घर से आई थी। वह अपनी

पत्नी व माँ के कलह से परेशान हो चुका था। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करना चाहिए? एकबार डब्बू की पत्नी के मुँह से निकल गया कि मायके में उसे रोज दही खाने को मिलता था। डब्बू ने कहा कि तू फिकर नहीं कर। गाय का दूध सूख गया है, पर अगली लू के बाद फिर से घर में दूध दही होगा। पत्नी चुप हो गई। 'डब्बू' की माँ चुप रहने वाली नहीं थी। वह कहने लगी-

"इतनें ही बड़े राजे-रजवाड़े थे तेरे माँ-बाप, तो दहेज में दो भैंसे ही दे देते।"१७

माँ हमेशा आग लगाने वाली बात करती थी। पत्नी बोलती तो नहीं बोलती थी। जब बोलती थी, तब सीधा तीर हृदय में घुस जाता था। जब वह मुँह नीचा करके बोली -

"किसी के घर में भैंसें बाँधने की जगह होती तो वे भैंसें भी भेज देते।"१८ यह सुनकर माँ का पारा चढ़ गया -

"ले सुन ले। सुन ले बरखुरदार, तेरे बाप को कंगाल कह रही है। यह आई महल -माड़ियोंवाली, हवेलियोंवाली।' और माँ ने रोटी की थाली आगे से पटक दी, इसके हाथ की रोटी खाऊँ, बुरी वस्त खाऊँ !"१९

इतना कहकर वह बाहर निकल गई। माँ भूख हड़ताल पर बैठ गई। **'डब्बू'** ने कहा -

"यह गाँधी बाबा जो घर-घर में भूख-हड़ताल करना सिखा गया है, कभी माँ भूख-हड़ताल कर बैठती है, कभी घरवाली.....!"२०

ऐसा ही एक परिदृश्य दूसरी जगह देखने को मिलता है। देवकी का पति दूसरी शादी कर लेता है। उसका पति दो बच्चों को छोड़कर चला जाता है। वह बेचारी अकेली रह जाती है। जीवन की परिस्थितियों से उसे सामना करना पड़ता है।

देवकी की सास उसे घर से निकालने पर तुली हुई है। पहले सास ने एक कमरा खाली करवाया, फिर नीचे का पूरा पोरसन खाली करवा लिया और किराए पर लगा दिया। जब देवकी पति के साथ रहती थी, तब उसे कोई कष्ट नहीं था।जब से पति छोड़कर चला गया, तब से वह बहुत दुखी रहने लगी। देवकी ने निश्चय किया-

"अब या तो नीचे पाताल में या फिर अपने बल-बूते अपने पाँवों पर। इस बीच इसकी नौकरी भी पक्की हो गई।"२१

देवकी ने हिम्मत से काम लिया। अब उसे बहुत घमन्ड आ गया। वह किसी से नहीं डरती है। उसने अपने वाल कटवा लिए है। वह भड़कीले रंग के सलवार सूट पहनती है। उसका घर क्या है? एक छोटा सा कमरा है। उसने एक फ्लैट दिल्ली में ले रखा है। वह बनकर भी तैयार हो गया, पर वह वहाँ नहीं जाती है। उसकी सास अब उसके मुँह नहीं लगती थी। वह अब मन की शांति के लिए मन्दिर भी जाने लगी थी।

अगर नारी हिम्मत करें तो वह बड़े से बड़े तूफानों को भी रोक सकती है, इसलिए जब भी विपत्तियाँ आएँ उस समय धैर्य से काम लेना चाहिए। घबराकर अपना सन्तुलन नहीं खोना चाहिए, इसलिए कहा गया है-

"गम की अन्धेरी रात में, दिल को न बेकरार कर।
सुबह जरूर आएगी, सुबह का इन्तजार कर ।।"

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में हमें तद्‌युगीन भारत के सामाजिक परिदृश्य का दिग्दर्शन होता है। उनके अनेक उपन्यासों में सामाजिक परिदृश्य का सुन्दर वर्णन द्रष्टव्य है-

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' -

सामाजिक परिस्थितियों के अन्तर्गत भीष्मजी ने समाज के विभिन्न वर्गो के माध्यम से समाज की मौजूदा परिस्थिति में क्रमागत आचार और नैतिक धारणा में वैषम्य और विरोध की ओर संकेत करने का प्रयास किया है। इस कारण नीलू नीलिमा नीलोफ़र में कुछ लोगों द्वारा अन्तर्जातीय प्रेम विवाह को प्रोत्साहन और कुछ लोगों द्वारा इसका विरोध किया गया है। इसमें लेखक ने प्रेमियों के प्रेम को बखूबी दर्शाया है। प्रेम विवाह को प्रोत्साहन तथा प्रेम की खातिर माता-पिता का परित्याग का चित्रण दिखाया गया है। काफिर की औलाद को अपने पेट में पालना एवं स्त्री की दयनीय दशा का चित्रण बखूबी किया गया है।

नीलू मुसलमान लड़की है। सुधीर हिन्दू लड़का है। वे दोनों हॉस्टल में पड़ते है। सुधीर कला भवन की पढ़ाई के अन्तिम वर्ष में है, जबकि नीलू तीसरे वर्ष में है। उनका प्रेम कुछ ही महीनों पहले शुरू हुआ है। वे एक दूसरे से घनिष्ट प्रेम करते हैं। वे सायंकाल तक घूमते रहते हैं। हॉस्टल में रहने से उनके ऊपर कोई भी बाउन्डेशन नहीं था। उन्हें जिधर अच्छा लगता है, वे उधर चल देते हैं-

"किसी-किसी दिन अँधेरा गहरा जाने तक यह 'आवागमन' का सिलसिला चलता रहता। इसमें किसी और चीज़ का दखल नहीं था, न परिवारों के रख-रखाव का, न अपने-अपने परम्परागत संस्कारों का, न जमाने के तनावों-तल्ख़ियों का, सर्वोपरि महत्व था तो केवल एक-दूसरे के प्रति गहरे लगाव का, एक-दूसरे के निकट रह पाने का। अँधेरा बढ़ जाने पर उनके हाथ एक-दूसरे को छूने लगते, हाथ छू जाते तो तन-बदन में बिजली दौड़ जाती। एक बार तो साहस करके सुधीर ने नीलू का हाथ अपने हाथ में ले लिया। नीलू ने हाथ छुड़ाने की हल्की-सी कोशिश की, पर फिर वहीं पड़ा रहने दिया।"२२

नीलू का भाई हमीद था। वह बहुत ही खराब व्यक्ति था। पुलिस वालों ने नीलू के घरवालों को बताया कि वे अपनी बेटी से मिल ले। बेटी अगर सुधीर के साथ जाना चाहे तो सुधीर के साथ रहे। अगर वह अपने पिता के साथ जाना चाहे, तो पिता के पास रहे। पुलिस ने नीलू के हाथ में फैसला छोड़ दिया और नीलू जो फैसला लेगी, वह मान्य होगा। नीलू सुधीर के साथ जाना पसन्द करती है। उसके अब्बा का अपनी बेटी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है-

"और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू हमारे लिए मर गई।"२३

नीलू का विवाह हिन्दू रीति से सुधीर के साथ हो गया। वे दोनों अच्छी तरह से रहने लगे, लेकिन नीलू के भाई हमीद से नीलू की खुशी नहीं देखी जा रही थी। वह नीलू को लेने उसके घर पहुँच जाता है। वह हमीद के साथ जब अपने घर के लिए रवाना होती है, तब हमीद उसको ड्योढ़ी में ले जाता है-

"मुझे यहाँ से ले चलो, हमीद भाई ! मैं बच्चा नहीं निकलवाऊँगी। मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।"

"बच्चा तो तुम्हें निकलवाना होगा। एक काफ़िर का तुख़म तुम्हारे अंदर पल रहा है। उसे

अपने पेट में लिए हुए तुम हमारे घर के अंदर दाख़िल नहीं हो सकती।"२४

नीलिमा नीलू की सहेली है। वह अल्ताफ़ से प्रेम करती है। वे खुली विचारधारा के प्रेमी हैं। नीलिमा के पिता वकील है। वह अल्ताफ़ के साथ बाँहों में बाँहें डालकर घंटो भर घूमती रहती है। उसकी दादी को नीलिमा का बाँहों में बाँहें डालकर घूमना पसन्द नहीं है। उसके पिता बेटी की शादी अल्ताफ़ से करवाना चाहते है। वे अपनी बेटी की खुशी चाहते है। नीलिमा के पिता का अपनी माँ के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है-

"माँ, अगर नीलिमा उस लड़के के साथ शादी करना चाहे तो मैं उसे रोकूँगा नहीं।"

दोनों एक-दूसरे को चहते हैं। मैं उस लड़के को जानता हूँ। उसका बाप मेरा दोस्त है। बड़े शरीफ़ लोग हैं। मुझे तो इसमें कोई बुराई नज़र नहीं आती, बहुत अच्छा ख़ानदान है। खाते-पीते लोग है।"२५

दादी माँ यह सुनकर हैरान हो जाती है और कहती है-

"औरत को ज़िंदगी में सहारा चाहिए। इस वक्त उसे तुम्हारा सहारा है। जहाँ ब्याह कर जाएगी, वहाँ उनके सहारे रहेगी। भगवान न करे, बेटा, अगर उसके घरवाले ने कुछ मुद्दत बाद दूसरा ब्याह रचा दिया तो नीलिमा का क्या होगा? मुसलमानों में दो-दो ब्याह होते नहीं है क्या? आजकल ज़माना कैसा जा रहा है, इसे देख नहीं रहे हो? उसका आदमी दूसरा ब्याह कर ले तो लड़की कहाँ जाएगी? क्या अपने माँ-बाप के घर लौट आएगी?"२६

'कड़ियाँ' -

सामाजिक वातावरण में सृष्टि करते समय लेखक ने पात्रों की आर्थिक स्थिति, व्यवहार, रहन-सहन, शिक्षा-संस्कृति, स्त्री के शोषण को ध्यान में रखकर रचना की है। पात्रों के संघर्षो से जूझता हुआ दिखाने के लिए उनके चारों ओर वातावरण के अंकन में काफी सफलता अर्जित की है। समाज के विभिन्न वर्गो के माध्यम से समाज की मौजूदा परिस्थिति में क्रमागत आचार और नैतिक धारणा में वैषम्य और विरोध की ओर संकेत करने का सफल प्रयास किया है। 'कड़ियाँ' उपन्यास में उच्च, निम्न और मध्य वर्ग के परिवारों के सामाजिक रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार भावनाओं आदि के विस्तृत चित्र उभरकर आए है। ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्मसाहनी के **'कड़ियाँ'** उपन्यास में देखने को मिलता है।

समाज में कुछ परिवार ऐसे भी हैं, जहाँ आपसी सामंजस्य न हो पाने की वजह से पारिवारिक वातावरण कितना प्रदूषित हो जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप सारी जिन्दगी बेतरतीब हो जाती है। ऐसा ही महेन्द्र और प्रमिला की जिन्दगी में भी होता है। दोनों के आपसी मनमुटाव का असर बच्चे पर और उन पर किस तरह पड़ता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

"घर लौटकर महेन्द्र देर तक पप्पू के बारे में सोचता रहा। घर का यह वातावरण बच्चे के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। जिसकी माँ घर की चारदीवारी के बाहर न देख सकती हो, वह क्या सीखेगी? घर में बू फैली रहती है, कहीं कोई तरतीब नहीं, करीना नहीं। जिधर देखो कचरा, जिधर देखो

कवरा। दो-दो पैसे का नमक मँगवाती फिरती है। सारा वक़्त पप्पू की नाक बहती रहती है और हाथों पर मैल जमी रहती है। एक बात को पकड़कर इसने कोहराम खड़ा कर रखा है। सभी औरतें घर का काम करती हैं, बच्चों की और घरवाले की देखभाल भी करती हैं, पर उनके दिमाग में धुंध नहीं छाई रहती है। महेन्द्र ने नज़र घुमाकर प्रमिला की ओर देखा, जो रसोई के काम से निबटने के बाद, बैठक में कालीन पर ही लेटी बेसुध-सी सो रही थी।"२७

वास्तव में घर-परिवार को इस स्थिति में पहुँचाने का श्रेय महेन्द्र को ही था। अगर महेन्द्र सुषमा के प्रेमपाश में न फंसता, तो शायद प्रमिला इतनी बेसुध न हो पाती। प्रमिला पूरे दिन अपने बारे में और महेन्द्र के बारे में सोचती रहती है। उसे लगता है कि जैसे उसका कुछ लुटा जा रहा है, जिसे वह बचा नहीं पा रही है। जहाँ ऐसी मनः स्थिति हो, वहाँ उन्नति और प्रगति की बात सोची ही नहीं जा सकती । परिवार में जब शांति हो, हर्षोल्लास का वातावरण हो तभी यह सब संभव हो सकता है।

प्रमिला अपने पिता नारंग के यहाँ रहने लगती है। उसके पिता एक वकील है। पिता का व्यवसाय चलता नहीं है। माँ मर चुकी है। पिता ने बेटी से कहा कि बेटी! जब तक मैं जिंदा हूँ, तब तक तुझे रोने की जरुरत नहीं है। तू कुछ कमाई कर ले, क्योंकि मैं दो जून की रोटी भी नहीं जुटा पा रहा हूँ। तुझे क्या खिलाऊँगा? प्रमिला का भाई भी आर्थिक स्थिति से परेशान है। परशुराम सोचता है कि मैं चाहूँ भी कि अपनी बहिन का घर तोड़ने से बचा लूँ। दिल्ली जाने आने में १०० रुपए खर्च होंगे। वह रुपए कहाँ से आएँगे। वह दिल्ली जाने का ख्वाब अपने दिमाग में से निकाल देता है।

प्रमिला अपने पति के द्वारा छोड़ने के कारण वह पागल सी रहने लगी थी। उसका जिधर मन आता है, वह वहाँ चल देती है। वह गलियों में घूमती रहती है। प्रमिला के पिता ने कहा कि बेटी तुम चाहो तो महेन्द्र की बहिन से मिल लो; शायद वह कुछ रास्ता निकाल ले। महेन्द्र की बहिन ने नाटे के घर में एक रात के लिए दोनों को मिलवा दिया और कहा कि आगे तुम लोग जो उचित समझो वह करो। कमरा बहुत अच्छी तरह सजाया गया था-

"कमरे के अंदर कदम रखते हुए प्रमिला को लगा, जैसे ऐसा ही कोई कमरा उसने पहले भी कहीं देखा है, जिसके बीचोंबीच दो पलँग जोड़कर बिछाए गए थे और दोनों के पीछे गोल-सी तिपाई रखी थी, पर उस कमरे में तो जगह-जगह फूलों के गजरे लटक रहे थे और हवा उनकी महक से बोझिल हो रही थी। तब वह यों अकेली कमरे में दाख़िल भी नहीं हुई थी, दस सहेलियाँ, हँसती-बतियाती उसे कमरे तक छोड़ने आई थीं।"२८

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जब समाज में औरत की स्थिति शोचनीय हो जाती है, तब वह पागल की तरह फिरकर अपना जीवन बर्बाद कर लेती है, लेकिन प्रमिला ने अपने पैरों पर खड़ा होकर स्वयं को गिरने से बचा लिया और पिता के ऊपर बोझ न डालकर एक स्वाभिमान स्त्री का परिचय दिया।

'कुंतो' -

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर मनुष्य कई तरह के कार्यकलाप, व्यवहार, रहन-सहन, आपसी संबंध सीखता है। आज समाज में कुछ लोग संयुक्त परिवार में रहना पसंद करते हैं। कुछ लोग विदेश में पढ़ने के लिए जाते हैं और वहाँ से किसी लड़की से प्रेम करने लगते हैं। हमारे समाज में कुछ ऐसे विरले भी लोग हैं, जो अपनी मौसेरी बहिनों से प्रेम करते हैं। ऐसा ही एक परिदृश्य **'कुंतो'** उपन्यास में देखने को मिलता है।

जयदेव की एक मौसेरी बहिन है। उसका नाम सुषमा है। जयदेव और सुषमा दोनों ही बचपन में साथ खेले हैं और साथ पलकर बढ़े हुए हैं। वह सुषमा को बहुत चाहता है। उस पर अपना आधिपत्य भी जमाता है। जयदेव के अध्यापक प्रोफ़ेस्साब हैं। जो अंग्रेजी पढ़ाते हैं। वह प्रोफ़ेस्साब का शिष्य रहा है। वे जयदेव को बहुत पसन्द करते हैं। जयदेव उनका प्रिय शिष्य रहा है। जब प्रोफ़ेस्साब और जयदेव सुबह टहलने जाते हैं, तब प्रोफ़ेस्साब ने जयदेव से पूछा कि तुमने अपने विवाह के बारे में कुछ सोचा है। क्या तुम्हें कोई लड़की अच्छी लगी है? जयदेव ने कहा कि लाहौर में मेरी मुलाकात किसी से नहीं हुई? पर मुझे मेरी मौसेरी बहिन बहुत अच्छी लगती है -

"मेरी मौसी की बेटी मुझे अच्छी लगती है और तो मैं किसी को नहीं जानता। बचपन में हम लोग एक साथ खेला करते थे, तभी से वह मुझे अच्छी लगती है।"

"अभी भी अच्छी लगती है?" प्रोफ़ेस्साब ने बड़े सहज-स्वाभाविक लहजे में पूछा।

"हाँ, प्रोफ़ेस्साब, अभी भी अच्छी लगती है। हमारे परिवार एक-दूसरे के बड़े निकट हैं। हम सब एक साथ खेल बड़े हुए हैं - मैं, मेरा छोटा भाई, हमारी मौसेरी बहिनें.........."२६

भीष्मसाहनी पात्रों के जीवन में उतार-चढ़ाव, द्वंद, संघर्ष और बदलते हुए परिवेश में उनके चरित्र का श्याम, श्वेत रंग का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता से करते हैं। गिरीश के बदले हुए चरित्र को भीष्मजी कुछ इस प्रकार व्यक्त करते हैं-

"और वह दिन निर्जन, सपाट मैदान में लहलहाते उद्यान जैसा सावित हुआ था। गिरीश को एक-एक फूल,एक-एक पेड़-पौधे, एक-एक पक्षी का ज्ञान था। उनसे जुड़े श्लोक कंठस्थ थे। यही नहीं, उस दिन सुषमा की जाँध पर अपना सिर रखे उसने एक चौपाई की रचना की थी जिसमें सुषमा के लंबे केशों की चर्चा थी और उनमें उलझी कवि की कल्पनाओं की जो अपने जीवन में, सुषमा से मिलने से पहले, केवल कंकड़-पत्थर बटोरता रहा था। सुषमा मंत्रमुग्ध-सी सुनती रही थी। ऐसे मौकों पर जब गिरीश बोलता है तो प्रेमी की भाँति,भावनाएँ व्यक्त करता है तो कवि की भाँति और जो अपने में लौट जाता है तो योगी की भाँति वह बुदबुदाई थी।"३०

भीष्म जी गिरीश के ही चरित्र का विकृत रुप आगे चलकर कुछ दूसरे रंग में ही प्रस्तुत करते हैं। गिरीश का संबंध उसके मौसेरी बहन से था, जिसके पास गिरीश प्रत्येक शनिवार को जाता है। ऐसे ही एक दिन सुषमा जब उसे जाने से रोकती है,तब गिरीश के तेवर बदल जाते हैं -

''जो कुछ आप कर रही हैं, इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। आप घर लौट जाइए।"

बैग को थामे, सुषमा का हाथ काँप-सा गया। गिरीश की आवाज़ में वही ठंडापन, वैसी ही कठोरता थी जैसी पहले सुनने को मिलती थी जब वह अपनी दिनचर्या के बारे में अपना कोई निर्णय

सुनाया करता था। फ़र्क इतना था कि तब उसके होठों पर हल्की-सी मुस्कान रहती थी जबकि इस समय उसका चेहरा पत्थर की तरह कठोर हो रहा था, केवल पैनी आँखें, निश्चेष्ट-सी, सुषमा की ओर देखे जा रही थी।

सुषमा ने बैग छोड़ दिया। एक क्रंदन-सा उसके कंठ से फूट निकला और वह बिलखती हुई उठ खड़ी हुई और बिलखते हुए ही घर की ओर लौट पड़ी। साड़ी का पल्लू पहले की ही भाँति ज़मीन पर-घिसट रहा था, आँखें ऐंची हो रही थीं और बालों की लटें माथे पर झूल रही थी।"३१

कुंतो में उच्च, मध्यम और निम्न वर्ग के पात्रों के परिवार का वातावरण भी चित्रित किया है। एक निम्न वर्ग के पात्र के परिवार का वातावरण देखिए-

"हीरालाल के घर की ड्योढ़ी में घुप्प अँधेरा था, टाट का पर्दा हटा दो, तो पीछे छोटा-सा आँगन खुलता था, जिसमें हीरालाल की पत्नी, जानकी रसोई करती थी और आँगन के पार एक कोठरी थी जिसमें हीरालाल की बुढ़िया माँ ज़मीन पर बैठी रहती थी। हीरालाल छोटे को एक बार अपने घर के अन्दर ले गया था, तब छोटे को बड़ी झेंप हुई थी। गली में, पानी से भरी छल छलाती बाल्टी उठाए चला आ रहा था, शरीर पर केवल जाँघिया पहने, दुबला-पतला हीरालाल।"३२

इसी के विपरीत है, उच्च वर्ग के परिवारों का रहन-सहन और उनके आचार-व्यवहार। इस वर्ग के ऐशो-आराम के कुछ के उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

"लालाजी का श्रीनगरवाला दोमंज़िला घर, ज्यादा वक़्त खाली पड़ा रहता था। गलियारे में और आगे चले जाओ तो एक अँधेरा तिकोन कमरा बाएँ हाथ को पड़ता था। यह घर का सबसे अलग-थलग कमरा था। घर के लोगों को यह कमरा हमेशा भूला रहता था। सीढ़ियाँ उतरकर बीच की मंजिल पर आओ तो आप एक चौड़े बरामदे में उतरोगे, लगभग आठ फुट चौड़े बरामदे में। बरामदे में उतरने पर बाँए हाथ अलग से एक छोटा-सा 'उपघर' बना था जिसे 'ऐनेक्सी' कहते थे।"३३

'तमस'-

सामाजिक वातावरण के अंतर्गत भीष्म साहनी ने उस समय के समाज के विभिन्न वर्गो के माध्यम से समाज की मौजूदा परिस्थिति में क्रमागत आचार और नैतिक धारणा में वैषम्य और विरोध की ओर संकेत करने का सफल प्रयास किया है। उस कारण 'तमस' उपन्यास में उच्च, निम्न, मध्यवर्ग के परिवारों के सामाजिक रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार, भावनाओं आदि के विस्तृत चित्र उभरकर आए हैं। ये चित्र संम्पूर्ण सामाजिक वातावरण को सजीव रूप में पाठक के सामने उपस्थित कर देते हैं। तीनों वर्गो के रहन-सहन, आचार-विचार और मनोवृत्ति में कितना अंतर है। निम्न वर्ग के एक व्यक्ति का चित्रण उल्लेखनीय है-

"लैम्प की रोशनी सबसे पहले उसके फटे जूतों पर पड़ी। कुछ पता नहीं चलता था कि वे स्लीपर थे या जूते थे। जूतों के लगभग छः इंच ऊपर खाकी पतलून शुरू होती थी, उसके ऊपर खाकी

कोट जिस पर गाँधी और नेहरू के जितने तमगे जरनैल को मिल सकते थे उसने लगा रखे थे, साथ में रंगीन थिगलियाँ, डोरे, सूखे हुए बुढ़ऊ शरीर पर मुचड़ा हुआ खाकी कोट लटक रहा था। ऊपर खसखस दाढ़ी नुची-खुची और सबसे ऊपर मूंगिया रंग की पगड़ी।"३४

निम्न वर्ग के लोगों पर हमेशा से ही अत्याचार होता आया हैं। उसे रोटी, कपड़ा और मकान की लड़ाई के साथ-साथ न जाने कितने प्रकार के जुल्म सहने पड़े है। शैतान लोग औरतों पर बुरी नजर डालते है। औरत को जबरदस्ती कहीं से उठा ले जाकर उससे निकाह कर लेते है। प्रकाशो अन्दर ही अन्दर तड़पती रहती है और मुँह से कुछ भी नहीं बोलती है। वह अपने पिता व पति अल्लाह रक्खा दोनों से डरती है-

"प्रकाशो को सचमुच अल्लाहरक्खा ने घर पर बैठा लिया था। गाँव में फिसाद होने पर माँ-बेटी पहाड़ी की तलहटी पर लकड़ियाँ चुन रही थीं। अल्लाहरक्खा पहले से ही दो-तीन आदमियों के साथ कहीं घात लगाए बैठा था। मौका देखकर वे भागते हुए आए और अल्लाहरक्खा रोती-चिल्लाती प्रकाशो को उठाकर ले गया था। पहली रात को प्रकाशो अँधेरी कोठरी में पड़ी रही, पर दूसरे दिन अल्लाह रक्खा ने उसके साथ निकाह कर लिया और एक नया जोड़ा भी उसके लिए कहीं से ले आया। दो दिन तक प्रकाशो भूखी-प्यासी पड़ी रोती रही और पथराई आँखों से उसके घर की दीवारों को देखती रही थी, पर तीसरे दिन उसने लस्सी का कटोरा पी लिया था। वास्तव में अल्लाहरक्खा की नजर प्रकाशो पर बहुत दिनों से थी और प्रकाशो को भी इसका भास मिलता रहता था। गाँव में आते-जाते, झरने पर पानी भरते, कपड़े-धोते, अल्लाहरक्खा आवाजें कसा करता था और छिप-लुककर उस पर कंकड़ भी फेंका करता था। वह जानती थी कि अल्लाहरक्खा कंकड़ फेंकता है। प्रकाशो अपने पिता से शिकायत नहीं करती थी, क्योंकि वह जानती थी कि उसका बाप कुछ नहीं कर सकेगा, वह अल्लाहरक्खा से भी डरती थी और अपने बाप से भी डरती थी।"३५

निर्धनता दुनिया का सबसे बड़ा अभिशाप है। वह क्या-क्या नहीं करा देती है। नत्थू जानवर की मरी लाश से चमड़ा निकालकर अपना गुजर-बसर करता था, लेकिन मुरादअली के दबाब के सामने उसे सुअर मारने का भी काम करना पड़ता है। मुरादअली से रोज काम करना पड़ता था, नत्थू कैसे इन्कार कर देता? जब कभी शहर में घोड़ा मरता, गाय या भैंस मरती है, तब मुरादअली खाल दिलवा दिया करता था।

अठन्नी-रुपया मुरादअली को भी देना पड़ता,मगर खाल मिल जाती। उच्च या मध्यम वर्ग के व्यक्ति ऐसे वातावरण में बिल्कुल नहीं रहते। उनकी भव्य कोठियाँ है। ऐशो-आराम के लिए ढ़ेरों दौलत है। मोटर से चलते है। जितने खर्चे में मजदूर वर्ग पूरे महीने का घर खर्च चलाता है; शायद उतना भी खर्च उच्च्व वर्ग के सिगरेट और शराब के लिए एक बैठक के लिए भी नहीं होता। रिचर्ड एक डिप्टी-कमिश्नर है। वह बंगले में रहता है, लेकिन उसके अन्दर गरीबों पर दया नाम की कोई चीज नहीं है। लीजा रिचर्ड की पत्नी है। वह अपना समय काटने के लिए शराब का सहारा लेती है। शाहनबाज और रघुनाथ दोनों ही निम्न वर्ग के लोगों से घृणा करते हैं। वे धनी थे। दोनों की दोस्ती भी इसलिए है कि वे धनी हैं अर्थात् उच्च्वर्ग के लोगों में लाते है। रघुनाथ की पत्नी ने शाहनबाज से अपने पुस्तैनी मकान से जेबरों

का डिब्बा मँगवाया था -

"शाहनवाज फिर भावुक हो उठा, उसे फिर गर्व का भास हुआ। हजारों के जेवर की चाभियाँ भाभी मेरे हाथ में दे रही है, मुझे अपना समझती है तभी तो।"

भाभी चाभियाँ खनकाती ले आई।"३६

उच्चवर्ग के लोगों में लाला लक्ष्मीनारायण अमरीकी प्रिंसिपल हरबर्ट आदि लोग इसी श्रेणी के प्रतीक थे।

भीष्म साहनी की अनेक कहानियों में सामाजिक परिदृश्य का सुन्दर वर्णन अधोलिखित है।

'आवाजें'-

कन्या एक रत्न है और वर उस रत्न का उपभोग करने वाला है। कन्या एक न्यास है, दान की वस्तु है और वर स्वामी है आदाता है। कन्या परिवार का भार है, वर महोदय बड़ी कृपा करके उस गृहस्थ को भार-मुक्त करने वाले है।

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' जैसी बात कहने वाली संस्कृति का कन्या के प्रति यह भाव क्या उसकी नारी पूजा की भावना से मेल खाता है। भारतीय संस्कृति का ढोल पीटने वाले घरों में नारी (आज भी) पैर की जूती है, घर की उपभोग सामग्री है। सप्तवादी भाँवरों के समय दिए गए सारे वचन वर कन्या द्वारा भुला दिए जाते हैं। आज दहेज का जो स्वरुप हो गया है। उससे तो यह भारतीय समाज के मस्तक पर कलंक का घिनौना टीका प्रतीत होता है। कन्या का जन्म होते ही पिता को क्षय रोग लग जाए। वह उचित अनुचित स्रोतों से कन्या के हाथ पीले करने की बात सोचने लगे तो यह स्थिति उस समाज के लिए घोर लज्जा की बात है। आज कन्या की सारी योग्यताएँ सिर्फ एक अयोग्यता पर बलिदान हो रही हैं। सौभाग्य सेज अब उसकी चिता बन जाने को तैयार है -

"सौभाग्य-रात्रि की सेज बनी है,
नव बन्धुओं की चिता आज
किस पूर्वजन्म का पाप भोगता है,
कन्या का पिता आज
वह पत्नी, वधू नहीं घर की,
पत्तल है, जूठी थाली है
नारी-पूजन को नई विधा
भारत ने खोज निकाली है"

दहेज लोलुपता ने विवाह में से कन्या को लगभग गायब कर दिया है। दृष्टि अब वधू पर नहीं दान-दहेज पर है। भारतीय संस्कृति कहती है-

" अर्थो हि कन्या परकीय रत्व"

चड्ढा के बेटे का जब विवाह हुआ था, तब घर में लड्डू बाँटे गए थे। सभी लोग चड्ढा के बेटे के विवाह

में शामिल हुए थे। कुछ ही दिन पहले चड्ढा की नव विवाहिता बहू जल कर मर गई।

शहर में पथराव शुरु हो गया। चड्ढा की जो दुकान थी। उस पर पथराव शुरु हो गया। पीछे से आवाज़ आने लगी। अगर किसी ने चड्ढा की मदद की तो अच्छा नहीं होगा। दुकान पर पत्थर पड़ रहे थे। लोगों का गुस्सा भड़कता ही जा रहा था-

"मुर्दाबाद! मुर्दाबाद!

दहेज का कीड़ा मुर्दाबाद!

मुर्दाबाद

चड्ढा मुर्दाबाद! मुर्दाबाद !"३७

चड्ढा के बेटे को पुलिस पकड़कर ले गई है। पुलिस लड़के से पूछताछ करती है। इधर लड़की के माता-पिता ने लोगों से कहा-

"कोई भी आदमी चड्ढा की मदद न करे। उसके हाथ खून से रंगे हैं। उसने एक मासूम लड़की की जान ले ली है।"३८

मुहल्ले के लोगों ने कहा कि हमें उसका चेहरा याद है। व्याह के बाद-

"हमारे घर आई थी। इतनी बच्ची-सी तो थी। उससे तो किनारी-गोटेवाला दुपट्टा ही नहीं संभाला जा रहा था। बड़ी हँसमुख। हमने कहा, गाना सुनाओ तो झट से गाने लगी। बड़ी-जल्दी हिलमिल गई। यहीं बैठे-बैठे हमारे बच्चों के साथ 'गीटे' खेलने लगी थी। पता नहीं, अंदर खाते क्या हुआ है, अंदर की भगवान जाने।"३९

उसके लड़के से जब पूछताछ की गई, तब सही पता चला-

"नहीं, नहीं, पकड़ा गया है। बाप-बेटा दोनों पकड़े गए हैं और यह भी गलत है कि लड़की खुद जल मरी थी। तफतीश में लड़के ने कबूल किया है कि उसने बहू के कपड़ों को आग लगाई थी। उसने पीछे से आकर लड़की के सिर पर मिट्टी का तेल उँड़ेला था। तफतीश के दौरान पुलिस अफसर ने उससे पूछा कि पीछे से आकर तेल क्यों उँड़ेला तो वह लड़का बोला- पहले वह समझी, मैं उस पर पानी डाल रहा हूँ। वह हँसने लगी थी। जब उसे तेल की बू आई तब भी नहीं समझी। कचहरी में खड़ा लड़का नीम पागल-सा लग रहा था।"४०

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समाज में नारी की स्थिति सबसे दयनीय बनती जा रही है। दहेज एक ऐसा अभिशाप है, जो नारी का शोषण कर रहा है। अगर नर तथा नारी दोनों को बराबरी की शिक्षा दी जाएँ। नर के समान नारी को बराबरी से आत्मनिर्भर बनाया जाएँ तो दहेज की समस्या का अन्त हो जाएगा और नर एवं नारी में नारायण का वास होगा ।

<u>'वाङ्चू'-</u>

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। चाहे वह व्यक्ति विदेशी हो या स्वदेशी। समाज में रहकर मनुष्य कई तरह के कार्य सीखता है। वह विदेश में अपने कुछ उद्‌देश्य के लिए आता है। वह अपने उद्‌देश्य को तो पूरा करता है। साथ ही किसी से प्रेम संबंध भी बनाता है। उसी का एक चित्रण भीष्म साहनी ने अपनी कहानी **'वाङ्‌चू'** में दिखाने का प्रयास किया है।

वाङ्‌चू एक ऐसा बौद्ध भिक्षु है, जो चीन से भारत बौद्ध धर्म को जानने, समझने और महाप्राण की जन्मस्थली में रहकर उसके संबंध में कार्य करने आता है। वाङ्.चू जब श्रीनगर आता है तो उसकी मुलाकात उसके एक मित्र से होती है। मित्र की एक मौसेरी बहिन थी। वह वाङ्‌चू से प्रेम करती थी। वाङ्‌चू भी उससे प्रेम करता था। दोनों ने एक दूसरे को उपहार भी दिए थे। लड़की का नाम नीलम था। नीलम लाहौर में पढ़ती थी, जबकि वाङ्‌चू को हफ्ते भर बाद सारनाथ जाना था। भाई ने अपनी मौसेरी बहिन नीलम से मना भी किया था कि तुम्हें इस प्रेम में नहीं पढ़ना चाहिए। वाङ्‌चू रात को अक्सर पेड़ के नीचे टहला करता था। भाई ने क्या देखा -**"पर आज वह अकेला नहीं था। नीलम भी उसके साथ ठुमक-ठुमक चलती जा रही थी। मुझे नीलम पर गुस्सा आया। लड़कियाँ कितनी जालिम होती हैं। यह जानते हुए भी कि इस खिलवाड़ से वाङ्‌चू की बेचैनी बढ़ेगी, वह उसे बढ़ावा दिए जा रही थी।"४१**

सभी लोग जब खाने की मेज पर खाना खाने बैठते हैं, तब नीलम उसका काफी मजाक उड़ाया करती थी। वह कोई न कोई मजाक उसके साथ करती रहती थी। वाङ्‌चू उसकी भाषा को अच्छी तरह से समझ नहीं पाता था, पर कुछ-कुछ समझता भी था। नीलम खाने की मेज पर कहने लगी-

"बनारस जाकर हमें भूल नहीं जाइएगा ! हमें खत जरुर लिखिएगा। और अगर किसी चीज की जरुरत हो, तो संकोच नहीं कीजिएगा।"४२

नीलम के भाई ने वाङ्‌चू और नीलम के प्रेम संबंध को बहुत रोकने की कोशिश की,लेकिन वह उन दोनों को रोक नहीं सका।

भीष्मजी के नाटकों में सामाजिक परिदृश्य का वर्णन द्रष्टव्य है-

'कबिरा खड़ा बजार में' -

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर मानव को समाज के नियमों का बड़ी कठिनाई से पालन करना पड़ता है। अगर कोई पति अपनी पत्नी को पराए मर्द के हाथ में सौंप देता है तो समाज ऐसे पति की निन्दा करता है। समाज में उसका रहना मुश्किल हो जाता है। ऐसा ही एक परिदृश्य **'कबिरा खड़ा बजार में'** देखने को मिलता है।

कबीर एक जुलाहा है। लोई उसकी पत्नी है। उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि तुम्हारी शादी तुम्हारे पिताजी ने क्या जबरदस्ती की है? लोई ने कहा हाँ! मेरे पिताजी ने मेरी शादी जबरदस्ती की है। मैं साहूकार के लड़के से प्रेम करती थी। हम दोनों परस्पर विवाह करना चाहते थे। जब मेरे प्रेमी को पता चला कि मेरी शादी तुमसे हो रही है, तब

उसने मुझसे कहा कि तुम भागकर मेरे घर आ जाओ। कबीर ने कहा कि क्या तुम वास्तव में उसके पास जाना चाहती हो। लोई ने कहा हाँ। कबीर का लोई के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है-

"अनरथ तो हुआ ही, पर इसका दोस हम तुम्हें थोड़े ही दे रही हैं। बापू ने व्याह कर दिया तो हम यहाँ चली आई।"४३

कबीर ने कहा कि तुम अपनी समस्त सामग्री लेकर अभी चली जाओ। बाहर पानी अभी कम है। तुम चलो मैं तुम्हें वहाँ छोड़ देता हूँ। लोई ने कहा कि माँ क्या कहेगी, बापूजी क्या कहेंगे, पति ने कहा कि तुम जाओ। मैं कह दूँगा, हमने उसे भेजा है।

लोई अपना समस्त सामान लेकर थोड़ी ही दूर गई और लौट आई। उसने कहा कि हमें कहीं नहीं जाना है। हम तुम्हारे पास ही रहेंगे। उसने कहा कि तुम्हारा मन कैसे पलट गया? लोई का कबीर के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है-

"मन पलट गया। हमें लगा, हम तेरे ही संग रहेंगी, तू जोर-जबरजस्ती नहीं करता। तू खरा आदमी है। तुझे देखा नहीं होता तो और बात थी ।"४४

अगर मैं चली जाती, तो सारा समाज तुम्हारे ऊपर उँगली उठाता। तुम्हें बुरा-भला कहता, जबकि कसूर तुम्हारा नहीं है। कसूर मेरा है और परिणाम तुम्हें भुगतना पड़ता है। कबीर का लोई के प्रति यह कथन अधोलिखित है -

"हमने सोचा कि लोग तुझे बुरा-भला कहेंगे, तेरी जगहँसाई होगी और मैं वहाँ बैठी चुपचाप सुना करुँगी? तुझे लोग बाँधकर गंगा में फेंकेंगे और मैं साहूकार के चबूतरे पर खड़ी देखा करुँगी?"४५

'माधवी' -

संसार में सृष्टि की रचना, गृहस्थ धर्म के पालन आदि विभिन्न दृष्टियों से पुरुषों के साथ ही नारी का विशिष्ट महत्व है। हमारे समाज में नारी को देवी के रुप में पूज्यनीय माना गया है। उसे देवी **सती अनसूया, सावित्री, सीता, मीरा** आदि ही के रुप में प्रतिष्ठित किया गया है। मनुस्मृति में कहा गया है **'जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं।'**

नारी पुरुष की सहचरी है। वह पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वाली है। उसका सुख-दुख में साथ देने वाली है। हमारे भारतवर्ष में जितने भी महापुरुष हुए है। उनके पीछे हमेशा एक स्त्री का हाथ रहा है। नारी ममता, त्याग, सेवा, कर्तव्यपरायण की वस्तु है। वह हमेशा अपने पुत्र, पिता, पति का कल्याण चाहती है। किसी जगह वह माँ, बहन या पत्नी है।

अगर हम इतिहास पर नजर डालें तो विद्योत्तमा के कारण कालिदास, रत्नावली के कारण तुलसीदास, लोई के कारण कबीर, पन्नाधाय के कारण उदयसिंह, जीजाबाई के कारण शिवाजी, रानी लक्ष्मीबाई के कारण बुन्देलखण्ड, आम्रपाली के कारण सम्राट अजातशत्रु, जोधाबाई के कारण अकबर, कस्तूरबा के कारण गाँधीजी कितने महान बने।

ये ऐसी अधिकांश वीरांगनाएँ हैं, जिन्होंने अँधेरे में अकेले रहकर पुरुषों के लिए पुरुषार्थ का दीप जलाया।

हमारा देश ऐसा है जहाँ स्त्री और पुरुष साथ-साथ पाँच हजार वर्षों से रह रहे हैं। स्त्री हमेशा यही प्रयास करती है कि पति चाहे जैसा हो, लेकिन वह अगले जन्म में उसी पति की कामना करती है।

लेकिन अब नारी को अबला मानकर उसका शोषण किया जा रहा है। **डॉ० राम मनोहर लोहिया** स्त्री मुक्ति के मसीहा माने जाते हैं। डॉ० लोहिया ने शायद समाज में नैतिकता के पहरेदारों और नगर पिताओं को चेतावनी देते हुए साफ कहा था-

"जो लोग अपने घर की बहू और बेटियों को ड्योढ़ीयों के बाहर पैर निकालने पर पावंदी लगाते देखे जाते हैं, वे ही लोग चुपके से कस्बे की अँधेरी कोठरी में नाजायज हमल गिरवाते अक्सर पकड़े जाते है।"

आज नारी को जब स्कूलों में पढ़ने के लिए भेजा जाता है। वहाँ भी उसका शोषण होता है। अभी १५ अगस्त, २००७ की एक सत्य घटना है कि एक लड़की स्कूल में कार्यक्रम में भाग लेने के लिए गई। वहाँ स्कूल के सभी अध्यापकों ने रात भर उसके साथ बलात्कार किया। ऐसे ही कुछ परिदृश्य साहनी जी के नाटक **'माधवी'** में देखने को मिलते हैं।

माधवी राजा ययाति की पुत्री है। वह अच्छे गुणों वाली युवती है। वह अपने पिता की आज्ञाकारी पुत्री है। गालव विश्वामित्र का शिष्य है। गालव जब ययाति के पास आठ सौ अश्वमेधी घोड़े लेने को जाता है। राजा ययाति ने गालव से कहा कि मैं महल छोड़कर वन में आया हूँ। गालव ने कहा कि मैं गलत जगह आ गया हूँ। मैं दानवीर राजा ययाति के पास आया था। ये सब बातें सुनकर राजा ययाति के आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। राजा ययाति अपनी पुत्री माधवी को गालव को दान में दे देते हैं। ययाति बोले कि माधवी विशिष्ट लक्षणों वाली युवती है। इसे तुम किसी भी राजा को सौंप दोगे तो तुम्हें आठ सौ अश्वमेधी घोड़े मिलेंगे। माधवी पिता की आज्ञा व गालव के संकल्प को पूरा करने के लिए अपने यौवन की आहूती दे देती हैं। वह तीन राजाओं के रनिवास व विश्वामित्र के आश्रम में रहकर उन्हें एक-एक चक्रवर्ती पुत्र देती है। समाज में परपुरूष के साथ सम्बन्ध स्थापित करना अभिशाप माना जाता है। जबकि माधवी यह पिता के यश तथा गालव के संकल्प को पूरा करने के लिए कर रही थी। ययाति ने माधवी को गालव को दान में दे दिया। वह गालव को मन ही मन चाहने लगी थी। वह अपने मन में यह विचार करती है कि जब गालव की गुरूदक्षिणा पूरा हो जाएगी, तब मैं गालव को अपना पति बनाऊँगी। जब गालव ने माधवी को देखा, तब माधवी का शरीर शिथिल पड़ गया था। वह बुढ़ा सी गई थी, जिससे गालव को वह अनाकर्षित लग रही थी। गालव ने कहा कि तुमने अनुष्ठान क्यों नहीं किया? माधवी ने कहा कि मैंने सोचा अब तुम्हारे पास जा रही हूँ, अब तुमसे क्या छुपाना? गालव ने कहा कि तुम मुझे बहुत पंसद हो। बस तुम अनुष्ठान कर लो। गालव बोला कि माधवी अब हम और तुम पूरी तरह स्वतन्त्र है। माधवी गालव से बोली कि क्या तुम मुझे छोड़कर जा रहे हो? तुम तो आदर्श और कर्तव्यनिष्ठ के पुजारी थे। तुम रूप के मोही कब से हो गए हो-

"तुमने केवल एक ही व्यक्ति से प्रेम किया है और वह अपने आपसे। पर मैं, तुम्हें पहचानते हुए भी नहीं पहचान पाई। मैं सारा वक्त यही समझती रही कि गालव सच्ची साधना और निष्ठावाला

व्यक्ति है। तुम भी गुरूजनों जैसे ही निकले, गालव..............।"४६

आज प्रायः पुरुष वाह्य रूप का मोही है। जिस प्रकार भौंरा पराग का रस ले लेता है, फिर उस पर भटकता भी नहीं है। उसी प्रकार आजकल के पुरुष अगर स्त्री सुन्दर है, तो उसके पीछे-पीछे भागेंगे, उसको पाने के लिए दाने डालेंगे। अगर किसी कारण बस स्त्री की सुन्दरता पहले जैसी न रहे, तो वह दूसरी स्त्रियों पर लट्टू हो जाते है। इस प्रकार पुरुष प्रधान समाज में स्त्री को कभी भी सुख नहीं मिला है। वह न तो स्वयं अपना निर्णय ले सकती है और हमेशा पिता ने जिस घर में ब्याह दिया, उसी को अपना धर्म समझकर सहती रहती है।

भीष्म साहनी ने अपने 'तमस' उपन्यास में सांस्कृतिक परिदृश्य का अनेक स्थानों पर वर्णन किया है।

'तमस' -

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह अच्छे और बुरे संस्कार ग्रहण करता है। कुछ अच्छे संस्कार उसे जन्म से ही ईश्वर की सीखता है। जैसी उसकी संगति होती है। उसको वैसा ही रंग लगता है। कुछ बालको को अपने-अपने देश को काटने पर तुले हुए होते है। ऐसा ही एक परिदृश्य 'तमस' उपन्यास में देखने को मिलता है।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह अच्छे और बुरे संस्कार ग्रहण करता है। कुछ अच्छे संस्कार उसे जन्म से ही ईश्वर की कृपा से मिलते हैं। कुछ संस्कार वह समाज में रहकर ही सीखता है। जैसी उसकी संगति होती है। उसको वैसा ही रंग लगता है। कुछ बालकों को अपने देश के लिए मर मिटने की सत्प्रेरणा मिलती है। कुछ लोग अपने देश को काटने पर तुले हुए होते हैं। ऐसा ही एक परिदृश्य **'तमस'** उपन्यास में देखने को मिलता है।

बख्शीजी जाति से मुसलमान है, लेकिन उनके मन में कांग्रेस के प्रति निष्ठा व प्रेम है। वे कमेटी में सचिव की हैसियत से कार्य करते है। वे बुजुर्ग, तजुर्बेदार, शान्त एवं गम्भीर स्वभाव वाले व्यक्ति है। वे गाँधीजी के अहिंसा वृति से प्रभावित है। जातीय भेदभाव को मिटाने के लिए वे विशेष कार्य करते हैं। वे हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रतीक हैं। उनकी देह तो शिथिल है, लेकिन मन उत्साही उमंगों से भरा हुआ है। वे कुछ लोगों को छोड़कर सभी के प्रिय है। वे आजादी के लिए कुछ भी करने को तैयार है। उन्होंने जनजागरण का अभियान छेड़ रखा है। कभी प्रभातफेरी के माध्यम से तो कभी शहर की नालियों की सफाई के माध्यम से। वे प्रभातफेरी व तामीरी का कार्य करने के लिए सबसे आगे आते हैं। वे झाडू हाथ में लेकर आँगन बुहारते हैं, नालियाँ रास्ते साफ करते हैं। इस पात्र के माध्यम से लेखक ने स्पष्ट किया है कि जातीय पार्टी महत्वपूर्ण है। देश की एकता एकनिष्ठ व बन्धुत्व भावना से अगर देश के लिए कार्य किया जाएँ तो बाह्य शक्तियों को दहशत मिल सकती है।

बख्शीजी ने जब यह सुना कि अंग्रेजों ने सुअर मरवाकर मस्जिद की सीढ़ियों पर रख दिया है। उन्हें यह सुनकर बहुत बुरा लगता है।

बख्शीजी के अन्य साथी जो देश की भक्ति के लिए नालियाँ साफ कर रहे थे। जब अन्य साथियों ने उस घटना को देखा, तब सभी साथी डर के मारे भाग जाते हैं, लेकिन कुछ उनके पास ही खड़े रहे। एक साथी ने कहा कि सुअर मस्जिद की सीढ़ियों पर पड़ा है। हमें इससे क्या लेना देना है? कहीं मामला बिगड़ न जाएँ, इसलिए हमें यहाँ से भाग जाना चाहिए। बख्शीजी को यह बात सुनकर काफी दुख हुआ। वे यह जानते थे कि अगर यह सुअर यहाँ पड़ा रहा तो स्थिति और गम्भीर हो सकती है।

बख्शीजी ने मेहता से कहा कि अगर हमने ऐसी स्थिति अपनी आँखों से न देखी होती तो हम भाग सकते थे। सुअर के यहाँ पड़े रहने से विवाद बढ़ेगा। दंगा होगा। भाई-भाई को खाने को दौड़ेगा। मेरे मन में यही आता है कि दंगा न हो। फिसाद न बढ़े। एक जलती हुई सीख पूरे साम्राज्य को बर्बाद कर देगी। हमें जलती हुई आग को बुझाना है, न कि उसको भड़काना है। बख्शीजी ने मेहता की बातों में विश्वास नहीं किया और कहने लगे -

"मेहताजी, आप क्या कह रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी," फिर कश्मीरीलाल और जरनैल को सम्बोधन करके बोले, "तुम आ जाओ मेरे साथ।" और वे गली में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगे।"४७

तभी बख्शीजी और जरनैल उस सुअर को उठाकर सड़क के पार ईंटों से छिपा देते हैं। बख्शीजी चाहते तो उस सुअर को वहीं पड़ा रहने देते, लेकिन उनके अन्दर अपने देश के प्रति प्रेम कूट-कूट कर भरा हुआ था। वे जानते थे हो सकता है कि विवाद पड़ने पर मुझे कुछ भी हो जाएँ, लेकिन उन्होंने अपनी जान जोखिम में डालकर सुअर को वहाँ से हटा दिया।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह तरह-तरह की चीजें सीखता है। कहाँ क्या हो रहा है? उनका रहन-सहन कैसा है? उनके कौन-कौन से रीति रिवाज है? उनके माता-पिता किस देवी व देवता को मानते हैं? ऐसा ही सांस्कृतिक वातावरण भीष्मजी ने प्रस्तुत किया है। हिन्दू संस्कृति की सघन कामना का परिचय दिया है।

साप्ताहिक सत्संग, वानप्रस्थजी की प्रार्थना करना, उपनिषद् के श्लोक, गीता के श्लोक सब के लिए मंगल कामना करना यह हमें संस्कृति सिखाती है। ऐसे कार्यक्रमों में भाग लेने से मन को जो शान्ति मिलती है। उसका बखान करना मुश्किल है। मानव संसार के विषयों के चक्कर में इतना फँस जाता है कि उसे दो मिनट की भी शान्ति नहीं मिलती है। वह जब थककर चूर हो जाता है और उसके अन्दर घबराहट पैदा होती है। तभी वह ईश्वर का ध्यान करता है। बुरे दिन में मानव हाय राम-राम कई बार पुकारता है। जब मानव सुखी होता है, तब वह ईश्वर को भूल जाता है। जब उसके ऊपर विपत्तियों का पहाड़ टूटता है, तब वह ईश्वर की आराधना, सत्संग मन्दिर में जाता है। संत कबीर की निम्नलिखित पंक्तियाँ इसका प्रमाण है -

"दुख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोइ।
जो सुख में सुमिरन करे, तो दुख काहे होइ।

अगर मानव सुख की घड़ियों में ईश्वर को याद करे, तो दुख उसके सामने भटक नहीं सकता है। वानप्रस्थजी सदैव एक साप्ताहिक सत्संग करते हैं। वे सत्संग के बहुत बड़े ज्ञाता है। उन्हें श्लोक इतने

कंठस्थ हैं कि उनके सामने कोई टिक नहीं सकता है। उन्होंने सभा के सभी सदस्यों को श्लोक कंठस्थ करवा दिए हैं। जब सत्संग समाप्त होता है, तब वे मन्त्रों और श्लोकें का पाठ करते हैं। वे ऐसा श्लोक पढ़ते हैं, जो स़भी के लिए कल्याणकारी है। वे वेदी पर बैठे ही बैठे, आँखें बन्द कर, हाथ जोड़ कर, सिर नवाकर मन्त्रों का उच्चारण करते हैं -

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग भवेत् ।"४८

ये ऐसे श्लोक है, जिनमें भारतीय संस्कृति का सार पाया जाता है। कुछ गीता के श्लोक पढ़े गए,

"आपूर्यमाणम् अचल प्रतिष्ठम्............।"४६

कुछ शान्ति के मन्त्र गूँजे -

"ऊँ द्यौ शान्ति पृथ्वी, शान्तिरापः ।

शान्तिरौषधयः, शान्ति वनस्पतिः ।।"५०

यह शान्ति का पाठ वातावरण में फैलकर ऐसा लग रहा था। जैसे कि चारों ओर शान्ति व्याप्त हो। कण्ठों से निकलने वाली ध्वनि घर-घर तक पहुँच रही थी। मन्त्रों के वाद एक प्रार्थना की गई, जो समस्त जगत् के कल्याण के लिए की गई थी। सभी लोग ताली बजा बजाकर गा रहे थे -

"सब पर दया करो भगवान ।

सब पर कृपा करो भगवान ...."५१

वानप्रस्थीजी हमेशा यह चाहते थे कि हमारे अन्दर हीन भावना न आने पाएँ। जब लोग भगवान की आरती करते हैं, तब उसमें एक पंक्ति आती कि **"मैं मूरख खल कामी।"** शब्दों का प्रयोग होता है। वानप्रस्थीजी को ऐसे शब्द पसन्द नहीं थे। उन्होंने उन शब्दों को हटवा दिया।

भारत एक बहुत बड़ा देश है। इसको **'सोने की चिड़िया'** कहा जाता है। यहाँ हर युवक अपने देश के लिए मर मिटने को तैयार है। भारत की स्थिति दयनीय इसलिए रही। भारत के लोगों ने कभी भी समय पर काम नहीं किया। शहर में दंगा मचा हुआ है। भारत के लोग आराम से बैठे हुए हैं। जब देश पर ज्यादा खतरा मँडराने लगता है, तब उनका झपका खुलता है। हमें भी कुछ करना चाहिए।

शहर में जब दंगा हो गया, तब गाय के अंग काटकर फेंके जाने लगे। हिन्दुओं को दंगों से डर लगने लगा था। मुसलमान असलाहा इकट्ठा कर रहे थे। रणवीर ही एक ऐसा देशप्रेमी था, जो हिन्दुओं की रक्षा के लिए मर मिटने को तैयार था। रणवीर छोटे कद का था। उम्र कम थी, लेकिन जोश बहुत भरा हुआ था। देवव्रत उसके गुरु थे। जब कभी हिन्दुओं पर विपत्ति आती है, तब देवव्रत मुसलमानों यानि शत्रुओं से कैसे उनका सामना करना है? वह सिखाते थे। देवव्रत लाठी चलाना, खंजर चलाना, सामने से युद्ध करना, छिपकर आक्रमण करना ये सारी कलाओं को वे म्लेच्छों के खिलाफ तैयारी के समय सिखाते थे। रणवीर साहसी बहुत था। पूरी लगन व मेहनत के साथ वह युवाओं की कमेटी में भाग लेता था। देवव्रत उसे बहुत समझते थे, लेकिन देवव्रत ने कहा कि जब तक तुम हमारी दीक्षा रुपी परीक्षा में पास नहीं होंगे, तब तक हम तुम्हें आज़ादी की पंक्ति में शामिल नहीं कर सकते है। रणवीर को यह दीक्षा अधिक कष्ट दे

रही थी। जब देवव्रत ने रणवीर को एक मुर्गा काटने के लिए दिया, तब रणवीर का चेहरा एकदम पीला पड़ गया व पसीना आने लगा। देवव्रत ने रणवीर के एक थप्पड़ मार दिया, जिससे उसको कै हो गई। रणवीर की घबराहट शान्त हो गई, तभी देवव्रत धीमी आवाज़ में बोला -

"एक और अवसर तुम्हें दिया जाता है। जो युवक एक मुर्गी को नहीं मार सकता वह शत्रु को कैसे मार सकता है।"

पाँच मिनट तुम्हें और दिए जाते हैं। इस बीच भी अगर तुम इसे नहीं काट पाए तो तुम्हें दीक्षा नहीं दी जाएगी।"५२

रणवीर अपने अन्दर घबराने लगा। वह मुर्गी को मारने में सफल हो गया। वह गर्दन को पूरी तरह से काट नहीं पाया, लेकिन खून की धार निकाल ली थी, जिससे देवव्रत रणवीर से बहुत प्रसन्न हो गए-

"उठो रणवीर!" मास्टरजी ने कहा और पास आने पर रणवीर की पीठ थपथपा दी।"शाबाश! तुम में दृढ़ता है, संकल्प शक्ति है, भले हीं हाथ में ताकत अधिक नहीं है। तुम दीक्षा के अधिकारी हो।" कहते हुए मास्टरजी जमीन की ओर झुके और पत्थर की सिल पर पड़े खून से अपनी उँगली भिगोकर रणवीर के माथे पर खून का टीका लगा दिया।"५३

रणवीर ने देश के लिए असलाहा इकट्ठा किया। तेल को गरम करने के लिए एक कड़ाही की जरुरत थी। कड़ाही कहीं नहीं मिल रही थी। रणवीर एक हलवाई की दुकान में कड़ाही उठा लाया। हलवाई गुस्सा होता कि तुम यह कड़ाही किधर ले जा रहे हो। रणवीर ने हलवाई की गर्दन में हल्का सा चाकू मार दिया, जिससे खून की धार बहने लगती है। रणवीर अपने मन में विचार करता -

"मारना मुश्किल नहीं है। इसे मैं आसानी से कत्ल कर सकता था। हाथ उठाया और बस। हाँ, लड़ना मुश्किल होता है। वह भी जब अगला आदमी मुकाबला करने के लिए खड़ा हो जाए, पर छुरा घोंपकर मार डालना आसान काम है, इसमें कोई मुश्किल नहीं।"५४

यह कार्य करने से रणवीर के अन्दर देशप्रेम की भावना दिखाई देने लगी। कहाँ मुर्गी मारने से डर रहा था? अब चाकू चलाने में उसे ज्यादा अच्छा लग रहा है।

भीष्म साहनी ने अपनी कहानी 'नौसिखुआ' में सांस्कृतिक परिदृश्य का सुन्दर वर्णन द्रष्टव्य है।

भारत अनेक धर्मों का देश है। यहाँ प्रथाएँ, रीति-रिवाज, परम्पराएँ विद्यमान है। हमारे यहाँ सभ्यता, संस्कार व संस्कृति को सर्वोपरि महत्व दिया गया है। हमारे समाज में गुरु और शिष्य का रिश्ता एक पवित्र रिश्ता है। गुरु शिष्य को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है और शिष्य गुरु के चरणों में अपना जीवन समर्पण कर अपना जीवन तेजस्वी एवं महान बनाता है। जैसे श्रीराम व श्रीकृष्ण ने बनाया।

भारत में अनेक ऐसे गुरु भक्त हुए। जिन्होंने अपनी जान की परवाह न करके अपने गुरु के लिए प्राण न्यौछावर कर दिए। जैसे- फतेहसिंह तथा जोराबर सिंह।

हमारे मध्ययुगीन इतिहास की मिश्रित संस्कृति को एकदम नजर अंदाज़ कर दिया जाता है और केवल उन्हीं बातों को सामने रखा जाता है, जो दूसरों के धर्म के बारे में घृणा का प्रसार करें। इस दौरान विकसित होने वाली संस्कृति में गंगा-जमनी तहजीव एक नए रुप से समाज में उभरी है। मिला-जुला, खान-पान, रहने का तरीका, इसी दौरान, संस्कृति के विभिन्न पहलू विकसित हुए।

मनुष्य के जीवन में जितने भी माने हुए संबंध हैं। पति-पत्नी, भाई-बहन, पिता-पुत्र आदि वे सभी काल्पनिक है, मोहवश है, किन्तु गुरु शिष्य का संबंध वास्तविक संबंध है, क्योंकि यह वास्तव में जीवात्मा परमात्मा का संबंध है। व्यक्ति के सारे माने हुए संबंध मोह पैदा करते हैं, उसे बंधन में डालते हैं, किन्तु गुरु-शिष्य का संबंध शिष्य का मोह तोड़कर उसके हृदय में छिपे हुए शिवस्वरूप को प्रकट कर देता है, उसे मुक्त कर देता है, जैसे भक्तमाल में गुरू-शिष्य का सम्बन्ध है।

भीष्म साहनी ने अपनी कहानी में गुरू और शिष्य के सम्बन्ध को दर्शाया है। गुरू के प्रति शिष्य की कैसी श्रद्धा व आस्था होनी चाहिए। उसको दिखाया गया है। एक शिष्य अपनी गुरू की भक्ति की खातिर अपने प्राण तक जोखिम में डाल देता है।

वह एक ऐसा गुरुभक्त है। वह जानता है कि मेरे गुरु का सिर व धड़ सड़क पर पड़ा हुआ है। मैंने उनके शव को देख लिया है। गुरु का शव दर्दनाक स्थिति में पड़ा हुआ है? मैं इसे छोड़कर नहीं जा सकता हूँ ।

मुसलमानों ने गुरु तेग बहादुर की हत्या कर दी थी। शिष्यों को भय था कि अगर मैंने इनके धड़ व सिर को छुआ तो मेरी जान भी जा सकती है। शिष्य ने अपनी जान की परवाह न करके उनके कटे हुए शीश को अपनी चादर में लपेटकर ले गया।

गुरु तेग बहादुर के दूसरे शिष्य का नाम लखीदास था। वह एक व्यापारी था। जहाँ गुरुमहाराज का धड़ पड़ा हुआ था। वह वही रहता था। वह अपने मन में यह सोच रहा था कि मैं गुरु का धड़ उठाकर कहाँ रखूँगा? चारों ओर हिंसा व दंगे छाए हुए थे। अगर मैं धड़ को ले गया, तो मेरी जान भी जा सकती है-

" पर उसने एक तरकीब सोची। माल ढोनेवाला अपना ठेला लिया उसने। उस पर कुछ माल रखा और आँधी के बवंडरों के बीच जा पहुँचा। महाराज के शरीर को उठाया और ठेले पर, माल के बीचोबीच रखा लिया और फिर उसे खींचता हुआ बाहर निकल आया और वहाँ से सीधा अपने घर की ओर चल दिया। देखनेवालों ने समझा, अपना सौदागरी का सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जा रहा है।"५५

लखीदास गुरु का धड़ अपने घर की ड्योढ़ी में ले गया। उसने अपना घर जलाकर गुरु का अन्तिम संस्कार कर दिया। धन्य है ऐसे गुरुभक्तों की गुरु भक्ति, जिन्होंने अपनी जान की परवाह न करके अपने गुरु के प्रति प्रेम को दर्शाया है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि हमारे देश में अनेक ऐसे गुरु भक्त हुए है, जिन्होंने अपने गुरु भक्ति, श्रद्धा व उनके प्रेम की खातिर अपनी जान जोखिम में डाल दी, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव शिवाजी है। गुरुगोविन्द सिंह के सपूत फतेहसिंह तथा जोरावर सिंह है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हमें अपने गुरु की आज्ञा का पालन करना चाहिए। उनके प्रति सच्ची श्रद्धा व भक्ति रखनी चाहिए, क्योंकि गुरु ही हमें **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। वे हमें जीवन की सही दिशा देते है।

कबीरदास जी ने गुरु को सबसे ऊँचा स्थान दिया है। उन्होंने कहा है

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागौं पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय।।

कबीर ने गुरु को भगवान से बड़ा बताया है। अगर भगवान रुठ गए तो गुरु बचाने वाले हैं अगर गुरु रुठ गए, तो कोई बचाने वाला नहीं है, इसलिए कहा गया है-

ये कैसा है जादू, समझ में न आया ।
तेरे प्यार ने गुरुवर हमको जीना सिखाया ।

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में हमें तद्र्युगीन भारत के राजनीतिक परिदृश्य का दिग्दर्शन होता है। उनके 'तमस' उपन्यास में देश के राजनीतिक परिदृश्य का कई स्थानों पर चित्रांकन हुआ है।

तमस- रामदास कांग्रेस का सदस्य था। वह प्रभातफेरी के समय आजादी के गीत गाता था। कांग्रेस के सदस्य रात को यह सलाह कर जाते थे कि सुबह जल्दी आएँगे, लेकिन सुबह हो गई। वह अभी तक नहीं आया था। कांग्रेस के सदस्य कह रहे थे-

''जब तनख्वाह बढ़वानी थी तब तो रात के ११ बजे भी बुलाओ तो आ जाता था। अब तनख्वाह बढ़ गई है, उसे क्या गर्ज पड़ा है कि वक्त पर आएँ ।'' ५६

मेहता व अजीत कांग्रेस के सदस्य थे। मेहता हमेशा बन ठनकर रहते थे। उन्हें अपनी तारीफ सुनने का बहुत शौक था। अजीत हमेशा उसकी तारीफ करता था। मेहता स्वयं अपनी तारीफ करते हुए अजीत से बोले-

"उन दिनों मोटरों के अड्डे पर खड़ा था तो एक आदमी दूसरे से पूछने लगाः 'क्या वह जवाहर लाल नेहरु खड़ा है। और मेहता जी ने दोनों हाथों से अपनी गाँधी टोपी का जाविया थोड़ा टेढ़ा करते हुए कहाः ''बहुत लोगों को मुगालता हो जाता हैं।"५७

'कुंतो'-

"हाँ भइया, वही हीरालाल। कुछ ही दिन पहले जेल से छूटा था। यह जलसों की मनादी करता है। हमने इसे मना भी किया था कि कैंटोनमेंट में जलसे की मनादी करने न जाएँ, सरकार इसकी इज़ाज़त नहीं देगी। हमारा ख़्याल था इसे पुल पार करने पर ही गिरफ़्तार कर लेंगे, पर पुल पार करने पर किसी ने कुछ नहीं कहा और यह मनादी का ढोल बजाता आगे बढ़ता गया। सारी कचहरी रोड लाँघ गया, फिर भी इसे किसी ने कुछ नहीं कहा। हम संतुष्ट हो गए, पर जब मैसी गेट के पास पहुँचा तो इसका ताँगा रोक लिया गया और इसे ताँगे पर से नीचे उतार लिया गया," कहते हुए छोटे का चेहरा पीला पड़ता जा रहा था।"५८

"शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,

वतन पर मरने वालों का यही बाक़ी निशाँ होगा।"५९

'मय्यादास की माड़ी' -

"पहली बार जब लेखराज ने हज़ारों-हज़ार सैनिकों का लश्कर देखा तो उसका दिल झूम-झूम उठा था। इतना बड़ा लश्कर भी हो सकता है! दूर क्षितिज तक उठे हुए नज़े-भाले, हवा में लहराते रंग-बिरंगे ध्वज और झंडे, रंगारंग वस्त्रों में घुड़सवार, कहीं हरे तो कहीं लाल रंग के कमरबंद और उनमें लटकती तलवारें, हवा में बजते नगाड़ों की गूँज, पैदल फ़ौज के दस्ते-दूर-दूर तक फैले हुए, मानो कोई सैलाब उठा हो जो आगे बढ़ता जा रहा हो। लेखराज भी उस विराट अभियान का एक अंग है, इस विचार से ही उसका दिल हिलोरें लेने लगता था।"६०

"हर लड़ाई मात्र शक्ति का प्रदर्शन भी नहीं होती, हर लड़ाई एक संघर्ष होता है, जिसके साथ कहीं स्वार्थ तो कहीं हित और कहीं आदर्श जुड़े होते हैं।"६१

भीष्म साहनी ने अपने अनेक नाटकों में राजनीतिक परिदृश्य का वर्णन किया।

'कबिरा खड़ा बजार में'

"बादशाह सलामत ने ख्वाहिश ज़ाहिर की है कि काशी में अपने निवास के दिनों वह कबीरदास नाम के फ़कीर से मिलना चाहते हैं।"६२

"हम चाहते हैं कि तुम हमारे यहाँ दिल्ली में आओ, हम वहाँ तुम्हारी मुलाकात शेख तक्की साहिब से कराएँगे।

उमरा से

इन मज़हबी लोगों की गुफ्तगू सुनकर हमें बड़ा लुत्फ आता है। हम अक्सर दो मौलवियों के बीच कोई बहस छेड़ देते हैं। फिर उन्हें चोंचें लड़ाते देखते रहते हैं। खूब मज़ा रहता है।

वज़ीर से

शेख तक्की कहा करते हैं कि हिन्दू लोग भी यह मानकर बुत-परस्ती नहीं करते कि बुत ही खुदा है। लाहौल वला कुव्वत! एक पत्थर का टुकड़ा खुदा कैसे हो सकता है! उसके पीछे भी एक फलसफा है।

वज़ीर : जहाँपनाह !

सिकन्दर : उनका कहना है कि बुत एक जरिया है खुदा तक पहुँचने का। क्या समझे?

वज़ीर : हुज़ूर !

सिकन्दर : अब तुम समझो एक फनकार है, तस्वीरें बनाता है। उसके दिल में एक जज्बा उठता है। अब जज्बे का अपना तो कोई रंगरुप नहीं होता, कोई शक्ल नहीं होती, लेकिन वह फनकार रंगों, लकीरों की मदद से उस जज्बे को बयान कर देता है। मतलब कि तस्वीर देखनेवाला उन रंगों और लकीरों को देखते हुए उस जज्बे को पा जाता है जिसे फनकार बयान करना चाहता है। समझे? इसी तरह पत्थर का

बुत अपने आप में खुदा नहीं है, लेकिन उसके जरिए हम खुदा का तसव्वुर कर लेते हैं। ऐसा इन लोगों का कहना है। पर हमें तो, सच पूछो, इन बातों के बारे में सोचकर ही सिर-दर्द होने लगता है।"६३

'माधवी' -

ययातिः - "अब मैं राजा नहीं हूँ, मुनिकुमार, आश्रमवासी हूँ। जिन दिनों मैं पराक्रमी राजा माना जाता था, उन दिनों भी मेरे पास आठ सौ अश्वमेधी घोड़े नहीं थे, इस समय कहाँ होंगे? तुम्हारा आग्रह अनुचित है।"६४

ययाति : "राजज्योतिषियों ने माधवी के लक्षणों की जाँच की है। इसके गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक चक्रवर्ती राजा बनेगा। सुना मुनिकुमार? ऐसे लक्षणों वाली युवती को पाकर कोई भी राजा तुम्हें घोड़े दे देगा। माधवी को पाकर वह धन्य होगा। तुम निःसंकोच इसे ले जाओ।"६५

भीष्म ने अपनी अनेक कहानियों में राजनीतिक परिदृश्य का वर्णन किया।

'झूमर'-

"एक नाटक था, "कुर्सी", तुम्हें याद होगा? उस नाटक पर सरकार ने रोक लगा दी थी।पर हमने वह नाटक अजीब ढंग से खेला। एक जगह खेलते तो फौरन ही बाद, बस में बैठकर अगले शहर जा पहुँचते। वहाँ खेलते और फिर अगले शहर के लिए रवाना हो जाते। पुलिस पीछे-पीछे, हम आगे-आगे" ६६

"साहिबान,यह नमक की पुड़िया है। आज मैंने नमक का कानून तोड़ा है। यह मेरी बापू को छोटी-सी भेंट है। छोटी नदी के किनारे पानी को सुखाकर नमक तैयार किया गया है। वंदे मातरम्!" ६७

'आवाजें'-

"डॉ. मोहकमचंद की दुकान के सामने ढोल बजा, उसके गले में हार डाले गए और 'डब्बू' के इसरार पर जुलूस निकाला गया। जुलूस चुनाव क्षेत्र की तीनों बस्तियों में घूमा। उस दिन बस्ती में दिन भर ढोल बजता रहा, 'डब्बू' अपने पैसों से लड्डू बनवा लाया और मुहल्ले में लोगों को बाँटता रहा, उनका मुँह मीठा करवाता रहा।"६८

'नौसिखुआ'-

"......गुरु महाराज की देह सड़क पर पड़ी थी। सिर अलग, धड़ अलग और किसी में हिम्मत नहीं थी कि उसे वहाँ से उठा सके.....। फिर जोरों की आँधी आई और धूल के बवंडर उठने लगे। इन्हीं बवंडरों के बीच, जैता नाम का एक बहादुर सिक्ख भागता हुआ आया और गुरु महाराज के कटे हुए शीश को पलक झपकते ही उठा लिया और अपनी चादर में छिपाकर बाहर निकल आया। किसी को पता ही नहीं चला.........."६९

'अमृतसर आ गया है' -

"पाकिस्तान बन जाने पर जिन्ना साहिब बम्बई में ही रहेंगे या पाकिस्तान में जाकर बस जाएँगे और मेरा हर बार यही जवाब होता- बम्बई क्यों छोड़ेंगे, पाकिस्तान में आते-जाते रहेंगे, बम्बई छोड़ देने में क्या तुक है।"७०

'वाड्.चू' -

"सिर से पाँव तक उसे घूर कर देखा। उसकी आँखों में संशय उतर आया था। वाड्.चू अटपटा-सा महसूस करने लगा। भारत में पुलिस-अधिकारियों के सामने खड़े होने का उसका पहला अनुभव था। उससे जामिनी के लिए पूछा गया, तो उसने प्रोफेसर तान शान का नाम लिया, फिर गुरुदेव का,पर दोनों मर चुके थे। उसने सारनाथ की संस्था के मंत्री का नाम लिया, शांतिनिकेतन के पुराने दो-एक सहयोगियों के नाम लिये,जो उसे याद थे। सुपरिंटेंडेट ने सभी का नाम और पते नोट कर लिए। उसके कपड़ों की तीन बार तलाशी ली गई। उसकी डायरी को रख लिया गया, जिसमें उसने अनेक उदाहरण और टिप्पणियाँ लिख रखे थे और सुपरिंटेंडेंट ने उसके नाम के आगे टिप्पणी लिख दी कि इस आदमी पर नजर रखने की जरुरत है।"७१

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में हमें तद्‌युगीन भारत के धार्मिक परिदृश्य का दिग्दर्शन होता है। उनके अनेक उपन्यासों में राजनीतिक परिदृश्य दृष्टव्य है-

'तमस'-

"सुनो! सभी हिन्दुस्तानी चिड़चिड़े मिजाज के होते हैं, छोटे-से उकसाव पर भड़क उठनेवाले,

धर्म के नाम पर खून करनेवाले, सभी व्यक्ति बादी होते हैं और सभी सफेद चमड़ीवाली औरतों को पसन्द करते हैं..........!"७२

"धर्म के नाम पर आपस में लड़ते हैं, देश के नाम पर हमारे साथ लड़ते हैं।" रिचर्ड ने मुस्कराकर कहा।

"बहुत चालाक नहीं बनो, रिचर्ड। मैं सब जानती हूँ। देश के नाम पर ये लोग तुम्हारे साथ लड़ते हैं और धर्म के नाम पर तुम इन्हें आपस में लड़ाते हो। क्यों, ठीक है ना?"७३

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र'-

"बच्चा तो तुम्हें निकलवाना होगा। एक काफिर का तुख़्म तुम्हारे अंदर पल रहा है। उसे अपने पेट में लिए हुए तुम हमारे घर के अंदर दाख़िल नहीं हो सकती।"७४

"घर में अल्ताफ़ जब आए तो उसे शेखर कहकर बुलाया करे, ताकि माँ को पता ही न चले कि वह मुसलमान है।"७५

भीष्मसाहनी ने अपनी अनेक कहानियों में धार्मिक परिदृश्य का वर्णन किया।

'झुटपुटा' -

"मेरे घर में दरबार साहिब रखा है ना! एक कमरे में हमने छोटा-सा गुरुद्वारा बनाया हुआ है ना, साई! अब किसी बदमाश को पता चल जाता तो मेरे घर को ही आग लगा देता। अब अपना ही कोई आदमी उन गुंडों को बता देता कि इधर दरबार साहिब रखा है, तो वे मेरे घर को ही आग लगा देते। हम हिंदू तो एक-दूसरे को ही काटते हैं ना!"७६

'आवाजें' -

"कहते हैं, धर्म बदलकर उसने उस औरत के साथ शादी भी कर ली है और अलग से रहने लगा।"७७

उन्होंने अपने नाटक में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का वर्णन किया है।

'कबिरा खड़ा बजार में-

"दिन भर रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय
यह तो खून वह बन्दगी, कैसी खुसी खुदाय"७८
"अल्लाह ताला भी कुछ ऊँचा सुनने लगे हैं क्या?
वाह, वाह मुल्लाजी, जरा और ऊँचा ।
काँकर पाथर जोर करि
मस्जिद लयी चुनाय
ता चढ़ मुल्ला बाँग दे
क्या बहरो भयो खुदाय?"७९

सन्दर्भ संकेत-

१. दैनिक जागरण झाँसी, (१८ अगस्त, २००७) - 'इतिहास का काला अध्याय'-शिवकुमार मिश्र, पृ० सं० ६

२. वही, पृ० सं० ६

३. वही, पृ० सं० ६

४. तमस, भीष्म साहनी, पृ०सं० २३६

५. वही, पृ०सं० २३६

६. वही, पृ०सं० २४०

७. वही, पृ०सं० २४४

८. वही, पृ०सं० २४५

६. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ८३

१०. वही, पृ०सं० ८५

११. बसंती, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२

१२. हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३१

१३. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०५

१४. वही, पृ०सं० १०५

१५. वही, पृ०सं० १०५

१६. वही, पृ०सं० १०६

१७. वही, पृ०सं० १०८

१८. वही, पृ०सं० १०८

१६. वही, पृ०सं० १०८

२०. वही, पृ०सं० १०८

२१. वही, पृ०सं० १२४

२२. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ११

२३. वही, पृ०सं० २२

२४. वही, पृ०सं० ७५

२५. वही, पृ०सं० ७६

२६. वही, पृ०सं० ८०

२७. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६६

२८. वही, पृ०सं० १०५

२६. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २०

३०. वही, पृ०सं० १६३

३१. वही, पृ०सं० २०५

३२. वही, पृ०सं० २१६

३३. वही, पृ०सं० २३६

३४. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

३५. वही, पृ०सं० २४५

३६. वही, पृ०सं० १३२

३७. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२५

३८. वही, पृ०सं० १२६

३६. वही, पृ०सं० १२७

४०. वही, पृ०सं० १२७

४१. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर एवं प्रताप ठाकुर, पृ०सं० २१०

४२. वही, पृ०सं० २१०

४३. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७३

४४. वही, पृ०सं० ७६

४५. वही, पृ०सं० ७५

४६. माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ६४

४७. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५८

४८. वही, पृ०सं० ५६

४६. वही, पृ०सं० ६०

५०. वही, पृ०सं० ६०

५१. वही, पृ०सं० ६०

५२. वही, पृ०सं० ७०

५३. वही, पृ०सं० ७०

५४. वही, पृ०सं० ७४

५५. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १४३

५६. वही, पृ०सं० १६

५७. वही, पृ०सं० १७

५८. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २१७

५६. वही, पृ०सं० २२३

६०. मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२४

६१. वही, पृ०सं० १३३

६२. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ८५

६३. वही, पृ०सं० ६३

६४. वही, पृ०सं० १६

६५. वही, पृ०सं० १८

६६. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५१

६७. वही, पृ०सं० १५६

६८. वही, पृ०सं० ११३

६९. वही, पृ०सं० १४२

७०. अमृतसर आ गया, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २२

७१. भीष्मसाहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना : प्रताप ठाकुर, पृ०सं०-२१७

७२. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ४४

७३. वही, पृ०सं० ४५

७४. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७५

७५. वही, पृ०सं० ७६

७६. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५२

७७. वही, पृ०सं० १२४

७८. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

७९. वही, पृ०सं० ६३

- संदर्भ संकेत

अध्याय - ५

भीष्म साहनी के साहित्य में देश का राजनीतिक परिवेश

५.१ - स्वातंत्र्य पूर्व राजनीतिक परिवेश

५.२ - स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिवेश

५.३ - भीष्म साहनी के साहित्य में देश के राजनीतिक परिदृश्य का स्वरुप

(अ) उपन्यासों में

(ब) कहानियों में

(स) नाटकों में

(द) अन्य में

(५.१) स्वातंत्र्य पूर्व राजनीतिक परिवेश -

स्वातंत्र्य पूर्व हमारे देश के राजनीतिक दलों का एकमात्र ध्येय विदेशी शासकों को खदेड़कर स्वातंत्र्य-प्राप्ति हो सकता था, परन्तु कांग्रेस और सोशलिस्ट पार्टी को छोड़कर अन्य कोई दल इस दिशा में अग्रसर न हो सका, क्योंकि इस समय देश में साम्प्रदायिक दलों का कल्पनातीत विकास हुआ था एवं अशिक्षित जनता पर उनका गहरा प्रभाव था। कांग्रेस के विरुद्ध इन छोटी बड़ी जातियों के विभिन्न दलों के धार्मिक तथा जातीय स्तर के मतमतांतरों को बढ़ावा एवं महत्व देना ही अंग्रेजों की नीति थी। ये दल भारतीय राजनीति के लिए श्रापरुप थे। मुस्लिम लीग के उद्‌भव एवं विकास में शासकों के प्रोत्साहन का कारण कांग्रेस के राष्ट्रीय आन्दोलनों का सुयोजित प्रतिकार करके उन्हें कमजोर बनाना था, इसलिए अंग्रेज सरकार एक मुस्लिम नेता की खोज में थी। सर सैयद अहमद एक ऐसे देशभक्त और राष्ट्रीय नेता थे, जिनका मुसलमान जन-समुदाय पर प्रबल प्रभाव था। अलीगढ़ कॉलेज के प्रिन्सिपाल मि० बेक के प्रभाव तले सर अहमद का विचार परिवर्तन हुआ। उन्होंने मुसलमानों को कांग्रेस से दूर रहने की सलाह दी। सन् १८६३ में उन्हीं की अध्यक्षता में 'म्होमेडन एँग्लो-ओरिएण्टल एसोसिएशन आव् अपर इंडिया' नामक शुद्ध मुस्लिम संस्था की स्थापना हुई। प्रिन्सिपाल बेक इसके एक सेक्रेटरी थे। फिर तो उन्हें बंगाल-विभाजन के प्रखर विरोधी नवाब सलीमुल्लाखान का भी समर्थन प्राप्त हुआ। उदार मतवादी मुस्लिम नेता कांग्रेस में थे और शिक्षित मुस्लिम नेता उच्च सरकारी नौकरियों का ही प्रगति का चिह्न मानते थे। अतः शिक्षा में पिछड़ी हुई मुसलमान जनता के लीगी नेता हमेशा उच्च जमींदार-वर्ग या धनिक वर्ग के लोग ही रहे। सन् १६०६ में एच०एच० आगाख़ान मुस्लिमों का प्रतिनिधि मंडल लेकर लार्डमंटो से मिले और आगाख़ान के नेतृत्व में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। तब इसके मुख्य दो ध्येय थे। पहला ब्रिटिश सरकार की ओर वफादारी की भावना बढ़ाना और दूसरा मुस्लिमों का राजनीतिक अधिकार एवं जाग्रति की प्रगति तथा रक्षा 'सम्माननीय प्रतिनिधित्व' द्वारा प्राप्त करना, परन्तु कांग्रेस की लोकप्रियता, प्रतिभाशाली नेता-गण एवं कार्यक्रमों की सफलता देखकर १६१३ में मि० जिन्ना के नेतृत्व में लीग ने अपने संविधान में परिवर्तन किया, जिसमें देश की प्रवर्त्तमान विचारधारा के अनुकूल स्वायत्त-स्वराज्य-प्राप्ति का आदर्श और उसकी प्राप्ति की रीति-नीति राष्ट्रीय ऐकय की भावना को दृढ़ करने वाली हो यह घोषित किया । यह कांग्रेस के योग से बल-प्राप्ति की लीगी चाल मात्र थी। लीग -कांग्रेस का सहयोग बढ़ा और सन् १६१६ में **'लखनऊ-पैक्ट'** समझौता हुआ। तदनुसार कांग्रेस ने लीगी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की माँग स्वीकार कर ली और लीग ने भी औपनिवेशिक स्वराज्य को अपना ध्येय बना लिया।

अब राष्ट्रीय आन्दोलनों ने जन-आन्दोलनों का स्वरुप ले लिया था। जलियांवाला बाग-हत्याकांड के बाद लीग ने कांग्रेस व गाँधीजी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन, खिलाफत आन्दोलन एवं पंजाब में मार्शल-ला के विरोध को मान्य रखा, परन्तु फूट डालकर राज्य करने की शासकों की नीति तथा प्रेरणा से नागरिक असहयोग आन्दोलन के समय ही जबलपुर में साम्प्रदायिक दंगे हुए और चौरा-चौरी की दुर्घटना हुई। राष्ट्रीय ऐक्य की संगठित शक्ति को तोड़ने के लिए सरकार हर कीमत पर लीग की पीठ ठोंक कर उसके कार्यक्रमों और माँगों का समर्थन करने लगी। लीग भी मौखिक रीति से कुछ ऊपरी विचार-भेद के अतिरिक्त कभी सरकार के सीधे संघर्ष में नई आई। सन् १६२७ में लीग-कांग्रेस में साइमन-कमीशन पर मतमतांतर उपस्थित हुए और १६२८ में **'आलपार्टीज मुस्लिम कान्फरन्स'** में नेहरु रिपोर्ट

अस्वीकृत हुई। इसको लेकर लीग में भी फूट व मतमतांतर उठ खड़े हुए। सन् १६३४ में लीग पुनः संगठित हुई और १६३७ तक राष्ट्रीयता एवं प्रजातंत्र का समर्थन करती रही। अक्टूबर १६४७ में लखनऊ में लीगी सम्मेलन के सभापति-पद से मि० जिन्ना ने कहा- **"मुस्लिम लीग भारत में संपूर्ण प्रजातंत्रीय स्वायत्त सरकार के समर्थन के लिए हैं।"**१ परन्तु नीति-परिवर्तन के लक्षण भी इसी व्याख्यान में प्रकट हुए। 'थोड़ी-सी सत्ता' प्राप्त 'बहुसंख्यक मतावलम्बी लोगों को **'अंगेज सरकार के वारिस'** बताकर आग उगलते हुए कहा - **" हिन्दुस्तान हिन्दुओं के लिए है। ये हैं हिन्दू और इनकी सरकार है हिन्दू सरकार ।"**२ इसका कारण था १६३७ के प्रांतीय चुनावों में कांग्रेस की अभूतपूर्व विजय और लीगी तथा अन्य दलों की अप्रत्याशित लीग जिन्हें अपने सूबे मानती थी, उनमें भी कांग्रेसी राष्ट्रीय मुस्लिम चुने गए। नेहरूजी के अनुसार यह लीगी विचार-परिवर्तन भारतीय मुस्लिमों के विचार परिवर्तन का प्रतीक था। साथ ही लीग पर मुस्लिम युवक-वर्ग का प्रभाव व दवाब था, जिसे मि० जिन्ना भी अमान्य नहीं कर सकते थे। प्रांतीय कांग्रेस राज के अत्याचारों की लीगी फरियादें बढ़ती गई और **'साम्प्रदायिक हिन्दू संस्था'** के रूप में **'रंग बदलती कांग्रेस'** की निन्दा होने लगी। हरिपुरा कांग्रेस के अध्यक्ष सुभाषचंद्र बोस ने सन् १६३८ को राष्ट्र की एकता कायम करने के लिए मुसलमानों से समझौता करने की घोषणा की, पर इसका लीग पर कोई प्रभाव न पड़ा। उल्टे सरकारी प्रेरणा से माँगें बढ़ाते हुए **'खाकसार'** व **'मुस्लिम नेशनल गार्डज'** द्वारा हिंसक दंगों से देश भर में आतंक फैलाने लगी। राजनीतिक कारणों से कांग्रेस के आदेश पर प्रांतीय कांग्रेसी सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया। मि. जिन्ना ने इसे मुस्लिमों के **'मुक्ति दिवस'** के रूप में मनाने की घोषणा की।

सन् १६४० के लाहौर अधिवेशन में लीग ने देश के बँटवारे तथा **'मुस्लिम राज्य पाकिस्तान'** की माँग प्रस्तुत की। लीग के अतिरिक्त साम्यवादी दल, हिन्दू महासभा आदि दलों का सरकार को समर्थन था ही। कांगेस में भी चक्रवर्ती राजगोपालचारी जैसे नेता विश्वयुद्धकालीन संकट में अंग्रेज सरकार को सहायता देना लीग की माँग को स्वीकृत करना चाहते थे। सरकार की सर्वदलीय सहयोग की आड़ में क्रिब्स-मिशनों की असफलताओं के बाद कांग्रेस ने गाँधीजी के नेतृत्व में **'भारत छोड़ो'** प्रस्ताव बम्बई में ८ अगस्त, १६४२ को मंजूर किया। कांग्रेसी नेताओं को जेल में बन्द कर दिया। मि. जिन्ना कों अपनी स्थिति दृढ़ करने का अवसर मिला। अब मि. जिन्ना ही लीग बन बैठे थे। इस लीगी तानाशाह की सुविदित नीति थी सरकार की हर बात का समर्थन करना और गाँधीजी तथा कांग्रेस की नीतियों की असफलता एवं अल्पसंख्यकों पर होने वाले काल्पनिक एवं असत्य भय तथा अत्याचारों का हौआ खड़ा करना था। मि. जिन्ना **"कांग्रेस हिन्दू बहुसंख्यकों का साम्प्रदायिक दल है।"** और **"इस्लाम खतरे में है"**। का राग अलापने लगे। मि० जिन्ना को इन नाजी नीति-रीति की प्रवृत्तियों का अनुसरण करते देखकर नेहरुजी को बहुत आश्चर्य एवं क्षोभ हुआ, परन्तु अब अंग्रेज सरकार ने परिवर्तित परिस्थितियों में भारत को स्वायत्त शासन देने का आश्वासन देना प्रांरभ किया। पर बहाना यह बताया कि भारतीयों में काफी फूट एवं मतमतांतर हैं, उनका कोई सम्मिलित कार्यक्रम नहीं है तथा उनके भारत छोड़ने से अल्पसंख्यक मुस्लिमों का हिन्दुओं के हाथों विनाश हो सकता है। इसी के विरुद्ध तो मुस्लिम लीग और मि० जिन्ना आवाज़ उठा रहे हैं। लीग को प्राप्त इस सरकारी समर्थन की वजह से सरकार-परस्त नवाब, नाइट्रस, खानबहादुर आदि। अनेक मुस्लिम अपने विशाल समर्थक दल-दल के साथ समूह में लीग में शामिल हुए। अब लीग

शक्तिशाली दल था।

उधर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी बदल चुकी थीं। हिटलर की सेनाएँ, पीछे हट रही थीं। ब्रिटिश सरकार विश्व के नशे में थी। 'पाकिस्तान की माँग बढ़ती जा रही थी। मार्च-अप्रैल, १९४५ में सभी कांग्रेसी नेता जेल से मुक्त हुए। मई १९४५ में जर्मनी की सम्पूर्ण पराजय हुई। अमरीका ने जापान के नागासाकी और हिरोशिमा पर महाविनाशक परमाणु बम फेंके। १५ अगस्त, १९४५ को जापान ने भी शरणागति को स्वीकार किया। ब्रिटेन में हुए युद्धोत्तर चुनावों में चर्चिल सरकार का पतन हुआ और लेबर पार्टी विजयी हुई। नए ब्रिटिश प्रधानमंत्री मि० क्लेमेण्ट एटली की घोषणानुसार जनवरी १९४६ में भारत में चुनांव हुए। कांग्रेस विजयी हुई और लीग को भी मुस्लिमों के ७५ प्रतिशत मत मिले। प्रथम राष्ट्रीय अस्थाई सरकार ने पद-ग्रहण किया। नेहरुजी भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बने, परन्तु लीगी प्रेरणा से हुए सांप्रदायिक दंगों से तंग आकर नेहरु सरकार ने देश का बँटवारा स्वीकार किया और देश का **'भारत'** तथा **'पाकिस्तान'** के रुप में विभाजन हुआ। यों मुस्लिम लीग को बिना किसी बलिदान के अपनी मांग से अधिक ही प्राप्त हुआ।

समाजवादी दल कांग्रेस में ही नवयुवकों का एक दल गाँधीजी को स्वातन्त्र्य आन्दोलन को नरम नीति को निरर्थक मानते थे। अतः स्वातंत्र्य-आंदोलन को समाजवादी दृष्टिकोण से नया मोड़ देने के लिए समाजवादी दल का संघटन नासिक जेल में हुआ, जहाँ जय-प्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, अशोक मेहता और अन्य समाजवादी दल के सदस्य बंदी थे। ये ही इस दल के संस्थापक बने। इन कांग्रेसी युवकों ने इसे **'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी'** नाम दिया। जेल से मुक्त होते ही मई १९३४ में पटना में हुए एक अधिवेशन में इस दल की स्थापना हुई और जयप्रकाश नारायण उसके संयोजक सचिव चुने गए। इस समय नेहरु भी समाजवादी विचारधारा में अधिक विश्वास रखते थे। वे गाँधीवाद एवं साम्यवाद के बीच सेतु से थे। १९३६ में हुए कांग्रेस के लखनऊ-अधिवेशन के सभापति पं० जवाहरलाल नेहरु चुने गए। तब देश में किसान-आन्दोलन की हलचल मची हुई थी। शोषक-सरकार एवं जमींदारों की मनमानी लगान-नीति एवं विशेषाधिकार का विरोध हो रहा था। नेहरुजी ने कांग्रेस की कार्य-समिति में जयप्रकाश नारायण, आचार्य नरेन्द्र देव और अच्युत पटवर्धन इन तीन कट्टर समाजवादियों को लिया। लखनऊ अधिवेशन में नेहरुजी खेतिहर कार्यक्रम का प्रस्ताव राष्ट्र से मनवाना चाहते थे, किन्तु यह स्वीकृत न हुआ और नेहरुजी अत्यन्त निराश हुए। उन्हें लगा मानो स्वयं अकेले एक तरफ हों और सारी दुनिया दूसरी तरफ। तब बहुतों को लगता था कि नेहरुजी कांग्रेस छोड़ देंगे और समाजवादी दल में सम्मिलित होंगे। पर ऐसा संभव न हो सका। आचार्य नरेन्द्र देव के अनुसार - **"समाजवाद एक ऐसे जनतांत्रिक समाजवादी समाज की स्थापना चाहता है जिसमें उत्पादन के साधनों पर समाज का ही अधिकार हो जाए और शोषक तथा शोषित दोनों ही वर्ग नष्ट हो जाएँ तथा समाजवादी समाज में समाज का भी अस्तित्व न रहे।"**३

परन्तु ध्येय-सिद्धि के लिए दलीय राजनीतिक प्रभुत्व आवश्यक था। दल का मुख्य कार्य कांग्रेस की रीति-नीतियों की आलोचना था, किन्तु सन् १९३७ में कांग्रेस द्वारा प्रांतों में सत्ता सूत्र संभालते ही यह आलोचना अधिक कटु एवं दंशपूर्ण होती गई।

हिन्दू सभा अंग्रेजों की फूट डालकर शासन करने की नीति से मुस्लिम लीग को राजनैतिक क्षेत्र में प्राप्त लाभ को लक्ष्य में रखकर लीगी प्रतिक्रियावादी एवं साम्प्रदायिक नीति के विरूद्ध एक मोर्चा के रूप में सन्१९०६ ई० में

'हिन्दू महासभा' की स्थापना हुई। मूलतः इसका आरम्भ एक राजनीति दल के रूप में नहीं, वरन् सांस्कृतिक एवं सुधारवादी दल के रूप में हुआ। मुस्लिम साम्प्रदायिकता के विकास के साथ सन् १९३३ के बाद **'हिन्दू महासभा'** ने कांग्रेस से भी अधिक प्रबलता से लीग की माँगों का प्रतिकार किया, परन्तु प्रतिभा सम्पन्न नेता तथा स्पष्ट कार्यक्रम के अभाव में इसे विशाल जन-समुदाय का समर्थन प्राप्त न था। सन् १९३५ में क्रान्तकारी नेता वीर सावरकर को लम्बी कैद के पश्चात् मुक्ति प्राप्त हुई। इस समय देश राजनीति प्रवृत्तियों से मुखरित था। सावरकर जी के नेतृत्व में **'हिन्दू महासभा'** को नया दल प्राप्त हुआ। कांग्रेस बहुसंख्यक हिन्दुओं के अधिकारों तथा भावनाओं का बलिदान देकर सदा बढ़ती लीगी माँगों की पूर्ति करती जा रही थी। सावरकरजी ने संवेदनाओं को प्रकट कर कांग्रेस की नीति के हिन्दू समाज पर पड़ने वाले भावी प्रभाव को समझाया। उन्होंने हिन्दू जाति के रक्षक एवं उन्नति, हिन्दू तथा संस्कृति तथा राष्ट्र के गौरव को बढ़ाने और देश के लिए सम्पूर्ण राजनीति स्वराज्य को प्रभावित किया। सन् १९४३ के उपरान्त डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने **'हिन्दू महासभा'** का नेतृत्व किया और उसकी राजनीति प्रवृत्तियों को राष्ट्रीय स्तर पर ले आए।

'हिन्दू महासभा' का संघटन सुव्यवस्थित नहीं रहा है। कांग्रेस तथा लीग की तरह प्रांतीय शाखा-समितियाँ हैं, पर प्रत्यक्ष जन-सम्पर्काभाव रहा है। उसमें न तो लीग-सा कौशल एवं शिस्त रहा है। उसकी सदस्यता अनिश्चित रही है और वह बहुधा एक सुषुप्त दल ही रहा है। जब देश में महत्वपूर्ण राजनीतिक विवादास्पद समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, तब यह दल प्रकाश में आता है और उपस्थित समस्या पर अपने हिन्दू दृष्टिकोण को लेकर प्रस्ताव करता है। समस्या पर अपने हिन्दू दृष्टिकोण को लेकर प्रस्ताव करता है। समस्या अनुपस्थिति में दल के साथ उसके नेता भी गहरी नींद सोते हैं। यों इसे हम कार्यरत प्रवृत्तिशील दल नहीं कह सकते। महाराष्ट्र, बंगाल एवं पंजाब को छोड़कर देश में अन्यत्र इसका नगण्य प्रभाव रहा है।

(५.२) स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिवेश -

विभाजन के पश्चात् नये राष्ट्र के रुप में भारत को राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय अनेक समस्याओं पर अपनी परिपक्व मताभिव्यक्ति एवं व्यवहार द्वारा विश्व में अपना निश्चित स्थान बनाना था। विभाजन के उग्रविरोधी पं० नेहरु को विभाजन के दृढ़ समर्थक बनाने में लार्ड माउण्टबेटन की व्यक्तिगत प्रतिभा के साथ लेडी माउण्टबेटन के प्रतिभासम्पन्न व्यक्तित्व ने भी पर्याप्त रीति से प्रभावित किया। देश की राजनीतिक खलाएँ १५ अगस्त, सन् १९४७ से कट गई। सदियों से रुठी हुई स्वतंत्रता-देवी ने आखिर अपूर्व बलिदान लेकर भारत में पुनः पदार्पण किया। जिस दिन की कल्पना करोड़ों भारतवासियों ने बरसों से की थी, वह दिन महात्मा गाँधी की कृपा और जनता के बल से हमें देखने को मिला। विभाजन-पूर्व ब्रिटिश शासन एवं मुस्लिम लीग दोनों भारतीय राजनीति की शिरोवेदनाएँ थीं। इनके दूर होने पर भी दोनों की परछाइयों का प्रभाव स्वातंत्र्योत्तरकाल में भी हमारे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों में बना रहा। ब्रिटेन अपने पीछे राज्य-संचालन एवं सेना में अनेक अंग्रेजों को छोड़ गया, जो हमारी राजनीति के गठन में महत्वपूर्ण योग देने लगे। दो सौ वर्ष तक भारत का अभूतपूर्व शोषण करने वाले अंग्रेज अब हमारे आदर्श बनकर रहे। स्वातंत्र्य के बाद अंग्रेजों की अत्यधिक लोकप्रियता हमारी राजनीति की विचित्र एवं सर्वमान्य हकीकत थी। अंग्रेजों को देखकर सभी कृतार्थ हो उठते, मानों उन्होंने हमें मुफ्त में स्वराज्य दे दिया था। इसका मुख्य कारण इंग्लैंड में शिक्षा-प्राप्त व आचार-विचार में अंग्रेजों

से पूर्ण प्रभावित हमारे प्रधानमंत्री नेहरुजी थे। यों हमारे नेता भौतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होते हुए भी मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से राजनीतिक क्षेत्र में अंग्रेजों के गुलाम ही रहे। देश में अंग्रेजों की भाषा, आचार-विचार, जीवन-व्यवहार एवं राजनीतिक संस्थाएँ यथावत् ही बनी रहीं। विभाजन के बाद हमें आशा थी कि भारत व पाकिस्तान में दृढ़ संबंध स्थापित होंगे, परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान में धर्मान्ध पागलों ने घोरतम अमानवीय अत्याचार किए। वहाँ के अधिकतर हिन्दू मार डाले गए।

जो रहे सो धर्म-परिवर्तन के बाद ही रह सके। पूर्वी पाकिस्तान में इतनी बुरी नहीं, पर ऐसी ही स्थिति थीं। इसकी प्रतिक्रिया एवं घोर मानव वध भारत में भी हुआ। पाकिस्तान से आए शरणार्थियों के पीछे सरकार ने करोड़ों रुपए खर्च किए, परन्तु हमारे उदार-मना गाँधीजी तथा अन्य कांग्रेसी नेताओं के कारण मुस्लिमों की स्थिति यहाँ काफी अच्छी थी। अतः वाममार्गीय पक्षों ने इसका विरोध किया और पाकिस्तान में किए गए अत्याचारों का बदला लेने का प्रचार किया। जहाँ भी दंगे होते वहाँ गाँधीजी स्वयं या अन्य नेता पहुँच जाते और शांति स्थापित करते। पूर्वी पंजाब एवं दिल्ली में हुए ऐसे दंगों को सरकार ने बड़ी तत्परता से शान्त कर दिए थे। मि० जिन्ना तथा अन्य पाकिस्तानी नेता अपने नारकीय कृत्यों पर पर्दा डालने के लिए इन कांडों का काल्पनिक वीभत्स रुप विश्व के आगे रखने लगे। संयुक्त राष्ट्र संघ के पाकिस्तानी प्रतिनिधि मि० जफरुल्ला खां के झूठे आरोपों का भारत सरकार ने तुरन्त प्रतिवाद किया था। पाकिस्तान बनाने में जो अधिक सक्रिय रहे थे ऐसे मुसलमान विभाजन के बाद भारत में ही रह गए थे। वे भारत-विरोधी और पाकिस्तान के समर्थन का ही कार्य करते थे। ऐसे गद्दारों ने ही भारत सरकार को विदेशों में बदनाम करने के लिए दिल्ली में दंगे किए। सरकारी अधिकारियों में अनेक ऐसे पाँचवे दस्ते वाले व्यक्ति थे। इन उपद्रवी भारत-विरोधियों के पास एक डिविजन के लायक छुपे हथियार थे और इनके उपद्रव शांत करने के लिए सेना को घंटों मोर्चा लेना पड़ा था। ऐसे लोगों ने भारत में रहे हुए ४ करोड़ मुसलमानों के विशेषाधिकार की बात चलाई, जिन्हें भारतीय लोकसभा के चालीस लीगी-कांग्रेसी मुस्लिम सदस्यों तथा पं० नेहरु की सहानुभूति से प्रोत्साहन मिला, परन्तु गृह-प्रधान वल्लभभाई पटेल ने लोकसभा में घोषित किया गया कि जो विशेषाधिकार की बातें करते हैं उनका स्थान पाकिस्तान में है, भारत में नहीं।

विभाजन के समय अंग्रेजों ने देशी रियासतों की अनसुलझी विकट समस्या वहाँ की प्रजा के मत पर छोड़ रखी थी। इस प्रकार भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित होने का उत्तरदायित्व देशी रियासतों के प्रजाकीय बहुमत पर था। देशी रियासतों संबंधी पाकिस्तान की नीति अप्रामाणिक थी। अतः अपनी काली करतूतों को छिपाने तथा दुनिया की आँखों में धूल झोंकने के लिए वह इस बारे में भारत के विरुद्ध काल्पनिक दोषारोपण करता था। रियासतों में प्रजा के प्रतिनिधियों के द्वारा लोकमत के बाद ही भारत या पाकिस्तान में मिलने का निर्णय करना था, पर पाकिस्तान तो ऐनकेन प्रकारेण अपनी सीमा बढ़ाने के लिए कश्मीर, जूनागढ़ एवं हैदराबाद चाहता था। कश्मीर रियासत की स्थिति सबसे महत्वपूर्ण थी। उसकी सीमाएं भारत, पाकिस्तान, चीन, रुस व अफगानिस्तान से मिली हुई थीं। उसके यातायात के मार्ग पाकिस्तान से थे, राजा हिन्दू थे और प्रजा बहुधा मुसलमान थी। शेख अब्दुल्ला की सरकार परिस्थितियों के निरीक्षण के बाद निर्णय करना चाहती थी। उधर मि० जिन्ना धैर्य खो बैठे और अफरीदियों-कबाइलियों के छद्म वेश में कश्मीर पर पाकिस्तानियों ने धावा बोल दिया।

पाकिस्तानियों ने लूट-खसोट, नारी -अपहरण तथा गाँव के गाँव जलाकर कश्मीरियों पर अनेक अत्याचार किए। कश्मीर- महाराज ने रावलपिंडी में रुकी हुई खाद्य-सामग्री तथा अन्य अनिवार्य वस्तुएँ मुक्त करने व आक्रमणकारियों को रोकने की बात कहीं। आक्रमणकारियों के हथियार पाकिस्तानी थे। अंत में परेशान हो कश्मीर-महाराज तथा अब्दुल्ला सरकार ने भारतीय संघ में शामिल हो सेना की सहायता माँगी। तीन दिन की गंभीर विचारणा के बाद गाँधीजी के आशीर्वाद के साथ २७ अक्टूबर, सन् १९४७ को कश्मीर में वायुयानों से भारतीय फौजें भेजी गईं। आक्रमणकारियों को भारतीय सेना ने दूर तक खदेड़ भगाया और पूरा कश्मीर हाथ में आने वाला था, तभी भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ में कश्मीर आक्रमण प्रश्न रखकर भारी भूल की। भारत ने सुरक्षा समिति से कश्मीर में पाकिस्तानी आक्रमण रोकने को कहा। पाकिस्तान ने इसका इन्कार करके उल्टे कश्मीर में होते काल्पनिक अत्याचारों की बात कही। कश्मीर वैधानिक रीति से भारत में शामिल हो चुका था, फिर भी भारत ने कश्मीर में जनमत की माँग का स्वीकार करके प्रथम पाकिस्तानी सेनाएँ हटाने की शर्त रखी। राष्ट्रसंघ में पश्चिमी राष्ट्रों के एंग्लो-अमेरिकन गुट ने पाकिस्तान का पक्ष लिया और सोवियत रुस ने भारत का तब से आज तक कश्मीर समस्या अनसुलझी व कभी न सुलझने वाली विश्व की शीत-युद्ध की एक समस्या बन गई है। पाकिस्तानी धर्मान्धता एवं हिन्दुओं पर होते नृशंस अत्याचारों की प्रतिक्रिया भारत में दंगों के रुप में होती। कौमी शांति के समर्थ-स्तंभ से गाँधीजी जहाँ अशान्ति सुनते वहाँ दौड़ जाते और उनके आदेशानुसार सरकार को अल्पसंख्यकों की सुरक्षा का प्रबंध करना पड़ता। पाकिस्तान में ऐसे मानवतावादी कार्य की उपेक्षा के कारण कुछ संकुचित मनोवृति के लोगों ने षड़यंत्र द्वारा हमारे कई नेताओं की हत्या की योजना बनाई। ऐसी प्रथम हत्या ३० जनवरी, सन् १९४८ को नाथूराम गोड़से नामक आर०एस०एस० के धर्मान्ध महाराष्ट्रीयन द्वारा गाँधीजी की हुई। सारा देश सन्नाटे में आ गया। भारत के विश्व-मानव की हत्या हुई थी। विश्व-इतिहास की यह एक अविस्मरणीय घटना थी। पिछले तीस वर्षों से सत्य, प्रेम व अहिंसा के प्रकाश पुंज से विश्व को आलोकित करती उस प्रशांत ज्योति को शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार या लागी गुण्डागर्दी मिटा नहीं पाई थीं, उस विश्व को अमृत पिलाने वाले संसार के सर्वश्रेष्ठ हिन्दू की हत्या एक हिन्दू कर सका। आर.एस.एस. के अधिकतर अनुयायियों को जेल में बंद करके सरकार ने उत्तेजित जनता के प्रकोप से उन्हें बचा लिया ।

हैदराबाद रिसायत का मामला भी गम्भीर होता जा रहा था । वहाँ पाकिस्तान के समर्थन की एवं भारत-विरोधी भावना बढ़ती जा रही थी । निजाम के प्रधानमंत्री मीर लायकअली एवं रजाकारों के सरदार कासिम रिजवी ने करोड़ों रूपयों के शस्त्रास्त्र विदेशों से मँगवाए। पाकिस्तान को २५ करोड़ का कर्ज भी दिया और हिन्दुओं पर अनेक अत्याचार हुए, अनेक गाँव जला-लूटे गए तथा कई नारियों का सतीत्व नष्ट कर दिया। लगभग साड़े चार लाख लोग भारत में आए। भारतीय प्रदेश में घुसकर भी अनेकों हमले रजाकार करने लगे थे । दिल्ली के लाल किले पर आसफजाही हरा झण्डा लहराने की रिजवी ने डींग भी मारी । हैदराबाद को लेकर पाकिस्तान भी अनेक चेतावनियों व धमकियाँ भारत को दे रहा था। भारत ने निजाम से समझौते की बात भी चलाई। पर निजाम की घमंडी आवाज़ में रिजवी व लायकअली की प्रतिध्वनि थी । धैर्य खोकर नेहरूजी ने निजाम को नोटिस दिया कि उन्हें सिकन्दराबाद में भारतीय सेना रखनी पड़ेगी और न रखने पर सेना हैदराबाद में प्रवेश करेगी । हैदराबादी व पाकिस्तानी नेताओं ने खूब बौखलाहट की । पर अंत में भारतीय सेना ने हैदराबाद में प्रवेश किया और पाँच दिन के भीतर ही निजाम सेना और रजाकारों की शक्तियों का

डेलडंबुआ कड़ गया। इसी प्रकार अन्य लगभग ६०० देशी रियासतों के एकीकरण का अभूतपूर्व भगीरथ कार्य सरदार पटेल की कुशाग्र बुद्धि से परिपूर्ण हुआ। साथ ही जमीनदारी प्रथा का अंत भी एक प्रशंसनीय कार्य था। मूल्य-वृद्धि एवं मुद्रा-स्फीति की समस्या से प्रजा परेशान थी, फिर भी भारत ने अपना संविधान विश्व के सामने रखकर एक सम्मानीय एवं लोकशाही के लिए परिपक्व प्रजा के रुप में विश्व राजनीति में पदार्पण किया। २६ जनवरी, सन् १९५० को भारत ने अपना प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद को नियुक्त किया। तत्पश्चात् संविधानानुसार चुनावों की घोषणा हुई। संविध ानानुसार २१ वर्ष तक के सभी पुरुषों को पुख्त मताधिकार दिया था। आलोच्यकाल दरम्यान १९५२ व १९५७ के दो आम चुनावों में लोगों ने राज्य विधानसभाओं तथा केन्द्र की लोकसभा के लिए अपने प्रतिनिधियों को चुन कर भेजा। १९५७ में ११ करोड़ २० लाख लोगों ने मतदान किया। इनमें २७ स्त्री-सदस्याएँ लोकसभा में एवं १०५ स्त्री-सदस्याएँ विभिन्न राज्यों को विधानसभाओं में चुनी गईं। इन चुनावों में उभरे हुए राष्ट्रीय स्तर के दलों में काँग्रेस, प्रजा-सोश्यालिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी और भारतीय जनसंघ थे।

कांग्रेस दल में रहकर सन् १९४७ तक स्वतन्त्रता-प्राप्ति के दीर्घकालीन आन्दोलन में विभिन्न मतावलम्बियों ने ब्रिटिश सरकार से टक्कर ली थी। अब सत्ता-प्राप्ति के अवसर पर इन गुटवादियों में संघर्ष स्वाभाविक था। क्रांतदृष्टा गाँधीजी उपस्थित होने वाली यह सत्ता-लोलुपता की आंतरिक कटुता जान गए थे। अतः स्वतन्त्रता के बाद उन्होंने कांग्रेस का राजनीतिक दल के रुप में विलीनीकरण करने की सलाह दी थी, पर कांग्रेसियों ने गाँधीजी की यह अंतिम सलाह नहीं मानी और पटेल-पक्षीय दक्षिण-पंथी एवं नेहरु पक्षीय वामपंथी कांग्रेसियों में सत्ता ने ऐक्याभास उत्पन्न किया गया। इन गुटों की आतंरिक फूट के चिह्न स्पष्ट लक्षित होते थे। १९५० में कांग्रेस दल के प्रमुख के लिए दो उम्मीदवार थे, श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन और श्री आचार्य कृपलानी। प्रथम को सरदार पटेल का तथा द्वितीय को नेहरुजी का समर्थन था। इसमें टंडनजी का निर्वाचन सभी दृष्टियों से नेहरुजी की हार थी। कांग्रेसी वाममार्गियों में कृपलानीजी, रफी अहमद किदवाई और पी०सी० घोष थे, जिन्होंने नेहरुजी के आशीर्वाद के साथ कांग्रेस का त्याग करके **'किसान-मजदूर प्रजा पार्टी'** की स्थापना की । यदि सरदार पटेल जीवित रहे होते और कांग्रेस पर उनका प्रभुत्व जारी रहता तो नेहरुजी को निःसन्देह कांग्रेस का त्याग करना पड़ता, किन्तु दिसम्बर १९५० को सरदार पटेल की मृत्यु होते ही कांग्रेस में पं० नेहरु की स्थिति दृढ़ हो गई। कुछ ही महीनों में कांग्रेस कार्यकारिणी समिति से नेहरुजी ने अपना त्यागपत्र देने को धमकी द्वारा टंडन जी को कांग्रेस प्रमुख पद से त्यागपत्र देने के लिए विवश किया और स्वयं कांग्रेस प्रमुख बन बैठे। नेहरुजी कांग्रेस एवं सरकार दोनों के सर्वेसर्वा बन गए। रफी अहमद किदवाई जैसे उनके कई समर्थकों ने मौका देखकर पुनः कांग्रेस प्रवेश किया। कांग्रेस की इस दृढ़ स्थिति के कारण प्रथम आम चुनाव में लोकसभा में ४७६ सदस्य खड़े किए जिनमें से ३६४ निर्वाचित हए थे। राज्य विधान सभाओं के लिए ३२०५ कांग्रेसी सदस्यों में से २२४७ निर्वाचित हुए थे। यों कांग्रेस को बहुमत प्राप्त होने पर भी मतदान की दृष्टि से केन्द्र व अधिकतर राज्यों में बहुमत प्राप्त नहीं हुआ था। उसे लोकसभा में कुल मतदान के ४५ प्रतिशत एवं राज्य विधानसभाओं में ४३.४३ प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। कांग्रेस को मत-प्राप्ति में उसका दीर्घकालीन गौरवपूर्ण अतीत, गाँधीजी, नेहरुजी एवं सरदार पटेल के प्रति जन-प्रेम, घोषणा-पत्र, उद्योगपतियों की आर्थिक सहायता, अन्य सुसंगठित शक्तिशाली पक्ष का अभाव, लोगों की निरक्षमता, गरीबी, दो बैलों के कांग्रेसी प्रतीक

को भी धार्मिक भावना से ग्रामीण, श्रमिक, अशिक्षित आदि ने मतदान किया। साथ ही दूर-दूर के स्थानों में हजारों मील के नेहरुजी के भगीरथ चुनाव प्रवास तथा भाषणों ने भी चमत्कार का काम किया। प्रथम आम चुनावों के बाद केन्द्र एवं राज्यों में केरल को छोड़कर कांग्रेसी सरकारें बनी। नेहरुजी ने तत्कालीन समाजवादी नेता श्री जयप्रकाश नारायण, श्री कृपलानी, आचार्य नरेन्द्र देव को कांग्रेस में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रित किया, किन्तु इनके साथ की कांग्रेसी नेताओं की बात असफल रही। कांग्रेस ने एक वर्ष बाद १९५४ के अजमेर के कांग्रेस-अधिवेशन में अपनी आर्थिक नीतियों को समाजवादी मोड़ देने के लिए सहकारी समाज-रचना व कल्याण-राज्य-स्थापना का उद्देश्य प्रकट करके बेकारी-निवारण एवं प्रगतिशील सामाजिक अर्थतन्त्र की बात कही।

(अ) उपन्यासों में -

भीष्म साहनी ने अपने अनेक उपन्यासों में स्वतन्त्रता पूर्व के राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर चित्रण किया है। अधिकांशतः ये परिदृश्य ब्रिटिश शासन काल से सम्बन्धित है। 'तमस' उपन्यास में ऐसा ही स्वतन्त्रता पूर्व राजनीतिक परिदृश्य अनेक स्थानों पर चित्रित है ।

'तमस' -

भीष्मसाहनी के बहुचर्चित उपन्यास **'तमस'** का प्रथम प्रकाशन सन् १९७३ में हुआ। सन् १९७५ में **'तमस'** की रचना पर भीष्म साहनी को **'साहित्य अकादमी'** पुरस्कार प्राप्त हुआ। यह घटना उस समय की है। जब भारत की राजनीतिक व्यवस्था ठीक नहीं थी। लोगों में देश के प्रति प्रेम था। कुछ लोग वास्तव में देश से प्रेम करते थे। कुछ केवल दिखावे का काम करते थे। अगर देश के लिए कोई बड़ा कार्य करना है, जिससे लोगों में अपने देश के प्रति प्रेम बढ़े। उसके लिए हमें संगठन की आवश्यकता थी, क्योंकि **'संगठन में शक्ति'** है। ऐसा ही एक परिदृश्य हमें 'तमस' उपन्यास में देखने को मिलता है।

लोगों में नवजाग्रति पैदा करने के लिए कांग्रेस के कुछ लोगों ने एक कमेटी बनाई, जिसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ही लोगों ने भाग लिया। कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी बख्शीजी थे। कांग्रेस कमेटी के सभी कार्य बख्शीजी की सलाह पर होते थे। वे पूरे कांग्रेस के हैड थे। जब तक बख्शीजी न आएँ, तब तक कोई भी कार्य शुरु नहीं होता था। जब कांग्रेस की प्रभातफेरी होनी थी, तब उसमें कुछ लोगों ने भाग लिया था। प्रभातफेरी में आने के लिए जिसको जब समय मिलता था, तब चला आता था। उसमें कोई तोंद खुजलाता हुआ तो कोई जम्हाइयाँ लेता चला आता था।

कांग्रेस के दफ्तर के सामने कुछ खड़े सदस्य अन्य सदस्यों की राह देख रहे थे। वही पर पुलिस के दो सिपाही भी खड़े थे। सभी जगह अँधेरा छाया हुआ था। तभी वहाँ लैम्प की रोशनी नजर आई। अजीत ने समझ लिया था कि बख्शीजी आ गए। बख्शीजी बहुत नम्र स्वभाव के व्यक्ति थे। अजीत का काम हर किसी को परेशान करना था। वह किसी को चार सुना नहीं लेता था, तब तक उसको शान्ति नहीं मिलती थी। जैसे ही बख्शीजी आए। अजीत ने उनके लिए एक शेर पढ़ा -

मुल्ला मियाँ मिशालची, तीनों एक समानः

लोकाँ नूँ दस्सण, चाणना आप हनौ जाण।"४

कांग्रेस के अन्य सदस्य हाँकते ज्यादा थे। काम कम करते थे। रात को योजना बनाते हम ऐसा कार्य करेंगे, सुबह होने पर जैसे के जैसे। जब तनख्वाह ज्यादा बढ़वानी होती थी, तब दस चक्कर काटते थे। अब तनख्वाह बढ़ गई तो सुनते ही नहीं है। ऐसे ही सारे लीडरों का काम था। कांग्रेस में कुछ लीडर थे, जिनके नाम इस प्रकार है। देसराज, शंकर, मास्टर रामदास, मेहताजी, बख्शीजी, जरनैल आदि। रामदास की आदत थी - **"जब तनख्वाह बढ़वानी थी तब तो रात के ११ बजे भी बुलाओ तो आ जाता था। अब तनख्वाह बढ़ गई है, उसे क्या गर्ज पड़ा है कि वक्त पर आए।"५**

सभी लीडर आपस में झगड़ते ही रहते थे। मेहताजी भी लेट आए थे। वे हमेशा बनठनकर रहते थे। अजीत तो हमेशा की तरह उनकी तारीफ करता रहता था। उनको अपनी तारीफ सुनने का बहुत शौक था। कोई उनकी बढ़ाई कर देता, तो वे बहुत प्रसन्न होते थे। वे स्वयं अपनी तारीफ करते हुए अजीत से बोले -

"उन दिनों मोटरों के अड्डे पर खड़ा था तो एक आदमी दूसरे से पूछने लगा : 'क्या वह जवाहर लाल नेहरु खड़ा है और मेहताजी ने दोनों हाथों से अपनी गाँधी टोपी का जाविया थोड़ा टेढ़ा करते हुए कहा : बहुत लोगों को मुगालता हो जाता है।"६

कांग्रेस कमेटी के दो सदस्य शंकर और मेहताजी थे। दोनों की एक दूसरे से बिल्कुल नहीं पटती थी।

लाहौर में एक सम्मेलन हुआ, जिसमें नेहरु जी शामिल होने वाले थे। उसमें जिला कमेटी की ओर से कुछ प्रतिनिधि भेजे गए थे। उसमें एक सहभोज का सम्मेलन हुआ। मेहताजी ने अपनी कांग्रेस कमेटी की ओर से सहभोज के पैसे दिए, लेकिन शंकर ने नहीं दिए, जिससे शंकर भड़क उठा। शंकर ने उस सहभोज में खाना खाया। इतने गन्दे तरीके से खाया कि मेहताजी से रहा नहीं गया। उन्होंने कहा-

" खाने बैठा है शंकर, तो इन्सानों की तरह तो खा। हमारी जिला कांग्रेस की रुसवाई करवा रहा है।"७ दोनों में इतना झगड़ा मच गया कि शंकर ने कहा कि लाहौर चल, फिर मैं तुम्हें देखूँगा। जब प्रदेश कांग्रेस के चुनाव होने थे, तब उसमें जिला कमेटी की ओर से चार सदस्य भेजने थे। कोहली का चौथा नाम चुन लिया गया था, लेकिन शंकर ने ऐसी हरकत की कि कोहली का नाम हटाना पड़ा।

स्कुटिनी कमेटी की जब मीटिंग चल रही थी, तब शंकर ने स्कुटिनी कमेटी के प्रधान से एक प्रश्न किया। मेहता जी को शंकर का प्रश्न पूछने में बड़ी परेशानी हुई। शंकर ने कहा कि इनसे कहें कि ये चुप रहें। इन्हें बीच में बोलने का कोई अधिकार नहीं है। स्कुटिनी कमेटी के हर सदस्य को प्रश्न पूछने का अधिकार है। प्रधान की आज्ञानुसार शंकर ने प्रश्न पूछा कि कांग्रेस के नियम क्या हैं -

"कि सदस्य चार आने सालाना चन्दा देता हो, शुद्ध हाथ की कती, हाथ की बुनी खादी पहनता हो, चरखा कातता हो, क्यों ठीक है कि नहीं?"८

शंकर कोहली साहब को खड़ा करना चाहता था और उनका नाड़ा दिखाना चाहता था। कोहली व मेहताजी

को शंकर के इस व्यवहार से काफी दुःख हुआ। चूंकि प्रधान का हुक्म था तो कोहली साहब को अपना नाड़ा दिखाना पड़ा। अगर देखा जाएँ तो बात भी सही है। जब कमेटी बनाई गई, तब हर लीडर को उसका पालन करना चाहिए था। जब कमेटी के लोग ही नियम का पालन नहीं करेंगे, तब आम जनता उन नियमों का कैसे पालन करेगी? अगर शंकर ने स्कुटिनी कमेटी के पास यह बात रखी तो सही भी है। **जब कोहलीसाहब अपना नाड़ा दिखाते है -**

"देख लीजिए, साहिबान, नाड़ा रेशमी है। हाथ के कते सूत का नहीं है। मशीनी है, अकड़े का है। आप खुद छूकर देख सकते हैं।"........

........तो फिर? फिर क्या हुआ?"

कांग्रेस-सदस्य रेशमी नाड़ा पहने, और आप उसे प्रादेशिक कांग्रेस का उम्मीदवार बनाकर भेजेंगे? कांग्रेस के कोई असूल हैं या नहीं?"९

सभी सदस्यों ने जब देखा, तब वे एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। उन्हें मजबूरन कोहली साहब का नाम काटना पड़ा। राजनीति में अक्सर ऐसा देखने को मिलता है कि अगर किसी आदमी को नेता बनाया जा रहा है। यद्यपि वह भी उसके योग्य है तो उसके अन्दर इतनी जलन पैदा होगी कि वह उसको नेता बनने नहीं देगा।

भारत एक बहुत बड़ा देश है। इस देश से प्रेम करने वाले भी बहुत हैं और मक्कारी करने वाले भी बहुत है। जब कांग्रेस की प्रभातफेरी होनी है, तब कोई भी टाइम पर नहीं आता है। प्रभातफेरी जब शुरु होती थी, तब गाना गाकर शुरु होती थी, लेकिन समय पर कोई नहीं आया है, तो फिर गाएगा कौन? बख्शीजी अन्दर से बहुत नाराज थे। कांग्रेस का सच्चा लीडर जरनैल था। उसकी उम्र ५० वर्ष की थी। वह कई वर्ष जेल में काटकर आया था। उसकी बीबी बच्चा कोई नहीं था। वह कहीं भी काम नहीं करता था। वह कांग्रेस के दफ्तर से मेहनताने के १५ रुपए लेता था।

सभी लोग जरनैल से चिढ़ते थे। जहाँ देखो वह तकरीर शुरु कर देता था। चाहे आन्दोलन हो या न हो वह केवल जाता रहता था। वह अपने देश के प्रति मर मिटने को हमेशा तैयार रहता था। जो लोग देश के प्रति वफादारी नहीं रखते थे। वह हमेशा उनसे चिढ़ता रहता था। वह हमेशा बीमार रहता था। उसे खाने में जो मिल जाता वह खा लेता था।

गाने केवल दो लोग ही अच्छा गाते थे। एक रामदास दूसरा देशराज, लेकिन समय पर कोई नहीं आया। कश्मीरीलाल ने जरनैल से कहा कि तुम तकरीर शुरु करो। जरनैल को तकरीर करने में हमेशा मजा आता था। वह सभी की बुराई करता था। लोग उसकी तकरीरी से चिढ़ते थे, लेकिन वह जो तकरीरी करता था। उसको गंभीरता से देखा जाएँ तो उसमें वास्तविकता छिपी हुई थी। वह तकरीर शुरु करने लगता है -

"साहिबान, हमें अफसोस से कहना पड़ता है कि जिला कांग्रेस के प्रधान ने देश के साथ विश्वासघात किया है। जो वचन हमने रावी के किनारे सन् १९२९ में लिया, हम मरते दम तक उस पर कायम रहेंगे। आपका बहुत वक्त न लेता हुआ मैं इतना ही कहूँगा कि कोई माई का लाल अभी तक पैदा नहीं हुआ जो कांग्रेस के उसूलों की खिलाफवर्जी कर सके। मेहताजी किस खेत की मूली है? हम इनसे भी निबटेंगे और इनके पिट्ठुओं, कश्मीरीलाल, शंकरलाल, जीतसिंह जैसे गद्दारों से भी निबटेंगे...... .."१०

सभी लोग जरनैल की ऐसी हरकत को पसन्द नहीं करते थे। बख्शीजी व कांग्रेस के अन्य सदस्यों को उसकी हरकतें अच्छी नहीं लगती थीं। सभी लोग ताली बजाकर जरनैल की हरकत को बन्द कर देना चाहते थे। अगर जरनैल की किसी ने ताली बजाकर तारीफ कर दी तो वह बहुत खुश होता था और वह अपनी तकरीर बन्द कर देता था। वह हमेशा लोगों को देशप्रेम के लिए मोड़ता रहता था -

"साहिबान, मैं आपका ज्यादा वक्त न लेता हुआ आपका शुक्रिया अदा करता हूँ जो आपने इतने सबर और सन्तोष के साथ मेरे इन टूटे-फूटे लफजों को सुना। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि वह दिन दूर नहीं है जब हिन्दुस्तान आजाद होगा। कांग्रेस अपने मकसद में जरुर कामयाब होगी। जो शपथ मैंने रावी के किनारे ...."११

कुछ समय पश्चात् जब रामदास दौड़कर आता है, तब वह बख्शीजी को बताता है कि आज प्रभातफेरी नहीं होगी। बख्शीजी यह सुनकर नाराज होने लगते हैं। तुम एक तो देर से आते हो और फिर बहाना बनाते हो। रामदास हमेशा सही बोलता था। वह कांग्रेस कमेटी के लिए कुछ कार्य भी करता था। वह पाँच झाड़ू, बारह बेलचे, तीन गैंतियाँ शेरखान के यहाँ रख आया था। सभी लोग वहाँ जाकर कच्ची नालियाँ साफ करेंगे। कांग्रेस के जब कुछ सदस्यों ने यह सुना, तब उनको गुस्सा आने लगा कि हम वहाँ नालियाँ साफ करेंगे। बख्शीजी ने कहा कि तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? रामदास ने कहा कि मैं पहले यहाँ पर आया था, लेकिन यहाँ पर कोई नहीं था।

सभी लोग वहाँ से चल देते हैं। कश्मीरी लाल ने तिरंगा उठा लिया। रामदास प्रभातफेरी का वही पुराना गीत गाने लगता -

"जरा वी लगन आज़ादी दी
लग गई जिन्हाँ दे मन दे विच ।।"
"ओह मजनूँ बण फिरदे ने
हर सेहरा हर बन दे विच ।।"१२

सभी लोग प्रभातफेरी में नारे लगाते जा रहे थे, शहर में काफी शोर था। कांग्रेस का एक सदस्य सबसे आगे को झण्डा लिए जा रहा था। उस मण्डली में कुछ लोग भी गाँधीजी की टोपी लगाए हुए थे। मण्डली के सभी सदस्य बन्दे मातरम् !

"बोल भारतमाता की.............जय"!
महात्मा गाँधी की....................जय"!"

के नारे लगाते हुए जा रहे थे। इधर से हिन्दू नारे लगा रहे थे। उधर दूसरी ओर से मुसलमान नारे लगा रहे थे -

"पाकिस्तान-जिन्दाबाद !
पाकिस्तान- जिन्दाबाद !
क़ायदे आज़म- जिन्दाबाद !

क़ायदे आज़म- जिन्दाबाद !"[१३]

मुसलमानों को अपनी पार्टी से और हिन्दुओं को अपनी पार्टी से प्रेम था। हिन्दुओं की पार्टी में कुछ मुसलमान भी थे, जैसे अजीज, बख्शीजी, हकीम। ये मुसलमान थे और कांग्रेस की पार्टी में शामिल थे। ये समर्थन कांग्रेस की पार्टी का ही करते थे। मानव चाहे जिस पार्टी का सदस्य हो, लेकिन उनका उद्‌देश्य दोनों पार्टियों का भला होना चाहिए। जब कांग्रेस की पार्टी किसी रास्ते से निकल रही थी, तब मुसलमानों की पार्टी ने उन्हें उसी रास्ते में रोक लिया। रुमी टोपी वालों को केवल अपनी पार्टी से प्रेम था। उन्हें हिन्दुओं की पार्टी से प्रेम नहीं था। तभी तो रुमी टोपी वालों ने कांग्रेस की पार्टी को ललकारते हुए कहा-

"कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है। इसके साथ मुसलमानों का कोई वास्ता नहीं है।"[१४]

कांग्रेस के हैड बख्शीजी थे जो मुसलमान थे। वे काफी बुद्धिमान थे। वे कई साल जेल में रहकर आए थे। वे नहीं चाहते थे कि कहीं दंगा हो। आपस में भाई-भाई में मनमुटाव हो। बख्शीजी ने कहा -

"कांग्रेस सबकी जमात है। हिन्दुओं की, सिक्खों की, मुसलमानों की। आप अच्छी तरह जानते हैं महमूद साहिब, आप भी पहले हमारे साथ ही थे।"[१५]

बख्शीजी भाई-भाई में प्यार चाहते थे। उनके अन्दर हर मानव के प्रति प्रेम था। उनके अन्दर नफरत नहीं थी। वे एक दूसरे का आदर करना चाहते थे। उन्होंने रुमी टोपी वाले को अपनी बाँहों में भर लिया। रुमी टोपी वाला उनकी बाँहों में से हट गया। रुमी टोपी वालों को कांग्रेस की पार्टी में बिल्कुल भी विश्वास नहीं था। वे उन्हें हमेशा सन्देह की दृष्टि से देखते थे। उन्हें कांग्रेस की पार्टी में कुछ सन्देह नजर आता था। रुमी टोपी वाले ने कहा -

"यह सब हिन्दूओं की चालाकी है, बख्शीजी, हम सब जानते हैं। आप चाहे जो कहें, कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है। कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है और मुस्लिम लीग मुसलमानों की। कांग्रेस मुसलमानों की रहनुमाई नहीं कर सकती।"[१६]

रुमी टोपी वाला हिन्दुओं से अत्यधिक चिढ़ रहा था, जबकि बख्शीजी बहुत नम्रता से व्यवहार कर रहे थे। बख्शीजी ने कहा कि हमारी पार्टी में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख सभी लोग हैं। हकीम और अजीज भी हैं। रुमी टोपी वाले को हिन्दुओं से नफरत नहीं थी। हकीम और अजीज जो मुसलमान थे, वे मुसलमानों की पार्टी में शामिल नहीं थे। रुमी टोपी वाले इसलिए नाराज थे। वे इन्हें हिन्दुओं का कुत्ता कहकर पुकारते थे। वे मौलाना आज़ाद को भी हिन्दुओं का कुत्ता कह रहे थे, जबकि बख्शीजी बड़ी नम्रता से उत्तर दे रहे थे। यह आज़ादी केवल हमारे लिए भी नहीं है। सारे हिन्दुस्तान के लिए है। जरनैल जो सिक्ख रहा था। उसे सबकी बात पर गुस्सा आ रहा था। जरनैल बोला कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा। सभी लोग जरनैल की बात पर हँसने लगे। यह सनकी आदमी है। पता नहीं क्या-क्या बोलता रहता है। जरनैल हमेशा सत्य बात कहता था, लेकिन उसकी बात पर कोई विश्वास नहीं करता था।

"मुझे कोई चुप नहीं करा सकता। मैं नेताजी सुभाष बोस की फौज का आदमी हूँ। मैं सबको जानता हूँ। आपको भी जानता हूँ............।"[१७]

हिन्दू जब मुसलमानों के रास्ते से जाने लगे, तब मुसलमानों ने हिन्दुओं का रास्ता रोक लिया। हिन्दुओं

ने कहा कि तुम सारे शहर के चक्कर लगाते हो। तुम्हें जाने से कोई रोकता है। हम लोग तो केवल हुब्बुल वतनी के गीत गा रहे थे। इस बात से रुमी टोपी वाले का हृदय पिघल गया और बोला-

"आप लोग जाना चाहते हैं तो जाइए, लेकिन हम इन कुत्तों को तो अपने मुहल्ले में नहीं घुसने देंगे! और उसने फिर दोनों बाँहें फैला दीं मानो गली का रास्ता फिर से रोक रहा हो।"१८

सभी लोग प्रभातफेरी के लिए निकल पड़े। वे इमामदीन के मुहल्ले में पहुँचे। बख्शीजी व अन्य सदस्यों ने शेरखान के घर से सफाई के सामान उठाए और सफाई के लिए चलने लगे। बख्शीजी तामीरी का काम करके लोगों के अन्दर देश भक्ति की भावना भर रहे थे, जिससे लोगों का ध्यान देशभक्ति की ओर बढ़े। जबकि तामीरी के अन्य सदस्य नाली साफ करने में हिचकिचा रहे थे। मेहताजी अपने मन में विचार कर रहे थे कि मेरे कपड़े कहीं खराब न हो जाएँ। वे वह काम न करके केवल सड़क पर जो कंकड़ पड़े हुए थे, उनको उठा-उठाकर कड़ाही में डाल रहे थे। रामदास हाथों में झाड़ू लेकर बड़बड़ाने लगा था। वह ब्राह्मण था। उसने जब झाड़ू को देखा, तब उसका हृदय सकुचाने लगा था-

"ब्राह्मणों से भी झाड़ू उठवाते हो गाँधी महात्मा, जो करो थोड़ा। हैं जी! ब्राह्मणों के हाथ में भी झाड़ू उठवा दिया।"१९

बख्शीजी रामदास की बातें सब सुन रहे थे। बख्शीजी ने कहा कि जब गाँधीजी अपना शौचालय साफ कर सकते हैं, तब तुम्हें नाली साफ करने में क्या हर्ज है? सभी लोग दूर तक निकल गए। कुछ लोगों ने उन्हें रोका कि ज्यादा दूर मत जाओ। वहाँ मस्जिद है। मस्जिद के पास से जाना उचित नहीं है। तुम लोग देख नहीं रहे हो कि हवा कैसी चल रही है? वहाँ पर जाने से खतरा हो सकता है।

कशमीरी लाल ने तिरंगे को ऊँचा उठाया और जोर से आवाज़ लगाई **"इन्कलाब"**। बाद में जबाब आया **"जिन्दाबाद"**। बोलो **"भारत माता की जय"**। अधिकांश लोगों ने जब इस आवाज़ को सुना, तब सभी लोग अपने-अपने घर से निकलकर प्रभातफेरी को देखने लगे।

कहीं पर नाली कच्ची थीं, कहीं पर मल ज्यादा भरा हुआ, कहीं पर नालियाँ खोदी ही नहीं गई थीं। शेरखान, देसराज और बख्शीजी झाड़ू से आँगन को बुहार रहे थे। आस-पास के खड़े लोगों को यह समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर में ये लोग झाड़ू लगाकर क्या करना चाहते हैं? एक वृद्ध आदमी से जब यह सब नहीं देखा गया, तब उसने बख्शीजी से कहा -

"क्यों हमें शर्मिन्दा करते हो बाबूजी, हमारा घर तुम बुहारोगे? लाइए, झाड़ू मुझे दीजिए।"

" नहीं नहीं, यह हमारा काम है।" बख्शीजी ने जवाब दिया।

"नहीं बन्दापरवर, कभी यों भी हुआ है, आप पढ़े-लिखे खानदानी लोग हो, हम आपसे झाड़ू लगवाएँगे, तोबह-इस्तफ़ार! लाइए, मुझे दीजिए, हमें क्यों दोज़ख की आग में धकेलते हो.....।"२०

बख्शीजी को यह सुनकर मन में बहुत खुशी हुई कि तामीरी का असर कुछ हो रहा है।

कशमीरीलाल और शंकर नाली में से कीच निकालकर ढ़ेर के ढ़ेर लगाते जा रहे थे। यह कीच करीब एक

फुट भरा हुआ था। कई दिनों से जमा होने के कारण जब उसे साफ किया गया, तब जगह-जगह उसके ढेर लगाए गए तो बदबू से नाक फटने लगी। मच्छर सभी जगह उड़ने लगे। एक वृद्ध आदमी ने कहा कि यहाँ तुम बीमारी क्यों फैला रहे हो? यह मलवा कौन साफ करवाएगा? जब बख्शीजी ने उनकी बात सुनी, तब वे शंकर और कशमीरीलाल पर गुस्सा हुए और बोले -

"ये जवान लोग कभी नहीं समझेंगे।" वह बुदबुदाए।"तामीरी काम का यह मतलब तो नहीं कि सचमुच नालियाँ साफ करने लग जाओ। इसका तो इतना-भर मतलब है कि लोगों का ध्यान सफाई का ओर दिलाओ और देश की आज़ादी की ओर।"२१

वही से एक बुजुर्ग निकला। जो सफेद कपड़े पहने हुए था; शायद वह मस्जिद की तरफ जा रहा था। उस बुजुर्ग ने रामदास को झाडू लगाते और अन्य सदस्यों को नालियाँ साफ करते देखा। वह उनके इस कार्य को देखकर बहुत प्रभावित हुआ। उस बुजुर्ग ने उस आदमी से आफरीन आफरीन कहा -

"हम क्या सफ़ाई करेंगे बुजुर्गवारम, हम कितना कुछ कर सकते हैं," बख्शीजी बुजुर्ग को बोलता देखकर झाडू उठाए उसके पास चले आए थे, पर बुजुर्ग ने समझाते हुए कहा- "मतलब गलियाँ साफ करने से नहीं, इसके पीछे जो जज्बा काम कर रहा है, वह बहुत ऊँचा है। आफ़रीन, सदआफ़रीन!" सफेदरीश बुजुर्ग ने कहा और धीमी गति से चलता मुसकराता हुआ मुहल्ले में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगा । बख्शीजी को उसके मुँह से तामीरी काम की तारीफ सुनकर खुशी हुई । उन्हें लगा जैसे आज का तामीरी काम सार्थक हो गया है।"२२

मेहता ने झाडू को हाथ तक नहीं लगाया । उसने कहा कि अगर मैं झाडू लगाऊँगा तो मेरे कपड़े खराब हो जाएँगें। शंकर भी नालियाँ साफ करते-करते थक गया था । जब आदमी थक जाता है, तब उसे गुस्सा आने लगता है। हम नालियाँ साफ कर रहे है। क्या नालियाँ साफ करने से हमें स्वराज्य मिल जाएगा ? बख्शीजी को इस तरह की बातें विल्कुल पसंद नहीं थी । उन्होंने सब बातों को ध्यान से सुना था। बख्शीजी नहीं चाहते थे कि हम इनके मुँह लगे। बख्शीजी से रहा नहीं गया तो उन्होंने कहा-

"कुछ समझा कर शंकर, यह हमारी देशभक्ति का चिह्न है, इस तरह हम गरीबों के स्तर तक उतर आते हैं। क्या गरीबों में काम करने जाओगे तो पतलून पहनकर जाओगे? झाड़ लेकर या खादी पहनकर जाते हो तो लोग तुम्हें अपना समझते हैं।"

"जब से तामीरी काम करने लगे हो, आन्दोलन ठप्प हो गया है," शंकर ने कहा,"लगाओ झाडू और कातो चरखे।" और उसने एक और बेलचा कीच से भरकर ढ़ेर पर डाल दिया ।"२३

दंगा बढ़ने की जब ज्यादा संभावना थी । कांग्रेस के सभी सदस्य यह प्रयास कर रहे थे कि कैसे शान्ति स्थापित की जाएँ? कांग्रेस के सभी सदस्य पहले मुस्लिम लीग के हैड के पास गए। जब उनकी वहाँ पर दाल नहीं गली, तब वे अंग्रेज ऑफीसर रिचर्ड के पास गए । कांग्रेस के सभी सदस्य यह प्रयास कर रहे थे कि कहीं पर दंगा न हो, जिससे सभी की जान माल को खतरा नहीं हो पाएगा । बख्शीजी कांग्रेस के हैड थे। वे १६ साल जेल में रहकर आए

थे। उन्हें ज़िन्दगी का तजुर्बा था। वे जानते थे कि लड़ाई में कुछ भी सार नहीं है। लड़ाई व हिंसा, दंगा केवल बर्बादी के लक्षण हैं। इसमें सबसे ज्यादा बर्बादी निर्धनों की होगी। निर्धनों के पास वैसे ही खाने को दो वक्त का भोजन नहीं हैं। वे एक समय भूखा रहकर अपने बच्चों का पालन-पोषण कर रहे है। उनके विचार बिल्कुल गाँधी जी की तरह थे । जिस प्रकार **गाँधीजी** ने कहा था कि **Hate the sin not sinner 'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं'**, वैसे ही विचार बख्शीजी के अन्दर दिख रहे थे।

बख्शीजी कांग्रेस के सभी सदस्यों के हैड थे। बख्शीजी व अन्य सदस्य रिचर्ड के पास गए। उन्होंने रिचर्ड से कहा कि शहर की हालत बहुत नाजुक है। किसी भी वक्त दंगा भड़क सकता है। इससे हम लोगों का काफी नुकसान हो सकता है। आपके हाथ में सब कुछ है। सरकार की बागडोर आपके हाथ में है। आपका कर्तव्य है कि देश की सुरक्षा का ध्यान रखा जाएँ। हमें सुनने में आया है कि कहीं गाय काट दी गई। उनके अंग काट काटकर फेंक दिए गए है। अगर आप शहर में कर्फ्यु लगवा दें, तो स्थिति सँभल जाएगी। रिचर्ड ने कहा कि शहर में कर्फ्यु लगवाने से घबराहट और ज्यादा फैल जाएगी।

रिचर्ड बख्शीजी की बातों में बिल्कुल रुचि नहीं ले रहे थे। वे केवल हां में हां मिला रहे थे। रिचर्ड का कहना था कि हम आपकी कितनी भी मदद करें? आपको हमेशा यही लगेगा कि हम गलत है। आप लोग शहर के नेता है। लोग आपकी बात को ध्यान से सुनेंगे। आप लोगों को स्वयं फैसला लेना चाहिए और अपनी परेशानी को स्वयं सुलझाना चाहिए।

बख्शीजी ने रिचर्ड से कहा कि अगर आप हमारी मदद नहीं करेंगे तो फिर हमें जो करना है, वह हम करेंगे ही। आप अगर शहर में हवाईजहाज ही उड़वा दें तो स्थिति सँभल जाएगी, जिससे लोगों को यह पता चल जाएगा कि सरकार बाखबर है।

रिचर्ड बहुत ही खराब डिप्टी कमिश्नर था। उसके अन्दर मानवता नाम की कोई चीज नहीं थी। वह एक चिकना घड़ा था; जिस पर जितना भी पानी डालो, सारा सरक जाता था। कांग्रेस के सभी सदस्यों को रिचर्ड से बिल्कुल मदद नहीं मिल रही थी। यह फूट और दंगा सब अंग्रेजों का किया धरा था। रिचर्ड उनके घाव में मरहम तो नहीं लगा रहा था, बल्कि दंगे को और बढ़ा रहा था। जब रिचर्ड ने देखा कि ये लोग बिल्कुल मेरे सिर पर चढ़े जा रहे हैं, तब उसने कहा -

"वास्तव में आपका मेरे पास शिकायत लेकर आना ही गलत था। आपको तो पण्डित नेहरु या डिफेंस मिनिस्टर सरदार बलदेवसिंह के पास जाना चाहिए था। सरकार की बागडोर तो उनके हाथ में है।" यह कहते ही हँस दिया।"२४

अब सभी जगह शान्ति छा गई। देवदत्त एक अमन कमेटी बनाना चाहता था, जिससे कहीं पथराव व लड़ाई झगड़ा न हो। वह अपनी अमन कमेटी बनाने में सफल हो गया। उसने एक कॉलेज में सभी हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख लोगों को इकट्ठा किया। यह अमन कमेटी इसलिए बनाई गई कि कहीं पर झगड़ा न हो। सभी लोगों को यह पता चल जाए कि अब शान्ति हो गई है। लोग आपस में दंगा फिसाद न करें। सभी भाई-भाई मिलकर रहें।

अब अमन कमेटी तो बन गई, लेकिन यह तय नहीं हो पा रहा था कि इस कमेटी में कितने हिन्दुओं,

मुसलमानों और सिक्खों के कितने सदस्य शामिल हो? जब बार्तालाप शुरु हुआ, तब लोगों ने उछल उछलकर कहा-

"ले के रहेंगे पाकिस्तान। बख्शीजी ! यह फरेब आप छोड़ दें। एक बार मान जाएँ कि कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है, इसके बाद मैं इन्हें गले लगा लूँगा। कांग्रेस मुसलमानों की नुमाइन्दगी नहीं कर सकती ।"२५

लूकस साहब अमन कमेटी के हैड थे। उन्होंने कहा -

"मैं सोचता हूँ, इस वक्त हम सब मिलकर, जैसे भी हो, शहर की फिज़ा को बेहतर बनायें। यहाँ शहर के सभी बड़े-बड़े लोग मौजूद हैं, उनकी आवाज़ का बड़ा असर होगा। मेरा विचार है कि एक अमन कमेटी बनाई जाएँ और यह अमन कमेटी हर मुहल्ले में, हर गली में अमन का प्रचार करे। इसमें सभी सियासी जमातों के नुमाइन्दे शामिल हों। इस काम के लिए, मैं समझता हूँ कि अगर एक बस का इन्तजाम हो सके, जिस पर लाउडस्पीकर और माइक्रोफोन लगा दिए जाएँ और कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा अन्य सियासी जमातों के नुमाइन्दे बैठकर जगह-जगह बस में से अमन की अपील करें तो इसका बड़ा असर होगा।"२६

देवदत्त हमेशा परिस्थिति को सँभाले रहता था। वह चाहता था कि अमन कमेटी के लिए तीन वाइस प्रेजिडेण्ट चुने जाएँ, लेकिन लोग हमेशा अपने-अपने धर्म को लेकर बात करते थे। एक सरदार जी ने कहा -

"मैं दरख्वास्त करुँगा कि वाइस प्रेजिडेण्ट आप तीन ही रखें, एक हिन्दू, एक मुसलमान भाई, एक सिक्ख। कार्यकारिणी को आप बेशक बड़ा कर लें और उसमें सभी को खुलकर नुमाइन्दगी दें।"

"यहाँ हिन्दू-मुसलमान का सवाल न लाएँ, यह अमन कमेटी है।" देवदत्त फिर आगे बढ़ आया- "मैं दरख्वास्त करुँगा कि सभी सियासी पार्टियों के रुकन इस कमेटी में शामिल हों। मेरी तजवीज़ है कि जनाब हयातबख्श साहब मुस्लिम लीग की तरफ से, बख्शीजी कांग्रेस की तरफ से और भाई जोधसिंह जी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी की तरफ से वाइस प्रेजिडेण्ट चुने जाएँ।"२७

मुसलमान, सिक्ख, हिन्दू, अपनी-अपनी पार्टियों को लेकर झगड़ा करने लगते है कि हमारी पार्टियों के इतने कम सदस्य लिए गए। झगड़ा होने से अमन कमेटी आगे नहीं बढ़ पा रही थी।

देवदत्त लपककर फिर सामने आ गया-

"साहिबान, इस तरह हम कोई काम नहीं कर सकेंगे। फिरका वाराना अनासर के खिलाफ हमें लड़ना है। यह जरुरी नहीं कि किसको नुमाइन्दगी मिले, जरुरी यह है कि अमन कमेटी सभी फिरकों की एक मुश्तरफा जमात बने, ताकि हम हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई मिलकर एक प्लेटफार्म पर से अमन की अपील कर सकें। इसी बात को मद्देनजर रखते हुए मैं तजवीज करता हूँ कि जनाब हयातबख्श, बख्शीजी और ज्ञानी जोधसिंहजी को अमन कमेटी के वाइस-प्रेजिडेण्ट मुन्तखिब किया जाएँ।"२८

अमन कमेटी के लिए एक बस आ गई, जिसमें मुरादअली लाउडस्पीकर से नारे लगा रहा था। सभी लोग देखने लगे कि इस बस में नारे कौन लगा रहा है? मुरादअली ने कहा-

"हिन्दू-मुस्लिम-एक हो।"

"हिन्दू-मुस्लिम-इत्तहाद-जिन्दाबाद!"

अमन कमेटी- जिन्दाबाद!"२९

सभी लोग उस बस में बैठ गए और बस चल पड़ी। बस में बैठे कुछ लोग झगड़ने लगे। बस के पायदान पर खड़ा देवदत्त बोला -

"मनोहरलाल साहब, पर्दे के पीछे हम कोई बात नहीं करते। हम कांग्रेस की दुम नहीं है, हम पेशेवर क्रान्तिकारी हैं। शहर में अमन कायम करना जरुरी है और इसके लिए जरुरी है कि सभी पार्टियों के लीडरों को इकट्ठा किया जाएँ। आपकी पार्टी के भी, जिसके लीडर भी आप ही हैं और जनता भी आप ही हैं। हम भी जानते हैं ये रजअतपसन्द हैं, मगर इस वक्त शहर में अमन के लिए इन्हें एक प्लेटफार्म पर लाना जरुरी है।"३०

'कुंतो' -

'कुंतो' उपन्यास में राजनीतिक वातावरण की दृष्टि कुशलता से की गई है। इस उपन्यास में देश के स्वतन्त्रता संग्राम का राजनीतिक वातावरण चित्रित है। स्वतन्त्रता संग्राम में संघर्षरत सेनानियों की मर्मगाथा का चित्रण भी अच्छा बन पड़ा है। यद्यपि कुंतो सामाजिक उपन्यास है, फिर भी स्वतन्त्रता संग्राम की कथा उपकथा के रुप में बीच-बीच में चलती रहती है। सहदेव के इस कथन से वातावरण और स्पष्ट हो जाता है -

"हाँ, भइया, वही हीरालाल। कुछ ही दिन पहले जेल से छूटा था। यह जलसों की मनादी करता है। हमने इसे मना भी किया था कि कैंटोनमेंट में जलसे की मनादी करने न जाए, सरकार इसकी इज़ाज़त नहीं देगा। हमारा ख्याल था इसे पुल पार करने पर ही गिरफ़्तार कर लेंगे, पर पुल पार करने पर किसी ने कुछ नहीं कहा और यह मनादी का ढोल बजाता आगे बढ़ता गया। सारी कचहरी रोड लाँघ गया, फिर भी इसे किसी ने कुछ नहीं कहा। हम संतुष्ट हो गए, पर जब मैसी गेट के पास पहुँचा तो इसका ताँगा रोक लिया गया और इसे ताँगे पर से नीचे उतार लिया गया" कहते हुए छोटे का चेहरा पीला पड़ता जा रहा था।

"तीन दिन तक इसे मैसी गेट के थाने में पीटते रहे हैं, भइया। तुम्हें क्या बताऊँ? इसे अधमरा करके छोड़ा है,"३१

भीष्मसाहनी एक ही वातावरण को अलग-अलग स्थानों में चित्रित करने में काफी सिद्धहस्त हैं -

"जिन दिनों ब्रिटिश सरकार ने लंबी अवधि के बाद भारत को प्रांतीय स्वायत्त शासन का अधिकार देने का फैसला किया था और किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि यह प्रांतीय स्वायत्त शासन क्या बला है तो हीरालाल ने ऐसे ही एक जलसा शुरु होने से पहले इसकी अपने शब्दों में व्याख्या कर दी थी- "साहिबान, मेहरबानो, यह स्वायत्त शासन क्या है? मेहरबान,यह समझो कि ब्रिटिश सरकार हमसे कहती है कि मैं तुम्हें बेटा तो दूँगी, पर मूत्री बग़ैर। अब खुद ही फ़ैसला कर लो कि ऐसा बेटा तुम्हें

चाहिए या नहीं।" और लोग ठहाका मारकर हँस दिए थे।

हर जलसे में, सरकार के लिए डायरी लिखने वाले खुफ़िया पुलिस के सिपाही मौजूद रहते थे। हीरालाल को उनसे चिढ़ थी। दो दिन पहले भी, जब वह कैंटोनमेंट में मनादी करने के इस भयानक अभियान पर निकला था, तो कार्यालय के बाहर, चबूतरे पर उसने साधारण पोशाक में, खुफ़िया पुलिस के सिपाही योगराज को बैठे देखा था।"३२

हीरालाल सच्चा देशभक्त था। वह देश के लिए मर मिटने को तैयार था। वह निर्धन युवक था, लेकिन उसके अन्दर देशप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। चाहे पुलिस खड़ी हो या कोई भी बैरी हो। वह किसी से नहीं डरता और मनादी करता रहता था। जब हीरा लाल तांगे पर बैठ गया, तब वह ऊँची आवाज़ में मनादी करने लगा-

"शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरनेवालों का यही बाक़ी निशाँ होगा।"३३

इसी तरह भीष्मजी ने 'कुंतो' उपन्यास में जहाँ एक ओर स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के संघर्ष का वातावरण चित्रित किया है, वहीं अंग्रेजी सरकार द्वारा दमन का वातावरण भी उद्धत किया है। भीष्मजी ने राजनैतिक वातावरण को प्रभावशाली बनाने के लिए नाटक मण्डली के माध्यम से गीतों का भी प्रयोग किया है।

हिन्दू-मुस्लिम एकता के संदर्भ में इस गीत के कुछ अंश उघृत हैं -

"सुनो हिंद के रहने वालो,
सुनो, सुनो ।
ये किन बच्चों की चीख़ें हैं,
किस दुखिया माँ की आहें है
किस बेवा दुल्हन की फ़रियाद लिए,
खामोश निगाहें हैं?
हम हिंदू हैं, हम मुस्लिम हैं,
हम सब गरीब, सब दुखियारे
सब एक ही बिपता के मारे,
बंद करो, बंद करो यह खून की होली
खून की होली बंद करो !
बस्ती-बस्ती मौत का डेरा
गली-गली शमशान,
धरती लहूलुहान है सारी !
धरती लहूलुहान ।
सुनो हिंद के रहनेवालो.......।"३४

उस समय भारत और पाकिस्तान का विभाजन होना था। सभी जगह दंगे हो रहे थे। सहदेव बस अड्डे

पर बैठा सिक्खों के वार्तालाप को सुन रहा था। एक सिक्ख दूसरे सिक्ख को दंगों के बारे में बता रहा था। एक सिक्ख ने कहा कि बलबाई आगे बढ़ते जा रहे थे। हम लोग डर के मारे छिपते रहे थे। औरतें अपने बच्चों को रोने नहीं दे रही थीं। सिक्खों ने अपने गुरु को याद किया-

"वाह गुरु हमें बख़्श दो! बख़्श दो, गुरु महाराज! ...." पगड़ी के रामले से अपनी आँखें पोंछते हुए उसने फिर से कहना शुरु किया," किसी तीवी ने सी नहीं की, सरदार जी, सबने गुरु महाराज का नाम लेकर सिर हाज़िर कर दिया। जब हमने अपनी बात औरतों-बच्चियों को तलवार के घाट उतारकर खड्ड के बाहर झाँककर देखा, तो दुश्मन कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। दूर कहीं से उनके ढोल-नगाड़ों की आवाज़ें आ रही थीं। वह कोई दूसरा रास्ता पकड़कर कहीं और जाने लगे थे। उन्होंने हमें नहीं देखा था।..."३५

कई लोग अपने मन में यह विचार कर रहे थे कि हम लोग घर छोड़कर जाएँ कि नहीं, जबकि बलवाइयों का शोर सुनाई दे रहा था। कुछ लोग सामान लादकर निकलते जा रहे थे, जबकि लालाजी अपने मन में यह विचार करते कि हम जाएँ कि नहीं। इस भाग-दौड़ में न जाने कितनी कत्लें हुई है। कितने घर उजड़े हैं और कितने घर से बेघर हो गए हैं -

"उसी शाम, घर के दरवाजे पर लगा ताला देखकर, उसी पड़ोसी ने जो लालाजी की हिफ़ाज़त करता रहा था, एक ही ढेला मारकर ताला तोड़ दिया था, फिर न जाने कहाँ से मुहल्ले के हमदर्द भागते हुए पहुँच गए थे और घंटे-भर के अंदर घर ख़ाली कर दिया गया था और देखते-ही-देखते एक दाढ़ी वाले सज्जन उसमें अपने दो ट्रंक और परिवार के कुछेक लोगों को लेकर घर में जमकर बैठ भी गए थे।"३६

'मय्यादास की माड़ी' -

भीष्मसाहनी का उपन्यास **'मय्यादास की माड़ी'** में राजनीतिक वातावरण को एक लम्बे स्तर पर चित्रित किया है। जैसे- कहीं पर अंग्रेज द्वारा खालसा फौज के सेनापतियों को फोड़ना, कहीं देशी लोगों द्वारा अपनों के साथ बगावत कर अंग्रेजों का साथ देना। कस्बे में अंग्रेज हाकिम द्वारा गाँव के गाँव लोगों को देना और राजा या पूर्व रियासत के तरफ से मोहभंग कराना, आदि बातें राजनैतिक वातावरण की सृष्टि करती हैं। वातावरण में यथार्थता और विश्वसनीयता उत्पन्न करने के लिए भीषण अत्याचारों, अमानुषिक व्यवहारों, हड़ताल आदि युद्ध-विरोधी प्रदर्शनों और जुलूसों आदि को सहायक के रुप में चित्रित किया गया है।

अंग्रेजों ने भारत में रेलवे लाइन बिछाकर भारतीय पूँजी और श्रम के शोषण की एक नई तरकीब सोची। भारतीय रेलवे में जिन ब्रिटिश नागरिकों ने अपनी पूँजी लगाई थी, उस संबंध में विलायती मंत्री का क्या कथन है, द्रष्टव्य है -

"रेलगाड़ियों के निर्माण का सारा ख़र्च भारत के नाम डाला जा रहा है। ख़र्च बेशक़ हम कह

रहे हैं, पर वह वास्तव में भारत को दिया जाने वाला कर्ज़ है। भारत मूल पूँजी भी अदा करेगा और उस पर ब्याज भी देगा....यदि हमें भारत से आर्थिक लाभ उठाना है तो हमें रेलगाड़ियों का जाल ही नहीं बिछाना है, सत्ता को भी हाथ में लेना है। हम रेल की पटरियाँ भी बिछाएँगे, सड़कें भी बनाएँगे, जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए नहरें भी खोदेंगे, संचार के साधनों का भी विकास करेंगे, हम यह सब काम करेंगे।"३७

उपर्युक्त कथन यह स्पष्ट करता है कि अंग्रेजों ने अपनी राजनीति का जाल में किस तरह फैला रखा था। इसी तरह जब खालसा और अंग्रेजी फौज के बीच युद्ध चल रहा था। उस समय का एक दृश्य प्रस्तुत है -

"पहली बार जब लेखराज ने हज़ारों-हज़ार सैनिकों का लश्कर देखा तो उसका दिल झूम-झूम उठा था। इतना बड़ा लश्कर भी हो सकता है। दूर क्षितिज तक उठे हुए नेज़े-भाले, हवा में लहराते रंग-बिरंगे ध्वज और झंडे, रंगारंग वस्त्रों में घुड़सवार, कहीं हरे तो कहीं लाल रंग के कमरबन्द और उनमें लटकती तलवारें, हवा में बजते नगाड़ों की गूँज, पैदल फ़ौज के दस्ते दूर-दूर तक फैले हुए, मानो कोई सैलाब उठा हो जो आगे बढ़ता जा रहा हो। लेखराज भी उस विराट अभियान का एक अंग है, इस विचार से ही उसका दिल हिलोरें लेने लगता था।"३८

"अंग्रेजों ने यह लड़ाई कूटनीति से जीती थी। सिक्ख सेना के दोनों सालार, लालसिंह और तेजसिंह अंदर ही अंदर फिरंगियों से मिले हुए थे।"

युद्ध के समय दोनों मैदान छोड़कर बाहर हो गए थे और फौज ने अचानक खालसा फौज पर आक्रमण कर दिया था। शायद लेखक ने नरेटर के रुप में सही ही कहा है -

"हर लड़ाई मात्र शक्ति का प्रदर्शन भी नहीं होती, हर लड़ाई एक संघर्ष होता है, जिसके साथ कहीं स्वार्थ तो कहीं हित और कहीं आदर्श जुड़े होते हैं।"३९

इस प्रकार भीष्मसाहनी ने अपने उपन्यासों में स्वातन्त्र पूर्व राजनैतिक परिदृश्य का सफलतापूर्वक व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।

(ब) कहानियों में -

भीष्म साहनी ने अपनी अनेक कहानियों में स्वतन्त्रता पूर्व तथा स्वातंत्र्योत्तर युग के राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर चित्रण किया है। अधिकांशतः यह परिदृश्य ब्रिटिश शासनकाल से सम्बन्धित है।

भीष्म साहनी ने 'झूमर' कहानी में स्वातन्त्र्यपूर्व राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर वर्णन किया है -

'झूमर' -

'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' का भाव अत्यन्तः महान है। शायद ही कोई ऐसा अभागा होगा जिसका तन-मन मातृभूमि के पावन स्पर्श से प्रफुल्लित न हुआ हो, स्वदेश की स्मृति से जिसके नेत्रों से श्रद्धा के मोती न बिखरने लगते हों, जिसकी भुजाएँ मातृभूमि को अत्याचार और दासता से त्रस्त देखकर न फड़क उठती हो, जन्मभूमि के गौरवमय इतिहास-लेखन के लिए जिसने अपनी शिराओं के रक्त की स्याही न समर्पित की हो, जिसने अत्याचारी शासन को चुनौती भरे अन्दाज में न पुकारा हो।

देश-प्रेमी की कोई किस्म, जाति,रूप रंग या पोशाक नहीं होती है। मिट्टी खोदने वाले मजदूर से लेकर राष्ट्रपति तक हर एक देशवासी देशभक्त होने का दावा कर सकता है। वह अपने देश के लिए अपना स्वार्थ नहीं देखता है, अपना उल्लू सीधा नहीं करता है। वह अपनी जेबों की चिन्ता नहीं करता है। वह अपने परिवार तक की कुर्वानी दे देता है। सच्चा देशप्रेमी, बलिदानी भी वही है। ऐसा देश प्रेमी साहनी जी ने अपनी कहानी झूमर में अर्जुनदास तथा बोधराज को माना है। अर्जुनदास देश के लिए अपना तन,मन,धन सब समर्पण कर देता है -

> **"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।**
>
> **वह नर नहीं, नर-पशु निरा है और मृतक समान है।।"४०**

'झूमर' भीष्मसाहनी द्वारा लिखित कहानी है। इसमें अर्जुनदास की देश-भक्ति को दिखाया गया है। अर्जुनदास और उसकी पत्नी कमला एक नाटक का शो देखने आए थे। उस शो में अर्जुनदास के सभी पुराने साथी शामिल थे। सभी अपना-अपना अनुभव सुना रहे थे। पंजाब का एक वयोवृद्ध एक साथी अपना अनुभव सुना रहा था,

"एक नाटक था, 'कुर्सी', तुम्हें याद होगा? उस नाटक पर सरकार ने रोक लगा दी थी, पर हमने वह नाटक अजीब ढंग से खेला। एक जगह खेलते तो फौरन ही बाद, बस में बैठकर अगले शहर जा पहुँचते। वहाँ खेलते और फिर अगले शहर के लिए रवाना हो जाते। पुलिस पीछे-पीछे, हम आगे-आगे....''४१

सभी साथियों ने जब अपना-अपना अनुभव सुनाया। उसमें पुलिस की बात चली। पुलिस की बात सुनकर अर्जुनदास को अपना एक अनुभव याद आया। अर्जुनदास के आगे-पीछे पुलिस घूम रही थी। उनके अन्दर देश के प्रति बहुत प्रेम था। वे हर साथी को देश भक्ति से जोड़ देना चाहते थे। उनके खिलाफ कोई वारंट नहीं था। उन्हें शहर में घुसने की इज़ाज़त भी नहीं थी। उन्हें केन्द्र की कार्यकारिणी बैठक में जाना था। वे वहाँ छिपकर पहुँच गए। एक स्कूल की ऊपर वाली मंजिल पर मीटिंग चल रही थी। वे मीटिंग में पहुँचकर अपनी बात कह रहे थे कि उन्हें सूचना मिली कि पुलिस बाहर पहुँच चुकी है। उन्होंने अपनी बात जल्दी से समाप्त की और वे वहाँ से रफू चक्कर हो गए। स्कूल के बाहर दो सिपाही डंडे लिए घूम रहे थे। उन्होंने अपनी सर्ट उतारी और मन्दिर में कूद पड़े। ज्यों ही वे अँधेरे में पहुँचे। उन्होंने दूसरे कोने में जाकर ही दम लिया।

अर्जुनदास की पत्नी जब उनके वारे में सोचती है, तब वह हैरान हो जाती थी। वे आप रंगमंच से नहीं जुड़े थे। उन्होंने पहले देश की स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया था। लोगों की चीखती चिल्लाती आवाजें सुनी और अंग्रेजों

का अत्याचार देखा। उनके अन्दर देश के प्रति एक लहर सी उठी। जब वे एक दिन खादी का कुर्ता-पायजामा पहनकर घर से बाहर निकले, तब उन्होंने अपने मन में विचार किया कि इस कुर्ता पायजामा में क्या रखा है? उनकी दृष्टि में यह देश सेवियों का पहनावा था -

"विद्रोह का प्रतीक था। इसे पहनना देश के विराट आन्दोलन के साथ जुड़ना था। उसे बार-बार रोमांच हो रहा था। उसे लग रहा था जैसे वह किसी घेरे को तोड़कर बाहर निकल आया है और ठाठें मारते किसी महासागर में कूद गया है।"४२

बंगाल के कुछ लोग अर्जुनदास के शहर में आए थे। उस समय बंगाल बहुत संकट से गुजर रहा था। नाटक का अभिनीत कर बंगाल की दुर्दशा का चित्रण किया जाता है, जिससे जनता उनकी कुछ मदद कर सकें। अर्जुनदास घर की ओर लौट रहे थे, लेकिन उनके पैर उनको नाटक देखने के लिए ले गए। जब उन्होंने वह नाटक देखा, तब उनका हृदय द्रवित हो गया। इस नाटक में बंगाल की कहानी थी। वह दृश्य सभी के हृदय को ऐसा छू गया कि सभी के आँसू आ गए। वह नाटक आम नाटकों से अलग था। जब एक वृद्ध झोली फैलाएँ सभी के पास माँगने गया। एक औरत ने अपनी कानों की झूमर उस वृद्ध को दे दी। उसी दिन से अर्जुनदास के जीवन का लक्ष्य बदल गया।

भारत स्वतन्त्र नहीं हुआ था। यह उस समय का वर्णन था। चारों ओर, अंग्रेजों का अत्याचार छाया हुआ था। लोग अंग्रेजों की दासता से मुक्ति पाने के लिए स्वतन्त्रता आन्दोलन में कूद पड़े थे। अर्जुनदास जब बहुत छोटे थे, तब वे स्कूल में पढ़ते थे। उन्होने एक नाटक देखा। यह उस समय की बात है। जब गाँधीजी ने नमक कानून तोड़ा था। उस समय मंच पर गैस की लैम्प जल रही थी। एक आदमी मंच पर आया। वह दुबला-पतला था। सिर पर पगड़ी बाँधे हुए था। उस वृद्ध आदमी ने एक शेर पढ़ा-

"वह देख सितारा टूटा है,
मगरिब का नसीबा फूटा है।"४३

वृद्ध ने जेब से एक कागज़ की पुड़िया निकाली और गैस की रोशनी में ऊँची आवाज़ करके वह पुड़िया दर्शकों को दिखाई-

"साहिबान, यह नमक की पुड़िया है। आज मैंने नमक का कानून तोड़ा है। यह मेरी बापू को छोटी-सी भेंट है छोटी नदी के किनारे पानी को सुखाकर नमक तैयार किया गया है। वंदे मातरम् !"४४

वह वृद्ध मंच पर से उतर गया। आगे की लाइन में तीन पुलिस वाले बैठे थे। लाइन के पीछे भी पुलिस थी। पुलिस वाले उस वृद्ध आदमी को हाथों में बेड़ियाँ डालकर गाड़ी के अन्दर ले गए। वह वृद्ध 'इन्कलाब जिन्दाबाद' और 'महात्मा गाँधी की जय' बोल कर नारे लगा रहा था। उसके नारे अभी भी सुनाई दे रहे थे। अर्जुनदास जब जेल से लौटा था, तब उसके अन्दर वामपंथी विचारधारा पनप रही थी। कुछ सालों में बहुत ही अंतर आ गया था। सभी साथी जो देश के लिए मर मिटने को तैयार थे। वे सभी अलग-अलग अपने काम पर लग गए थे। एक ऐसा साथी भी था, जिसने अपना पूरा जीवन देश की सेवा में लगा दिया था, वह अपनी सेवा के बदले कुछ अपेक्षा नहीं रखता था-

"बोधराज स्वतंत्रता संग्राम के विलक्षण सेनानी रह चुके थे। जीवन के सोलह वर्ष जेलों में काट चुके थे, पर आज़ादी के बाद एक ही झटके से मानो घूरे पर फेंक दिए गए थे। आज़ादी के बाद एक नई पौध उभरी थी- सियासतदानों की। सियासतदान उभरने लगे थे और देशभक्त घूरे पर फेंके जाने लगे थे। एक नहीं, दो नहीं, बीसियों की संख्या में। बोधराज उनके शहर के प्रतिष्ठित देशसेवियों में से थे। आज़ादी के बाद पाँचेक साल में ही, वह आदमी जो कभी घर-घर जाकर स्वतंत्रता-संग्राम के लिए लोगों को उत्प्रेरित किया करता था, अब अपने मुहल्ले में पड़ा सड़ रहा था, देश को कहीं भी उसकी जरुरत नहीं रह गई थी। अब और तो क्या करता, घर-घर जाकर तंबाकू नोशी के नुकसान समझाता फिरता था और लोगों से वचन लेता फिरता था कि वे सिगरेट नहीं पिएँगे।"४५

बोधराज के पास बहुत पैसा था। उसके साथ छल कपट किया गया था। आज की जिन्दगी में कभी किसी के ऊपर ज्यादा विश्वास नहीं करना चाहिए। अर्जुनदास को एक पत्र और एक फार्म मिला था। वह पत्र एक निमन्त्रण पत्र था। स्वतन्त्रता सेनानियों का कोई जमाव राजधानी में होना था। उसके लिए आमंत्रित पत्र था। फार्म में पूछा गया था-

"स्वतंत्रता संघर्ष में आपका क्या योगदान रहा है? उनके प्रश्न थे- कितने दिन जेल काटी, कभी भूख हड़ताल की, जेल के अंदर, जेल के बाहर, कभी किसी लाठी-चार्ज में जख्मी हुए, किसी गोली-कांड में, रचनात्मक कार्य में कैसा योगदान रहा, कभी पदाधिकारी रहे, रहे हों तो किस समिति के, स्थानीय, जिला अथवा प्रादेशिक?"४६

अर्जुनदास ने वह फार्म अपनी पत्नी को दिखाया। पत्नी ने कहा कि आपकी सरकार आप लोगों का फालतू लाभ उठा रही हैं। हम अपनी रोजी रोटी छोड़ें। सरकार क्या हमें कुछ भत्ता देगी? कमला बोली क्या तुम वहाँ जाओगे?

"हाँ, जाएँगे, क्यों नहीं, जाएँगे। आज़ादी की सालगिरह है।"४७

अर्जुनदास जब राजधानी पहुँचा। वहाँ शहर के ६ व्यक्ति भी आए थे-

"स्वतंत्रता सेनानियों के जमाव को देखकर ही वह झूम-झूम उठा था। लालकिले के पीछे लंबे-चौड़े मैदान में स्वतन्त्रता सेनानियों का कैंप लगा था। तंबू ही तंबू थे। पूरी की पूरी बस्ती उठ खड़ी हुई थी। अर्जुनदास पुलक-पुलक उठा था। मेरी भी इस महायज्ञ में अल्प-सी आहुति रही है, वह मन ही मन बार-बार कहता, राजधानी में रैली क्या हुई थी, मानो मानवता का सैलाव उमड़ पड़ा था। उसे देखकर अर्जुनदास पर फिर से जुनून तारी होने लगा था। उसका मन चाहा, इस जनप्रवाह में डूब जाए। उसे बार-बार रोमांच हो आता। मैं इसी मिट्टी की उपज हूँ और अपने देश की इसी मिट्टी में मिल जाना चाहता हूँ, इसी प्रकार के उद्गार उसके दिल में हिलोर ले रहे थे।"४८

वहाँ पर भत्ते की बात चल रही थी। सरकार सभी को भत्ता देगी। कुछ लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ कर रहे थे-

"क्या सभी को एक-जैसा भत्ता देंगे? इसमें क्या तुक है? जिसने तीन महीने जेल काटी, उसे

भी उतना ही भत्ता मिलेगा, जितना उस आदमी को जिसने ग्यारह साल जेल काटी है?"

"मैंने तो जेल, सियालकोट में काटी है और वह पाकिस्तान में चला गया है। मैं तसदीक किससे करवाऊँगा...."४९

कोई कहता है कि जो लोग फाँसी पर चढ़कर मर गए। उन्हें कौन-सा भत्ता मिलेगा? जब अर्जुनदास को गुस्सा आया, तब वह फार्म जमा किए बिना ही वापस आ जाता है और उसने अपपनी पत्नी से गुस्से में आकर कहा-

"मैंने भत्ते के लिए दर्ख्वास्त नहीं दी। यह मेरी देशसेवा का अपमान नहीं है क्या? क्या मैं जेल इसलिए गया था कि एक दिन मैं उसके लिए भत्ता मागूँगा।"५०

कमला ने पुकारकर कहा-

"अगर तुम दर्ख्वास्त देकर आते तो मैं जरूर हैरान होती।" ५१

राजधानी में जब आज़ादी मनाई गई, तब उसमें अर्जुनदास को बुलाया गया था। वहाँ से जब वह लौटा, तब वह रेलगाड़ी में बैठा हुआ था। प्लेटफार्म पर देश के नारे गूँज रहे थे। अर्जुनदास को यह सब सुनकर अच्छा लग रहा था। उसके अन्दर फिर से देश भक्ति की लहर दौड़ गई।

गाड़ी जब तेज चलने लगी, तब वृद्ध देशभक्त एक होकर गाने लगे-

"जरा वी लगन आज़ादी दी
लग गई जिन्हाँ दे मन दे विच्च !
ओह मजनूँ बण फिरदे ने,
हर सहरा, हर वन दे विच्च !"५२

कुछ लोगों ने देश का फिर मजाक उड़ाया, लेकिन अर्जुनदास चुपचाप सुनते रहे। अर्जुनदास सोचने लगे कि पहले कितना अच्छा लग रहा था। वातावरण में त्याग और आत्मोत्सर्ग का माहौल छाया हुआ था। अब सब छिन्न-भिन्न हो गया। जब किसी ने फिर इन्कलाबी गीत गाया-

"सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजू-ए-कातिल में हैं।"५३

सभी लोगों ने इसे ध्यान से सुना। अर्जुनदास ने अपने मन ही मन में कहा-

"क्यों नहीं सुनेंगे, इस गीत को तो देश का दुश्मन भी सिर झुकाकर सुनेगा। यह गीत लिखने वाला तो स्वयं फाँसी के तख्त पर झूल गया था।"५४

जो वेशर्म वेहया लोग होते है। उन्हें आप किसी भी चीज की मना करो तो वह और करते है। जैसे बच्चे को मना करो कि बेटा मिट्‌टी मत खाओ तो वह और मिट्‌टी खाता है। वैसे ही अर्जुनदास ने मना किया कि तुम देश का मजाक मत उड़ाओ तो वह फिर उड़ाने लगे-

"एक ने फिर से 'विच्च' चिल्लाकर कहा। दूसरे ने गीत के गम्भीर स्वर की नकल उतारते हुए कहा,"हाय, मार डाला !" तीसरे ने दिल पर हाथ रखकर कहा,"कुंद छुरी से जिबह कर डाला !"५५

अर्जुनदास को अंग्रेजों की हर चीज से नफरत थी। उसे विदेशी माल न तो पहनना, खाना और न ही रखना पसंद था। जब अर्जुनदास का विवाह ही हुआ था। विवाह के कुछ सालों बाद वे रंगमंच पर काम करते थे। जब वे दोनों रेलवे स्टेशन पर उतरे। वे कुछ फल खरीदना चाहते थे। कमला को आम बहुत पसन्द था। उसे खरबूजा पसन्द नहीं था। जब कमला ने आम लेने को इसरार किया तो वह ठुनक उठा -

"वह आम इसलिए लेना चाहती है, क्योंकि आम ज्यादा महँगा फल है, उसे ऊँचे दर्जे के लोग खाते हैं, जबकि खरबूजा आम आदमी का फल है। अंत में वह चुप हो गई थी और उसने खरबूजा लेना ही मान लिया था, लेकिन उसे यह तर्क सुनकर बड़ा अचंभा हुआ था।

" मैंने कब कहा है,आम बड़े आदमियों का फल है और खरबूजा छोटे आदमियों का? यह तुम कैसी बातें करने लग जाते हो?"५६

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि झूमर कहानी एक ऐसी कहानी है, जो एक व्यक्ति के जीवन को बदल देती है। अगर उस औरत ने उस बूढ़े की झोली में झूमर न डाली होती तो उस व्यक्ति का जीवन नहीं बदलता। अर्जुनदास, बोधराज जैसे देशभक्तों ने अपना पूरा जीवन देश की सेवा में लगा दिया, पर अन्त में उन्हें कुछ नहीं मिला।

'जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की, साँस लेइ बिन प्रान।'

प्रेम चाहे व्यक्ति का हो, चाहे देश का, इसके बिना जीने वाला व्यक्ति साँस लेता हुआ भी लोहार की ध ौंकनी के समान मृत है। देश-प्रेम मानवता का श्रृंगार हैं, हृदयोद्यान की वासन्ती बहार है, अन्याय, अत्याचार के प्रति चुनौती भरी हुँकार है, इसलिए कहा भी जा सकता है -

"जिससे न कभी माँ धरती का, प्राणों से रूप सँवारा हो।
अन्यायी, अत्याचारी, आगे बढ़ना ललकार हो
उस कायर, उस अपराधी को, जीने का है अधिकार नहीं
वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"५७

भीष्म साहनी ने अपनी अनेक कहानियों में स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिदृश्य सुन्दर चित्रण किया।

'आवाजें' -

भीष्मसाहनी ने अपनी कहानी **'आवाजें'** में यह बताने का प्रयास किया है कि उस समय भारत और पाकिस्तान दो भागों में बँट चुका था। भारत का कुछ हिस्सा जो पहले पाकिस्तान में था। सभी लोग वहाँ की जगह छोड़कर भारत आ रहे थे। सभी लोग अपने रहने के लिए ठौर ठिकाना ढूँढ़ रहे थे। वे शरणार्थियों की भाँति घूम रहे थे। अधि ाकांश लोग दिल्ली में पहुँचे। वहाँ की जो बस्ती थी। वहाँ सुनसान छाया हुआ था। वहाँ न पानी की व्यवस्था थी और न लाइट की। केवल वहाँ लैम्पें थी। जगह-जगह से लोग आ रहे थे।

सभी का पहनावा, बोलचाल, रीति-रिवाज अलग थे। कोई सिंध, पश्चिमी बंगाल से आया था। कोई मुल्तान, शिकारपुर, पोठोहार की बोली बोलता था।

वहाँ कुछ परिवार सिंधियों के थे। सिंधी लोग हमेशा सजधज कर रहते थे। वे 'सादा' सफेद सर्ट और चौड़े पाँइचोवाला सफेद पाजामा पहनते थे। उन्हें सिर पर काले रंग की किश्तीनुमा टोपी लगाना बहुत पसन्द था। वे हमेशा टिप-टॉप बनकर रहते थे। उन्हें उन्हें ऐसा लगता था जैसे वे पाकिस्तान से नए कपड़े बनवाकर आए हो। वहाँ का हर व्यक्ति अपनी कमीज पर सुनहरे बटनों की लड़ी धारण करता था। वहाँ की स्त्रियों का तो जवाब ही नहीं था। सिंधियों की लड़कियाँ वैसे ही सुन्दर होती थीं। वे कभी न भी सजें तो सुन्दर लगती थीं। वे अपने घर से सजे तो खूब सजकर निकलती थी। उनके सिर के बाल कटे हुए थे, जो कंधों पर झूलते थे। वे लिपस्टिक, रंग-रोगन आदि लगाती थी। वे इतनी सुन्दर लगती थी कि-

"हिन्दुस्तानी लड़कियों को उनके पिछड़ेपन से 'आज़ाद' कराने आई हैं।"५८

मक्खनलाल एक गरीब व्यक्ति था। डॉ० मोहकमचंद ने उसे नौकरी पर रख लिया था। वह अपनी पूरी ईमानदारी से उनका काम करता था। वह अपने मन में यह विचार करता था कि मैं इनका एहसान कैसे चुकाऊँ? कुछ ऐसा समय आए कि मैं इनकी कुछ सेवा कर सकूँ।

नगरपालिका के जब चुनाव आए, तब बस्ती वालों ने आग्रह किया कि आप खड़े हो जाए। तब मक्खनलाल को मुहल्ले के सभी लोग 'डब्बू' कहकर पुकारते थे। 'डब्बू' को बहुत अच्छा लग रहा था कि अब हम इनकी कुछ सेवा कर सकेंगे। जब डॉ० मोहकमचंद के चुनाव आए। 'डब्बू' ने उनको जीतने के लिए जी तोड़ मेहनत की। वह सुबह ६ बजे से शाम ५ बजे तक नौकरी करता, फिर उनके चुनाव के कार्य में व्यस्त हो जाता था। वह निर्वाचन क्षेत्र की तीनों बस्तियों में घर-घर घूम आता था। अगर उससे किसी ने पूछा तो वह कहता कि इंशाल्लाह, हमारा बटेरा जीतेगा'।

मोहकमचंद चुनाव जीत जाता है। मक्खनलाल बाजार से एक ढोलची को पकड़ लाता है।

"डॉ० मोहकमचंद की दुकान के सामने ढोल बजा, उसके गले में हार डाले हुए और 'डब्बू' के इसरार पर जुलूस निकाला गया। जुलूस चुनाव क्षेत्र की तीनों बस्तियों में घूमा। उस दिन बस्ती में दिन भर ढोल बजता रहा, 'डब्बू' अपने पैसों से लड्डू बनवा लाया और मुहल्ले में लोगों को बाँटता रहा, उनका मुँह मीठा करवाता रहा।"५९

समय जब अच्छा आया, तब मोहकमचंद फिर दुबारा चुनाव जीत गए। विधि के लेख को कोई नहीं समझ सकता कि इन्सान को कब क्या हो जाए? जब उनका स्वर्गवास हो गया, तब मक्खनलाल ने डॉ० मोहकमचंद की अर्थी का वह आयोजन किया कि एक राजा की शोभायात्रा क्या रही होगी?

'अमृतसर आ गया' -

भारत देश जब स्वतन्त्र हो गया, तब देश दो टुकड़ों में बँट गया। भारत एक सुसम्पन्न राष्ट्र था। भारत में हिन्दू और मुसलमान, सिक्ख, ईसाई सभी रहते थे। भारत में हिन्दुओं की संख्या अधिक थी। मुसलमान लोग कम

थे। देश का बँटवारा होने से सभी लोग अपने-अपने देश भागने लगे। किसी को यह समझ में नहीं आ रहा था कि हम कहाँ जाएँ। भारतीयों में एक जोश यह था कि हमारा भारत आज़ाद हो चुका था। पाकिस्तान अलग हो गया। शरणार्थी अपना घर बार छोड़कर अपने लिए ठौर ठिकाना ढूँढ़ रहे थे। लोग तरह-तरह की कल्पनाएँ कर रहे थे। अब भारत का विभाजन हो गया। अब आगे क्या होगा? अपनी सीट के सामने जो सरदार जी बैठे थे। वे आपसे पूछ रहे थे -

"पाकिस्तान बन जाने पर जिन्ना साहिब बम्बई में ही रहेंगे या पाकिस्तान में जाकर बस जाएँगे, और मेरा हर बार यही जवाब होता- बम्बई क्यों छोड़ेंगे, पाकिस्तान में आते-जाते रहेंगे, बम्बई छोड़ देने में क्या तुक है।"६०

सभी शरणार्थी यह जानने का प्रयास कर रहे थे कि कौन सा शहर किस देश में आएगा? लाहौर और गुरदासपुर कौन से देश में आएंगे? जब लोग अपना-अपना घर छोड़कर जा रहे थे, तब अन्य लोग उनका मजाक उड़ा रहे थे, जिसने अपना घर छोड़ दिया हो और वह बेसहारा हो। यह कौन जान सकता था? बेसहारा लोगों का सन्तुलन भी खो जाता हैं। इधर-उधर भटकने के कारण वे यह फैसला नहीं कर पाते कि क्या सही है क्या गलत है? जगह-जगह दंगे हो रहे थे। सभी जगह खून खराबा छाया हुआ था। साम्प्रदायिकता भड़क उठी थी। सभी लोग एक तरह से खून के प्यासे थे। सभी अपनी-अपनी हुकूमत चला रहे थे। लोगों का यह विश्वास था कि भारत के आज़ाद होने पर दंगे अपने आप बन्द हो जाएँगे, लेकिन यह दंगे बन्द होने का नाम ही नहीं ले रहे थे -

"वातावरण के इस झुटपुटे में आज़ादी की सुनहरी धूल-सी उड़ रही थी और साथ ही साथ अनिश्चय भी डोल रहा था और इसी अनिश्चय की स्थिति में किसी-किसी वक्त भावी रिश्तों की रुपरेखा झलक दे जाती थी।"६१

यह घटना उस समय की है। जब आप दिल्ली स्वतन्त्रता दिवस समारोह देखने जा रहे थे, तब गाड़ी ध ीमी गति से चल रही थी। सभी लोगों का आपस में वार्तालाप चल रहा था। सरदार जी बर्मा की लड़ाई में भाग ले चुके थे। वे अंग्रेज लोगों की खिल्ली उड़ा रहे थे।

<u>'वाड़चू'</u> -

पं० जवाहरलाल नेहरू का एशिया का नेता बनने का तथा संसार में एक महान व्यक्ति बनने का स्वप्न अक्टूबर सन् १९६२ में उस समय टूट गया जब चीन ने भारत के उत्तर पूर्वी सीमान्त क्षेत्र (जिसे अब अरुणाचल कहते हैं। हमला कर दिया और हमारी कई चौकियाँ रौंद डाली। भारतीय क्षेत्रीय कमाण्डर भयभीत होकर पीछे हट गया और अब चीनियों के लिए भारत के मार्ग खुले थे। निर्भीक चीनियों ने पश्चिमी क्षेत्र में भी आक्रमण कर दिया और हमारी १३ अग्रिम चौकियों पर अधिकार कर लिया तथा चुशूल वायु पट्टी की ओर बढ़ चले। समस्त भारत में भय का वातावरण बन गया और ऐसा लगता था कि चीनी असम पर अधिकार कर अन्य भारतीय क्षेत्रों पर अधिकार कर लेंगे।

९ नवम्बर, सन् १९६२ को भारत ने अमरीका के राष्ट्रपति कैनेडी को दो पत्र लिखे, जिसमें भारत चीन सीमा पर स्थिति को 'अत्यन्त चिन्ताजनक' बतलाया तथा सैनिक सहायता की माँग की। उन्होंने इंग्लैंड की सरकार को

भी सैनिक सहायता के लिए लिखा। चीन के इस भय से कि सम्भवतः पश्चिमी शक्तियों से टक्कर हो जाएगी। भारत की सीमा पर अग्रिम क्षेत्रों से अपनी सेनाएँ हटा लीं तथा स्थिति ज्यों की त्यों बनी रही और भारत में फिर से शान्ति छा गई, लेकिन भारत के लोगों को चीन के प्रति नफरत सी पैदा हो गई। अगर कोई चीनी भारत आता तो उसे भारतवासी बुरा भला कहते। उसकी जासूसी करते। ऐसा ही एक परिचय 'वाङ्चू' नामक कहानी में देखने को मिलता है।

वाङ्चू चीन का रहने वाला था। वह भारत में बौद्ध धर्म को जानने, समझने और महाप्राण की जन्मस्थली में रहकर उसके संबंध में कार्य करने आए है। जब वह श्रीनगर में आता है, तब वह बौद्ध धर्म के कार्य में ही व्यस्त रहता है। वाङ्चू का एक मित्र था। उन दोनों में अच्छी मित्रता थी। मित्र की मौसेरी बहिन नीलम से वाङ्चू का प्रेम संबंध था, लेकिन वह प्रेम ज्यादा दिन नहीं चला। वाङ्चू सारनाथ चला गया। उसके अपने मित्र व प्रेमिका से पत्रों द्वारा बार्तालाप होती रहती थी। उसके मित्र ने कहा कि तुम चीन चले जाओ। अब चीन और भारत के अच्छे संबंध हो रहे हैं। तुम भारत में रहकर जितने परेशान हो रहे हो। वहाँ की सरकार से तुम्हें कुछ मदद मिलेगी, जिससे तुम अपना कार्य अच्छी तरह से कर सकते हो। वाङ्चू चीन गया। वह दो वर्षों तक वहाँ रहा। वाङ्चू वहाँ एक स्कूल में पढ़ाने लगा। साथ ही पेकिंग के संग्रहालय में सप्ताह में दो दिन कार्य करने लगा। चीन के लोगों ने वाङ्चू को काफ परेशान किया। उससे कई सवाल पूछे गए। वाङ्चू भारत वापस आ गया। जिस दिन वह कलकत्ते के स्टेशन पर पहुँचा। उसी दिन सीमा पर चीन और भारतीय सैनिकों के बीच मुठभेड़ हुई और दस भारतीय सैनिक मारे गए। वाङ्चू ने क्या देखा -

"लोग घूर-घूर कर उसकी ओर देख रहे हैं। वह स्टेशन के बाहर अभी निकला ही था, जब दो सिपाही आकर उसे पुलिस के दफ्तर में ले गए और वहाँ घंटे-भर एक अधिकारी उसके पासपोर्ट और कागजों की छानबीन करता रहा।"६२

पुलिसवालों ने वाङ्चू को बहुत परेशान किया। पुलिस वाले वाङ्चू को चीन का गुप्तचर मानते थे। पुलिस वालों ने वाङ्चू के सामान की जाँच की। उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछे। पुलिस वालों को वाङ्चू पर गुस्सा आ रहा था। उन्होंने -

"सिर से पाँव तक उसे घूर कर देखा। उसकी आँखों में संशय उतर आया था। वाङ्चू अटपटा-सा महसूस करने लगा। भारत में पुलिस अधिकारियों के सामने खड़े होने का उसका पहला अनुभव था। उससे जामिनी के लिए पूछा गया, तो उसने प्रोफेसर तान शान का नाम लिया, फिर गुरुदेव का, पर दोनों मर चुके थे। उसने सारनाथ की संस्था के मंत्री का नाम लिया, शांतिनिकेतन के पुराने दो-एक सहयोगियों के नाम लिए, जो उसे याद थे। सुपरिंटेंडेंट ने सभी का नाम और पते नोट कर लिए। उसके कपड़ों की तीन बार तलाशी ली गई। उसकी डायरी को रख लिया गया, जिसमें उसने अनेक उद्धरण और टिप्पणियाँ लिख रहे थे और सुपरिंटेंडेंट ने उसके नाम के आगे टिप्पणी लिख दी कि इस आदमी पर नजर रखने की जरुरत है।"६३

वाङ्चू जब रेल के डब्बे में बैठा, तब रेल में गोली कांड की चर्चा चल रही थी। सभी यात्री वाङ्चू को घूरने लगे। यात्रियों ने समझ लिया कि वह हिन्दी और बंगाली जानता है। यात्री वाङ्चू से कहने लगे -

"या तो कहो कि तुम्हारे देश वालों ने विश्वासघात किया है, नहीं तो हमारे देश से निकल जाओ......निकल जाओ.........निकल जाओ !"६४

वाङ्चू जब सारनाथ पहुँचा, तब कुछ ही दिन बाद उसे फिर पुलिस पकड़कर ले गई। उसे हर महीने के पहले सोमवार को बनारस के बड़े पुलिस स्टेशन में आना पड़ेगा। कुछ समय बाद भारत और चीन में जंग छिड़ गई। पुलिस वाले वाङ्चू को फिर पकड़ कर ले गए। वाङ्चू के अतिरिक्त पुलिस एक चीनी यात्री को भी पकड़ कर लाई थी। पुलिस वालों ने वाङ्चू की धोती सी पोटरी को जब्त कर लिया। उसमें वाङ्चू के मुख्य कागज थे। जो वाङ्चू ने बौद्ध ग्रन्थों में से छाँटकर लिखे थे। जिस पर कहीं पाली, कहीं संस्कृत भाषा कई चीनी थी। पुलिस वालों को जब उन कागजों की भाषा समझ में नहीं आई, तब उन्होंने उसे दिल्ली सरकार के पास भेज दिया। वाङ्चू ने उन कागजों को बहुत लेने की कोशिश की, लेकिन वह कागज उसे नहीं मिल सके।

पुलिस वालों का कितना अत्याचार वाङ्चू जैसे निर्दोष व्यक्ति को सहना पड़ा। वाङ्चू यह जानता तक नहीं था कि दंगा क्यों हुआ? और न ही वह जानना चाहता था। उसकी जिन्दगी भर की कमाई जो पोटली में थी। उसके चले जाने के कारण वह दुखी रहने लगा। जब वाङ्चू बीमार पड़ा, तब उसे वह पोटली मिली। उसमें केवल एक तिहाई कागज थे और वाङ्चू मर गया।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि गलती चीन के लोगों ने की और उसका दुष्परिणाम वाङ्चू जैसे बौद्ध भिक्षु को सहना पड़ा।

<u>'नौसिखुआ'</u> -

भारत में अनेकों युवक ऐसे हुए हैं, जिन्हें अच्छे संस्कार मिले हैं। परिवार का कोई सदस्य जब बच्चों को महापुरुषों की कहानी सुनाता है, तब उनके अन्दर अच्छी भावनाएँ पैदा होती हैं। वे कुमार्ग पर न जाकर सत्मार्ग पर चलते हैं। उनके अन्दर अपने देश के प्रति प्रेम उमड़ता है। वे माताएँ, बहिनें व पत्नियाँ बड़भागी हैं, जिन्होंने अपने पतियों, भाइयों व बेटों को देश के लिए लड़ना सिखाया है। दादी माँ अपने पोते अमरजीत को गुरु तेग बहादुर के बारे में बताती है कि हमारे देश में सिक्खों के नौ गुरु हो गए हैं। उनमें एक गुरु का नाम गुरु तेग बहादुर है। गुरु तेग बहादुर के दो शिष्य थे। आतताइयों ने गुरु तेग बहादुर के सामने उनके दो शिष्यों को मार डाला था। मतिराम नामक शिष्य को सिर से पैर तक आरे से चीर डाला और दूसरे चेले दयालदास को रुई में लपेटकर उबलते पानी की कड़ाही में झोंक दिया। दादी माँ का अमरजीत के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है -

"गुरु महाराज की देह सड़क पर पड़ी थी। सिर अलग, धड़ अलग और किसी में हिम्मत नहीं थी कि उसे वहाँ से उठा सके..........। फिर जोरों की आँधी आई और धूल के बवंडर उठने लगे। इन्हीं बवंडरों के बीच, जैता नाम का एक बहादुर सिक्ख भागता हुआ आया और गुरू महाराज के कटे हुए शीश को पलक झपकते ही उठा लिया और अपनी चादर में छिपाकर बाहर निकल आया। किसी को पता ही नहीं चला......."६५

अमरजीत ने जब गुरू तेग बहादुर की यह कहानी सुनी, तब उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। जब वहाँ पर आँधी रूकी, तब बादशाह के जो अधिकारी थे। वे गुरू तेग बहादुर का सिर तथा धड़ देख रहे थे। उन अधिकारियों को न तो धड़ मिला और न ही सिर।

गुरू तेग बहादुर के सिर को उनका भक्त जैता आनन्दपुर ले गया। गुरूजी का जहाँ धड़ पड़ा हुआ था, तब वही पर लखीदास नाम का एक व्यापारी रहता था। वह गुरूजी का भक्त था। वह अपने मन में विचार कर रहा था कि गुरू महाराज का शरीर सड़क पर पड़ा रहा और में देख नहीं सका। मैं क्या करूँ? अगर मैं इनका धड़ उठा ले जाऊँ तो आततायियों की खूनी आँखें चारों ओर से मेरा पीछा करेगी-

"पर उसने एक तरकीब सोची। माल ढ़ोने वाला अपना ठेला लिया उसने। उस पर कुछ माल रखा और आँधी के बवंडरों के बीच जा पहुँचा। महाराज के शरीर को उठाया और ठेले पर, माल के बीचो बीच रख लिया और फिर उसे खींचता हुआ बाहर निकल आया और वहाँ से सीधा अपने घर की ओर चल दिया। देखनेवालों ने समझा, अपना सौदागरी का सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जा रहा है. ...।"६६

वह शिष्य अपने गुरू का धड़ अपने घर ले गया। "उसने अपने घर को आग लगा दी। घर के उठते शोलों में महाराज की देह भी भस्म हो गई।"६७

इस प्रकार इन्होंने अपने कहानी साहित्य में देश के स्वातन्त्र्य-पूर्व एवं स्वातंत्र्योत्तर मुगल एवं ब्रिटिश शासन काल परिदृश्य को सफलता पूर्वक प्रस्तुत किया है।

(स) नाटकों में -

भीष्म साहनी ने अपने अनेक नाटकों में मुस्लिम, महाभारत एवं ब्रिटिश शासनकाल के समय के भारतवर्ष के राजनीतिक परिवेश को चित्रित करने का प्रयास किया है।

'कबिरा खड़ा बजार में' -

कबीर किसी भी सार्थक जीवन जीने का प्रयास करने वाले मनुष्य के लिए आलोक पुंज हैं, मन, वचन और धर्म की एकता के प्रति उनकी अखंड प्रतिबद्धता अप्रतिम है। प्रतिबद्धता की इसी अकुंरित शक्ति ने पेशे से जुलाहे और निरक्षर कबीर को कवि, गायक, दार्शनिक भक्त और अन्ततः सन्त के शिखर तक पहुँचाया अपने ही समय में वे किवदन्ती पुरुष हो गए।

कबीर हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों धर्मों की जड़ परम्पराओं, बाह्य कर्मकाण्डों, थोथी मान्यताओं पर तीखा प्रहार किया है। उनमें मानवता अभीष्ठ थी, दिखावा नहीं। धर्मों के मूल का अवगाहन कर उसके विकृत तत्वों को उखाड़ फेंकना उनका महान लक्ष्य था। उनमें कट्टरता असह्य थी। चाहे वह हिन्दुओं की हो या मुसलमानों की। कायस्थ ने कबीर से कहा कि दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी बिहार की फतह के बाद काशी आ रहे हैं। तुम उनके यहाँ रहते

बाजारों में नहीं घूमो। किसी को अपने कवित्त नहीं सुनाओ और न सत्संग करो। कबीर ने कहा कि सत्संग तो होगा। कोतवाल कबीर को जेल में बंद कर देते है। सिकन्दर लोदी जब काशी आ जाते हैं, तब कोतवाल साहब के अधिकारी उनका भव्य स्वागत करते हैं। कोतवाल ने अधिकारियों से कहा कि बादशाह का आदर सत्कार करो। उनकी जो इच्छा हो हम से कहो। अधिकारी ने कोतवाल से कहा –

"बादशाह सलामत ने ख्वाहिश ज़ाहिर की है कि काशी में अपने निवास के दिनों वह कबीरदास नाम के फ़कीर से मिलना चाहते हैं।"६८

कोतवाल साहब कवीर व उनके साथियों को जेल से रिहा कर देते हैं। सिकन्दर लोदी निरंकुश और तानाशाही सत्ता का प्रतीक है। सिकन्दर लोदी जब कबीर से मिलते हैं, तब लोदी ने कहा कि हमने तुम्हारा नाम बहुत सुना है। हमारे पीर, शेख तक्की साहिब अक्सर तुम्हारा जिक्र करते हैं। कबीर ने कहा कि यह उनकी इनायत है। सिकन्दर लोदी ने कबीर से कहा –

"हम चाहते हैं कि तुम हमारे यहाँ दिल्ली में आओ, हम वहाँ तुम्हारी मुलाकात शेख तक्की साहिब से कराएँगे।

उमरा से –

"इन मज़हबी लोगों की गुफ्तगू सुनकर हमें बड़ा लुत्फ आता है। हम अक्सर दो मौलवियों के बीच कोई बहस छेड़ देते हैं। फिर उन्हें चोंचें लड़ाते देखते रहते हैं। खूब मज़ा रहता है।

वज़ीर से –

"शेख तक्की कहा करते हैं कि हिन्दू लोग भी यह मानकर बुत-परस्ती नहीं करते कि बुत ही खुदा है। लाहौल वला कुव्वत! एक पत्थर का टुकड़ा खुदा कैसे हो सकता है ! उसके पीछे भी एक फलसफा है।

वज़ीर : जहाँपनाह !

सिकन्दर : उनका कहना है कि बुत एक जरिया है खुदा तक पहुँचने का। क्या समझे?

वज़ीर : हुजूर !

सिकन्दर : अब तुम समझो एक फनकार है, तस्वीरें बनाता है। उसके दिल में एक जज्बा उठता है। अब जज्बे का अपना तो कोई रंगरुप नहीं होता, कोई शक्ल नहीं होती, लेकिन वह फनकार रंगों, लकीरों की मदद से उस जज्बे को बयान कर देता है। मतलब कि तस्वीर देखनेवाला उन रंगों और लकीरों को देखते हुए उस जज्बे को पा जाता है जिसे फनकार बयान करना चाहता है। समझे? इसी तरह पत्थर का बुत अपने में खुदा नहीं है, लेकिन उसके जरिए हम खुदा का तसव्वुर कर लेते हैं। ऐसा इन लोगों का कहना है। पर हमें तो, सच पूछो, इन बातों के बारे में सोचकर ही सिर-दर्द होने लगता है।"६९

सिकन्दर लोदी ने कबीर से कहा कि तुम क्या करते हो? कबीर ने उत्तर दिया कि मैं जुलाहा हूँ, साहिब कपड़े बुनता हूँ।

सिकन्दर ने जब कबीर को ऊपर से नीचे तक देखा और कहा कि तुम फकीर नहीं हो। तुम्हारे कपड़े

की हालत देखकर ऐसा लगता है कि तुम भिखारी हो। कबीर ने दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी से कहा -

"जुलाहों की यही खूबी है बादशाह सलामत, लोगों को कपड़े पहनाते हैं, खुद चिथड़ों में घूमते हैं। जुलाहों को चिथड़े भी नसीब हो जाएँ, गनीमत है।"७०

कोतवाल ने कबीर की शिकायत बादशाह से की कि यह शहर में बदअमनी फैला रहा है। लोगों को गुमराह कर रहा है। कोतवाल का बादशाह के प्रति यह सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है -

"बादशाह से -

यह आदमी दीन की तौहीन करता है। रोज़ा-नमाज़ को बुरा-भला कहता है, यहाँ तक कि मस्जिद की सीढ़ियों पर खड़ा होकर उल्टी-सीधी बातें करता रहता है।"७१

सिकन्दर लोदी ने जब कबीर की ऐसी हरकतों के बारे में सुना, तब लोदी को कबीर के प्रति नफरत होने लगी और लोदी का कबीर के प्रति यह कथन रेखांकित है -

"सुन फकीर, हमने सोचा था कि हम तुम्हें अपने साथ दिल्ली ले चलेंगे और तेरी मुलाकात शेख़ तक्की साहिब से कराएँगे। पर मैं देखता हूँ कि तू कोई ख़ब्ती जनूनी आदमी है जो यहाँ उल्टी-सीध ी बातें करके बदअमनी फैला रहा है।"७२

इस प्रकार इस नाटक में मुस्लिम शासनकाल के राजनीतिक परिवेश का सुन्दर चित्रण हुआ।

'माधवी' -

'माधवी' नाटक की कथावस्तु महाभारत से ली गई है। यह नाटक १९८४ में लिखा गया। यह एक सम्पूर्ण नाटक है। इस नाटक को लिखने का मुख्य प्रयोजन पुरुष प्रधान सामंती समाज में नारी के प्रति हुए अन्याय और शोषण का मर्मस्पर्शी चित्रण है।

भीष्म साहनी ने पौराणिक स्त्री को आधार बनाकर 'माधवी' नाटक लिखा। नाटक का प्रारंभ कथावाचक के द्वारा कथा-प्रसंग के वाचन से होता है। देवलोक में ध्यान-मग्न भगवान विष्णु का एक बार सहसा ध्यान भंग हो जाता है। दिव्य-चक्षु से उन्होंने देखा कि गंगातट पर आत्महत्या को तत्पर उनका एक भक्त उन्हें स्मरण कर रहा है। भगवान ने अपने वाहक गरुड़ को भेजा। गरुड़ ब्राह्मण का वेश धारण कर युवक से पूछते कि तुम्हें क्या कष्ट है? गालव ने कहा कि मैं विश्वामित्र ऋषि का शिष्य हूँ। मैंने विश्वामित्र ऋषि से १२ विद्याएँ सीखी हैं। मैंने ऋषि विश्वामित्र से गुरुदक्षिणा के लिए कहा। ऋषि ने कहा कि तुम १२ विद्याओं में निपुण हो गए हो। यह मेरी गुरु दक्षिणा है, लेकिन मैंने हट की। ऋषि ने क्रोध में आकर मुझसे ८०० अश्वमेध घोड़े लाने को कहा। मैं यह बात सुनकर घबरा गया कि मैं ऐसे घोड़े कहाँ से लाऊँगा, इसलिए मैं आत्महत्या करने जा रहा हूँ। ब्राह्मण ने ययाति राजा के बारे में बताया कि वे बहुत दानवीर है। आज तक उनके द्वार से कोई भी खाली हाथ नहीं गया। राजा ययाति अपने दो आश्रमवासियों के साथ वन में रहने लगते हैं।

आश्रमवासी-१ ने राजा ययाति से कहा कि महाराज इस वनस्थल में आने से आपका मन अभी तक शान्त

नहीं हुआ। राजा ययाति ने आश्रमवासी-१ से कहा -

"नहीं लगा, बन्धु, ठीक कहते हो। जिन दिनों राज-पाट के कामों में व्यस्त था तो इस दिन की बाट जोहता था कि कब राजपाट की चिन्ताओं से मुक्त होकर, एकान्त में, पूजा- आराधना में अपना समय व्यतीत करुँगा?

मुस्कराकर

"राज-पाट तो पीछे छोड़ आया, पर मन की अशान्ति अपने साथ ले आया।"७३

आश्रमवासी-१ ने राजा ययाति से कहा कि महाराज आप किस बात से अशान्त है -

"महाराज, क्या अपनी बेटी के कारण तो आपका मन अशान्त नहीं रहता? राज-पाट में बने रहते तो आप माधवी का स्वयंवर रचा पाते। अच्छे से अच्छा वर उसे मिल जाता । उसकी स्वर्ग-वासिनी माँ की आत्मा को शान्ति मिलती।

ययाति : उसका स्वयंवर तो मैं यहाँ भी रचाऊँगा। राजाओं ने मुझे भुला दिया है, पर मैंने उन्हें नहीं भुलाया।"७४

गालव जब राजा ययाति के आश्रम में पहुँचता है, तब उन्हें अपना सारा हाल सुनाता है। राजा ययाति का गालव के प्रति एक सुन्दर कथन यहाँ द्रष्टव्य है -

"अब मैं राजा नहीं हूँ, मुनिकुमार, आश्रमवासी हूँ। जिन दिनों मैं पराक्रमी राजा माना जाता था, उन दिनों भी मेरे पास आठ सौ अश्वमेधी घोड़े नहीं थे, इस समय कहाँ होंगे? तुम्हारा आग्रह अनुचित है।"७५

राजा ययाति ने अपनी बेटी माधवी को दान में दे देते हैं और गालव को माधवी के लक्षणों के बारे में बताते हैं -

"राज ज्योतिषियों ने माधवी के लक्षणों की जाँच की है। इसके गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक चक्रवर्ती राजा बनेगा। सुना मुनिकुमार? ऐसे लक्षणों वाली युवती को पाकर कोई भी राजा तुम्हें घोड़े दे देगा। माधवी को पाकर वह धन्य होगा। तुम निःसंकोच इसे ले जाओ।"७६

इस प्रकार इस नाटक में पौराणिक कथानक के माध्यम से महाभारत कालीन राजनीतिक परिदृश्य को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।

(द) अन्य में -

भीष्म साहनी एक देशप्रेमी साहित्यकार थे। वे कांग्रेस के सदस्य के रुप में भी जान से लगे हुए थे। उनके बड़े भाई बलराज ब्रिटेन से लौटकर वामपंथी विचार धारा के समर्थक हो गए थे।

एक शाम रावलपिंडी में कम्पनी बाग के निकट इस्लामिया स्कूल के मैदान में मुस्लिम लीग का एक जलसा हो रहा था। उसमें फिरोजखान नून अपने विचार प्रकट कर रहे थे। वे पंजाब के ब्रिटिश गर्वनर के कौंसिल के सदस्य

थे और वे मुस्लिम लीग में शामिल हो गए थे, बलराज ने कहा कि हम मुस्लिम लीग के जलसे में जाएँगे, तब भीष्म साहनी को गुस्सा आ गया और उनमें तथा बलराज में बहस छिड़ गई।

भीष्म जी ने कहा कि फिरोजखान नून अंग्रेजों का पिट्ठू रहा है। वह अंग्रेजों से मिला हुआ है। वहाँ का पलड़ा कमजोर हुआ तो मुस्लिम लीग में मिल गया। मुस्लिम लीग सबसे बेकार पार्टी है, जो अपने स्वार्थ के लिए हिन्दुओं को भड़का रही है। वह अपना उल्लू सीधा करने में लगी हुई है और वहाँ जो जलसा होना है, वह कांग्रेस के खिलाफ होगा। वह जलसा गाँधी जी के खिलाफ है। मुस्लिम लीग वाले कांग्रेस पार्टी से जलते हैं। हमें अपने देश की स्वाधीनता के लिए लड़ना है।

'आज के अतीत' में भीष्मसाहनी ने उक्त तथ्य को इस प्रकार लिखा है -

"मुस्लिम लीग घोर साम्प्रदायिक पार्टी है," मैंने कहा ।

"पर वह इस वक़्त मुसलमानों की नुमाइन्दा जमात है," बलराज का तर्क था।"

"फ़िरकावाराना जमात भारत की एकता को भंग करनेवाली जमात है। कल तक तो फ़ीरोज़ख़ान नून अंग्रेज़ी गवर्नर की कौंसिल का सदस्य था, अब वह जननेता कैसे बन गया? मुस्लिम लीग भी मुसलमान जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती। वह केवल बड़े-बड़े जमींदारों जागीरदारों की जमात है। मैं हैरान हूँ तुम समझ क्यों नहीं रहे। यह गाँधीजी और जिन्ना को बराबरी का दर्जा देने की कोशिश है। देश के अन्दर और गहरी फूट डालने की कोशिश है -

"पर मुसलमान देश की सबसे बड़ी माईनारिटी है। उन्हें आप दरगुज़र नहीं कर सकते।"७७

सन् १९४५ के अन्त में जब Provincial Autonomy प्रान्तीय एसेम्बलियों के चुनाव की घोषणा हुई। पंजाब एसेम्बली की लेबर सीट के लिए अब्दुल अज़ीज़ को जिला कांग्रेस का सदस्य बनाया गया तथा उनको चुनाव अधिकारी नियुक्त किया गया। भीष्मजी चुनाव प्रचार के लिए जेहलम के निकट खीबड़ा नामक क़स्बे में पहुँचे। वहाँ पर कुछ ऊँचाई पर पत्थरी नमक की खानें हैं। वहाँ पर काम शुरु करने से पहले चाय की तलब होती तो सामने की लकड़ी के खोखे में क़हवाख़ाना था, उसमें भीष्म और आगे बढ़े। क़हवाख़ाने के मालिक ने रोक दिया और उनसे पूछा -

"बाबू जी, आप आ सकते हैं पर इन गद्दारों को मैं चायख़ाने में पाँव नहीं रखने दूँगा।"७८

साहनीजी अपने मन में विचार करने लगे कि खीबड़ा जैसे छोटे नगरों में भी वो भी मामूली दुकानदार है। उनमें भी साम्प्रदायिकता के प्रचार का असर है। वह मालिक मुसलमान था।

उन्होंने ऐसा ही व्यवहार दूसरी जगह देखा दोपहर का समय था। हम सभी ममदोट में थे। एक चौधरी साहब, जो छोटे-मोटे ज़मींदार थे। वे एक पहाड़ी के ऊपर छोटे बँगले में रहते थे। वे कांग्रेस के सदस्य थे। भीष्मजी ने अब्दुल अजीज और उनके भाई को नीचे ही छोड़ा और वे पहाड़ी पर चढ़कर बंगले पर गए।

भीष्मजी जब वहाँ पर गए, तब चौधरी साहब बँगले के बाहर पेड़ की छाँव में बैठे सुस्ता रहे थे। उनकी बड़ी-बड़ी मूँछें, तोंद, खुमाद-भरी आँखें थी।

उसने कुछ कहा ही था कि वे उठकर मुझ पर बरसने लगे। चौधरी के अन्दर साम्प्रदायिकता की यह भावना

बहुत ही पहले से कूट-कूट कर भरी हुई थी -

"आपकी हिम्मत कैसे हुई मेरे पास आने की? चले जाइए! मेरी नज़र से फ़ौरन दूर हो जाइए, वरना मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।"७६

भीष्मजी जब छोटे थे, तब उनके घर के सामने ही दंगे होते थे। उनका स्वयं का कथन द्रष्टव्य है -

"रावलपिंडी के दंगे देख चुका था। पंजाब के जलते शहर भी देख चुका था। लाहौर, जहाँ हमारी रेलगाड़ी चार घंटे तक रुकी रही थी शहालमी की ओर से आग के उठते शोले देखता रहा था।"८०

भीष्मसाहनी यद्यपि नरम दल के नेता थे। उनके अन्दर अपने देश के प्रति प्रेम था। उन्हें अपने जीवन में सदैव अच्छे संस्कार मिले। उनकी मित्र मण्डली, व्यवहारी एवं उनकी संगति अच्छे लोगों से थी। यद्यपि वे वामपंथी विचारधारा से नफरत करते थे। उन्होंने अपने भाई बलराज साहनी को मुस्लिम लीग में शामिल होने से मना किया, क्योंकि मुस्लिम लीग वाले कांग्रेस के विरोधी थे। उस समय पाकिस्तान की माँग की जा रही थी। उन्होंने अपनी आत्मकथा में स्वयं कहा है -

"वामपंथी विचारधारा का असर मुझ पर भी हुआ था। मेरे एक अध्यापक मित्र वी०डी०चोपड़ा-कम्युनिस्ट कार्यकर्ता थे और मुझे अक्सर वाम साहित्य पढ़ने के लिए देते रहते थे। रजनी पॉम दत्त द्वारा लिखित Rise of national socialism in Europe में यूरोप में फ़ासीवादी ताकतों के उत्तरोत्तर बढ़ते ख़तरे पर प्रकाश डाला गया था और बाद में उनकी पुस्तक 'इंडिया टुडे'। उन्हीं दिनों फिलिस बॉटम का उपन्यास The mortal Storm मेरे हाथ लगा था जिसमें एक जर्मन परिवार के अन्दर बढ़ते फ़ासी प्रभाव का रोंगटे खड़े करनेवाला चित्रण था। इससे पहले मेरा अध्ययन बर्टरैंड रस्सेल, ऑल्डस हक्सले आदि तक ही सीमित रहा था, जिनमें ऊँचे स्तर पर चिन्तन तो था जो जनतन्त्रात्मक मूल्यों तथा पद्धति पर बल देता था, पर जो इंग्लैंड के साम्राज्यवादी रवैए को नज़रन्दाज़ कर जाता था। जिस जुझारु स्थिति में से दुनिया गुज़र रही थी उसके प्रति एक प्रकार की अकादमिक तटस्थता उनके लेखन में पाई जाती थी।"८१

भारतवर्ष जब स्वतन्त्र हो गया, तब सभी नागरिक प्रसन्न थे। उनके अन्दर ख़ुशी का कोई ठौर ठिकाना नहीं था। सभी अपनी-अपनी मस्ती में मस्त थे। कोई खुशी के गीत गुनगुना रहा था, तो कोई एक दूसरे को चुटकुला सुना रहा था, जिसको जहाँ जाना होता, वे घूमते फिरते थे। एक सरदार गाड़ीवान फटीचर-सा ताँगा चलाते हुए कह रहा था -

"आज़ादी आई............

घर-घाट से आज़ाद

रोजी-रोटी से आज़ाद

ठौर-ठिकाने से आज़ाद

आज़ाद ही आज़ाद !"८२

देश के स्वतन्त्र होने से शरणार्थी प्रसन्न भी थे, लेकिन एक दुख उन्हें इस बात का भी था कि देश का बँटवारा तो हो गया, लेकिन उनके रहने का स्थान छिन गया था। वे सड़कों पर इधर-उधर घूम रहे थे और उन्हें ऐसा लग रहा था कि देश के इतिहास ने करवट बदली है। देखते ही देखते सारा परिदृश्य ही बदल गया; जो बाहर से लोग आ रहे थे; वे बहुत दुःखी थे, लेकिन वे अपना रोना नहीं रोते थे। उनका यह कहना था जो सब पर बीती है, वह हम पर बीती है। इसमें रोने की क्या बात है, लेकिन देश के आज़ाद होने से सभी को सान्त्वना मिल रही थी? भारतवासियों ने अपनी जगह में थोड़ी कटौती करके उन शरणार्थियों को सहारा दिया। यह उन्होंने इसलिए नहीं किया कि उनके रिश्तेदार भारत के नगरों में मौजूद थे बल्कि भारतवासियों की यह परम्परा रही है कि संकटग्रस्त व्यक्ति की मदद करो। उन शरणार्थियों को वह शरणार्थी शब्द अखरने लगा था। उन्हें ऐसा लगने लगा था -

" हम शरणार्थी नहीं हैं, हम पुरुषार्थी हैं,।"८३

स्वतन्त्रता के पहले उनकी भारतीय जन नाट्य संघ **'इप्टा'** संस्था तेजी से चल रही थी, लेकिन आज़ादी के बाद 'इप्टा' की नीति और कार्यक्रमों में परिवर्तन आने लगा। उस समय भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहर लाल नेहरु थे। 'इप्टा' का कार्य पूरे भारत में बहुत अच्छी तरह से चल रहा था। सभी लोग 'इप्टा' संस्था की तारीफ करते थे। जगह-जगह 'इप्टा' संस्था के कार्यक्रम होते थे। कुछ लोग 'इप्टा' संस्था की बुराई करने लगे -

"अभी तक 'इप्टा' विशाल सांस्कृतिक जनान्दोलन का रुप लिये हुए था, राष्ट्रव्यापी महत्वाकांक्षाओं को वाणी देता था, पर अब राजनीतिक स्तर पर वह कम्युनिस्ट पार्टी की नई नीति का वाहक बनने लगा था। इस नई नीति के अनुसार, नेहरु सरकार की नीतियाँ जन-विरोधी समझी जा रही थीं, इसलिए 'इप्टा' के कार्यक्रमों में नेहरु सरकार की कटु आलोचना की जाने लगी थी बल्कि उसकी खिल्ली भी उड़ाई जाने लगी थी।"८४

'इप्टा' का कोई भी सदस्य ऐसा नहीं था, जो नेहरु की नीति की आलोचना न करता हो। कुछ तो 'इप्टा' के संस्थापक थे जैसे- ख्वाजा अहमद अब्बास। कुछ लोग मध्य वर्ग से आए थे। जो लोग 'इप्टा' में जहर घोल रहे थे। वे लोग नेहरु सरकार की नीतियों की आलोचना भले ही करते हो, लेकिन उन्हें मुद्दा (इप्टा) के कार्यक्रम को नहीं बनाना चाहिए था -

"जो लहर देशव्यापी सांस्कृतिक आन्दोलन का रुप ले रही थी और देश की सांस्कृतिक एकजुटता को मजबूत बना रही थी उसमें गतिरोध पैदा हो गया।"८५

आन्दोलन जब चल रहा था। भीष्म के बाएँ हाथ की कोहनी टूट गई। वे शिमला में उसका इलाज करवा रहे थे। उनके दोस्तों ने कहा कि शिमला में एक नाटक खेला जाए। उन्होंने हाँ कह दिया। इस नाटक का नाम **'कुर्सी'** था। इस नाटक की कथा नेहरु सरकार के विरुद्ध लिखी गई। जब यह नाटक बम्बई में खेला गया, तब यह नाटक काफी लोकप्रिय रहा। पुलिस तीसरे दिन शो पर पहुँच गई। नाटक के जो पात्र थे। वे घबरा गए। कुछ लोगों ने अल्टीमेटम दे दिया और कहा -

"यदि अमुक, सरकार विरोधी गीत गाया गया तो वे नाटक में भाग नहीं लेंगे।"८६

शीला भी नाटक में भाग ले रही थी। शीला ने जब यह बात पिताजी को बताई, तब पिताजी ने कहा कि डरने-घबराने की कोई बात नहीं है। जब नाटक खेला गया था, तब सभी लोगों ने डर के मारे गाँधी टोपी हटा दी थी और जो सरकारी विरोधी पंक्तियाँ थी। उन्हें भी हटा दिया था। नाटक तो समाप्त हो गया, लेकिन पुलिस भीष्म के पीछे पड़ गई और उन्हें नौकरी से बर्खास्त कर दिया।

भीष्मजी कम्युनिष्ट पार्टी के सक्रिय सदस्य थे। इस पार्टी की छवि समाज में काफी अच्छी थी। इस पार्टी के व्यक्ति पर लोग यकीन करते थे विशेषकर चरित्र के मामले में। इस पार्टी में न तो साम्प्रदायिकता थी और न जातिभेद, न रंगभेद था। इस पार्टी का व्यक्ति सादा और संयमी था।

यह बात सन् १९४७-१९४८ के समय की है। जब कम्युनिष्ट पार्टी के बदल जाने से 'इप्टा' संस्था भी बदल गई। आज़ादी के पहले 'इप्टा' एक मानी हुई संस्था थी। यह पूरे देश में फैली हुई थी। 'इप्टा' एक देश व्यापी जनान्दोलन से जुड़ा हुआ था। 'इप्टा' का उद्देश्य समाज में जो रुढ़िवादियाँ फैली हुई थी। उनको दूर करना था। 'इप्टा' संस्था एक न्यायसंगत, समानता तथा समाज व्यवस्था का प्रचार कर रहा था, लेकिन नेहरु सरकार ने 'इप्टा' को बदनाम कर दिया। 'इप्टा' संस्था ने मंच पर नेहरु की आलोचना भले ही की हो, लेकिन उसे हर मामले में बुरा नहीं कहा। 'इप्टा' जैसे रंगभेद साम्प्रदायिकता, स्त्रियों की स्थिति पर अपने विचार प्रकट करता था।

'इप्टा' 'कुर्सी' नाटक शिमला में खेला गया, तब बहुत कामयाब हुआ। साहनी जी अपने नाटक से बहुत प्रसन्न थे। तभी एक सज्जन ने साहनी जी से कहा -

"तुमने कल, नाटक के मंचन में जो तब्दीलियाँ की थीं, वे सुधारवादी तब्दीलियाँ थीं। ऐसा तुमने क्यों किया?"८७

पहली तब्दीली जब हुई - **"प्रहसन के एक सीन में केन्द्रीय पात्र जब सिर पर से अपना टोप उतारता है तो नीचे उसने गाँधी टोपी पहन रखी है।"**८८

कहने का तात्पर्य यह था कि हम लोग हिन्दुस्तानी है। हमारा भारत स्वतन्त्र हो चुका है, फिर भी हम ब्रिटिशों की विचारधारा को अपना रहे हैं। दूसरी तब्दीली तब हुई, जब मैंने एक गीत में एक पंक्ति कटवा दी थी, जिसमें नेहरु सरकार को सीधा ललकारा गया था। एक सज्जन ने पूछा- कि आपने यह तब्दीलियाँ किससे पूछ कर की। मंच पर उपस्थित एक लड़की और मेरी भानजी इस बात पर अड़ गए कि मैं यह गीत पूरा गाऊँगी। मैंने सोचा कि कहीं पुलिस न आ जाए और दंगा न हो जाए।

भीष्मजी कॉलेज के यूनियन के लीडर थे। वे कॉलेज के सबसे अच्छे अध्यापक थे। वे जो भी कार्य करते थे। वह लगन और मेहनत से करते थे। उनके साथी ओ.पी. मोहन, द्वारका दास नरुला, नरेश कुँवर भी बड़े कर्मठ, उत्साही सहयोगी थे।

'ट्रिब्यून' कार्यालय से एक अंग्रेजी में **'दैनिक समाचार'** पत्र निकलता था। उसके उपसम्पादक श्री सूद थे। वह कॉलेज के अध्यापक रह चुके थे। सूद जी यूनियन की खूब मदद करते थे। यूनियन की जो मांगे रहती थी। वे उन्हें सम्पादिकीय में स्थान देते थे।

यूनिवर्सिटी के जब चुनाव आ गए, तब सूद साहब जी ने कहा -

"उस चुनाव में यदि अध्यापकों की यूनियन उन्हें अपना उम्मीदवार बनाए तो वह चुनाव के लिए खड़े होना चाहेंगे।"८९

भीष्मसाहनी जी को यह सुझाव पसन्द आया। इससे उनकी यूनियन को आगे बढ़ने का अच्छा मौका मिलेगा। उनके वह हाथ की हड्डी टूट गई थी। उन्हें नौकरी से भी बर्खास्त कर दिया गया था। उनको अम्बाला पार्टी की ओर से एक हुक्म मिला कि उनको अध्यापकों के प्रतिनिधि के रुप में चुनाव लड़ना है -

"मुझे धक्का लगा। यह फ़ैसला बिना स्थिति को समझे, बिना हम लोगों के साथ विचार-विमर्श किए, किया गया था। नौकरी के बर्खास्त कर दिए जाने पर मेरी स्थिति बदल गई थी। अध्यापकों के प्रतिनिध के नाते मेरी स्थिति कमज़ोर पड़ गई थी। उधर मैं अस्वस्थ था। मुझसे न पूछते, अध्यापकों की कार्यकारिणी से तो पूछते। उन दिनों हुक्मनामे आकाशवाणी की तरह आते थे।"९०

भीष्मजी वोटरों की सूची दबाए, वोट माँगने निकल पड़े। उन्हें कभी अमृतसर तो कभी जालन्धर जाना पड़ा, लेकिन उनको कहीं सफलता नहीं मिली-

"पर मुझे इसका इतना खेद नहीं था जितना इस बात का कि यूनियन ने एक अच्छा सहायक खो दिया। सूद साहब को भी इस बात से बड़ी रंजिश हुई थी।"९१

भीष्मजी यूनियन में अभी भी काम कर रहे थे। जेब में बिल्कुल थोड़े ही पैसे थे। उनकी नौकरी छूट गई थी। कॉलेजों के प्रबन्धक सतर्क हो गए थे। वे यूनियन का कार्य और नौकरी भी ढूँढ़ रहे थे। उनको एक बार **'भूख'** का भी सामना करना पड़ा। ऐसा दिन भी उनकी जिन्दगी में आ गया था।

भीष्मजी जब अमृतसर में थे, तब कुछ समय पहले कॉलेज के अध्यापकों ने उनके हक में आवाज़ उठाने के लिए एक मीटिंग का आयोजन अम्बाला में किया। आयोजन में शान्ति बनी रहे, इसलिए चारों तरफ पुलिस तैनात कर दी गई थी। उन्हें कहीं पुलिस न पकड़ ले। उनके साथियों ने उनसे वहाँ से जाने को कहा।

उस दिन उनको अमृतसर के यूनियन प्रधान कपूर से मिलना था। जब वे कपूर साहब से मिले, तब उन्होंने मिनटों में उनकी बात पूरी कर दी। कपूर साहब को डर था कि कहीं पुलिस यहाँ न आ जाए। उन्हें काफी तेज भूख लग रही थी। जेब में इतने पैसे नहीं थे कि वे कुछ खा सकें -

"तभी मैंने उनसे दो रुपए की माँग की। पर बड़े संकोच के साथ, मजबूर होकर। उन्होंने झट से दो रुपए का नोट मेरे हाथ में दिया और मुझसे छुटकारा पाने के लिए मुझे अपने कमरे से बाहर ले आए। उनकी घबराहट बेबुनियाद थी, क्योंकि पुलिस मेरा पीछा नहीं कर रही थी, पर मुझसे छुटकारा पाकर उन्होंने जरुर राहत की साँस ली।"

"भूख आग है".........जो गीत 'इप्टा' के स्टेज़ पर गाया करता था, उसकी सच्चाई का अनुभव उस दिन हुआ था।"९२

संदर्भ संकेत -

१. विमैन आव् इन्डिया- संपा० तारा अली बेग, पृ० सं० १६

२. हिन्दू सोसायटी एट क्रास रोड्स, पृ० सं० ३६

३. वही, पृ०सं० १६

४. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६

५. वही, पृ०सं० १६

६. वही, पृ०सं० १७

७. वही, पृ०सं० २०

८. वही, पृ०सं० २१

६. वही, पृ०सं० २२

१०. वही, पृ०सं० २४

११. वही, पृ०सं० २४

१२. वही, पृ०सं० २६

१३. वही, पृ०सं० ३१

१४. वही, पृ०सं० ३१

१५. वही, पृ०सं० ३१

१६. वही, पृ०सं० ३१

१७. वही, पृ०सं० ३२

१८. वही, पृ०सं० ३२

१६. वही, पृ०सं० ४८

२०. वही, पृ०सं० ५१

२१. वही, पृ०सं० ५१

२२. वही, पृ०सं० ५२

२३. वही, पृ०सं० ५३

२४. वही, पृ०सं० ७८

२५. वही, पृ०सं० २५४

२६. वही, पृ०सं० २५५

२७. वही, पृ०सं० २५६

२८. वही, पृ०सं० २५६

२६. वही, पृ०सं० २५८

३०. वही, पृ०सं० २५६

३१. कुंतो, भीष्म साहनी, पृ०सं० २१७

३२. वही, पृ०सं० २२२

३३. वही, पृ०सं० २२३

३४. वही, पृ०सं० ३०६

३५. वही, पृ०सं० ३२६

३६. वही, पृ०सं० ३३१

३७. मय्यादास की माड़ी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २००

३८. वही, पृ०सं० १२४

३९. वही, पृ०सं० १३३

४०. चित्रा न्यू कोर्स हिन्दी सौरभ, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल, पृ०सं० ३७६

४१. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५१

४२. वही, पृ०सं० १५४

४३. वही, पृ०सं० १५६

४४. वही, पृ०सं० १५६

४५. वही, पृ०सं० १६०

४६. वही, पृ०सं० १६१

४७. वही, पृ०सं० १६२

४८. वही, पृ०सं० १६३

४९. वही, पृ०सं० १६३

५०. वही, पृ०सं० १६४

५१. वही, पृ०सं० १६४

५२. वही, पृ०सं० १६५

५३. वही, पृ०सं० १६६

५४. वही, पृ०सं० १६७

५५. वही, पृ०सं० १६७

५६. वही, पृ०सं० १६६

५७. भाषाभूषण हिन्दी इण्टर मीडिएट, महेश प्रसाद शर्मा एवं रामविलास शर्मा (अधीर), पृ०सं० ३२२

५८. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० १००

५९. वही, पृ०सं० ११३

६०. पटरियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० २२

६१. वही, पृ०सं० २२

६२. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना एवं प्रतापठाकुर, पृ०सं० २१६

६३. वही, पृ०सं० २१७

६४. वही, पृ०सं० २१७

६५. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० १४२

६६. वही, पृ०सं० १४३

६७. वही, पृ०सं० १४३

६८. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ०सं० ८५

६६. वही, पृ०सं० ६३

७०. वही, पृ०सं० ६३

७१. वही, पृ०सं० ६६

७२. वही, पृ०सं० ६६

७३. माधवी, भीष्म साहनी, पृ०सं० १२

७४. वही, पृ०सं० १३

७५. वही, पृ०सं० १६

७६. वही, पृ०सं० १८

७७. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं० १२५

७८. वही, पृ०सं० १२७

७६. वही, पृ०सं० १२७

८०. वही, पृ०सं० १४६

८१. वही, पृ०सं० १२६

८२. वही, पृ०सं० १३६

८३. वही, पृ०सं० १३७

८४. वही, पृ०सं० १५३

८५. वही, पृ०सं० १५४

८६. वही, पृ०सं० १५६

८७. वही, पृ०सं० १५६

८८. वही, पृ०सं० १५६

८६. वही, पृ०सं० १६०

६०. वही, पृ०सं० १६०

६१. वही, पृ०सं० १६१

६२. वही, पृ०सं० १६२

- संदर्भ संकेत

अध्याय - ६

भीष्म साहनी के साहित्य में सामजिक परिवेश

६.१ - संयुक्त परिवार और उनमें विघटन का दौर

६.२ - परिवार तथा स्त्री पुरुष सम्बन्ध

परिवार

(क) पारिवारिक दायित्व

(ख) मानवीय दायित्व

(ग) अमानवीय दायित्व

६.३ - विवाहित जीवन में

(क) विवाह का स्वरुप

(ख) विवाहपूर्व परपुरुष सम्बन्ध

(ग) विवाहपूर्व परनारी सम्बन्ध

६.४ - विवाहेत्तर परपुरुष एवं परनारी सम्बन्ध

६.५ - नये जीवन मूल्य - नैतिकता एवं अनैतिकता का बदलता स्वरुप

६.६ - नारी संचेतना

(क) उपन्यास (ख) कहानी (ग) नाटक

(६.१) संयुक्त परिवार और उनमें विघटन का दौर -

संयुक्त परिवार -

हिन्दू शास्त्रकारों ने जिन सामाजिक प्रतिमानों को मानवीय जीवनदर्शन में स्थान दिया है उसमें संयुक्त परिवार की एक महत्वपूर्ण पद्धति है। समाज में मानव व्यक्ति, परिवार और समाज तीनों स्तरों पर संगठित और व्यवस्थित जीवन पद्धति का आविष्कार करके हिन्दू विचारकों ने सम्पूर्ण विश्व का मार्ग-दर्शन किया। व्यक्तिगत जीवन के सुव्यवस्थित विकास के लिए आश्रम व्यवस्था और शान्तिपूर्ण सहयोगी सामाजिक जीवन के लिए वर्ण व्यवस्था इस तथ्य के प्रमाण है।

मानव सामाजिक प्राणी है। परिवार में माता-पिता और बच्चे होते है। जब वही परिवार विस्तृत रूप धारण कर लेता है उसे संयुक्त परिवार कहते है। संयुक्त परिवार उन व्यक्तियों का समूह है, जो साधारणतया एक ही मकान में रहते है, एक रसोई में बना भोजन खाते हैं, जो एक ही पूर्वज के वंशज है, सामान्य सम्पत्ति के स्वामी होते है और जो सामान्य उपासना में भाग लेते है तथा किसी न किसी प्रकार से एक दूसरे के रक्त सम्बन्धी हैं। इसमें पति-पत्नी, उनके बच्चे, दादा-दादी, चाचा-चाची, ताऊ-ताई तथा भाई भतीजे सम्मिलित होते हैं। परिवार का सबसे वृद्ध परिवार का मुखिया होता है। परिवार की समस्त आय उसी के पास रहती है। प्राचीनकाल में भारत में संयुक्त परिवारों का प्रचलन था, लेकिन अब संयुक्त परिवारों का स्थान व्यक्तिगत परिवारों ने ले लिया हैं। **डॉ. कर्बे** का भी मत है-

"यहाँ (भारत में) परिवार का अर्थ संयुक्त परिवार से ही है।"१ भारतीय धर्म, दर्शन, अर्थव्यवस्था, जाति प्रथा, वर्ण एवं आश्रम व्यवस्था यहाँ के सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण अंग हैं। इन सभी में परिवार एक महत्वपूर्ण संस्था है। यह हिन्दू संस्कृति का संचालक सूत्र रहा है। हिन्दुओं में विवाह एवं परिवार को धर्म का अंग माना गया है। गृहस्थ आश्रम सभी आश्रमों का मूल कहा गया है। हमारे धर्मशास्त्रों में जहाँ एक ओर संयासी जीवन एवं संसार त्याग की बात कही गई है, वहीं गृहस्थ जीवन की उपयोगिता के भी गुणगान किए गए हैं। वैदिक काल से लेकर अब तक भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली रही है।

मैक्स मूलर ने संयुक्त परिवार को भारत की 'आदि परम्परा' कहा है। श्रीमती कर्वे की भी मान्यता है कि यदि हम भारत में किसी भी सांस्कृतिक तथ्य को समझना चाहते हैं तो तीन बातों का ज्ञान आवश्यक है। ये हैं- भाषाई क्षेत्र की संरचना, जाति संस्था और पारिवारिक संगठन।

संयुक्त परिवार : अर्थ एवं परिभाषा-

इरावती कर्बे के अनुसार- **"एक संयुक्त परिवार ऐसे व्यक्तियों का एक समूह है, जो सामान्यतः एक ही घर में रहते हैं, जो एक ही रसोई में बना भोजन करते है, जो सम्पत्ति के सम्मिलित स्वामी होते हैं। तथा जो सामान्य पूजा में भाग लेते हैं और जो किसी न किसी प्रकार से एक-दूसरे के रक्त सम्बन्ध ी हों ।"२**

आई. पी. देसाई ने लिखा है- **"हम उस गृह को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें एकाकी**

परिवार से अधिक पीढ़ियों (तीन या अधिक) के सदस्य रहते हैं और जिसके सदस्य एक-दूसरे से सम्पत्ति, आय और पारस्परिक अधिकारों तथा कर्तव्यों द्वारा सम्बद्ध हों।"३

बी.आर. अग्रवाल ने लिखा है- "संयुक्त परिवार के सदस्य परिवार और धर्म, पूंजी के सामूहिक विनियोग, लाभ के सामूहिक उपयोग आदि के लिए परिवार के वयोवृद्ध सदस्य की सत्ता के अधीन होते हैं तथा जन्म, विवाह और मृत्यु के अवसर पर सामूहिक कोष में से खर्च किया जाता है।"४

डॉ० दुबे के अनुसार - "यदि कई मूल-परिवार एक साथ रहते हों और उनमें निकट का नाता हो, एक ही स्थान पर भोजन करते हों और एक आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करते हों, तो उन्हें उनके सम्मिलित रूप में संयुक्त परिवार कहा जा सकता हैं।"५

जौली के अनुसार- "न केवल माता-पिता तथा सन्तान, भाई तथा सौतेले भाई सामान्य सम्पत्ति पर रहते हैं, बल्कि कभी-कभी इनके कई पीढ़ियों तक की सन्तानें, पूर्वज तथा समानान्तर सम्बन्ध । भी सम्मिलित रहते हैं।"६ बुलेटिन ऑफ दी क्रिश्चियन इन्स्टीटयूट फॉर दी स्टडी ऑफ सोसाइटी में लिखा है- "संयुक्त परिवार से हमारा आशय उस परिवार से है, जिसमें कई पीढ़ियों के सदस्य एक-दूसरे के प्रति पारस्परिक कर्तव्यपरायणता के बन्धन में बंधे रहते हैं।"७

सयुंक्त परिवार से हमारा तात्पर्य ऐसे परिवार से है जिसमें कई पीढ़ी के लोग एक साथ निवास करते हैं अथवा एक पीढ़ी के भाई अपनी पत्नियों, विवाहित बच्चों तथा अन्य सम्बन्धियों के साथ सामूहिक रूप से निवास करते हैं जिनकी सम्पत्ति सामूहिक होती है। परिवार के सभी सदस्य भोजन, उत्सव, त्यौहार और पूजन में सामूहिक रूप से भाग लेते हैं और परस्पर अधिकारों और कर्तव्यों से बंधे होते हैं।

संयुक्त परिवार की विशेषताएँ -

१. **सामान्य निवास**- संयुक्त परिवार में कई छोटे-छोटे परिवार होते हैं और इसके सदस्य एक ही निवास स्थान पर रहते हैं जिसे वे 'बड़ा घर' कहते हैं।

२. **सामान्य रसोईघर**- इसमें सभी सदस्य एक ही रसोईघर में बना भोजन करते हैं।

३. सयुक्त परिवार की सम्पत्ति सामूहिक होती है।

४. संयुक्त परिवार के सदस्य परिवार के देवताओं एवं धार्मिक उत्सवों, त्यौहारों आदि के अवसर पर सामूहिक रूप से इनमें भाग लेते हैं।

५. संयुक्त परिवार के सदस्य परस्पर रक्त सम्बन्धी होते हैं।

६. संयुक्त परिवार में कई सदस्य होने से इसका आकार बड़ा होता है।

७. संयुक्त परिवार के सदस्य एक-दूसरे के प्रति अधिकारों एवं कर्तव्यों का पालन करते हैं।

८. संयुक्त परिवार जाति, ग्राम पंचायत एवं सामाजिक कार्यों की दृष्टि से एक इकाई माना जाता है।

महत्व-

संयुक्त परिवार शासन एवं धर्म सम्बन्धी कार्य करता है। वह अपने सदस्यों का मार्ग-दर्शन करता है, उन्हें मनोरंजन प्रदान करता है, बच्चों के लालन-पालन में योग देता है। इसमें धन का उचित उपयोग होता है। सम्पत्ति का विभाजन नहीं होता, श्रम विभाजन पाया जाता है, यह संकट का बीमा है। संस्कृति का रक्षक है, समाज में अनुशासन व नियन्त्रण बनाए रखने में सहायक, राष्ट्रीय एकता व देश सेवा में सहायक तथा सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।

संयुक्त परिवार के विघटन का दौर -

भारत एक विशाल देश है। यहाँ पर अधिकांश जनसंख्या गाँवों में निवास करती हैं। गाँवों में अधिकतर लोग संयुक्त परिवार बनाकर रहते हैं, लेकिन आधुनिक सभ्यता ने इनमें परिवर्तन कर दिया हैं। आज जनसंख्या इतनी तेजी से बढ़ रही है कि लोगों को दोनों वक्त भरपेट भोजन नहीं मिल रहा है। वे काम की तलाश में गाँव से शहर की ओर भाग रहे हैं। इससे विघटन की समस्या उत्पन्न हो गई हैं। **बॉटोमोर** लिखते है- **"संयुक्त परिवार का विघटन केवल औद्योगीकरण से सम्बन्धित विभिन्न दशाओं का ही परिणाम नहीं है, बल्कि उसका प्रमुख कारण यह है कि संयुक्त परिवार आर्थिक विकास की आवश्यकताओं को पूरा करने में असफल सिद्ध हो चुका है।"**८

डॉ. कापड़िया ने लिखा- **"नवीन न्यान व्यवस्था, यातायात के नवीन साधन, औद्यौगीकरण, शिक्षा के प्रसार तथा परिवर्तित मनोवृतियों को संयुक्त परिवार के विघटन के लिए उत्तरदायी माना है।"**६ पाणिक्कर ने कहा है - **"संयुक्त परिवार के विघटन के लिए सदस्यों पर आवश्यकता से अधिक नियन्त्रण लगाने और इस कारण उनके सम्बन्धों का क्षेत्र सीमित होना मानते हैं।"**

नवीन आर्थिक परिस्थितियाँ-

मध्ययुग में यातायात की असुविधा, यात्राओं के भारी खतरे, कृषि से भिन्न पेशों का अभाव, मनुष्य को संयुक्त परिवार में रहने के लिए बाधित करता था, अब यातायात के साधनों का विकास हो गया है। अब यात्रा करना पहले से अधिक सुगम और निरापद हो गया है। आजीविका के लिए व्यापार और निरापद हो गया है। आजीविका के लिए व्यापार, व्यवसाय, शिक्षा, कानून, डाक्टरी आदि नए-नए पेशे वन रहे हैं। पहले परिवार से पृथक होने पर कमाई के अवसर और साधन बहुत कम थे, आज उनकी संख्या बहुत बढ़ गई है। शहरों के कारखानों में अधिक वेतन मिलता हैं। जो मजदूरी करते है। उन्हें पेट भरने के अनेकों मौके है। व्यक्ति अपना पेट भरने के लिए हजारों व्यक्ति गाँवों से शहरों की ओर आते हैं। जिससे निम्न वर्ग में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गई। मध्यवर्ग और उच्चवर्ग के लोग नौकरियों और व्यापार के लिए शहरों में जाकर रहते हैं। जो नौकरी करते है, उन्हें संयुक्त परिवार से अलग होना पड़ता हैं। यही स्थिति डॉक्टरों की है। वे लोग एक स्थान पर नहीं रह सकते है। सरकारी तबादले और व्यापार के चक्कर पिता को पुत्र से और छोटे भाई को बड़े भाई से अलग कर देते हैं।

जीवन संघर्ष की उग्रता उन्हें अलग होने के लिए विवश करती हैं। गाँवों के पुराने कुटीरउद्योग औद्योगिक

प्रतिस्पर्धा से नष्ट हो रहे हैं। प्राचीन गृह व्यवसायों का स्थान कल कारखाने ले रहे हैं। इससे जुलाहों, कुम्हारों आदि शिल्पियों में बेकारी और भुखमरी बढ़ रही है। कृषि से उनका पोषण नहीं हो पा रहा हैं। पहले पुरुष अपने परिवार से पृथक होकर शहर में जाता है। जब वह कमाने लगता है तो अपने परिवार को यहाँ बुला लेता है। उसकी यह इच्छा है कि अपने गाढ़े पसीने से पैदा की गई कमाई पर पूरा स्वामित्व हो। उसका उपभोग केवल उसके परिवार वाले ही करें। वह अपनी कमाई का धन अपने गाँव में बसे संयुक्त परिवार को प्रदान करता है। यह स्थिति ज्यादा देर तक नहीं चल पाती है। पत्नी यह कभी नहीं देख सकती कि उसका पति पसीना बहाए और परिवार के सदस्य उसकी कमाई से गुलछर्रे उड़ाएँ। जीवन संघर्ष की यह बाध्यता उसे इस बात के लिए बाधित करती है कि उस धन की अत्यन्त सावधानी से उसका उपयोग किया जाए। जब उसकी पत्नी देखती है कि उसके द्रव्य का दुरुपयोग हो रहा है तो वह अपने पति से अलग होने के लिए कहती है। यह स्थिति संयुक्त परिवार में स्वार्थ वृत्ति की रहती है, परन्तु वर्तमान आर्थिक संघर्ष को देखते हुए उसके ऊपर यह दोष नहीं लगाया जा सकता। परोपकार करना साधु महात्माओं का काम है। हम प्रत्येक स्त्री से ऐसी आशा नहीं रखते कि वह अपने बच्चों और पति से भिन्न प्राणियों को अपनी सम्पत्ति लुटा देने के लिए तैयार होगी। ऐसी अवस्था में संयुक्त परिवार का भंग होना आवश्यक है।

कृषि प्रधान युग में आर्थिक उत्पादन की इकाई परिवार होता है। उस समय वह परिवार स्वालम्बी होता है। अपने उपयोग और उपभोग की वस्तुएँ वह अपने आप तैयार करता है। परिवार को अन्न की आवश्यकता की पूर्ति वह अपने खेत में ही पैदा करते हैं। वस्त्रों के लिए कपास की खेती करते हैं। स्त्रियाँ कताई, बुनाई, सिलाई, धुलाई आदि के घरेलू काम करती हैं। **अब्राहन लिंकन** ने आदर्श प्रजा तन्त्र की व्याख्या करते हुए कहा था कि **"जनता का, जनता द्वारा और जनता के लिए शासन प्रजातन्त्र हैं।"** कृषि युग की आर्थिक व्यवस्था इसी प्रकार की हैं। उसमें सारा आर्थिक उत्पादन पारिवारिक सदस्यों द्वारा होता है। ऐसी अवस्था में संयुक्त परिवार खूब फलती-फूलती हैं। जितने अधिक प्राणी होंगे उतनी ही अधिक काम होगा। एक से यह पूछा गया कि आप दूसरी शादी क्यों करना चाहते है तो उस व्यक्ति ने उत्तर दिया कि मेरी पहली पत्नी के बीमार होने पर कौन रोटी बनाकर खिलाएगा, परन्तु अब मशीनों का निर्माण होने लगा है, जिससे उनमें मौलिक परिवर्तन आ जाता है। अब मनुष्यों का काम मशीनें करने लगी हैं। उनके द्वारा बनी चीजें टिकाऊ और सस्ती होती हैं। इनसे मेहनत की बचत होती हैं। पहले जो कपड़ा घर में महीनों में तैयार होता था अब मशीनों के बन जाने से वह जल्दी बनकर तैयार हो जाता है।

पश्चिम की नई विचार धाराएँ -

पश्चिम के सम्पर्क में आने के बाद इनके अधिकारों पर काफी बल मिला। पूर्वी सभ्यताएँ इस बात पर जोर देते हुए नहीं थकती कि प्रत्येक मनुष्य को अपने दायित्व को पूर्ण करना चाहिए। फ्रांस की राज्य क्रान्ति को जन्म देने वाले वाल्टेयर और रुसो आदि विचारकों ने तारस्वर से यह घोषणा की थी कि मनुष्य कुछ तत्वों के साथ उत्पन्न होता है। उनकी रक्षा होनी चाहिए। भारतीय शास्त्र यह कहते है कि मनुष्य जन्म लेते ही तीन ऋणों वाला होता हैं। उसे अपने जीवन में माता, पिता, गुरू और समाज के इन ऋणों को चुकाना पड़ता है। पश्चिम में जब कोई नया शासन

विधान बनता है तो उसमें मानवीय अधिकारों की घोषणा अवश्य की जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के घोषणा पत्र में यह कहा गया है। हम लोग इन सभी वातों को स्वंय सिद्ध मानते हैं। सब मनुष्य समान पैदा किए गए हैं। भारत में कुछ दूसरी बातों को स्वंय सिद्ध माना गया है। अविच्छेद अधिकारों के स्थान पर अविच्छेद दायित्वों के पालन का आदेश किया गया। गृहपति का यह कर्तव्य है कि वह पंच महायज्ञ और अतिथियों की सेवा करें। परिवार में मुख्य रूप से दो अधिकारों पर बल दिया गया है। १) स्वतन्त्रता का अधिकार २) समानता का अधिकार। भारत के नये संविधान में इन्हें भौतिक अधिकारों के रूप में स्वीकार किया गया है। निरंकुश राजाओं, स्वच्छन्द सामन्तों और असहिष्णु धर्माधिकारियों ने यूरोप को मध्ययुग में दासता की श्रृंखलाओं में जकड़ रखा था। १७८६ में फ्रांस की जनता ने इन जंजीरों को तोड़ा। व्यक्ति के अधिकारों पर बल देने वाले व्यष्टिवाद की प्रधानता हुई। यहाँ पर यह दृष्टि रही है प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। पश्चिम में अधिकारों पर बल दिया गया। इन दोनों में महान दोष यह है यदि अधिकारों पर बहुत अधिक बल दिया जाय तो अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी। समाज अणुशः विघटित हो जाएगा। पश्चिमी देशों की आन्तरिक अशान्ति और कलह का एक बड़ा कारण वैयक्तिक अधिकारों पर अत्यधिक बल देना हैं। दूसरी ओर समष्टिवाद में सामाजिक कर्तव्यों पर बल देने का परिणाम यह होता है व्यक्ति के स्वतन्त्रता का भाव बिल्कुल नष्ट हो जाता हैं। मनुष्य मशीन का एक पुर्जामात्र रह जाता हैं। आदर्श वयवस्था में व्यष्टिवाद और समष्टिवाद का होना आवश्यक है।

संयुक्त परिवार में समष्टिवाद की प्रधानता दी गई है। प्रत्येक व्यक्ति परिवार के सामूहिक के लिए कार्य करता हैं। अपनी सारी कमाई के लिए अर्पित करता है। सुव्यवस्था के लिए परिवार के मुखिया के अनुशासन में रहता है। संयुक्त परिवार एक निरंकुश राजतन्त्र है। परिवार के सब सदस्यों को कर्ता से दबकर रहना पड़ता है, किन्तु स्वतन्त्रता, समानता के नवीन भावों से अनुप्राणित,उच्छृंखल और विद्रोही युवक वृद्ध पुरुषों के दबैल बनकर क्यों रहें? 'सफेद बाल, सिकुड़ी खाल, पोपले मुँहवाले गृहपतियों और कठोर अनुशासन के दिन लद रहे हैं। मध्ययुग में धर्म और श्रद्धा के वातावरण में पालन पोषण पाने के कारण समानाधिकार और स्वतन्त्रता के विचारों से ओतप्रोत होकर, जब बहुएँ संयुक्त परिवार में जाती हैं तो नूतन और पुरातन का घोर संघर्ष प्रारम्भ हो जाता हैं। इससे मुक्ति पाने के लिए विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है। संयुक्त परिवार में रहने के लिए त्याग, तपस्या, बलिदान, आत्मानुशासन और परोपकार की भावनाएँ आवश्यक हैं। वर्तमान, सुखवादी, भौतिक सभ्यता के वातावरण में स्त्री पुरूषों में इन भावनाओं की हाय हो रही है।

संयुक्त परिवार एक निकाय या कारपोरेशन है। इसमें कोई वैयक्तिक अधिकार नहीं होता। परिवार कारपोरेशनों की तरह सनातन और अविनश्वर होते हैं। परिवार की परिवार के रुप में कभी मृत्यु नहीं होती। उसके पुराने सदस्य मरते हैं और नये पैदा होते हैं, किन्तु परिवार की सामूहिक सत्ता में कोई अन्तर नहीं आता। मिताक्षरा में सम्पत्ति परिवार की होती है। इस परिवार के सदस्य जन्म और मृत्यु से निरन्तर परिवर्तित होते रहते हैं। मिताक्षरा व्यवस्था से शासित हिन्दू परिवार सर हेनरी मैन के सुन्दर शब्दों में रक्त सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों का कारपोरेशन हैं। न्यायालयों के उपर्युक्त निर्णयों से संयुक्त परिवार की विशेषता का अन्त हो गया। श्री राधाकमल मुकर्जी ने ठीक लिखा है कि इन परिवारों में संयुक्त परिवार एक बहुत महत्वपूर्ण विशेषता खो रहा है। संयुक्त कुटुम्ब वर्तमान समय में न्यायालयों

द्वारा प्रोत्साहित की जाने वाली व्यष्टिवादी प्रवृत्तियों का शिकार बन रहा है। आयकर कानून ने संयुक्त परिवार के विघटन को बहुत प्रोत्साहित किया है।

संयुक्त परिवार का भविष्य-

शिक्षित जनता में समानता, स्वतन्त्रता और व्यष्टिवाद की भावनाएँ है। शहरों में आर्थिक संघर्ष की उग्रता, रहन-सहन के मानदण्ड की उच्चता, इस व्यवस्था में बड़ी बाधक हैं। पुरुष हमेशा संयुक्त परिवार की स्थिति को निभा ले जाते हैं, जबकि नारियाँ ऐसी स्थिति को नहीं निभा पाती। संयुक्त परिवारों में स्त्रियों को सासो माँ की दासता स्वीकार करनी पड़ती है, इसलिए वे अलग रहना ज्यादा अच्छा समझती है। श्री मचेण्ट ने जब इसका अनुसन्धान किया तो पुरुषों ने 40.9% पक्ष में 43.5% विपक्ष में अपनी राय दी। युवतियों ने 13.8% पक्ष तथा 75 % विपक्ष। इससे यह सिद्ध होता है आगे चलकर यह विघटन की स्थिति निश्चित उत्पन्न होगी। बम्बई की एक स्त्री के मत में यह बहुत बड़ा अभिशाप है। व्यक्ति के विकास में यह महत्तम बाधा और स्त्रियों की समानता और स्वतन्त्रता का घोरतम शत्रु है। पितृसत्तात्मक प्रणाली का यह निरर्थक अवशेष है। स्त्रियाँ अगर शिक्षित हैं तो संयुक्त परिवार का भंग आवश्यक समझना चाहिए।

देश में यह स्थिति बहुत कम देखने को मिलती है, क्योंकि वे लोग खेती करते हैं। गाँवों में अकेले व्यक्तियों को कृषि करने में बड़ी कठिनाई होती है। संयुक्त परिवारों में यदि लड़ाई झगड़ा होता है तो किसानों का काम सरल हो जाता है। एक साथ रहने वाले चार भाई, अलग रहने वालों से अधिक समृद्ध होते हैं। राधाकमल मुकर्जी ने वर्तमान ग्रामीण जगत के आर्थिक दृष्टि से सहयोगी होने का बड़े विस्तार से वर्णन किया है।

बंगाल में शिक्षित वर्ग संयुक्त परिवार का विघटन होने पर भी भाई अपने वृद्ध माता-पिता और मूल परिवार की आर्थिक सहायता करते हैं। त्यौहारों पर तथा अन्य सामाजिक उत्सवों पर इकट्ठे होते हैं। घर में न रहते हुए भी अपने परिवार की अखण्डता को कायम रखने का यत्न करते हैं। मद्रास में भी यही स्थिति देखने को मिलती है।

यीट्स ने लिखा है कि निराशावादी यह कह सकते हैं कि यह पद्धति निराशावादियों की कल्पनानुसार दुर्बल हुई। हम पश्चिमी रंग में रंगे हुए, व्यक्तियों के ऊपरी परिवर्तन से भ्रान्त परिणाम निकाल बैठते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि जिसने छोटी को छोड़ा है। वह हिन्दू रीति नीति को भी छोड़ बैठा हो, वस्तु स्थिति उल्टी होती है। यह परिवर्तन केवल कपड़ों, बाहरी भेष-भूषा, रहन-सहन तक ही सीमित रहता है। **कापड़िया** मानते हैं कि **'हिन्दू मनोवृत्तियाँ आज भी संयुक्त परिवार के पक्ष में हैं।' डॉ० आर० एन० सक्सेना** ने संयुक्त परिवार द्वारा प्रदान किए जाने वाले आर्थिक एवं सामाजिक संरक्षण की पुष्टि की है। वे कहते हैं वर्तमान **'संयुक्त परिवार का वास्तविक रुप एक परिवार के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों में है न कि सम्मिलित निवास स्थान, सम्पत्ति और रसोई में।'** यह निश्चित है कि आज संयुक्त परिवार विभाजन की संख्या बढ़ गई है तथा प्रत्येक विभाजित संयुक्त परिवार कालान्तर में कई नये संयुक्त परिवारों को जन्म देता है। **डॉ० इन्द्रदेव** का मत है कि संयुक्त परिवार टूटकर सीधे व्यक्तिगत परिवार नहीं बने रहे हैं वरन् वे जो रुप ले रहे हैं, उन्हें मध्यवर्ती प्रकार कहा जा सकता है। **आर०पी० देसाई** व अन्य समाजशास्त्रियों की ऐसी मान्यता है कि **''नाभिक परिवार संयुक्त परिवार चक्र में एक अवस्था है। संयुक्त परिवार से पृथक होने वाले निमयिक भाग प्रारम्भ में नाभिक परिवारों के रुप में होते हैं और कालान्तर**

में वे संयुक्त परिवार के रुप में विकसित हो जाते हैं।" रामकृष्ण मुखर्जी लिखते हैं -"भारतीय समाज में केन्द्रीय प्रवृत्ति संयुक्त परिवार को जारी रखने की है, जबकि संयुक्त संरचनाओं की समान्तर शाखाओं को तोड़ देने की ओर ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि समानान्तर प्रवृत्ति का स्थान निकट भविष्य में किसी अन्य के द्वारा लिया जा रहा है।"

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। परिवार में माता-पिता और बच्चे होते हैं। जब वही परिवार विस्तृत रूप धारण कर लेता है, तब उसे संयुक्त परिवार माना जाता है। संयुक्त परिवार उन व्यक्तियों का समूह है, जो साधारणतया एक ही मकान में रहते है, एक रसोई में बना भोजन खाते हैं, जो एक ही पूर्वज के वंशज हैं, सामान्य सम्पत्ति के स्वामी होते हैं और सामान्य उपासना में भाग लेते हैं तथा किसी न किसी प्रकार से एक दूसरे के रक्त सम्बंधी हैं। इसमें पति-पत्नी, उनके बच्चे, दादा-दादी, भाई-बहिन, उनके बच्चे आदि सम्मिलित होते हैं। परिवार का सबसे वृद्ध व्यक्ति ही मुखिया होता है। जब परिवार के बुजुर्ग स्वर्गवासी हो जाते हैं, तब परिवार का भार बढ़े पुत्र पर पड़ता है। वही परिवार का मुखिया होता है। पूरे संयुक्त परिवार का संचालन वही करता है। ऐसा ही एक परिदृश्य **'कुंतो'** नामक उपन्यास में देखने को मिलता है।

कुंतो उपन्यास का पितामह प्रोफ़ेस्साब है। प्रोफ़ेस्साब पाँच भाई और दो बहनें हैं। वह प्रोफ़ेस्साब की छोटी बहन है। प्रोफ़ेस्साब अंग्रेजी विषय के प्राध्यापक है। एक आदर्श प्राध्यापक है। महाविद्यालय में शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच जितना उनका सम्मान है, उतना ही नगर में भी उनका सम्मान है। वे अपने संयुक्त परिवार के प्रमुख है। संयुक्त परिवार उनकी ओर से बंधा है। वे संयुक्त परिवार के प्रत्येक सदस्य के विकास में अपना विकास समझते हैं। धनराज प्रोफ़ेस्साब का छोटा भाई और थुलथुल का पति है। धनराज शादी के एक-दो साल बाद सिंगापुर डॉक्टरी पढ़ने गया था। वह पाँच साल की कहकर गया था और सात साल में लौटा।

धनराज जब अपने घर में प्रवेश करता है, तब उसे पूरा परिवार वैसे ही दिखता है, जैसे वह छोड़कर गया था। धनराज की नजर जब कमरे के सामानों पर पड़ती है, तब उसका यह कथन निम्नलिखित है- "यह भी स्वर्गीय पिता का लट्ठ था, लंबा-सा, लट्ठ जिसे उठाए-उठाए वह प्रातः घूमने जाया करते थे। भइया को क्या यह भी विरासत में मिल गया है या वह स्वयं उठा लाए हैं..........? भइया ने, पिता की मृत्यु के बाद घर में जो वीरानी की स्थिति पैदा हो गई थी, उसका वास्ता देते हुए उसे लौट आने का बार-बार आग्रह किया था - "तुम लौट आओगे तो किसी हद तक वह सूनापन भर जाएगा जो बाबूजी के चले जाने के कारण पैदा हो गया है........" धनराज की नजर फिर से लट्ठ पर पड़ी, यह भइया के लिए पिताजी के संपूर्ण व्यक्तित्व का प्रतीक रहा होगा, उनके चरित्र की दृढ़ता का, उनकी कर्मठता का। भइया की नज़र में स्वर्गीय पिता इस लट्ठ में अभी भी ज़िंदा थे। अभी भी परिवार के बीच बने हुए थे, घर के मुखिया थे उसे संयुक्त परिवार को जोड़े हुए थे।"१०

धनराज सिंगापुर में डॉ० मोना नाम की लड़की से प्रेम करता था। जब वह अपने घर वापस लौटा था, तब वह मोना को भुला नहीं पाया था। उसकी याद ने धनराज को पागल-सा बना दिया था। वह उसके लिए छटपटाता

रहता था। इधर अपनी पत्नी थुलथुल को सताता रहता था। कभी उसे कमरे में से बाहर निकाल देता है। वह पागलों की तरह दीवार पर अपना सिर मारती है कि हे प्रभु ! मुझे उठा लो। अगर तुम्हें उस रखैल के पास रहना था तो फिर यहाँ क्यों आए? धनराज का कमरा प्रोफ़ेस्साब के कमरे से लगा हुआ था। थुलथुल की रोने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। तभी बड़े बाबूजी के लट्ठ से प्रोफेसर भइया ने दरवाज़े की ओर से ठकोरा था और क्रुद्ध आवाज में बोले थे- **"बस बहू, चुप हो जाओ। किसको सुनाने के लिए इतना बावेला मचा रही हो? बस, अब तुम्हारी आवाज़ बाहर सुनाई न दे !"**

और कुछ ही देर में थुलथुल का क्रंदन सिसकियों में बदल गया था, और फिर दो-एक उखड़ी-उखड़ी साँसों के बाद वह चुप हो गई थी और संयुक्त परिवार के इस विशाल भवन में चुप्पी छा गई थी।"११

थुलथुल धनराज के व्यवहार से बहुत दुखी रहती थी। एक दिन थुलथुल की आग में जलकर मौत हो जाती है। एक बड़े कमरें मे स्वर्गीय माँ जी और बड़े बाबूजी के चित्र टँगे थे। उसी प्रकार थुलथुल का भी एक चित्र टाँग दिया गया था। सगे सम्बंधी जो घर से बाहर थे। वे सभी घर में इकट्ठे हो गए थे- **"आँगन में दाएँ हाथ की दीवार के साथ लगकर चारों भाई एक पाँत में बैठे थे- प्रोफ़ेस्साब, धन्ना, तीसरा भाई जो थुलथुल की मृत्यु का समाचार पाकर, बंबई से दौड़ा आया था, और चौथा वकील भाई। यदि जर्मनीवाला भाई आ गया होता तो पाँचों पांडवों की पाँत में सबसे पहला नम्बर उस जर्मनीवाले का होता। चारों भाई एक संग बहुत दिनों के बाद बैठे थे- प्रोफ़ेस्साब को अच्छा लग रहा था। इस शोक-सभा में बैठे सम्बंधियों, नागरिक मित्रों की नज़र भी इन पंक्तिबद्ध भाइयों पर पड़े बिना नहीं रहती थी। ये भाग्यवान परिवार के प्रतीक थे। जीना-मरना तो सब जगह लगा ही रहता है, पर परिवार की एकजुटता का जवाब नहीं है।"१२**

धनराज का विवाह कोकिला से हो गया था। उसके एक पुत्र भी हो गया था। जब कभी बहुएँ बाहर जाती हैं, तब एक साथ चलती थीं। उनमें फर्क इतना था कि थुलथुल के स्थान पर कोकिला आ गई थी - **"कोकिला, धनराज का भाग्य बनकर आई है। प्रोफ़ेस्साब संतुष्ट थे कि सिंगापुरवाली डार्की डार्लिंग सात समंदर पार दूर पीछे छूट चुकी है और संयुक्त परिवार में दरार नहीं आई। वह पहले की ही भाँति एकबद्ध था, अब जब घर की बहुएँ, सज-धजकर एक साथ बाहर निकलतीं तो उनमें थुलथुल के स्थान पर कोकिला चल रही होती।"१३**

प्रोफ़ेस्साब का बड़ा भाई जो जर्मनी गया था। वह विदेश से १६ साल बाद लौटकर आया था, जिससे परिवार में खुशियाँ आ गई थीं। बड़े भाई की उम्र लगभग पचास वर्ष की होगी। **"जिस समय बड़ा भाई लौटा, उसकी अवस्था पचास के आस-पास रही होगी, पर उसमें अभी भी बाँकपन था। स्थूलकाय होने के बावजूद बन-सँवरकर, बन-ठनकर रहता था। उसके आ जाने पर, पाँचों भाई जिस समय सैर-सपाटे को निकलते तो देखते बनता था......।**

"संयुक्त परिवार में रहते हुए बड़े भाई को अपनी रोजी कमाने के लिए दौड़-धूप करने की

ज़रूरत नहीं पड़ी। कामधाम की ओर शुरू-शुरू में तो उसकी कुछ रूचि भी रही, पर शीघ्र ही बड़ा भाई संयुक्त परिवार की सुविधाओं का आनन्द लेने लगा।"१४

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि जब संयुक्त परिवार के लोग बिखर जाते हैं, तब सभी जगह सूनापन-सा छाया रहता है। ऐसा लगता है कि जैसे पतझड़ का मौसम आ गया हो। जब संयुक्त परिवार के सभी लोग आ जाते तथा साथ में मिलकर रहते हैं। इससे परिवार में स्नेह का वातावरण रहता है। ऐसा लगता है कि सभी जगह हरियाली छा गई हो।

(६.२) परिवार तथा स्त्री-पुरुष सम्बन्ध -

परिवार -

"परिवार मानव जाति के आत्म-संरक्षण, वंशवर्धन और जातीय जीवन की निरन्तरता बनाये रखने का प्रमुख साधन है। मनुष्य मरणशील है, किन्तु मानव जाति अमर है। मृत्यु और अमृत्व इन दो विरोधी अवस्थाओं का समन्वय परिवार में ही हुआ है।"१५ हरिदत्त वेदालंकार

प्राणीशास्त्रीय सम्बंधों के आधार पर बने समूहों में परिवार सबसे छोटी इकाई है। प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी परिवार का सदस्य रहा है या है। "समाज में परिवार ही अत्यधिक महत्वपूर्ण समूह है।" अनेक समाजशास्त्रियों का मत है कि परिवार समाज रूपी भवन के कोने का पत्थर है। (Corner stone of Society) संस्कृति के सभी स्तरों में चाहे उन्हें उन्नत कहा जाए या निम्न किसी न किसी प्रकार का पारिवारिक संगठन अनिवार्यतः पाया जाता है। शारीरिक आवश्यकताओं एवं कामवासना की पूर्ति ने ही परिवार को जन्म दिया। परिवार ही नवजात शिशुओं एवं गर्भवती माताओं की देखभाल करता है, यौन सम्बंधों एवं सन्तानोत्पत्ति का नियमन कर उन्हें सामाजिक मान्यता प्रदान करता है। परिवार नये प्राणियों को जन्म देकर मृत्यु से रिक्त होने वाले स्थानों को भरता है तथा समाज की निरन्तरता बनाए रखता है।

परिवार लैंगिक सम्बंधों से परिभाषित एक समूह है जो संतानोत्पत्ति व उसके पालन पोषण में पर्याप्त सुनिश्चित एवं सहिष्णु है। उसके भीतर सगोत्री या गौण सम्बंध हो सकते हैं, किन्तु वह अपनी सन्तान के साथ सहचर व्यक्तियों के साथ जीने की सुस्पष्ट इकाई हैं। (१) सहयोग सम्बंध (२) विवाह का एक प्रकार या अन्य संस्थात्मक प्रबन्ध। जिसके अनुसार सहयोगी सम्बंध स्थापित एवं निर्वासित होते है। (३) वंशगणना को अन्तर्निहित करने वाली नामकरण पद्धति। (४) समूह के सदस्यों से योग्य आर्थिक व्यवस्था परन्तु शिशु जनन, शिशु पालन जैसी क्रियाओं के लिए जिसका विशिष्ट सम्बंध होता है। (५) सामान्य निवास स्थान जो केवल परिवार समूह के लिए ऐकान्तिक नहीं भी हो सकता हैं। मैलिनोवस्की कहते है कि "परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था से अपने साथ लाया है।"१६

मरडॉक ने २५० आदिम परिवारों का अध्ययन करने पर पाया कि कोई भी समाज ऐसा नहीं था जिसमें परिवार रूपी संस्था की अनुपस्थिति हो।

परिवार का अर्थ एवं परिभाषा- (Meaning and Definition of Family) -

Family शब्द का उद्गम लैटिन शब्द Famulus से हुआ है, जो एक ऐसे समूह के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें माता-पिता, बच्चे, नौकर और दास हों। साधारण अर्थों में विवाहित जोड़े को परिवार की संज्ञा दी जाती है, किन्तु समाज शास्त्रीय दृष्टि से यह परिवार शब्द का सही उपयोग नहीं हैं। परिवार में पति पत्नी एवं बच्चों का होना आवश्यक हैं।

मैकाइवर एवं पेज ने लिखा -"परिवार पर्याप्त निश्चित यौन सम्बंध द्वारा परिभाषित एक ऐसा समूह है जो बच्चों के जनन एवं लालन-पालन कीं व्यवस्था करता है।"१७

डॉ० दुबे के अनुसार - "परिवार में स्त्री और पुरूष दोनों को सदस्यता प्राप्त रहती है, उनमें से कम से कम दो विपरीत यौन व्यक्तियों को यौन सम्बन्धों की सामाजिक स्वीकृति रहती है और उनके संसर्ग से उत्पन्न सन्तान मिलकर परिवार का निर्माण करते हैं।"१८

मरडॉक के अनुसार- "परिवार एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसके लक्षण सामान्य निवास, आर्थिक सहयोग और जनन हैं। इनमें दो लिंगों के बालिग शामिल हैं जिनमे कम से कम दो व्यक्तियों द्वारा स्वीकृत यौन सम्बन्ध होता है और जिन बालिग व्यक्तियों में यौन सम्बन्ध होता है, उनके अपने या गोद लिए हुए एक या अधिक बच्चे होते हैं।"१६

लूसी मेयर- "परिवार एक गार्हस्थ्य समूह है जिसमें माता-पिता और सन्तान साथ-साथ रहते हैं। इसमें मूल रूप में दम्पत्ति और उसकी सन्तान रहती है।"२०

संक्षेप में, हम परिवार को जैविकीय सम्बन्धों पर आधारित एक सामाजिक समूह के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जिसमें माता-पिता और बच्चे होते हैं तथा जिसका उद्‌देश्य अपने सदस्यों के लिए सामान्य निवास, आर्थिक सहयोग, यौन-संतुष्टि और प्रजनन, समाजीकरण और शिक्षण आदि की सुविधाएँ जुटाना है।

परिवार की सामान्य विशेषताएँ (लक्षण) General Characteristics of the family -

विवाह सम्बंध-

स्त्री पुरूष के विवाह के कारण ही परिवार अस्तित्व में आता है। इस विवाह का स्वरूप एक विवाह, बहुपति विवाह या बहुपत्नी विवाह आदि कुछ भी हो सकता है। बिना विवाह के वैद्य परिवार का निर्माण नहीं हो सकता।

वंशनाम की व्यवस्था-

आजकल सभी परिवारों में बच्चों का नामकरण रखने का कोई न कोई उद्‌देश्य होता है। हम लोग इसे उपनाम या वंशनाम भी कहते हैं। जो पितृवंशीय परिवार के लोग हैं। उनका नाम पिता के वंश के आधार पर तथा मातृवंशीय परिवार का माता के वंश के आधार पर रखा जाता हैं।

आर्थिक व्यवस्था-

परिवार के सदस्यों का भरण पोषण करने व उन्हें जीवित रखने के लिए किसी न किसी प्रकार की

अर्थव्यवस्था सभी परिवारों में देखने को मिलती है।

सामान्य निवास-

परिवार के सभी सदस्यों के रहने का कोई न कोई निवास स्थान अवश्य होता है। परिवार के सभी सदस्य मिलकर रहते हैं। विवाह के वाद पत्नी पति के घर जाकर रहती है या पति पत्नी के घर जाकर।

सार्वभौमिकता-

परिवार की उपस्थिति सार्वभौमिक हैं। समाज कैसी भी चाहे व प्राचीन या आधुनिक या ग्रामीण या शहरी सभी में परिवार देखने को मिलता है और प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी प्रकार का सदस्य रहा है और भविष्य में भी अवश्य रहेगा। सामाजिक विकास के सभी स्तरों पर हमें परिवार देखने को मिलते हैं। हमारे समाज में जो पशु है वे भी परिवार बनाकर रहते है तो फिर मनुष्य इनसे अछूता कैसे रह सकता है।

भावात्मक सम्बंध-

परिवार के सभी सदस्य भावात्मक सदस्यों में बंधे रहते हैं। माता का अपने बच्चों के प्रति असीम त्याग एवं वात्सल्य की भावना पाई जाती है। पति-पत्नी के बीच प्रेम का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। परिवार के सभी सदस्यों में आपस में भाईचारे का व्यवहार, दया, सहिष्णुता, त्याग की भावना, परोपकार, बलिदान आदि भावनाएँ विद्यमान होती हैं। जो पारिवारिक जीवन को सुदृढ़ बनाती हैं।

रचनात्मक प्रभाव-

परिवार के सदस्यों का नवजात शिशु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। परिवार व्यक्ति के व्यक्तित्व व चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उसके व्यवहार, मनोवृत्ति, आदतों आदि पर परिवार की ही छाप होती है, इसलिए ही कूले परिवार को मानव स्वभाव की पोषिका कहते हैं। कुछ विद्वान इसे शिशु की प्रथम पाठशाला कहते हैं, क्योंकि सर्वप्रथम बच्चे का शिक्षण परिवार में ही होता है। परिवार में बच्चा जिन व्यवहारों एवं आदतों को सीखता है, वे जीवनपर्यन्त उसके साथ रहती हैं।

सीमित आकार-

परिवार के सदस्यों की संख्या १००, २००, ३०० से अधिक नहीं हो सकती। जो पुरानी पीढ़ी होती व मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं। अतः नयी पीढ़ी के आने पर भी सदस्यों की संख्या एक निश्चित सीमा तक बनी रहती हैं।

सामाजिक संरचना में केन्द्रीय स्थिति-

परिवार की सामाजिक संरचना की केन्द्रीय स्थिति एवं समाज का निर्माण भी परिवार की इकाइयों से मिलकर ही होता है। अरस्तू ने समुदाय को परिवार को योग कहा था जिसका अर्थ है कि कई परिवार मिलकर ही समुदाय बनाते हैं।

६.२ (क) पारिवारिक दायित्व-

भीष्म साहनी के अनेक उपन्यासों में पारिवारिक दायित्व के स्वरूप देखने को मिलता है।

'तमस' -

इस उपन्यास में रिचर्ड का प्रशासकीय व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावी है, लेकिन अपने पारिवारिक जीवन में वह असफल रह गया है वह लीजा को बहुत चाहता है, लेकिन उसे अपने कर्तव्यपालन और इतिहास से असीम अनुराग है। वह काम को सर्वोप्रिय समझता है। वह हमेशा यह प्रयास करता है कि औरत मुझे सुख दे, लेकिन उसने लीजा के अन्दर कभी भी यह झाँकने की कोशिश नहीं की कि उसकी भी कुछ इच्छाएँ हैं। यदि उसे अपना ही कार्य प्रिय था, तो उसने विवाह ही क्यों किया? लीजा लन्दन छोड़कर भारत आई। रिचर्ड के साथ कई बार ऐसा हो चुका था कि लीजा कभी एक साल तो कभी ६ महीने लंदन रहकर आती थी। वह यहाँ के माहौल से ऊब जाती थी। रिचर्ड को रात-दिन काम था। वह अकेली घर में किससे बार्तालाप करे? आखिर वह भी औरत है। उसकी भी इच्छा होती है कि उसका पति थोड़ा समय उसके लिए निकाले। लीजा मानवी मूल्य को महत्वपूर्ण समझती है तो रिचर्ड प्रशासन मूल्यों को महत्व देता है।

रिचर्ड जब काम पर चला जाता है, तब लीजा पागलों की तरह पूरे घर में फिरती रहती है। लीजा को किताबों से और गौतम बुद्ध की मूर्तियों से बहुत नफरत है। पूरे कमरे में यही मूर्तियाँ है। ये मूर्तियाँ लीजा को विषैले साँप की तरह लगती है। जब वह खाने वाले रूम में जाती है, तब उसे थोड़ा बहुत सुकून मिलता था, क्योंकि वहाँ न तो किताबों का बोझ था और न ही ये बुत थे। वहाँ वातावरण में स्निग्धता थी - **"व्यक्ति यहाँ सब-कुछ भूल सकता था, बहुत-कुछ याद कर सकता था। ऐसी रोशनी प्रेम करने के लिए बनी थी, अलसाने के लिए, आलिंगनों और चुम्बनों के लिए।"२१**

लीजा रात दिन अकेली छटपटाती रहती है और शराब पर शराब पीती रहती है। जब वह सो जाती है, तब वह सोफे पर लघुशंका कर देती है। जब रिचर्ड सर्विस से रात को ८ बजे घर आता है, तब वह लीजा को सोफे पर पड़ा देखता है। जैसे ही वह लीजा को उसके कमरे में ले जाने के लिए होता है, वैसे ही उसे पेशाब की तीखी गन्ध आती है, जिससे उसका दिमाग खराब हो जाता है। वह लीजा को एक कुर्सी पर बैठाल देता है। लीजा को जब होश आ जाता है। रिचर्ड लीजा के गालों को चूम लेता है और कहता है कि खाना खा लो। वह कहती है कि कौन सा खाना किस समय का खाना? रिचर्ड सोचता है कि क्या ये मुझसे घृणा करने लगी है? नशे में चूर लीजा को यह समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कर रही है? लीजा रिचर्ड के गले में हाथ डालकर उसकी छाती में अपना सिर रखकर कहती है- **"तुम मुझसे प्यार नहीं करते, मैं जानती हूँ, मैं सब जानती हूँ।"२२**

रिचर्ड लीजा की बात को सुनता रहा और उसकी ओर देखता रहा था। उसको लीजा के प्रति घृणा-सी होने लगी थी, क्योंकि वह बहुत नशा करती थी। वह उसके लिए अनाकर्षक तथा माँस का लोथड़ा बनती जा रही थी। रिचर्ड के मन में यह विचार आ रहा था कि इस तरह का रिश्ता ज्यादा दिन तक नहीं चल सकता है। वह यह सोच रहा था कि इस रिश्ते को तोड़ दें- **"यह सवाल भी अपने कैरियर के संदर्भ में ही सोचा जा सकता था। इस वक्त उसके कैरियर में एक निर्णायक घड़ी आ पहुँची थी, जिसमें एक नाजुक-सा सन्तुलन बनाए रखना बेहद जरूरी था, यह देखना निहायत जरूरी था कि जनता का असन्तोष ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध न भड़के। अभी तक उसने सब काम बड़ी समझदारी और कुशलता से सम्पन्न किए थे। लोग उसकी ईमानदारी से**

प्रभावित हुए थे। हर बात सटीक बैठी थी, इसलिए इस समय लीजा को जैसे-तैसे साथ बनाए रखना जरूरी था।

उसने आगे झुककर लीजा का गाल चूम लिया।''२३

रिचर्ड वाकहीं बहुत स्वार्थी व्यक्ति था। उसे केवल अपनी चिन्ता रहती थीं। लीजा को कुछ भी हो जाए, उसे बिल्कुल चिन्ता नहीं थी। जब वह अपने परिवार का नहीं हो सकता था, तब वह दूसरे देश का कैसे होगा?

'कड़ियाँ' -

भगवान मनु ने सुखमय दामपत्य जीवन के सम्बन्ध में लिखा है कि जिस परिवार में स्त्री और पुरूष सन्तुष्ट रहते हैं, वहाँ नित्य कल्याण होता रहता है। जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है और जहाँ उनका सत्कार नहीं होता, वहाँ की प्रत्येक क्रिया निष्फल हो जाती है। जिस कुल की स्त्रियों में शोक होता है अर्थात् जिस कुल में स्त्रियाँ शोकातुर रहती हैं, वह कुल नष्ट हो जाता है और जहाँ स्त्रियाँ प्रसन्न रहती हैं, उस कुल की वृद्धि होती है।

सुखमय दाम्पत्य जीवन के लिए पति-पत्नी का प्रसन्न रहना आवश्यक है। जब तक दोनों व्यक्ति संतुष्ट नहीं रहेंगे, तब तक सुख नहीं प्राप्त हो सकता है। अगर वे आपस में झगड़ते रहेंगे तो इसका दुव्यवहार बच्चे पर पड़ता है। ऐसे में बच्चे का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है और उसका मानसिक सन्तुलन बिगड़ने का डर भी रहता है। ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के 'कड़ियाँ' उपन्यास मे देखने को मिलता है।

परिवार में स्त्री, पुरूष और नाबालिग बच्चे होते हैं। प्रमिला महेन्द्र की पत्नी है। उसके एक बच्चा है। वह सात साल का है। उसका नाम पप्पू है। पति और पत्नी की एक दूसरे से पटती नहीं है। पत्नी एक अनपढ़ औरत है। उसे बाहरी ज्ञान बिल्कुल भी नहीं है। उसे केवल अपने बच्चे व गृहस्थी से मतलब है। वह महेन्द्र की तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं देती है। पूरे समय किचिन में ही लगी रहती है। पति जब रात को जब थककर आता है, तब वह सोते वक्त अपनी पत्नी का इन्तजार करता है। प्रमिला ने कहा कि मैं अभी आ रही हूँ। वह इस बात को टाल देती है। पति जब यह देखता है, तब उसको गुस्सा आ जाता है-

''देख लिया? यही तो मैं कहता हूँ। तुम्हें यह जानने की इच्छा तक नहीं होती कि मर्द चाहता क्या है। तुम समझती हो, बस, खाना बना दिया, घर को झाड़-पोंछ दिया तो तुम्हारा फ़र्ज़ पूरा हो गया।'' "तो क्या किया करूँ? तुम्हें दिन-भर उकसाती रहा करूँ?" प्रमिला ने हँसकर कहा और करवट बदलकर मुँह महेन्द्र की ओर कर लिया, ''बताओ, तुम्हारे बाल सहलाऊँ? तुम्हारी मूँछें चूमूँ? क्या करूँ? मुझे एक बार सिखा दो, मैं वही करने लगूँगी।''

महेन्द्र चुप रहा। उसका मन वितृष्णा से भरने लगा। ठंडी साँस भरकर बोला, "तुम तो काठ की बनी हो, तुम्हारे पल्ले कुछ नहीं पड़ने का।''

महेन्द्र के दिल में टीस उठी। यह औरत जानना तक नहीं चाहती है कि मेरे मन की ऐसी

स्थिति क्यों हो रही है, मैं क्यों दुःखी रहने लगा हूँ। मेरी परेशानियों को यह समझती तक नहीं। **मैंने कब कहा है कि कुछ करेंगे। मुझे तो अब, सच पूछो तो, तुम्हारे साथ लेटने की ख्वाहिश तक नहीं होती।"२४**

महेन्द्र प्रमिला से परेशान रहने लगा था। वह अपने मन में विचार करने लगा कि इससे अब मेरी पट नहीं सकती है। महेन्द्र एक सुषमा नाम की लड़की से प्रेम करने लगा था। वह उसके ऑफिस में कैशियर का काम करती थी। वह यह बात अपनी पत्नी को बताना चाहता था। उसके एक मित्र नाटे ने कहा था - **"भले ही बीसियों स्त्रियों के साथ सम्बंध रखो, पर घरवाली से छिपाए रखो। इसी में सच्वी नैतिकता है।"२५** लेकिन महेन्द्र ने यह बात अपनी पत्नी को बता दी, जिससे उसकी पत्नी नाराज़ रहने लगी। जब महेन्द्र एक बार घर में देर से आया, तब पत्नी ने पूछा कि इतनी देर क्यों हो गई? क्या तुम उस बंगालन के पास गए थे? पत्नी बरस पड़ी। पति ने गुस्से में आकर पत्नी के थप्पड़ मार दिया। **"यह मैं क्या कर बैठा हूँ? वह बुदबुदाया। "यह सब अपने-आप हो गया है- ऐसी औरत के साथ कोई नहीं रह सकता। जब से शादी हुई है एक शब्द भी प्यार का इसके मुँह से नहीं सुना,"वह अपनी सफ़ाई देते हुए बुदबुदाया। "औरत चाहे तो मर्द को अपनी मुट्ठी में रख सकती है। अगर यह सलीकेवाली होती तो मैं सुषमा के पास जाता ही क्यों? यह भी कोई ढंग है जीने का? मैं कुछ माँगता नहीं, बोलता नहीं, इसलिए मेरे साथ बेरूखी की जाती है। जाए जहन्नुम में..... ...मैं ज़रूर सुषमा के पास जाऊँगा। जहाँ से प्यार मिलेगा, लूँगा।"२६**

ऐसी लड़ाई का बुरा असर पप्पू पर पड़ता है। महेन्द्र पप्पू के बारे में सोचने लगता है। सारा वक्त पप्पू की नाक बहती रहती है और हाथों पर मैल जमी रहती है। यही बेहतर होगा कि पप्पू को बोडिंग में डाल दिया जाए। महेन्द्र प्रमिला को तांगे में बैठाकर उसके पिता के घर के लिए रवाना कर देता है। जब महेन्द्र छः महीने बाद पप्पू से मिलने जाता है, तब पप्पू पिता को देखकर हैरान हो जाता है। वह पिता से मिलना नहीं चाहता था। जब पप्पू ने माता-पिता का झगड़ा देखा था, तब वह रोने लगता था। पप्पू को अपने पिता से घृणा होने लगी थी। उसके अन्दर डर समाया हुआ था। कहीं मेरा पिता मुझे झिंझोड़ेगा, क्या करेगा। पप्पू अतिथि भवन में चुपचाप खड़ा पिता को देखता रहा, फिर वहाँ से हटकर डारमिट्री में चला गया। मिसेज भगत किसी ऑफीसर की पत्नी थी। वह अपने बच्चों से मिलने आई थी। उनके बच्चे भी उसी स्कूल में पढ़ते थे, जहाँ महेन्द्र का बच्चा पढ़ता था। मिसेज भगत तथा महेन्द्र दोनों की कार में बैठे अच्छी जान पहचान हो गई। उन्होंने महेन्द्र से कहा कि क्यों न हम बच्चों को कहीं घुमा लाएँ ? वह इस बात को टाल देता है। मिसेज भगत ने आँख उठाकर देखा, फिर हँसकर बोली- **"यही फ़र्क होता है मर्दो और औरतों में। मर्द बच्चों से पिंड छुड़ाते फिरते हैं, औरतें अपने बच्चों के पीछे भागती फिरती हैं, उनके पीछे पागल हुई फिरती है।"२७**

महेन्द्र जब पप्पू को लेकर पिकनिक मनाने गया, तब मिसेज भगत अपने बच्चों को लेकर आगे बढ़ गई। उसके हाथों से पप्पू का हाथ छूट गया। उसने जब घूमकर पप्पू की ओर देखा, तब उसके आगे के दाँत टूटे हुए, पप्पू के मुँह में से चाकलेट की लार बहकर ठुड्डी तक आ गई और चाकलेट वाला हाथ चिपचिपा हो रहा था, जिसे वह अपने

निकर के साथ पोंछ-पोंछ कर साफ कर रहा था। महेन्द्र को यह सब देखकर गुस्सा आ गया। वह मिसेज भगत के बच्चों से लड़ पड़ता है। जब बच्चों को उनके माता-पिता का प्यार नहीं मिलता है, तब उनकी स्थिति यही होती है। जब महेन्द्र पप्पू को डारमिट्री में छोड़ने जाता है, तब वहाँ एक काम करने वाली औरत का महेन्द्र के प्रति यह कथन उल्लेखनीय है- **"साहिब, आप तो बच्चों को ऐसे भूले, ऐसे भूले, इसकी सुध ही नहीं ली और भी माँ-बाप है, हर महीने दौड़े आते हैं।"** फिर दोनों हाथ कमर पर रखकर हँसकर बोली-

"जितना हमें बाबा ने परेशान किया और किसी ने नहीं किया। घरवालों से पहली बार बिछुड़कर आए हैं, इसीलिए ! मेमसाहब नहीं आई?"२८

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है जैसी पप्पू की हालत हुई, वैसी और किसी की न हो। हमें अपने परिवार को एक बगिया की भाँति सींचना चाहिए। जिस प्रकार माली बगिया की देखभाल करता है और उसमें सुगन्धित फूल खिलते है। उसी प्रकार हमें भी अपने परिवार रूपी बगिया को माली की तरह सींचना चाहिए। तभी हमारा परिवार गुलाबों के फूलों की तरह महकता रहेगा। बच्चे का दिमाग एक कोरा कागज़ होता है। उस पर परिवार के लोगों की अमिट छाप पड़ती है। हम जैसा चाहेंगे वैसा बच्चा बनेगा।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र'- (विवाह के बाद नीलू के परिवार की स्थिति)

नीलू जब सुधीर से शादी करती है, तब यह शादी उसके घर के लोगों को किसी को भी पसन्द नहीं थी। जब नीलू के परिवारवालों को इस शादी का पता चलता है, तब उसके वालिद दोनों भाई पुलिस के पास आते हैं। छोटा भाई हमीद विफर कर बोला- **"शादी के मामले में पुलिस का क्या दख़ल है, साहिब ? आपने इस लड़की की दरख्वास्त को ले कैसे लिया? शादी-ब्याह के मामले में पुलिस कहाँ से आ गई।"**२६

नीलू की इस शादी से सभी को चिढ़ थी, क्योंकि लड़का हिन्दू और लड़की मुसलमान थी। छोटे भाई हमीद ने कहा कि तुमने मेरी पूरी नाक कटवा दी। हमें कहीं का नहीं छोड़ा। हमारी पूरी इज़्ज़त मिटटी में मिला दी। जब नीलू ने कहा कि मैं सुधीर के साथ जाऊँगी, तब नीलू के पिताजी ने कहा- **"और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू हमारे लिए मर गई।"**३०

(विवाह के बाद सुधीर के परिवार की स्थिति)

सुधीर ने जब नीलू के साथ विवाह कर लिया, तब वह अपने घर के लिए रवाना हो गया। सुधीर जानता था कि मेरे इस विवाह से कोई खुश नहीं है। शुरू में सुधीर ने पिताजी को बताया था कि मैं नीलू से विवाह करूँगा तो सुधीर के बाबूजी रसोईघर में से जलती लकड़ी उठा लाए थे और उसे घर में से निकल जानें की धमकी दी थी - **"न किसी से पूछा, न बताया और आज हमें नोटिस दे रहा है कि मुसलमानी से ब्याह करेगा। हरामी ! दूर हो जा मेरी आँखों से !"**३१

सुधीर की माँ भी कुछ नहीं कर पा रही थी। वह भी सुधीर के पिताजी से डर रही थी। सुधीर के पिताजी

को मुसलमान की लड़की पसन्द नहीं थी। उन्हें प्रेम-विवाह ही पसन्द नहीं था- **"वह भी मानता था कि प्रेम-विवाह करने वाले युवक-युवतियाँ गिरे हुए लोग होते हैं, जिनका नैतिक पतन हो चुका होता है। उसे भी प्रेम में उच्छृंखलता और कामुकता ही नज़र आती थी। जो युवक कर्तव्यपरायण होते हैं, वे लड़कियों के चक्कर में नहीं पड़ते। युवतियों के लिए तो प्रेम करना तो और भी घृणास्पद है, जघन्य पाप है। लज्जा स्त्री का ज़ेवर है, उसे ही खो दिया तो पीछे क्या रह गया ! कहाँ तो युवतियों का संकोची भीरू स्वभाव जो उनके सौंदर्य का अंग है और कहाँ उनका मुँह उघाड़ कर घूमना, गली-बाज़ार में मुँह फाड़कर हँसना, लड़कों की कमर में हाथ डालकर घूमना, क्या उन्हें शोभा देता है? यह गिरावट नहीं तो क्या है?३२**

सुधीर जानता था कि पिताजी की मनाई के कारण माँ कुछ नहीं कह पा रही है। माँ कहे भी तो क्या कहे? इधर नीलू भी चुप थी। वह भी माँ को देखे जा रही थी, लेकिन वह कुछ भी नहीं बोल रही थी।

माँ ने अपने गले का कंठहार बहू को पहना दिया । उनके लिए खाना रसोईघर के बाहर लगा दिया। गुड़ और घी का मिश्रण बनाकर वर और वधू का स्वागत किया। सुधीर समझ गया था कि यह सब पिता के डर के कारण किया जा रहा है। वहाँ से सुधीर नीलू को लेकर जगदीश के घर की तरफ मुड़ गया।

भीष्मसाहनी ने पारिवारिक दायित्व के अनेक दृश्य प्रस्तुत किए है।

'हानूश' -

परिवार समाज की एक इकाई है, जिसमें मानव अच्छे और बुरे संस्कार ग्रहण करता है। परिवार में स्त्री, पुरूष और बच्चे होते हैं। जब पुरूष विवाह करे, तो उसका पहला कर्तव्य है कि वह अपने परिवार का भरण पोषण करे। वह अपनी पत्नी व बच्चों की जरूरतों को पूरा करे। अगर पुरूष उनका पोषण नहीं कर सकता, तो लोग उसे ताना देते हैं। एक कहावत है **"जब तक लड़का कमाता न हो उसका विवाह नहीं करना चाहिए।"** अगर आपको अपना कोई उद्देश्य पूरा करना है, तो पहले परिवार का भरण-पोषण करो, फिर अपना उद्देश्य पूरा करो। **ऐसा ही एक परिदृश्य हानूश में देखने को मिलता है।**

हानूश ताले बनाने वाला एक व्यक्ति है। उसकी पत्नी कात्या और एक बेटी है। उसे घड़ी बनाने की धुन के कारण गहरे आर्थिक संकट का शिकार होना पड़ा। वह कभी कभी कुछ ताले बनाकर बेच आता है, फिर ८-१० दिन कभी ताले नहीं बनाता है। उसको गिरजे से कुछ अनुदान मिलता था। अब वह अनुदान मिलना भी बंद हो गया। घड़ी बनाने की धुन उस पर पिछले १०-१२ साल से सवार है और इस बीच अच्छे भोजन, गर्म कपड़ों और दवा के बिना उसका इकलौता बेटा मौत के मुँह में जा चुका है। कात्या नहीं चाहती कि हानूश देश की पहली घड़ी बनाने की धुन में अपने परिवार को यों अभावों की भट्ठी में झोकता चला जाए। पत्नी ने हानूश के भाई पादरी से कहा कि आप हानूश को समझाएँ। वह मेरी बात नहीं मानता है। मैं भूखी रह सकती हूँ, लेकिन मुझसे अपने बच्चों को तड़पता हुआ नहीं देखा जाता रहा है। पादरी ने कहा कि तुम्हें अपने पति की इज़्ज़त करनी चाहिए। तुम उसे गाली क्यों देती हो? **"उसमें पतिवाली कोई बात हो तो मैं उसकी इज़्ज़त करूँ। जो आदमी अपने परिवार का पेट नहीं पाल सकता,**

उसकी इज़्ज़त कौन औरत करेगी?"३३

अगर आपने यह पुश्तैनी घर हमें न दिया होता, हम लोग कहाँ-कहाँ भटकते रहते। हानूश को अपने परिवार की बिल्कुल चिन्ता नहीं है। उसको समय पर भोजन मिल रहा है। वह क्यों कमाने जाए? **'अल्ला देवे खावे को कुतका जाय कमाने को'** इस पंक्ति जैसी हानूश की स्थिति हो रही है। कात्या ताले बेचकर अपने परिवार का पेट भरेगी, तो हानूश को चिन्ता क्यों होगी? वर्तमान परिप्रेक्ष्य को लेकर अगर देखा जाए तो ऐसे कई परिवार है। जहाँ मर्द शराब-जुआ में मस्त रहते हैं। उन्हें अपने परिवार से कोई लेना-देना नहीं है। स्त्रियाँ बर्तन माँजकर, कपड़े धोकर अपने परिवार का पेट पाल रही हैं। ऐसा ही एक परिदृश्य **'आधे अधूरे'** नाटक में देखने को मिलता है। जहाँ स्त्री नौकरी करती है और अपने पूरे परिवार का भरण पोषण करती है। पादरी कात्या को हमेशा यही समझाते कि अगर हानूश ने घड़ी बनाई तो सारी शिकायतें दूर हो जाएँगी। कात्या ने कहा कि मैं अपने लिए कुछ नहीं माँग रही हूँ। मैं बच्चों के लिए माँग रही हूँ। मैं आपकी बातों को काफी समय से सुन रही हूँ, लेकिन अब मेरा धैर्य व सहनशीलता खत्म होती जा रही है - **"पिछले दस साल से यही सुन रही हूँ। (तड़पकर) मैं बहुत उपदेश सुन चुकी हूँ। क्या मैं अपने लिए उससे कुछ माँगती हूँ ? घर में खाने को न हो तो मैं अपनी बच्ची को कैसे पालूँ ? मुझे सभी उपदेश देते रहते हैं। मेरा बेटा सर्दी में ठिठुरकर मर गया। जाड़े के दिनों में सारा वक्त खाँसता रहता था। घर में इतना ईधन भी नहीं था कि मैं कमरा गर्म रख सकूँ। हम सायों से लकड़ी की खपचियाँ माँग -माँग कर आग जलाती रही।"**३४

हानूश भी अपने अन्दर से बहुत दुखी था। वह भी यह समझ रहा था कि मेरा पहला कर्तव्य परिवार का भरण पोषण करना है। मैं अपने कार्य में इतना व्यस्त हो गया कि मेरा ध्यान परिवार की तरफ से हट गया। अगर किसी मनुष्य के अन्दर कोई बात बैठ जाए कि मुझे ये कार्य करना है, तो उसे रात-दिन चैन नहीं मिलता है। जब तक वह अपना कार्य पूरा नहीं कर लेगा, उसके जी को शान्ति नही मिलती है काव्या का पादरी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **"घड़ियाँ बनाने का शौक था तो फिर ब्याह नहीं करना चाहिए था। यह नहीं हो सकता कि घर-गृहस्थी भी बनाओ और उसके खाने-ओढ़ने का इन्तज़ाम भी नहीं करो------।"**३५

मैंने अपने गहने तक बेच दिए। घर के जो कीमती सामान थे। उनको बेचकर, मैंने परिवार का पेट पाला। मुझसे जितना बन सकता था। मैंने किया।

पादरी हानूश को परिवार की बिगड़ती हालत के बारे में बताते हैं कि तुम पहले अपना एक बेटा खो चुके हो। तुमने अपनी पूरी जवानी घड़ी बनाने में बिता दी है। तुम्हारी अब कोई मदद करने के लिए तैयार नहीं है। तुम्हें अभी तक कोई कामयाबी नहीं मिली है। आज तुम्हारे घर में आग भी नहीं जली है। अब तुम अपने बच्चों को क्या खिलाओगे? **"न तुम्हारे घर में आज आग जली है, न खाना बन पाया है। कितने दिन तक तुम इस तरह काम कर सकते हो? तुम इस तरह से चलते रहे तो कुछ भी तुम्हारे हाथ नहीं आएगा। बल्कि बिल्कुल टूट जाओगे।"**३६

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि परिवार जीवन की वह धुरी है, जिसमें मानव को रोटी, कपड़ा

और मकान मिलना चाहिए। जब परिवार ही भूखा रहेगा तो कौन पिता कैसे प्रगति कर सकेगा?

भीष्म साहनी जी की 'झूमर' कहानी में पारिवारिक दायित्व देखने को मिलता है।

'झूमर' -

"तुम्हें घर-परिवार की चिन्ता होती तो तुम नौकरी करते। तुम तो आदर्शवाद के घोड़े पर सवार तीसमारखाँ बने घूम रहे थे। जमीन पर तुम्हारे पाँव ही नहीं टिकते थे।"३७

६.२ (ख) मानवीय दायित्व -

भीष्मसाहनी के 'तमस' उपन्यास में मानवीय दायित्व अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है।

'तमस'

लीजा भले ही रिचर्ड की पत्नी हो, लेकिन उसके अन्दर मानवीय गुण कूट-कूटकर भरा हुआ है। वह अत्यधिक संवेदनशील औरत है। उसे भारत की स्थिति के बारे में कुछ भी पता नहीं है। न ही वह हिन्दू और मुसलमानों को पहचान सकती है, लेकिन इतना तो समझती है कि सही और गलत क्या है। कौन किसे लड़ा रहा है और क्यों लड़ा रहा है? रिचर्ड लीजा को बिल्कुल भी समय नहीं दे पाता है। उसने कहा कि गाँव के गाँव जल गए। अनाज की मण्डी में आग लग गई है। अब तुम सो जाओ। मुझे बहुत काम है। लीजा बोली- **"इतने गाँव तो जल गए रिचर्ड, अभी भी तुम्हें काम है? अब तुम्हे और क्या काम करना है।"३८**

लीजा नहीं चाहती थी कि शहर में दंगा हो। वह रिचर्ड से कहती, तो रिचर्ड के ऊपर लीजा की बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वह शहर में दंगा होने से ज्यादा घबराती थी। उसका हृदय रोने को होता था, लेकिन बेचारी अन्दर ही अन्दर बेचैन रहती थी। उसके पास कोई दूसरा नहीं था, जिससे वह अपनी भड़ास को बाहर निकाल सके। रिचर्ड जब लीजा से घूमने के लिए कहता है और बताता है कि हम वहाँ पर लार्क पक्षी की आवाज़ को भी सुन सकते हैं - **"इसमें कोई विशेष बात नहीं है, लीजा, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है। हम यदि हर घटना के प्रति भावुक होने लगें तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पाएगा।**

"यदि १०३ गाँव जल जाएँ तो भी नहीं?

"तो भी नहीं," रिचर्ड ने तनिक रूककर कहा, "यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।"३९

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह अच्छे और बुरे संस्कार ग्रहण करता है। वह जैसे वातावरण में रहता है। उसके ऊपर वैसे ही संस्कार पड़ते है। कुछ संस्कार व्यक्ति के अन्दर जन्म से ही आते हैं। कुछ वह बाहर के वातावरण से सीखता है। उसके अन्दर दूसरों के प्रति दया, ममता, मानवता के गुण उपस्थित रहते है। **ऐसा ही एक उदाहरण तमस उपन्यास में देखने को मिलता है।**

लीजा रिचर्ड की पत्नी है। वह विलायत की रहने वाली है। उसका पति डिप्टी कमिश्नर है। उसकी ड्यूटी

हिन्दुस्तान में है। वह हिन्दुस्तान के प्रायः लोगों से परिचित है। जब लीजा रिचर्ड से हिन्दुस्तानियों के बारे में जानना चाहती है, तब वह लीजा को हिन्दुस्तानियों के बारे में बताता है। हिन्दुस्तानी के अन्दर सहनशीलता कम है। वे थोड़ी-थोड़ी बात पर भनक उठते है। उनके अन्दर नम्रता नाम की कोई चीज नहीं है। वे धर्म के नाम पर खून करने को भी तैयार हो जाते है- **"सुनो ! सभी हिन्दुस्तानी चिड़चिड़े मिजाज के होते हैं, छोटे-से उकसाव पर भड़क उठनेवाले, ध र्म के नाम पर खून करनेवाले, सभी व्यक्तिवादी होते हैं और ---- और सभी सफेद चमड़ीवाली औरतों को पसन्द करते हैं-----।"**४०

रिचर्ड को अपने मन में यह लग रहा था कि शायद शहर में दंगा हो। हिन्दू और मुसलमान आपस में लड़ें। लीजा ने कहा कि तुम तो लन्दन में कहते थे ये तुम्हारे खिलाफ लड़ रहे है। रिचर्ड ने कहा - **"हमारे खिलाफ भी लड़ रहे हैं और आपस में भी लड़ रहे हैं।"**४१ रिचर्ड को इन सब बातों में काफी मजा आ रहा था- **"धर्म के नाम पर आपस में लड़ते हैं, देश के नाम पर हमारे साथ लड़ते हैं।" रिचर्ड ने मुस्कराकर कहा।"**४२

लीजा रिचर्ड के अन्तर्भाव को जानती थी कि रिचर्ड बाहर के लोगों के साथ कैसा व्यवहार करता है।? उसके अन्दर मानवीयता का गुण नहीं था। वह कट्टरवादी था, लेकिन लीजा ने कहा- **"बहुत चालाक नहीं बनो, रिचर्ड। मैं सब जानती हूँ। देश के नाम पर ये लोग तुम्हारे साथ लड़ते हैं और धर्म के नाम पर तुम इन्हें आपस में लड़ाते हो। क्यों, ठीक है ना?"**४३

लीजा नहीं चाहती थी कि भाई-भाई आपस में लड़ें। किसी का घर उजड़े। हम सभी लोग एक ही नस्ल के लोग हैं। अगर तुम चाहो तो इन्हें आपस में लड़ने से रोक सकते हो। रिचर्ड को लीजा की यह बातें अच्छी लग रही थी। रिचर्ड ने कहा- **"डालिंग, हुकूमत करनेवाले यह नहीं देखते कि प्रजा में कौन-सी समानता पाई जाती है, उसकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती है कि वे किन-किन बातों में एक-दूसरे से अलग हैं।"**४४

रिचर्ड को जब एक पत्र मिलता है, तब लीजा कहती है कि यह कैसा पत्र है? रिचर्ड ने कहा कि ऐसे पत्र मेरे पास बहुत आते है। इस पत्र में ये लिखा है कि शहर में तनाव है, हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच लीजा बोली कि अब तुम क्या करोगे, इनके झगड़े कैसे सुलझाओगे? रिचर्ड ने कहा कि ये उनके आपस के झगड़े हैं। हमें उनसे क्या लेना-देना है? वह कभी नहीं चाहता था कि इनके झगड़े सुलझें। वह उनकी बातों में कोई रूचि नहीं ले रहा था, लेकिन लीजा के अन्दर मानवीय गुण कूट-कूटकर भरा हुआ था। वह रिचर्ड को बार-बार समझाती थी कि तुम्हें उनकी बातों को ध्यान से सुनना चाहिए। ईश्वर ने तुम्हें इतना बड़ा पद दिया है कि तुम्हें इसका दुरपयोग नहीं करना चाहिए, बल्कि उनकी मदद करनी चाहिए। लीजा के अन्दर हर धर्म के प्रति प्रेम था। वह नहीं चाहती थी कि साम्प्रदायिक विद्वेष हो। खूनखराबा, अत्याचार, बलात्कार, मारकाट, हिंसा हो। लीजा सभी धर्मों में एक ईश्वर का नूर देखती थी। हम सब एक ही पिता की सन्तान हैं। हम सब भाई-भाई हैं, फिर हम आपस में क्यों झगड़ें।

यह सोचकर रिचर्ड अपने मन में बहुत खुश था कि हिन्दुस्तानी मूर्ख हैं। इनमें अक्ल कम है। छोटी-छोटी बात में बहक उठते है। वे जिस डाल पर बैठे है। उसी डाल को काटते है। रिचर्ड ने मुसकराकर कहा - **"मैं उनसे**

कहूँगा तुम्हारे धर्म के मामले तुम्हारे निजी मामले हैं, इन्हें तुम्हें खुद सुलझाना चाहिए। सरकार तुम्हारी मदद करने के लिए पूरी तरह से तैयार है।"४५

जबकि लीजा रिचर्ड को बार-बार यह समझा रही थी कि तुम उनकी मदद करो। उन्हें समझाओ कि तुम एक ही परमात्मा की सन्तान हो। तुम्हें लड़ना नहीं चाहिए - "तुम उनसे यह भी कहना कि तुम एक ही नस्ल के लोग हो, तुम्हें आपस में नहीं लड़ना चाहिए। तुमने मुझे यही बताया था न रिचर्ड?"४६

भीष्म साहनी ने अपने नाटक 'माधवी' में मानवीय दायित्व का अत्यधिक सुन्दर वर्णन द्रष्टव्य है।

'माधवी'-

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर मानव को तरह तरह के दायित्व निभाने पड़ते है। उसमें सबसे पहली भूमिका परिवार की होती है। जब मानव जन्म लेता है, तब वह अच्छे और बुरे कार्य समाज में रहकर ही सीखता है। बच्चों की पहली गुरू माता होती है। बच्चे कच्चे घड़े के समान होते हैं। उन्हें आप जैसा आकार देंगे, वे वैसे ही बन जाएँगे। उसी प्रकार मानव अपने माता-पिता से जैसे संस्कार ग्रहण करता है। उसके अन्दर वैसे ही गुण आ जाते है। ऐसा ही एक परिदृश्य साहनी जी के नाटक माधवी में देखने को मिलता है।

माधवी राजा ययाति की पुत्री है। राजा ययाति ने हमेशा अपनी पुत्री को अच्छे संस्कार दिए हैं। उसे गलत मार्गो पर जाने से रोका है। यद्यपि माधवी की माता का वर्णन नाटक में कहीं भी नहीं है। गालव विश्वामित्र का शिष्य है। वह अपनी गुरूदक्षिणा को पूरा करने के लिए राजा ययाति से ८०० अश्वमेधी घोड़े माँगता है। राजा महल छोड़कर बन आए थे। गालव ने राजा ययाति का नाम सुना था कि वे बहुत दानवीर हैं। उनके द्वार पर से आज तक कोई भी खाली हाथ नहीं लौटा है। ययाति ने कहा कि मेरे पास तुम्हें देने को केवल मेरी पुत्री है। वह विशिष्ट लक्षणों वाली है। उसे पाकर कोई भी राजा तुम्हें आठ सौ अश्वमेधी घोड़े दे देगा। निश्चय ही तुम अपना वचन निभा पाओगे। जब ययाति अपनी पुत्री माधवी को बुलाते हैं और कहते हैं कि तुम्हें इस पुरूष के साथ जाना है। माधवी ने कहा कि पिताजी आप मुझे अपने साथ नहीं रखेंगे? ययाति बोले- "बेटी, यज्ञ में दी जाने वाली आहुति साधारण आहुति नहीं होती।"४७

माधवी को अभी भी यह समझ में नहीं आ रहा था कि उसे उस पुरूष के साथ क्यों भेजा जा रहा है? ययाति ने अपनी बेटी से कहा- "मुनिकुमार तुम्हें सब समझा देंगे, यह बड़ा कर्तव्यपरायण युवक है, यह अपने गुरू के प्रति उतना ही निष्ठावान है, जितनी तुम अपने पिता के प्रति निष्ठावान हो।"४८

माधवी को जब यह पता चलता है कि मुझे गालव के गुरूदक्षिणा के संकल्प को पूरा करना है। उसे गालव का निमित्त बनाया जा रहा है और उसे गालव के संकल्प को पूरा करने के लिए कई राजाओं के रनिवास में रहना पड़ेगा। मुझे गालव के संकल्प को पूरा करने तथा अपने पिता की कीर्ति को बनाए रखने के लिए अपने यौवन की आहुती देनी पड़ेगी। माधवी ने अपने पिता की कीर्ति तथा गालव के संकल्प को पूरा करने के लिए अपने यौवन की आहुति दी, लेकिन

माधवी ने अपने पिता के यश को कम नहीं होने दिया।

ययाति गालव को अपने बारे में तथा माधवी के बारे में बताना चाहते थे- "तलवार की धार पर तुम्हारा प्रतिज्ञा-पालन हो रहा था। यदि कहीं पर भी चूक हो जाती तो तुम्हारी साधना विफल हो जाती। माधवी बचपन से ही बड़े अल्हड़ स्वभाव की रही है, पर उसने तुम्हारी गुरू-दक्षिणा तो जुटा दी।"४९

विश्वामित्र राजा ययाति से गालव के संकल्प को पूरा करने में बहुत ही प्रसन्न होते और कहते है - "आप सच्चे दानवीर हैं। युगों-युगों तक एक प्रकाश-स्तम्भ की भाँति आपका नाम चमकेगा।"५०

इस प्रकार माधवी ने अपने पिता की खातिर अपना मानवीय कर्तव्य निभाया।

६.२ (ग) अमानवीय दायित्व-

भीष्म साहनी ने अपने नाटक 'माधवी' में अमानवीय कृत्यों का भी बखूबी वर्णन किया है।

'माधवी' -

भारतवर्ष जिसे कभी **'सोने की चिड़िया'** कहा जाता था, जहाँ दूध की नदियाँ बहती थी। जहाँ बच्चों को माता-पिता अच्छे संस्कार देते थे। माता-पिता अपने परिवार के लिए जी जान से लगे रहते थे। उन्हें अच्छी शिक्षाएँ देते थे। महापुरूषों की कथाएँ सुनाकर उनका हौसला बढ़ाते थे। कोई भी माता-पिता अपने बच्चों का बुरा नहीं सोचते थे, लेकिन कुछ ऐसे पिता भी हैं, जो अपनी कीर्ति के लिए अपनी बेटी को ही परपुरूष के हाथ में सौंप देते हैं। वे अपने बच्चों के साथ जानवरों जैसा व्यवहार करते हैं जैसे सर्पिणी अपने बच्चों को खा जाती है, वैसे ही पिता अपने यश की खातिर अपनी बेटी का बलिदान कर दे देते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य साहनी जी के 'माधवी' नाटक में देखने को मिलता है।

ययाति एक राजा है। उनकी पुत्री माधवी है। राजा ययाति एक दानवीर है। उनका कर्ण के समान चारों दिशाओं में नाम विख्यात है। गालव विश्वामित्र का शिष्य है। जो गुरूदक्षिणा के संकल्प को पूरा करने के लिए ययाति के पास आया है। गालव को गुरूदक्षिणा में ८०० अश्वमेधी घोड़े चाहिए। अगर गालव को ८०० अश्वमेधी घोड़े नहीं मिलेंगे तो वह आत्महत्या कर लेगा। ययाति महल छोड़कर वन में रहने के लिए आते हैं। गालव राजा ययाति के पास आता है। उनसे ८०० घोड़ों की माँग करता है। ययाति उन्हें अश्वमेधी घोड़े के लिए मना कर देते हैं। गालव को लगा कि मैं गलत जगह आ गया हूँ। मैं दानवीर ययाति के पास आया था। जब ययाति यह बात सुनते हैं, तब उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। वे अपने मन में सोचते हैं कि मैंने हमेशा दान दिया है। जिस प्रकार दान में **कर्ण** का नाम प्रसिद्ध है और सत्यता में **राजा हरिश्चन्द्र** का नाम प्रसिद्ध है। अगर मैंने गालव की इच्छा पूरी नहीं की, तो लोग मेरी हँसी उड़ाएँगे। मेरे मुँह पर कालिख पोतेंगे। राजा ने अपनी कीर्ति को बनाए रखने के लिए अपनी बेटी को गालव को दान में दे दिया। उन्होंने अपने मन मे यह विचार भी नहीं किया कि वह युवक कौन है, कैसा है? वह मेरी पुत्री को ले जाकर उसके साथ कैसा व्यवहार करेगा? माधवी ने कहा अगर आज मेरी माँ होती, तो मेरे साथ ऐसा व्यवहार नहीं करती।

गालव ने अपनी पुत्री से कहा- **"इस समय मेरा धर्म ही सर्वोपरि है, माधवी।"५१**

आश्रमवासी ने राजा से कहा कि महाराज आप दानवीर है। ये हम सब जानते है। आपका यश चारों दिशाओं में फैला हुआ है, लोग आपकी चर्चा करते हैं, आपकी तारीफ करते हैं, आपका नाम चारों दिशाओं में सदा अमर रहेगा, लेकिन आपने अपनी पुत्री के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया है। वह आपकी एकमात्र पुत्री है। आपने बिना सोचे समझे अपनी बेटी को गर्त में झोंक दिया। आप चाहे तो अभी भी बेटी को वापस ला सकते हैं। आप विश्वामित्र के पास जाकर उनसें कह दें कि वे गालव को ऋणमुक्त कर दें, तो माधवी अपने घर वापस आ जाएगी। ययाति ने आश्रमवासी से कहा **"दान में दी हुई चीज को वापस नहीं लिया जाता, मारीच ! चलिए, हवन का समय हो गया।"५२**

स्त्री और पुरूष सम्बन्ध (सामान्य) -

पति-पनी का क्या सम्बन्ध है। पति-पत्नी में कौन बड़ा, कौन छोटा है? पति-पत्नी का गृहस्थ में क्या स्थान है? एक का दूसरे पर क्या अधिकार है - इत्यादि विषयों पर बहुत विचार होता रहता है। वस्तुतः इस पर हमारे आर्य धर्म में बहुत विचार किया गया है। उसमें पत्नी का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। अवश्य ही आधुनिक हिन्दू समाज में नारी की बहुत अधोगति हुई है। यहाँ तक कि लोग कहने लगे - **'स्त्री तो पैर की जूती है। जब चाहा, उतार फेंकी और दूसरी पहन ली'**, परन्तु इस मूर्खता की बात को छोड़कर मूल को देखा जाए तो जो पति-पत्नी सम्बन्ध सब हिन्दुओं को मान्य है और जिसका वेदों मे वर्णन किया गया है, वही जगत में सुख-शान्ति स्थिर रख सकता है और सब मनुष्यों को उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए। रूढ़ि कुछ हों, पर इस समय तक भी विवाह-सम्बन्ध में पढ़े जाने वाले मन्त्र तो वही आदर्श सामने रखते है। विवाह हो जाने के पश्चात् सप्तपदी होती है, जिसमें वर-वधू सात पग इकट्ठे चलते हैं।

"देबवत् सततं साध्वी भर्तारमनुपश्यति
दम्पत्यो रेष वै धर्मः सहधर्म कृतः शुभः।" ५३ (विष्णुपुराण)

पत्नी-पति को देवता के समान और पति पत्नी को समान समझें। दोनों का धर्म और कर्तव्य समान है। वेदों में परमेश्वर को भी अपना सखा कहा गया है। विवाह पर जब वर-वधू बैठते हैं, तब कहा जाता है- **'ओ ! समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानि नौ'** हम दोनों जो आप सब विद्वन्मण्डली के सामने विवाह करने के लिये आए हैं हमारे हृदय इस प्रकार से मिले है जैसे कि दो पानी मिलकर एकस्वरूप हो जाते हैं।" क्या इन दोनों मन्त्रों से पति पत्नी का स्थान निश्रय नहीं होता। इससे अधिक समानता की बात और क्या कही जा सकती है।

इतने समानाधिकार होते हुए भी कुछ कर्तव्य भी तो होने चाहिए और वैदिक धर्म में विशेषता यही है कि यहाँ कर्तव्य का अधिकार की अपेक्षा अधिक ध्यान रखा गया है।

हम जब धर्म शास्त्रों को पढ़ते सुनते हैं, तब हमें ऐसा प्रतीत होता है कि गृहस्थ में पति-पत्नी का वही स्थान है जो राष्ट्र में राजा और मन्त्री का होता है। सब शासन मन्त्री की सम्मति से होता है, परन्तु आज्ञा राजा की

होती है। मन्त्री को पूर्ण अधिकार होते हुए भी राजा का मान रखना उसका कर्तव्य होता है।

महर्षि दयानन्द, जिन्होंने स्त्री जाति को पूजनीय वताया वे भी अपनी संस्कार विधि में लिखते है- जब-जब प्रातः सायं या परदेश से आकर मिलें तब-तब 'नमस्ते' इस वाक्य से नमस्कार कर स्त्री पति चरणस्पर्श और पादप्रक्षालन, आसन दान करे तथा दोनों परस्पर प्रेम बढ़ाने वाले वचन आदि व्यवहारों से वर्तन कर आनन्द भोगें।

हिन्दू-सभ्यता में दोनों के समान अधिकार होते हुए पति का कर्तव्य है कि सदा पत्नी को प्रसन्न रक्खे, उसकी रक्षा करें, उसे वस्त्र-आभूषण से सन्तुष्ट रखे और सब कार्य उसकी सम्मति से करे उसको घर की सम्राज्ञी समझे। पत्नी का कर्तव्य है कि पति को सदा प्रसन्न रखे और प्राणपत्र से उसकी सेवा करे। जिस प्रकार मित्र एक-दूसरे के गुणों को उभारते और दोषों के प्रति उदार भाव रखते हैं, वैसा ही पति-पत्नी में होना चाहिए। अपनी पत्नी के प्रति धर्मपत्नी, सखी व मित्र का भाव रखना उचित है।

सच्चे सुहृद एवं मित्र की तरह सगे भाइयों की तरह पति-पत्नी रहें। दुख और सुख में पूरी सहभागिता के साथ सहयोग दें। अपने संकुचित स्वार्थों और अनुचित आवेगों पर नियन्त्रण करें। तभी दाम्पत्य जीवन का सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। काम-वासना को प्रधानता देने पर तो सहभागिता, सहयोग और प्रेम की प्रवृत्तियाँ धूमिल ही पड़ती हैं। हारी-बीमारी में सेवा का उत्साह तभी रहता है, जब परस्पर प्रेम की गहराई होती है। माँसलता के प्रति लोभ की मनोदशा में यदि साथी को लम्बी या शरीर पर तेज असर डालने वाली बीमारी हो गई, तो किसी प्रकार कुढ़ते-खींझते कोई व्यवस्था जुटाने में भी बोझ का अनुभव किया जाता है। जबकि मैत्री का आत्मीयता का भाव सदा निःस्वार्थ सेवा की प्रेरणा देता है।

> ''पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्
> तारणीं दुर्गसंसार सागरस्य कुलोद्भवाम्''५४

हे भगवती ! ऐसी पत्नी दीजिए जो मनोवृत्तियों को आपका अनुसरण करने वाली बना दे। संसार सागर से पार करे और कुल का उद्धार करे।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि वेद पति-पत्नी को सखा कहकर समान अधिकार देता हुआ उनका घर में सम्बन्ध राजा और मन्त्री का रखता है। हम अपनी पत्नी के प्रति सदा धर्मपत्नी का भाव रखें, उसे सखी, मित्र, सुहृद मानें। उससे परस्पर प्रेम, शिष्टता, शालीनता, सौम्यता एवं प्रसन्नता से भरा व्यवहार करें। उसके हृदय की भावना को समझने का प्रयास किया जाए। उसे सच्ची जीवन संगिनी-सहयोगिनी बनाया जाएँ, रमणीय वस्तु नहीं। हृदयों का आदान-प्रदान किया जाये, दैहिक आवेगों भर का नहीं। तभी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक सांस्कृतिक प्रगति, विकास एवं उपलब्धियाँ सम्भव होंगी। तभी हमारा दाम्पत्य जीवन सार्थक, समृद्ध बनेगा।

मनुस्मृति ३/६०/६२ में कहा गया है कि -

> ''सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
> यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै धवम्।।
> स्त्रियाँ तु रोचमानायाँ सर्व तद्रोचते कुलम्।

तस्यां त्वरोचमानायाँ सर्वमेव न रोचते।"५५

अर्थात् जिस कुल में पत्नी से पति और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहते हैं, उसी कुल में सब सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं। जहाँ उनमें कलह होता है, वहाँ दुर्भाग्य-दारिद्रय स्थिर रहता है। स्त्री की प्रसन्नता से ही सब कुल प्रसन्न रहता है और उसकी अप्रसन्नता से सब अप्रसन्न और दुःखदायक हो जाता है।

कड़ियाँ, स्त्री और पुरूष सम्बन्ध -

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में हमें तद्‌युगीन भारत के स्त्री-पुरूष सम्बन्ध का दिग्दर्शन होता है। उनके अनेक उपन्यासों में स्त्री-पुरूष सम्बन्ध का चित्रांकन हुआ है। कड़ियाँ उपन्यास में प्रमिला और महेन्द्र के सम्बन्ध द्रष्टव्य हैं।

'कड़ियाँ' -

भारतीय संस्कृति में पत्नी को धर्मपत्नी कहा गया है। उसके आशय को स्मरण रखने पर ही दाम्पत्य-जीवन के वास्तविक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। जब पत्नी को रमणी-कामिनी मान लिया जाता है, तब उससे हानि-ही-हानि उठानी पड़ती है।

प्राचीन साहित्य में जहाँ कहीं नारी के किसी रूप की निन्दा की गई है, उसे समझने पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि वह उसके रमणी, भोग्या रूप की ही निन्दा है। धर्मपत्नी, गृहलक्ष्मी और मातृ-रूप की तो सर्वत्र प्रशंसा की गई है। उसे घर की वास्तविक शोभा, व्यवस्थापिका, ज्योति, जीवन-संगिनी, वात्सल्य एवं प्रेम की देवी, स्वर्ग से भी गरीयसी एवं प्रत्यक्ष शक्तिरूपा कहा गया है।

दाम्पत्य-जीवन की सफलता का आधार काम वासना नहीं हो सकती। उल्टे वह विफलता का ही आधार बनती है। पाश्चात्य देशों में जहाँ काम-वासना को प्रधानता देकर नारी के भोग्या रूप को ही उसका उत्कर्ष मान लिया गया है, वहाँ की दुर्गति इस दिशा में सतर्क होने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए, किन्तु उससे कुछ सबक सीखने के स्थान पर अनुकरण की चकाचौंध ही जाती है। इसमें शरीर-नाश, कलह, मोह और दुख ही प्राप्त होने वाला है। 'इण्डियन ओपीनियन' में २४ अप्रैल, सन् १९९३ के **'आरोग्य सम्बन्धी सामान्य ज्ञान गुप्त प्रकरण'** शीर्षक अपने लेख में गाँधी जी ने इस स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा था। इस प्रसंग में हम सभी एकदम पागल हो जाते हैं। हमारी आँखों के आगे पर्दा पड़ जाता है। कामान्ध पुरूषों, स्त्रियों और लड़के-लड़कियों को मैंने एकदम पागलपन की स्थिति में देखा है। मेरा अपना अनुभव भी कुछ भिन्न नहीं है। जब-जब मैं ऐसी स्थिति में पहुँचा हूँ, तब-तब अपना होश-हवाश भूल गया हूँ। इस प्रकार स्त्री-भर सुख के लिए हम अपना मन-भर बल पलभर में खो बैठते हैं। जब हमारा वह नशा उतर जाता है, तब हमारी हालत-रंक की सी हो जाती है। हमारी देह शिथिल और मन अस्थिर हो जाता है। ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के 'कड़ियाँ' उपन्यास में देखने को मिलता है।

प्रमिला महेन्द्र की पत्नी है। महेन्द्र एक सरकारी ऑफीसर है। वह अपनी पत्नी को बहुत चाहता है। वह

हमेशा बच्चे और रसोई के कार्य में व्यस्त रहती है। वह पूरा काम करने के पश्चात् ही विस्तर में सोने जाती थी। उसे ज्यादा सजना संवरना अच्छा नहीं लगता था। वह बन ठनकर भी नहीं रहती थी। वह काम करती है, तो उसके बाल बिधे हुए होते हैं। वह हाथ पैर भी नहीं धोती और ऐसे ही सो जाती थी। उसे प्रमिला के ऐसे कार्यो से बहुत नफरत थी। वह घरेलू कार्य में ज्यादा व्यस्त रहती थी। महेन्द्र भी बहुत स्वार्थी व्यक्ति था। वह पत्नी के भाव को नहीं समझता था। हमेशा उससे नाराज रहता था। उसे अपनी नौकरी तथा स्त्री का शरीर पसन्द था। वह बहुत ही भोगी व्यक्ति था। जब तक वह कामान्ध की पूर्ति नहीं कर लेता है, तब तक वह मछली की तरह तड़पता रहता था। जब महेन्द्र रात को थककर आता है। वह प्रमिला का शयन करते वक्त इन्तजार करता है। प्रमिला ने कहा कि कहीं खिड़की खुली हुई है। जब महेन्द्र उसे जबरदस्ती पकड़ लेता है, तब प्रर्मिला का यह कथन उल्लेखनीय है –

"यह क्या कर रहे हो?" उसने छटपटाकर कहा और सीट के एक कोने में दुबक गई।"

"नहीं प्रमिला, इसमें कुछ भी बुरा नहीं है, तुम मेरी पत्नी हो तो हो।"५६

वह अपनी पत्नी का रात्रि में देर तक इन्तजार करता रहता है। प्रमिला बोली मैं अभी आ रही हूँ। कहीं पप्पू न जाग जाए। आज कल आप बहुत बेकार होते जा रहे हो। आप बहुत गन्दी किताबें पढ़ने लगे हो। आपकी दोस्ती भी अच्छी नहीं है। जब प्रमिला नहीं आती है, तब वह खींझने लगता है- **"देर तक प्रमिला की राह देखने के बाद महेन्द्र का उत्साह ठंडा पड़ने लगा। छोड़ो, यह न समझेगी, न माफ करेगी। दीवार के साथ सिर फोड़नेवाली बात है। कालीन पर बैठा-बैठा वह अटपटा-सा महसूस करने लगा।" "महेन्द्र चाहता था कि उसकी पत्नी उसमें, बाहर की दुनिया में कुछ ज़्यादा दिलचस्पी ले, उसकी पसन्द के कपड़े पहने, कभी-कभी अपने आप भी उसके गले में बाँहें डाल दिया करे, कुछ ज़्यादा चुलबुलापन दिखाए, पर प्रमिला सारा वक़्त घर में और बच्चे में ही खोती चली गई थी।"५७**

महेन्द्र को जब प्रमिला का प्यार नहीं मिल रहा था, तब उसके अन्दर क्रोध की ज्वाला भड़क रही थी। पहले वे एक दूसरे को बहुत चाहते थे, लेकिन प्रमिला गृहस्थ के बोझ से इतनी परेशान हो गई थी कि वह महेन्द्र की तरफ ध्यान नहीं दे पाती थी। उसका शरीर पहली की अपेक्षा कान्तिहीन होता जा रहा था। महेन्द्र को उससे नफरत होती जा रही थी। वह अपने मन में विचार करता कि ऐसी स्त्री के प्रति किसी प्रकार के उत्तरदायित्व की भावना बनाए रखना भूल थी। महेन्द्र का अपनी पत्नी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **"देख लिया? यही तो मैं कहता हूँ। तुम्हें यह जानने की इच्छा तक नहीं होती कि मर्द चाहता क्या है। तुम समझती हो, बस, खाना बना दिया, घर को झाड़-पोंछ दिया तो तुम्हारा फ़र्ज़ पूरा हो गया।"**

"तो क्या किया करूँ? तुम्हें दिन-भर उकसाती रहा करूँ? प्रमिला ने हँसकर कहा और करवट बदलकर मुँह महेन्द्र की ओर कर लिया, "बताओ, तुम्हारे बाल सहलाऊँ? तुम्हारी मूँछें चूमूँ? क्या करूँ? मुझे एक बार सिखा दो, मैं वही करने लगूँगी।" महेन्द्र चुप रहा। उसका मन वितृष्णा से भरने लगा। ठंडी साँस भरकर बोला, "तुम तो काठ की बनी हो, तुम्हारे पल्ले कुछ नहीं पड़ने का।"५८

पति और पत्नी दोनों में से किसी को एक दूसरे के प्रति लगाव नहीं था। औरत का फर्ज है कि घर का

कार्य तो करे, लेकिन पति क्या चाहता है उसकी ओर भी ध्यान रखे? जब पति की कामान्ध की इच्छा पूरी नहीं हो पाती है, तब वह छटपटाता है। उसे अत्यधिक क्रोध आता है। उसका पारा इतना तेज हो जाता है कि स्थितियाँ गम्भीर भी हो जाती है। माहौल इतना तक बिगड़ जाता है कि वह पत्नी से अलग रहने का विचार बना लेता है। जब तुम मेरी इच्छा की पूर्ति नहीं करोगी, तब मुझे जहाँ सुख मिलेगा, मैं वहाँ जाऊँगा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि पति-पत्नी सच्चे एवं सुह्रद मित्र की तरह रहें। दुख और सुख में पूरी सहभागिता के साथ सहयोग दें। अपने संकुचित स्वार्थों और अनुचित आवेगों पर नियंत्रण करें। तभी दामपत्य-जीवन का सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। कामवासना को प्रधानता पर तो सहभागिता, सहयोग और प्रेम की प्रवृत्तियाँ धूमिल ही पड़ती है।

'कुंतो' -

विवाह की सफलता में एक बहुमूल्य तथ्य यह है कि एक-दूसरे का भरपूर सम्मान करें। व्यंग विनोद में भी हल्का-फुल्का असम्मान न करें, क्योंकि प्रेम की भाषा सम्मान ही है। जहाँ गहरे सद्भाव होंगे, वहाँ अपमान के प्रसंग न प्रत्यक्ष में आवेंगे न परोक्ष में। यदि हमें दाम्पत्य जीवन को सरल रखना है, तो उसमें प्रेम भावना ही नहीं शिष्टाचार और मधुर भाषण का समावेश चाहिए। जो पति-पत्नी एक दूसरे के सुख-दुख को समझते है। एक दूसरे का ध्यान रखते हैं, वही दामपत्य जीवन सुखमय होता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'कुंतो' भीष्म साहनी जी के उपन्यास 'जयदेव' और कुंतो में दिखाई देता है।

कुंतो उपन्यास की नायिका है। वह जयदेव की पत्नी है। वह प्रोफ़ेस्साब की सबसे छोटी बहन है। जयदेव और कुंतो वास्तव में एक दूसरे के लिए बने थे। वे दोनों एक दूसरे के लिए समर्पित थे। जयदेव का जब विवाह हो जाता है। एक दिन जयदेव और सहदेव सर्दियों में धूप में बैठे वार्तालाप कर रहे थे। जयदेव का सहदेव के प्रति यह कथन रेखांकित है- **"सेक्स से बड़ी शांति मिलती है," वह भाई से कह रहा था। "अन्दर की सारी** छटपटाहट **शांत हो जाती है। मुझे मालूम नहीं था इससे इतना सुकून मिलता है।"५९** जयदेव और कुन्तो खुली विचारधारा के थे। वह जयदेव पर पूरी तरह समर्पित थी। कुंतो और जयदेव हनीमून के लिए मंसूरी जा रहे थे। जब कुंतो बस में बैठी थी, तब वह अपने मन में विचार करने लगी - **"जयदेव जो न करे, कम है, उसे जाता** देखती **हुई कंतो मन-ही-मन बोली। सारा वक़्त इसे नई-नई बातें सूझती रहती है। इसके साथ ज़िंदगी** पिकनिक **जैसी चल रही है।"६०** जयदेव अपनी मौसेरी बहन से प्रेम करता था। उसने सुषमा के बारे में कुंतो को वता दिया था - **"मैं सुषमा के बिना नहीं रह सकता। वह मन ही मन छटपटाता रहता है। मैंने उससे कह** दिया है **कि सुषमा को ले आए, मैं उसे अपने पास रख लूँगी और अगर कहोगे तो मैं कहीं चली** जाऊँगी।"६१

कुंतो ने जयदेव को कभी भी दोषी नहीं माना है। वह कुंतो से कोई भी बात छिपाता नहीं था। कुंतो ने अपनी

सहेली से कहा कि वह दिल का बिल्कुल साफ है- "बली ने मुझसे कभी कुछ नहीं छिपाया उसका दिल शीशे की तरह साफ है।"

कुंतो कुछ देर तक चुप रही, फिर बोली - "नज़दीक कैसे नहीं आने दूँ। वह दिन-भर न जाने कहाँ-कहाँ भटकता रहता है, शाम को थककर लौटता है। मैं उसे कैसे मना कर दूँ?"६२

कुंतो और जयदेव बम्बई रहने के लिए आ गए थे। जयदेव रोजगार की तलाश में दर-दर भटक रहा था। कुंतो को घर का खर्च चलाने के लिए एक जगह नौकरी करनी पड़ती है। उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। वह कुंतो का हमेशा ध्यान रखता है कि उसे कहीं कष्ट न हो।

जयदेव मन ही मन खिन्न सा महसूस करने लगा था। कहीं छोटा-मोटा काम मिल जाता तो कुंतो को थोड़ी सहूलियत मिलती। मेरे साथ सहगान मंडली में प्रोग्राम भी करती है, इधर घर चलाने के लिए एक थिएटर में चार सौ रूपए की नौकरी भी करती है। मुझे काम मिल जाता तो इसकी यह नौकरी तो छुड़वा देता। यह तो पड़ोसी अच्छे हैं, जिनकी आँखों के सामने दोनों बच्चे खेलते रहते हैं। उनकी हमदर्दी पर हमारी गृहस्थी चल रही है। सहसा भावाद्रेक में जयदेव ने कुंतो का हाथ दबा दिया।

जयदेव भले ही सुषमा से प्रेम करता है, लेकिन उसने कभी भी कुंतो को दुख नहीं दिया। उसे हमेशा पलकों पर बैठाकर रखा। उसका हर दुख में साथ दिया। जब कुंतो बीमार पड़ी, तब जयदेव को उसके स्वास्थ्य की हमेशा चिन्ता रहती है।

एकबार जयदेव और कुंतो प्लेटफार्म की ओर जा रहे थे। वह प्लेटफार्म के बेंच पर बैठ गई। उसने देखा कि कुंतो का चेहरा पीला पड़ रहा है। उसके होंठों पर पसीना आ रहा है "जयदेव चिंतित हो उठा और उसकी पीठ पीछे बैठकर उसके कंधे दबाने लगा, फिर सहसा ही वह भागकर एक स्टॉल पर से पानी ले आया। उसे भास-सा हो गया था कि कुंतो जैसे बेहोश होने वाली है।

पानी का घूँट भरने पर फौरन ही कुंतो संभल-सी गई। उसका दिल जो पहले डूबता-सा लग रहा था, सहसा सामान्य गति पर चलने लगा था। मुँह में भी तरावट आ गई थी।

"कुछ नहीं हुआ, मैं ठीक हूँ।"

"दवाई ली थी? डाक्टर के पास गई थी।?"

"हाँ गई थी, उसने इंजेक्शन लगाया था।"

"तुम्हें आज रिहर्सल के लिए नहीं आना चाहिए था।"

"मुझे कुछ नहीं हुआ। मैं न पहुँचती तो तुम चिंता करने लगते कि क्यों नहीं आई।"६३

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जयदेव भले ही सुषमा को चाहता है, लेकिन उसने कुंतो को को भी दुख नहीं दिया। कुंतो ने हमेशा जयदेव का साथ दिया। वह यहाँ तक कह देती है कि अगर आप सुषमा को चाहते है तो मैं उसे रखने को तैयार हूँ।

'तमस'

'तमस' उपन्यास में स्त्री और पुरूष सम्बन्ध अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है।

जिस प्रकार एक पहिए से साइकिल नहीं चल सकती है, उसी प्रकार पुरुष व स्त्री अकेले जीवन यापन नहीं कर सकते है, क्योंकि पुरूष के बिना स्त्री और स्त्री के बिना पुरुष अधूरा है। उनका दाम्पत्य जीवन तभी सफल हो सकता है। जब दोनों के विचार एक हो।

समाज में अक्सर देखने को मिलता है कि अगर लड़का अच्छी पोस्ट पर है, तो लड़की के माता पिता लड़की का विवाह बिना इच्छा के कर देते हैं। लड़की के उस लड़के से विचार मिल रहे हैं या नहीं मिल रहे हैं। यह नहीं देखा जाता है। जब विवाह हो जाता है। लड़का कुछ चाहता है और लड़की कुछ चाहती है, जिससे दोनों की पटती नहीं है। लड़की का अधिकांश समय उसके मायके बीतता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'तमस' उपन्यास 'लीजा' में देखने को मिलता है।

रिचर्ड एक डिप्टी-कमिशनर व्यक्ति है। लीजा उसकी पत्नी है। वह अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करता है। वह अपनी ड्यूटी में दिन भर विजी रहता है, जबकि लीजा को पूरा दिन अकेले ही काटना पड़ता है। उसको पूरा घर अकेले काटने को दोड़ता है। लीजा और रिचर्ड की आपस में पटती कम है। वह नम्र स्वाभाव की है। उसके अन्दर दया, ममता है, जबकि रिचर्ड एक कट्टरवादी व्यक्ति है। वह लीजा को हमेशा घुमाने का प्रयत्न करता है। वह उसे नई-नई जगह ले जाता है। लीजा छः महीने या साल भर अपने घर विलायत रहकर आती है। जब वह रिचर्ड के पास आती है, तब हमेशा यही प्रयास करती कि वह रिचर्ड की रूचि में भाग लेने लगे। वह भी यही चाहता था कि वह लीजा को खुश रखे **"लीजा को खुश कर पाने के लिए ही वह उसे यहाँ लाया था। अब की बार लगभग छः महीने के बाद लीजा विलायत से लौटी थी और रिचर्ड नहीं चाहता था कि पिछली कहानी फिर से दोहराई जाए और लीजा नयी जगह पर ऊबने लगे और परेशान होकर फिर से विलायत लौट जाए। यदि लीजा को यह शहर पसन्द नहीं आया तो यहाँ का निवास दोनों के लिए नरक बन जाएगा। वह दिन-भर दफ्तर में काम करने के बाद लौटेगा तो दोनों के बीच कोसा-कोसी शुरू हो जाएगी। रिचर्ड ने मन-ही-मन पक्का इरादा कर लिया था कि सुबह का वक्त वह लीजा के सााथ बिताया करेगा, इसी कारण पिछले एक हफ्ते से जब से लीजा आई थी, वह कभी ठण्डी सड़क पर, कभी टोपी पार्क में तो कभी घुड़सवारी पर उसे बाहर लाता रहा था। अपनी ओर से लीजा भी पूरी कोशिश कर रही थी कि वह भी रिचर्ड की रूचियों में रूचि लेने लगे और अपने मन को लगाए रखे।"**[६४]

हरनामसिंह और बन्तो-

हरनामसिंह और बन्तो सिक्ख थे। दंगे के कारण वे रहने के लिए सुरक्षित स्थान ढूँढ़ रहे थे। वे यह नहीं सोच पा रहे थे कि हम कहाँ जाएँ? बन्तो अपने पति से बोली कि मुझे यहाँ की स्थिति खराब लग रही है। हमें कहीं सुरक्षित स्थान पर चले जाना चाहिए। हरनामसिंह ने कहा कि हम जाएँ तो कहाँ जाएँ। हम दर-दर की ठोकरें कहाँ खाते

फिरेंगे? पहले खानपुर से बस आती थी। अब वो भी नहीं आई। अपनी दुकान से कोई भी व्यक्ति नहीं निकल रहा है। सारा वातावरण शान्त था। किसी भी चिड़ियाँ के चहकने की आवाज़ भी नहीं सुनाई दे रही थी। बन्तो बार-बार कहती कि हम किसी गाँव में जाकर गुरूद्वारे में रूकेंगे। जब करीमखान हरनामसिंह की दुकान से निकला- **"देर नहीं कर हरनामसिंह, हालत चंगी नहीं, बाहरों बलवाइयाँ दे आण दा डर है।"६५**

हरनामसिंह और बन्तों में से एक दूसरे के प्रति बहुत प्रेम था। उनमें त्याग व समर्पण की भावना थी। बन्तो पति परायण थी। वह हमेशा अपने पति को सही दिशा देती थी। वह अपने पति की आज्ञाकारिणी पत्नी थी। जहाँ पति-पत्नी दोनों में त्याग, प्रेम व समर्पण की भावना होती है, तभी गृहस्थ जीवन सुखमय चल सकता है। अगर दोनों विपरीत दिशा में जा रहे हैं। कोई एक दूसरे की कद्र नहीं कर रहा है। एक दूसरे का साथ नहीं दे रहा है। वह गृहस्थ जीवन सफल नहीं हो सकता है। वे एक दूसरे के प्रेम के खातिर अपने दुख दर्द को भूल जाते थे। करीमखान इतना कह गया था कि यहाँ से निकल जाओ, तो बन्तो के शरीर में खून की जगह पानी आ गया। बन्तो को बाहर की स्थिति खराब लग रही थी। उसने अपने पति से बार-बार कहा कि कही बाहर चले पर हरनामसिंह ने मना कर दिया। इससे पत्नी चुप हो जाती थी। बन्तो अगर चाहती, तो अपने पति को अकेला छोड़कर जा सकती थी। अगर दुश्मन हमला करेंगे तो दोनों मरेंगे, लेकिन उसने अपनी जान की परवाह न करके जैसे पति ने कहा उसकी आज्ञा का पालन किया।

हरनामसिंह हमेशा पत्नी का ध्यान रखता था। दंगे के संकेत पीछे नजर आ रहे थे। उस समय दोनों के कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि हम क्या करें- **"मैं तो अब भी कहता हूँ यहीं बैठे रहो। कहीं नहीं जाओ।"** फिर उसने एक ओर दीवार के साथ टँगी अपनी दोनाली बन्दूक की ओर इशारा करके कहा - **"मरने-मारने पर नौबत आ गई तो मैं पहले तुम्हें मार दूँगा, फिर अपने को मार डालूँगा।"६६**

इधर जब दोनों सारा सामान छोड़कर जाने लगे, तब बन्तो को यह समझ में नहीं आ रहा था कि हम अपने साथ क्या छोड़ जाए और क्या ले जाए? **"गहनों की पोटली का क्या करूँ?"** उसने पूछा, **"इन्हें बदन पर पहन लूँ?**

"पहन ले," हरनामसिंह ने कहा, फिर तनिक सोचकर बोला - **"तेरे गहने देखकर ही तुझे कोई मार डालेगा। उन्हें दुकान के पीछे गाड़ दे।"६७**

बलबाई जब ढोल बजाते एवं नारे लगाते हुए उसकी दुकान की तरफ आते सुनाई दे रहे थे। वे अपनी जान को बचाकर वहाँ से निकल पड़े। वे भूखे प्यासे थे। वे दोनों पत्थरों की ठोकरें खाकर, एक दूसरे का हाथ पकड़े धीरे-धीरे आगे सरकते चले जा रहे थे - **'वाह गुरू का नाम लेकर चलती जाओ'**

हरनामसिंह पत्नी को अपने साथ खींचते हुए बोला कि हम दोनों एक दूसरे का हाथ थामे एक गाँव की तरफ आ गए। उन्हें कहीं आश्रय नहीं मिल रहा था कि हम कहाँ जाए? दोनों एक दूसरे को धैर्य बंधा रहे थे, जिससे दोनों को बल मिलता था। **"बन्तो, अगर वे लोग मारने पर उतारू हुए तो मैं पहले तुझे खत्म कर दूँगा, फिर अपने को खत्म कर दूँगा। जीते-जी मैं तुझे दूसरों के हाथ में पड़ने नहीं दूँगा।"६८**

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' -

भारतीय संस्कृति में अनेक संस्कार हैं, जिसमें विवाह भी एक पवित्र बन्धन है। जब पति-पत्नी विवाह करते है, तो उनमें एक दूसरे के पति कैसा सम्बन्ध होता है। उनके अन्दर एक दूसरे के प्रति कितना समर्पण, त्याग और कितना एक दूसरे को समझते है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्मसाहनी ने 'नीलू और सुधीर' के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है।

नीलू और सुधीर एक दूसरे को बहुत चाहते थे। जब नीलू और सुधीर विवाह करके शिमला आते है, तब वे एक होटल में रूकते हैं। होटल में नीलू के एक रिश्तेदार ने उन्हें देख लिया था। सुधीर ने होटल छोड़ दिया और डॉ० गणेश के वाचनालय में आ गए। जब सुधीर ने अंजली को अपने बारे में सब कुछ बताया, तब अंजली को शंका पैदा हो गई कि कहीं तुम लोगों ने छिपकर तो विवाह नहीं किया है। सुधीर ने कहा - **''अंजली जी! नीलू के घरवालों को बताकर ब्याह किया है; बल्कि उनके सामने ही नीलू ने मेरे साथ ब्याह करने का अपना फ़ैसला सुनाया था। इसके दोनों भाई और नीलू के वालिद, तीनों बैठे थे।''**६९ सुधीर विस्तर पर बैठे-बैठे सोच रहा था **''शादी के फ़ौरन ही बाद कैसी आँधी-सी चलने लगी है, कुछ ही दिनों में कितना कुछ घट गया है।''**

''तू तो गधा है,'' उसका मित्र जगदीश कह रहा था - **''अगर किसी ने कह दिया कि मुसलमान लड़की को अग़वा करके ले गया है, नीलू के ही बड़े भाई ने पुलिस में शिकायत लिखकर भेज दी तो क्या करेगा? कहाँ अपने को बचाता फिरेगा?''**७०

दोनों मित्रों ने जब एक दूसरे से सलाह ली, तब वे पुलिस में अर्जी दे आए। पुलिस ने दोनों के घर के लोगों को बुलाया। सुधीर के यहाँ से केवल उसका दोस्त जगदीश था, जबकि नीलू के यहाँ से नीलू का बड़ा भाई, पिताजी तथा छोटा भाई हमीद था। छोटा भाई वहन की करतूत पर फट पड़ा - **''यह हमारी बहन हमें रूसवा करने पर तुली हुई है, हमारी नाक कटवाने यहाँ पहुच गई है, बेपर्द होकर, हरामज़ादी।''**७१

इधर नीलू को उसके घर के लोग वहुत बुरा भला कह रहे थे। नीलू के भाई नीलू को आधे घंटे के लिए अन्दर ले गए। इधर सुधीर अपने मन में विचार कर रहा था - **''नीलू जो फ़ैसला करे, मुझे मंजूर है। उसका फ़ैसला सिर आँखों पर । मुझे उसी की ख़ुशी मंजूर है। वास्तव में हमीद को चिल्लाता देखकर सुधीर को नीलू की स्थिति पर दया आने लगी थी। एक तो अपने घर-परिवारवालों को छोड़े, इस पर उनके मुँह से बुरा-भला सुने। मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे नीलू की ख़ुशी चाहिए वह बार-बार अपने मन में कहता रहा था।''**७२

नीलू और सुधीर में विवाह के बाद भी यहाँ तक नौबत आ गई थी कि नीलू मुझसे बिछुड़ सकती है। ये लोग नीलू को बहुत कष्ट दे रहे है, लेकिन फिर भी सुधीर के हृदय में नीलू के प्रति हमदर्दी थी। पुलिस ने यहाँ तक कह दिया था कि जो लड़की फैसला करेगी वही माना जाएगा। इधर नीलू ने कहा- **''मैं सुधीर के साथ ज़ाऊँगी !''**७३ उसके कहने पर ही पिताजी ने कहा - **''और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू**

हमारे लिए मर गई,"७४

नीलू को अपने प्रेम की खातिर क्या कुछ नहीं सहना पड़ा, पिताजी ने यहाँ रिश्ता तोड़ा और भाई ने गाली गलौच सुनाई। सुधीर अपने मन में यह विचार कर रहा था कि ये लोग नीलू को कितना कष्ट दे रहे होंगे? मुझे नीलू की खुशी चाहिए। इस उपन्यास में नीलू और सुधीर में आपसी प्रेम और एक दूसरे के प्रति त्याग की भावना दिखाई गई है।

भीष्मसाहनी ने अपनी कहानी 'झूमर' मे स्त्री और पुरूष के सम्बंध को दर्शाया है-

'झूमर'-

पति और पत्नी का सम्बन्ध एक पवित्र बन्धन है। पति हमेशा पत्नी के सुख का ध्यान रखता है। पत्नी हमेशा अपने पति का ध्यान रखती है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरा अधूरा है। जिस प्रकार साईकिल का एक पहिया अकेले नहीं चल सकता है। उसी प्रकार गृहस्थ जीवन के लिए पति और पत्नी दोनो की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ पर **भीष्म साहनी ने स्त्री और पुरूष के माध्यम से 'अर्जुनदास और कमला' का एक दूसरे के प्रति जो सम्बन्ध है। उसको चित्रित किया है।** .

अर्जुनदास एक देशप्रेमी व्यक्ति है। वह अपने देश के लिए मर मिटने को तैयार है। जब रंगमंच पर देशभक्ति गीत गाए जाते हैं। अर्जुनदास के हृदय में विद्रोह की भावना भड़क उठती है। उससे अपने देश की दासता सहन नहीं होती है। अर्जुनदास की पत्नी उसके आदर्शवाद तथा देशभक्ति से परेशान है। जब से दोनों का विवाह हुआ, तब से अर्जुनदास का ध्यान अपने परिवार की तरफ से हट गया था, क्योंकि उसका ध्यान अपने कार्य की ओर था।

एक बार जब एक नाटक होना था। उसमें सभी पुराने साथी इकट्ठे हुए थे। सभी अपने-अपने अनुभव सुना रहे थे। अर्जुनदास ने भी अपना अनुभव सुनाया जब कमला से रहा नहीं गया तब उसने कहा- **"तुम तो दिन भर बैलगाड़ी पर बैठे गीत गा सकते थे, शहर भर की सैर कर सकते थे। तुम्हें में जो मिली हुई थी, घर में पिसनेवाली ।"७५**

अर्जुनदास अपने कार्य में बहुत मस्त था। इधर कमला उसे बहुत चाहती थी, लेकिन उसके आदर्शवाद ने उसे अन्दर से बहुत हिम्मतवाला बना दिया था। उन्हें मेरी बात नहीं मानना है। उन्हें जो अच्छा लग रहा है। वही करें। इसी में हमारा भला है। वह अपने दिल को समझाती रहती थी। एक बार जब डाकिया एक पत्र और फार्म दे गया। वह पत्र सरकार की ओर से था। राजधानी में अर्जुनदास को बुलाया गया था और फार्म में पूछा गया था कि स्वतंत्रता संघर्ष में आपका क्या योगदान रहा है। आपने कितने दिन जेल काटी, कभी भूख हड़ताल की, जेल के अन्दर व बाहर कितने समय रहे। कभी आप पर लाठी चार्ज हुआ। अर्जुनदास ये पत्र और फार्म कमला को दिखाना चाहता था और इसके बारे में उसकी प्रतिक्रिया जानना था। अर्जुनदास को कभी भी कमला याद नहीं आई, लेकिन इस पत्र ने उसकी तरफ ध्यान बढ़ा दिया। वह घंटों उसका इन्तजार करने लगा। उसके अन्दर कमला के लिए प्रेम जाग उठा। **"पत्नी को घर के अन्दर देखना एक बात है और उसे सड़क पर अकेले चुपचाप चलते हुए देखना बिल्कुल दूसरी बात।**

तब उसके प्रति अपनेपन की भावना अधिक जागती है। तब उसमें स्त्री सुलभ कमनीयता भी होती है और अपनत्व का भाव भी। तभी अर्जुनदास को इस बात का भी भास हुआ कि उसकी पत्नी को उसके साथ रहते हुए बहुत कुछ सहना पड़ा है कि वह उसे कोई भी सुख-सुविधा नहीं दे पाया। कमला के प्रति भावना का ज्वार-सा उसके अंदर उठा था।''७६

पति-पत्नी का रिश्ता एक दूसरे के सुख-दुख का रिश्ता होता है। दोनों एक दूसरे की भावनाओं को समझना चाहिए। दोनों को एक दूसरे के प्रति मित्र की तरह व्यवहार करना चाहिए। अर्जुनदास को जब उसकी पत्नी का एक वाक्य लग गया - ''तुम्हें ब्याह नहीं करना चाहिए था। तुम-जैसे लोग ब्याह करके अपने घरवालों को भी दुखी करते हैं और खुद भी दुखी होते हैं----।''७७

अर्जुनदास जो भी कार्य करता था। उसका स्वयं का निर्णय होता था। इधर कमला उससे चिढ़ती और अपने बच्चों का वास्ता देती थी। अर्जुनदास के ऊपर जुनून सवार था। बम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन होता था। अर्जुनदास ने कहा कि तुम भी चलो। अर्जुनदास की पत्नी ने कहा कि मैं बच्चों को कैसे लेकर जाऊँगी? देशसेवा का काम तो मर्दों के लिए है। मैं घर में बैठी हूँ। कमला बच्चों का ध्यान रखती थी। वह स्कूल में बच्चो को पढ़ाने जाती थी। एक दिन जब कमला को गुस्सा आया, तब उसने अर्जुनदास से कह दिया ''अब तुम स्वतंत्र हो, जो मन में आए करो।''७८

अगर जिन्दगी की वास्तविकता को देखा जाए तो पुरुषों की तुलना में नारी की स्थिति अच्छी नहीं है। आपने अगर विवाह किया है तो आपका कर्तव्य है कि आप पत्नी का ध्यान रखें। आप अपने काम मे इतने मस्त है कि कमाकर कुछ भी नही ला रहे है। उधर पत्नी अगर न कमाए तो वह बच्चों को क्या खिला देगी? आप तो चले गए। बच्चे भूखे माँ के सामने तड़प रहे हैं। उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कौन करेगा ?

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि साहनी जी ने एक दूसरे के कर्तव्य को समझाने का प्रयास किया है अगर विवाह किया है, तो आप अपनी जिम्मेदारियों को समझें, वरना विवाह ही न करें।

भीष्मसाहनी के नाटक 'कबिरा खड़ा बजार में' स्त्री और पुरूष सम्बन्ध अनेक स्थानों पर द्रष्टव्य है-

'कबिरा खड़ा बजार में'-

विवाह एक पवित्र बंधन है, जिसमें स्त्री और पुरूष परिणय सूत्र में बँधते हैं। यह एक गृहस्थ आश्रम है। गृहस्थ आश्रम को सभी आश्रमों में सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसमें स्त्री और पुरूष एक दूसरे के सुख-दुख के साथी होते है। उनके दुख को महसूस करते है। ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के नाटक 'कबिरा खड़ा बजार में' के पात्र नीमा और नूरा में' देखने को मिलता है।

कबीर के माता-पिता नीमा और नूरा है। नीमा का विवाह नूरा से हो जाता है। जब नीमा की विदा हो जाती है, तब उसकी डोली जुलाहों के रास्ते से गुजर रही होती है। वहीं पर एक तालाब पड़ता है। वह उस तालाब में पानी पीने जाती है, तो नीमा को एक रोता बच्चा दिखलाई देता है। वह बच्चा अकेला लेटा हुआ था। बच्चे के मुँह में

उसकी माँ का दूध लगा हुआ था। नीमा ने नूरा से कहा कि मैं इस बच्चे को अपने साथ ले चलूँ। नूरा नहीं चाहता था कि नीमा उस बच्चे को ले जाए। नूरा ने कहा कि वह पराया बच्चा है, हम इसे नहीं ले जाएँगे। पत्नी ने जिद की कि मुझे ये बच्चा चाहिए। पत्नी पति के सिर पर सवार हो गई। पति से पत्नी का दुख न देखा गया। पत्नी के अन्दर उस बच्चे के प्रति ममत्व उमड़ पड़ा। नूरा उस बच्चे को नहीं ले जाना चाहता था। वह अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करता था और उसकी आँखों में अश्रु नहीं देख सकता था। वर्तमान परिवेश में कोई भी नवदम्पक्ति नहीं चाहता कि आज ही हमारा विवाह हुआ हो और हमें कोई बच्चा पड़ा मिल जाए, तो हम उस बच्चे को गोद ले लें। हर पुरूष विवाह के दिन मौजमस्ती चाहता है, न कि एक बच्चे को अपने पल्लू से बाँध ले। वह बच्चा भी चाहेगा तो स्वयं का पराया बच्चा क्यों चाहेगा? वह लावारिस शिशु को स्वीकार क्यों करेगा? इतना अवश्य है कि विवाह के लम्बे समय के बाद अगर कोई सन्तान न हो रही हो, नि:सन्तान दम्पक्ति गोद लेने की सोचते हैं अथवा पुनर्विवाह करते हैं, लेकिन यहाँ पर भीष्मजी ने नूरा के विशाल हृदय का परिचय दिया। उसने अपनी पत्नी के देख को दूर करने के लिए उस बच्चे को ग्रहण कर लिया और उसका पिता बन गया। नूरा ने विवाह के दिन ही सभी परम्परागत इच्छाओं का दमन करते हुए मानवता का उत्कृष्ट उदाहरण नवदम्पत्ति ने प्रस्तुत किया। व्यक्तिगत आनन्द की तुलना में कर्तव्य पालन अधिक श्रेयष्कर होता है।

नीमा और नूरा की तरह स्त्री और पुरूष सम्बन्ध पुत्र कबीर और बहू लोई मे देखने को मिलता है।

कबीर एक जुलाहा थे। लोई उनकी पत्नी थी। उन्होंने लोई से कहा कि मैंने तुमसे विवाह तो कर लिया, लेकिन तुझे कैसे घर में लाया? पत्नी ने कहा कि अगर तुम्हें यहाँ लाना था, तो पहले छप्पर छवाता, बाद में हमें लाता। पति ने कहा कि तुम्हें यहाँ आना अखर रहा है। लोई ने कहा कि और क्या? उन्होंने कहा कि तुम्हारे पिता ने क्या तुम्हारी शादी जबरदस्ती की है? पत्नी ने कहा कि ऐसे प्रश्न तुम शादी के बाद क्यों पूछ रहे हो? शादी के पहले ऐसे प्रश्न पूछते तो और बात थी। उन्होंने कहा कि अब पूँछें तो। लोई का कबीर के प्रति यह कथन अधोलिखित है- **"हमारे पिछवाड़े एक साहूकार का छैल-छबीला बेटा रहता था। वह हमें ब्याहना चाहता था। उससे हमारा परेम था।"७६ "बापू हमसे पूछता तो हम तो सच्ची कहतीं, हम उससे ब्याह करेंगे। उससे हमारा परेम है। उसे पता चला कि तुमसे ब्याह होने जा रहा है तो उसने कहा - भागकर हमारे यहाँ चली आओ और क्या मालूम हम चले भी जाते।"८०**

कबीर ने कहा कि यह मुझसे बड़ा अनर्थ हो गया। हमें तुमसे यह विवाह नहीं करना चाहिए था। अगर तुम अपने प्रेमी के पास जाना चाहो तो तुम जा सकती हो। वे खुली विचारधारा के व्यक्ति थे। वे यह नहीं चाहते थे कि तुम दामपत्य जीवन दुख में गुजारो। विवाह सफल होते हैं, जिसमें दोनों की रजामन्दी हो। वे यह बिल्कुल नहीं चाहते हैं कि तुम्हारा विवाह भले ही धोखे से मुझसे हो गया, लेकिन तुम जिसे पसन्द करती हो और उसके पास जाना चाहो, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। कबीर का लोई के प्रति यह कथन दृष्टव्य है। **"उसके साथ तू खुश रहेगी तो तू जरूर उसी के पास चली जा। तूने पहले कहा होता तो तुम्हें मैं यहाँ लाता ही नहीं।"**

"भागकर जाती तो भी तो अकेली ही जाती ना। पर नहीं, तू अकेली मत जा, मैं तुम्हें पढ़ाने

ते चलता हूँ।" "जो कहेगी वही करूँगा। अपने आप जाना चाहती है तो अपने आप चली जा। चाहती है मैं लिवा ले जाऊँ तो मैं ले चलूँगा।"८१

कबीर का हृदय बहुत निर्मल था। उनके अन्दर मानवीय गुण था। वे दूसरों के दुख-दर्द को समझते थे। उनके अन्दर वास्तव में ईश्वर का वास था। वे हमेशा लोगों से यह कहते थे कि मानव-मानव को एक दूसरे से प्रेम करना चाहिए। वे एक अच्छे पति थे। वे अपनी पत्नी की खुशी के लिए उन्हें उनके प्रेमी के पास जाने की अनुमति दे देते हैं जब लोई अपना सारा सामान लेकर थोड़ी ही दूर जाती है, तब वह लौट आती है। पति ने कहा कि क्या तुम कुछ सामान भूल गई थीं? पत्नी ने कहा कि अब मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगी। उन्होंने कहा कि तुम्हारा इतना जल्दी मन कैसे बदल गया? उसने कहा कि आप बहुत अच्छे इन्सान है। आप किसी के साथ जबरदस्ती नहीं करते हैं। आपके अन्दर मानवता का गुण है। आप अच्छे पति हैं। आपके अन्दर वास्तव में ख़ुदा का नूर है- **"मन पलट गया। हमें लगा, हम तेरे ही संग रहेंगी, तू जोर-जबरदस्ती नहीं करता। तू खरा आदमी है। तुझे देखा नहीं होता तो और बात थी।"८२**

कबीर लोई की बातों से प्रसन्न हो गया और उसे अपनी बाँहों मे भर लिया। उन्होंने अपने हाथों से बनी हुई चुनरी उसके सिर पर डाल दी, जिससें पत्नी बहुत प्रसन्न हुई और पति ने पत्नी को एक कवित्र सुनाया-

"भीजै चुनरिया प्रेम रस बूँदन
आरती साज के चली है सुहागिन
प्रिय अपने को ढूँढ़न"८३

अगर कबीर को वर्तमान मे रखकर देखा जाए, तो कबीर जैसे मानव आज की दुनिया में बहुत कम देखने को मिलेंगे।

<u>'हानूश' -</u>

नर और नारी क़ी अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। नर में पुरूषार्थ, पराक्रम, श्रम, साहस, शौर्य और कठोरता का अंश अधिक है। नारी में स्नेह, करूणा, सौजन्य, चरित्र, दूरदर्शिता एवं सृजनात्मकता का बाहुल्य है, इसलिए नर को अग्नि और नारी को सोम कहा गया है। इन दोनों ही तत्वों की अपनी-अपनी महिमा और महत्व है। दोनों का ही अपने-अपने समय पर अपने-अपने स्थान में इन विशेषताओं की उपयोगिता हैं। दोनों के समन्वय से ही एक समग्र पूर्णता विकसित होती है। जब तक दोनों में एक दूसरे के प्रति त्याग की भावना नहीं होगी। आपस में एक दूसरे के प्रति प्रेम नहीं होगा। वह दाम्पत्य जीवन सफल नहीं होगा।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'हानूश' नाटक के पात्र कात्या और हानूश में देखने को मिलता है।

हानूश की पत्नी का नाम कात्या है। वह ताले बनाने का काम करता है। उसने बहुत समय पहले एक घड़ी बनाने का विचार किया था। घड़ी में उसके १३ साल व्यतीत हो गए, लेकिन उसे घड़ी बनाने में कोई भी सफलता नहीं मिली थी। हानूश को घड़ी बनाने की धुन सवार थी। वह घड़ी बनाने की धुन में अपनी पत्नी व बच्ची के प्रति बिल्कुल

ध्यान नहीं दे पाता है। वह महीने में कुछ ताले बनाकर परिवार का पेट पालता था। अब उसने कुछ समय से ताले नहीं बनाए, जिससे परिवार का खर्च चलना मुश्किल हो रहा था। कात्या कुछ ताले बनाकर बाजार में बेच आती है। बाजार में एक आदमी अच्छा ताला बनाने वाला आ गया, जिससे कात्या के ताले नहीं बिकते थे। वह स्वयं भूखी थी। उससे अपने बच्चों की हालत नहीं देखी जा रही थी। उसका एक बच्चा सर्दी व भूख के कारण मर चुका था। वह बाहर से हानूश से नफरत करने लगी थी। वह अपने पति की इज़्ज़त नहीं करती थी। कात्या ने कहा – **"उसमें पतिवाली कोई बात हो तो मैं उसकी इज़्ज़त करूँ। जो आदमी अपने परिवार का पेट नहीं पाल सकता, उसकी इज़्ज़त कौन औरत करेगी?"**८४

कात्या अन्दर से अपने पति की बहुत इज़्ज़त करती थी, लेकिन आर्थिक परिस्थिति ने उसे यह सब करने से मजबूर कर दिया। उसने ताला बनाने के लिए जेकब को रख लिया। वह अपने मन में यह विचार करती थी कि मैं हानूश को अब बिल्कुल परेशान नहीं करूँगी। उसके जो जी में आए वह करे। जेकब ताला बनाया करेगा। मैं उन तालों को बाजार में बेचा करूँगी। कात्या ने कहा- **"अब तुम आज़ाद हो, अपने वज़ीफे का इन्तजाम करो और घड़ी बनाओ। मैं तुमसे कभी कुछ नहीं कहूँगी। तुम उसी से निबटो तो बहुत बड़ी बात है। ---**८५ हानूश जब घड़ी बनाने में सफल हो जाता है, तब सभी जगह प्रसन्नता छा जाती है। जो लोग हानूश को बुरा भला कहते थे। वे ही लोग हानूश की तारीफ करने लगते हैं। हानूश के हृदय में भी अपनी पत्नी के प्रति बहुत प्रेम था। वह उसे जी जान से चाहता था, लेकिन घड़ी बनाने की धुन ने उसे निर्धनता के रास्ते पर लाकर खड़ा कर दिया था। हानूश अपनी पत्नी से बोला कि तुमने घड़ी बनाने में मुझे बहुत परेशान किया और मेरे सामान तक को बाहर फेंक दिया। जब स्थिति नहीं सँभली तो उसने अपने पति को पीट भी दिया। अब कहती है कि भगवान ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली है। उसने अपनी पत्नी से कहा कि तुम मेरे लिए भगवान से प्रार्थना करती थी कि ईश्वर तुम्हें अपने लक्ष्य में कामयाबी दे। कात्या बोली- **"कमानियाँ तोड़ना दूसरी बात है। मैं दिल से तो यही चाहती थी कि तुम्हें कामयाबी मिले, भगवान से भी यही माँगती थी।"**८६

हानूश ने कात्या से कहा कि तुमने हमारा हमेशा साथ दिया। मैंने अपनी पूरी जवानी घड़ी बनाने में लगा दी, लेकिन मैंने तुम्हें हमेशा दुःख दिया। मैं तुम्हें बिल्कुल सुख नहीं दे पाया। कात्या ने कहा- **"तुमने खुद कौन-सा सुख पाया है? रात-दिन मेहनत की है, सारी जवानी इसी में खपा दी है। तुमने किसी को कोई दुःख नहीं दिया। ऐसा कुछ मत कहो। आज का दिन हम सबके लिए बड़ा मुबारक दिन है।"**८७

जो पुरूष कोई भी कार्य मेहनत व लगन से करता है। उसको कामयाबी जरूर मिलती है। फर्क इतना पड़ जाता है कि किसी को कामयाबी जल्दी मिल जाती है। किसी को समय ज्यादा लग जाता है। हर पुरूष की सफलता के पीछे किसी नारी का हाथ हमेशा होता है। जैसे- रत्नावली से तुलसीदास, विद्योतमा से कालिदास, यशोधरा से बुद्ध आदि। हानूश ने कहा- **(धीमी आवाज़ में) मेरी इस कामयाबी के पीछे तुम्हारी कुर्बानी है। हर काम के पीछे किसी औरत की प्रार्थना होती है, उसकी कुर्बानी होती है, उसकी प्रेरणा होती है।**

कात्या यह काम तुम्हारी जी-तोड़ मेहनत से पूरा हुआ (दूर हानूश की घड़ी सहसा बज उठती

है। उसकी आवाज़ से पहले तो दोनों विस्मित से होते हैं, फिर मुस्कराने लगते हैं, एक दूसरे से बगलगीर होते हैं।) हाय, इसकी आवाज़ कैसे गूँजती है! घर में बजा करती थी तो इसकी आवाज़ ऐसी नहीं थी।"८८

जिस प्रकार पुरूष और नारी मानव समाज रूपी रथ के दो पहिए है, जिनके बिना या किसी एक के कमजोर होने से समांज के विकास की गति अवरूद्ध हो जाती है। उसी प्रकार अगर जीवन में दोनों में एक दूसरे के प्रति समर्पण की भावना नहीं है, तो वह जीवन भी मुर्दे के समान हो जाता है।

(६.३) विवाहित जीवन में -

(६.३) (क) विवाह का स्वरुप -

मानव की विभिन्न प्राणीशास्त्रीय आवश्यकताओं में यौन सन्तुष्टि एक आधारभूत आवश्यकता है। मानव के अतिरिक्त अन्य प्राणी भी यौन-इच्छाओं की पूर्ति करते हैं, लेकिन उनमें इसका केवल दैहिक आधार है। मानव में यौन-इच्छाओं की पूर्ति का आधार अंशतः दैहिक, अंशतः सामाजिक एवं सांस्कृतिक है। यौन इच्छाओं की सन्तुष्टि ने ही विवाह, परिवार तथा नातेदारी को जन्म दिया है। परिवार के बाहर भी यौन सन्तुष्टि सम्भव है, किन्तु समाज ऐसे सम्बन्धों को अनुचित मानता है।

विवाह के स्वरूप उतने ही जुदा होते हैं। जितने कि परिवार के वैवाहिक रीति-रिवाजों की विभिन्नता, परिवार की केन्द्रीय संरचनाओं को प्रभावित नहीं करती। दूसरी ओर केन्द्रीय परिवार और संयुक्त परिवार में जो अन्तर होते हैं। वे विवाह की संस्था को प्रभावित करते हैं। बोटामोर का कहना है कि सामान्यतया जिन समाजों में संयुक्त या विस्तारित परिवार होते हैं, उनमें वहु विवाह होने की संभावना अधिक है। उन परिवारों में विवाह के अन्तर्गत आर्थिक लेन-देन भी होता है और विवाह विच्छेद की सम्भावना बराबर बनी रहती है। वहाँ एक पति-पत्नी विवाह की संभावना बराबर बनी रहती है। ऐसे विवाह में बोटोमोर का कहना है कि आर्थिक लेन-देन कम होता है और विवाह विच्छेद की दर अधिक हो सकती है।

बोटोमोर ने कहा कि पति-पत्नी विवाह लगभग सभी समाजों में पाया जाता है। यह इसलिए होता है कि इस विवाह में एक पति-पत्नी विवाह लगभग सभी समाजों में पाया जाता है। इस विवाह में लैंगिक साथी समान अनुपात में होते हैं। बहु पति प्रथा एक पत्नी के दो या अधिक पति का विवाह अपवाद रूप में मिलता है। मुरडॉक तो इसे नृ जातीय उत्सुकता कहते हैं। इस विवाह में बालिका हत्या अधिक होती हैं। लड़कों की चाहत में लड़कियों को जन्म से पहले ही मार दिया जाता है अर्थात् एवारसन करवा लिया जाता हैं।

विवाह का अर्थ एवं परिभाषा-

विवाह का शाब्दिक अर्थ है, 'उद्वह' अर्थात् वधू को वर के घर ले जाना। **लूसी मेयर कहते है - "विवाह की परिभाषा यह है कि वह स्त्री-पुरूष का ऐसा योग है, जिससे स्त्री से जन्मा बच्चा माता- पिता की**

वैद्य सन्तान माना जाय।"८९

डब्ल्यू. एच.आर. रिवर्स के अनुसार - "जिन साधनों द्वारा मानव समाज यौन सम्बन्धों का नियमन करता है, उन्हें विवाह की संज्ञा दी सकती है।"९०

वेस्टरमार्क के अनुसार- "विवाह एक या अधिक पुरूषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह सम्बन्ध है जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें इस संगठन में आने वाले दोनों पक्षों एवं उनसे उत्पन्न बच्चों के अधिकार एवं कर्तव्यों का समावेश होता है।"९१

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि विवाह दो विषम-लिंगियों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक धार्मिक अथवा कानूनी स्वीकृति है। स्त्री-पुरूषों एवं बच्चों को विभिन्न सामाजिक व आर्थिक क्रियाओं में सहगामी बनाना, सन्तानोत्पत्ति करना तथा उनका लालन-पालन एवं समाजीकरण करना विवाह के प्रमुख कार्य हैं। विवाह के परिणामस्वरूप माता-पिता एवं बच्चों के बीच कई अधिकारों एवं दायित्वों का जन्म होता है।

विवाह के उद्देश्य एवं महत्व-

विवाह संस्था व्यक्ति को शारीरिक, सामाजिक एवं मानसिक सुरक्षा प्रदान करती है। मरडॉक ने २५० समाजों का अध्ययन करने पर सभी समाजों में विवाह के तीन उद्देश्यों का प्रचलन पाया। (१) यौन सन्तुष्टि (२) आर्थिक सहयोग (३) सन्तानों का समाजीकरण एवं लालन-पालन।

विवाह के उद्देश्य इस प्रकार है- (१) यौन इच्छाओं की पूर्ति एवं समाज में यौन क्रियाओं का नियमन करना। (२) परिवार का निर्माण करना एवं नातेदारी का विस्तार करना। (३) वैद्य सन्तानोत्पत्ति करना व समाज की निरन्तरता को बनाए रखना। (४) स्त्री-पुरूषों में आर्थिक सहयोग उत्पन्न करना। (५) सन्तानों का लालन-पालन एवं समाजीकरण करना। (६) मानसिक सन्तोष प्रदान करना। (७) माता-पिता एवं बच्चों में नवीन अधिकारों एवं दायित्वों को जन्म देना। (८) संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण करना। (९) धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों की पूर्ति करना। (१०) सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

"मजूमदार और मदान ने कहा है - "विवाह मे वैयक्तिक स्तर पर शारीरिक (यौन) और मनोवैज्ञानिक (सन्तान प्राप्ति) संतोष प्राप्त होता है, तो व्यापक सामूहिक स्तर पर इससे समूह और संस्कृति के अस्तित्व को बनाए रखने मे सहायता मिली है।"९२

विवाह के स्वरूप-

पति-पत्नी की संख्या के आधार पर भारत में पाए जाने वाले विवाह इस प्रकार है-

(१) एक विवाह (Mono Gramy) -

"श्री बुकेनोविक के अनुसार उस विवाह को एक-विवाह कहना चाहिए जिसमें न केवल एक

पुरूष की एक पत्नी या एक स्त्री का एक ही पति हो बल्कि दोनों में से किसी की मृत्यु हो जाने पर भी दूसरा पक्ष अन्य विवाह न करे। एक विवाह में एक समय में एक पुरूष एक ही स्त्री से विवाह करता है। इस सन्दर्भ में लूसी मेयर लिखते हैं एक-विवाही और बहु-विवाही शब्द विवाह या समाज के लिए प्रयुक्त होते हैं, व्यक्तियों के लिए नहीं। निष्ठाहीन पति या कामाचारी व्यक्ति को बहु-विवाही कहना भाषा के साथ खिलवाड़ करना है, यद्यपि कुछ लोग ऐसा करते हैं।"६३

वर्तमान में एक-विवाह को विवाह का सर्वश्रेष्ठ रूप समझा जाता है। वेस्टरमार्क ने एक-विवाह को ही विवाह का आदि स्वरूप माना है। मैलिनोवस्की की भी मान्यता है कि - **"एक-विवाह ही विवाह का सच्चा स्वरूप है, रहा था और रहेगा।"** वर्तमान में हिन्दू विवाह अधिनियम, १९५५ के द्वारा एक-विवाह को आवश्यक कर दिया गया। शिक्षा एवं सभ्यता के विकास के साथ-साथ एक विवाह का प्रचलन बढ़ता ही जा रहा है।

(२) बहुविवाह- (Poly Gamy) -

एकाधिक पुरुष जब अथवा स्त्रियाँ विवाह बन्धन में बंधते हैं तो ऐसे विवाह को बहु-विवाह कहते हैं। बहु-विवाह के प्रमुख चार रूप पाए जाते हैं बहुपति विवाह, बहुपत्नी विवाह, द्वि-पत्नी विवाह एवं समूह विवाह अन्तर्जातीय विवाह एवं सजातीय विवाह

(अ) बहुपति विवाह (Poly Gamy) -

बहुपति विवाह को परिभाषित करते हुए डॉ० रिवर्स लिखते हैं - "एक स्त्री का कई पतियों के साथ विवाह बहुपति विवाह कहलाता है।"६४ मिचेल लिखते है कि "एक स्त्री द्वारा एक पति के जीवित होते हुए अन्य पुरूषो से भी विवाह करना या एक समय पर ही दो या दो से अधिक पुरूषो से विवाह करना बहुपति विवाह है।"६५ डॉ० कापड़िया के अनुसार - "बहुपति विवाह एक प्रकार का सम्बन्ध है जिसमें एक स्त्री के एक समय में एक से अधिक पति होते हैं या जिसमें सब भाई एक पत्नी या पत्नियों का सम्मिलित रूप से उपयोग करते हैं।"६६

अतः स्पष्ट होता है कि बहुपति विवाह में एक स्त्री का एकाधिक पुरूषों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होता है। यह प्रथा देहरादून के जौनसार बावर परगना, टिहरी गढ़वाल तथा शिमला की पहाड़ियों में रहने वाले खस राजपूतों, नीलगिरि की पहाड़ियों में रहने वाले टोडा एवं कोटा लोगों, लद्दाखी बोटा, चेन्नई के तियान एवं दरावा, मालाबार के नायर, हरावान तथा कम्पाला, कम्बेल, कुर्गवासियों एवं कुछ समय पूर्व तक छोटा नागपुर की संथाल एवं मध्य भारत की उरांव जनजाति में प्रचलित रही।

बहुपति विवाह के भी दो रूप हैं (i) भ्रातृक बहुपति विवाह (ii) अभ्रातृक बहुपति विवाह।

(i) भातृक-बहुपति विवाह- (Fraternal or Adelphic polyandry) -

जब दो या अधिक भाई मिलकर किसी एक स्त्री से विवाह करते हैं अथवा सबसे बड़ा भाई किसी एक

स्त्री से विवाह करता है और अन्य भाई स्वतः ही उस स्त्री के पति माने जाते हैं तो इस प्रकार के विवाह को भ्रातृक बहुपति विवाह कहते हैं। भ्रातृक बहुपति विवाह का प्रचलन खस, टोडा एवं कोटा लोगों तथा पंजाब के पहाड़ी लद्दाख, कांगड़ा जिला के स्पीती और लाहौल परगनों में पाया जाता है।

(ii) अभ्रातृक बहुपति विवाह (Non-Fraternal or Adelphic polyandry)-

इस प्रकार के विवाह में पति परस्पर भाई नहीं होते हैं। स्त्री बारी-बारी से समान अवधि के लिए प्रत्येक पति के पास रहती है। यह प्रथा टोडा तथा नायरों मे पाई जाती है।

(ब) बहुपत्नी विवाह (Poly Gyny) -

बहुविवाह का एक रूप बहुपत्नी विवाह भी है, जिसमें एक पुरूष एकाधिक स्त्रियों से विवाह करता है। कापडिया का मत है कि भारतवर्ष में बहुपत्नी विवाह का प्रचलन वैदिक युग से वर्तमान समय तक प्रचलित रहा है। भारत में प्राचीन समय में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, एवं शूद्र ये चार वर्ण पाए जाते थे। शूद्रों को छोड़कर शेष तीन वर्णों को अपने वर्ण के अतिरिक्त अपने से निम्न वर्ण की लड़कियों से विवाह करने की भी स्वीकृति प्राप्त थी। ऐसा कहा जाता है कि स्मृतिकार मनु के दस एवं याज्ञवल्क्य के दो पत्नियाँ थीं। अल्टेकर का मत है कि बहुपत्नी प्रथा धनी, शासक एवं अभिजात वर्ग के लोगों में सामान्य थी।

द्वि-पत्नी विवाह (Bio gamy) -

बहुविवाह का एक रूप द्वि-पत्नी विवाह भी है। इस प्रकार के विवाह में एक पुरूष एक साथ दो स्त्रियों से विवाह करता है। कई बार पहली स्त्री के सन्तान न होने पर दूसरा विवाह कर लिया जाता है। भारत में दक्षिण की कुछ जनजातियों में यह प्रथा पाई जाती है, किन्तु वर्तमान में ऐसे विवाहों पर कानूनी रोक लगा दी गई है।

समूह विवाह (Group Marriage) -

समूह विवाह में पुरूषों का एक समूह स्त्रियों के एक समूह से विवाह करता है और समूह का प्रत्येक पुरूष समूह की प्रत्येक स्त्री का पति होता है। परिवार और विवाह की प्रारम्भिक अवस्था में यह स्थिति रही होगी, ऐसी उद्‌विकासवादियों की धारणा है। यह प्रथा आस्ट्रेलिया की जनजातियों मे पाई जाती है। जहाँ एक कुल की सभी लड़कियाँ दूसरे कुल की भावी पत्नियाँ समझी जाती है। वेस्टरमार्क का मत है कि ऐसे विवाह तिब्बत, भारत एवं लंका के बहुपतित्व वाले समाजों में पाए जाते हैं। डॉ० सक्सेना का मत है कि बहुपति विवाही समाजों में आर्थिक स्थिति में सुधार होने पर पुरूष एकाधिक स्त्रियाँ रखते हैं, तब बहुपति विवाह समूह विवाह का रूप ले लेता है।

(२) अन्तर्जातीय विवाह-

अन्तर्जातीय विवाह उसे कहते है जब अपनी ही जाति में विवाह न करके अन्य दूसरी जाति में विवाह करें या अपने धर्म में विवाह न करके किसी दूसरे धर्म में विवाह कर लें। जैसे अग्रवाल की कोई लड़की किसी ब्राह्मण के लड़के से विवाह कर ले या अपने धर्म में विवाह न करके किसी दूसरे धर्म में विवाह कर ले। उदा० इंदिरागाँधी का

फिरोजगाँधी के साथ अन्तर्जातीय विवाह का अच्छा उदाहरण है।

(३) सजातीय विवाह-

सजातीय विवाह का एक नियम है कि एक स्त्री अथवा पुरूष को अपने ही समूह, जाति, प्रजाति, धर्म अथवा गोत्र के अन्दर अपना हम सफर चुनना पड़ता है। संसार के सभी लोग इस विवाह को मान्यता देते हैं। अमरीका के गोरे लोग काले नीगो लोगों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध इसलिए स्थापित नहीं करते कि वे दोनों भिन्न प्रजातियों के हैं। मुसलमानों में कानून के द्वारा सभी स्त्रियों को अपने धर्म के अन्दर ही विवाह करना अनिवार्य है, जबकि बहुत सी जनजातियाँ एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र के अन्दर ही विवाह सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक समझती है। अपने ही वर्ण के स्त्री-पुरूष से विवाह करना सजातीय विवाह कहलाता है। उदा० गुप्ता का लड़का केवल गुप्ता की लड़की से विवाह करे।

भीष्म साहनी ने अपने अनेक उपन्यासों में अन्तर्जातीय विवाह का वर्णन किया है।

नीलू नीलिमा नीलोफ़र -

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यास में नीलू और सुधीर का अन्तर्जातीय विवाह देखने को मिलता है।

अन्तर्जातीय विवाह नीलू और सुधीर ने किया था। वे दोनों एक दूसरे को पसन्द करते थे। नीलू एक मुसलमान लड़की थी, जबकि सुधीर एक हिन्दू लड़का था। दोनों में एक दूसरे के प्रति त्याग की भावना थी। दोनों एक दूसरे के लिए समर्पित थे। जब उसने पहली वार नीलू को देखा तो वह देखता ही रह गया। नीलू गौर वर्ण की तथा दुबली सुन्दर थी। "किसी-किसी दिन अँधेरा गहरा जाने तक यह 'आवागमन' का सिलसिला चलता रहता। इसमें किसी और चीज़ का दखल नहीं था, न परिवारों के रख-रखाव का, न अपने-अपने परम्परागत संस्कारों का न ज़माने के तनावों- तल्ख़ियों का सर्वोपरि महत्व था तो केवल एक-दूसरे के प्रति गहरे लगाव का, एक-दूसरे के निकट रह पाने का। अँधेरा बढ़ जाने पर उनके हाथ एक-दूसरे को छूने लगते, हाथ छू जाते तो तन-बदन में बिजली दौड़ जाती। एक बार तो साहस करके सुधीर ने नीलू का हाथ अपने हाथ में ले लिया। नीलू ने हाथ छुड़ाने की हल्की-सी कोशिश की, पर फिर वहीं पड़ा रहने दिया।

'तेरा हाथ कितना छोटा-सा है, मुलायम सा,"सुधीर बोला, "लगता है, मेरे हाथ में नन्ही-सी चिड़िया आ गई है।"९७

नीलू और सुधीर का जब विवाह हो गया, तब उनके विवाह में काफी परेशानियाँ आई । उनके इस विवाह से उनके घर के लोग कोई खुश नहीं थे। वह एक मुसलमान लड़की थी। उसने हिन्दू लड़के से विवाह किया था। यह एक अन्तर्जातीय विवाह था। अन्तर्जातीय विवाह करने से उसके घर की इज़्ज़त मिट्टी में मिल गई थी। उसके परिवार में दो भाई तथा एक बहिन तथा माता-पिता थे। वह अपने परिवार में सबसे लाड़ली लड़की थी। उसकी माँ ने अपनी बेटी की शादी के लिए कपड़े बनाकर रख लिए थे। उसके लिए चुनरी रखी थी। उसकी माँ के सारे सपने चकनाचूर हो गए थे। जब नीलू के परिवार वालों को पुलिस स्टेशन में बुलाया गया, तब पुलिस स्टेशन में नीलू का बड़ा भाई तथा छोटा

भाई हमीद और वालिद आए थे। जब हमीन ने सुना कि मेरी बहिन किसी काफ़िर से प्रेम करती है, तब हमीद बहक पड़ा उसने कहा- "यह हमारी बहिन हमें रूसवा करने पर तुली हुई है, हमारी नाक कटवाने यहाँ पहुँच गई है, बेपर्द होकर, हरामज़ादी।"९८

हमीद ने नीलू के विवाह के बारे में पुलिस से कहा कि यह हमारा निजी मामला है। हमीद का पुलिस के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है। "शादी के मामले में पुलिस का क्या दख़ल है, साहिब? आपने इस लड़के की दरख्वास्त को ले कैसे लिया? शादी-ब्याह के मामले में पुलिस कहाँ से आ गई?"९९ पुलिस इंसपेक्टर ने दो-टूक शब्दों में कहा- "ऐसी शादी पहली बार नहीं हो रही है। मेरी हमदर्दी लड़के के साथ होती क्योंकि मैं हिन्दू हूँ तो आप लोगों को बुलवाता ही नहीं। मेरे लिए यही काफी था कि लड़का-लड़की दोनों बालिग़ हैं, एक-दूसरे से शादी करना चाहते हैं। मैं उनकी दरख्वास्त लेकर फ़ाइल में लगा देता। मैने तो आपको इसलिए बुलाया हैं कि घरवालों के सामने लड़का-लड़की अपनी रज़ामंदी ज़ाहिर करें। बस, इतना ही।"१००

पुलिस वाले ने कहा कि यह फैसला लड़की का है, जो लड़की फैसला करेगी, वह मान्य होगा। अगर आप अपनी बहन को आधा घंटे के लिए ले जाना चाहें तो, जरूर ले जाएँ और उसे समझा लें। जब नीलू आधे घंटे बाद आती है, तब उसने कहा कि मैं सुधीर के साथ जाऊँगी। नीलू के अब्वा ने कहा- "और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू हमारे लिए मर गई,"१०१ नीलू को जब सुधीर मिल गया, तब इनके विवाह का प्रबन्ध किया जाता है- "विवाह-संस्कार आर्यसमाज मन्दिर में हुआ था। जगदीश अपने चार-पाँच दोस्तों-संगियों को भी पकड़ लाया था। गेंदे के फूलों के हार ले आया था। फिर दोनों भागकर नीलू के लिए चटकीले रंगों की एक साड़ी ले आए थे। जगदीश सारा रास्ता बतियाता रहा था। नीलू इस बीच जगदीश के कमरे में अकेली बैठी रही थी और जब निकली थी तो न केवल चटकीली साड़ी पहने हुए, बल्कि माथे पर चौड़ी-सी सिंदूर की बिंदी भी लगाए हुए और हँसती हुई।"१०२

नीलू के विवाह को लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ कर रहे थे। किसी ने भी इनके विवाह को आदर नहीं दिया। जब नीलू और सुधीर डॉ० गणेश की पार्टी में थे, तब वहाँ पर साहित्यकार, समाजशास्त्री, मनोविज्ञान आदि सभी आए थे- "बुद्धिजीवी अपने बौद्धिक सरोकार रम के जामों में डुबो देने के मूड में थे। यों सुधीर नीलू के प्रेम-विवाह में बुद्धिजीवी समाजशास्त्रियों की, एक विरल घटना के नाते, दिलचस्पी थी। यह अन्तर्जातीय विवाह था। आज के माहौल में अन्तर्जातीय, अंतर्धर्मी विवाह अनुसंधान का महत्वपूर्ण विषय है। इस एतबार से सुधीर और नीलू उनके लिए एक जीते-जागते उदाहरण बनकर आए थे।"१०३

नीलू का जब विवाह हुआ, तब महफिल में चारों तरफ चाँदनी ही चाँदनी नजर आ रही थी। सेठी का नसे में चूर होकर नीलू के प्रति यह पंक्तियाँ अधोलिखित है-

"आओ, हम पथ से हट जाएँ !

युवती और युवक मदमाते

उत्सव आज मनाने आते

लिए हृदय में हर्ष, नयन मे स्वप्न,

हृदय मे अभिलाषाएँ !"१०४

सेठी ने एक शेर फिर सुनाया-

Here is a lesson from a butter fly,

that on a hard rock, happy can lie !"१०५

नीलू के विवाह से सभी परेशान थे। एक प्रोफ़ेसर ने दूसरे व्यक्ति से कहा- **"प्रेम विवाह या अन्तर्जातीय विवाह से परेशानियाँ बढ़ेंगी, तो क्या इससे पहले परेशानियाँ कम थी?"१०६**

नीलू ने जो अन्तर्जातीय विवाह किया था। उसकी दर्दनाक स्थिति का उसे काफी सामना करना पड़ा। इधर वह अपने माता-पिता से बेघर हो गई। जब वह सुधीर के पास गई, तब उसके पेट में सुधीर का बच्चा था। उसे उसके भाई हमीद ने उसका बच्चा गिरवा दिया और उसे बंद कोठरी में डाल दिया। जब वह अपने माता-पिता के पास थी, तब उसके भाई हमीद ने कहा- **"काफ़िर की औलाद इस घर में नहीं आएगी। माँ, तुम भी कान खोलकर सुन लो। अगर इसके खावन्द ने कलमा पढ़कर दीन कबूल कर लिया होता तो बात दूसरी थी, तब बच्चा हमारा होता, दीन का होता, मगर उस काफ़िर ने दीन कबूल नहीं किया, इसलिए उस काफ़िर का बच्चा इस घर में पैदा नहीं हो सकता।"१०७**

नीलू के घर के सदस्य आपस में बार्तालाप कर रहे थे। इस लड़की ने मुझे कहीं का नहीं छोड़ा है। खुद गुलछर्रे उड़ा रही है और हमारी समाज में नाक कटवा रही है। हमारा घर से निकलना मुश्किल हो गया है। इधर हमीद ने नीलू के दूसरे विवाह के लिए लड़का ढूढ़ लिया था। उसके एक बीबी तथा तीन बच्चे थे। जब एक मौलवी ने नीलू के पिताजी से टिप्पणी की, तब मौलवी का पिताजी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **"मैं सोचता हूँ, अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। लड़की समझदार है। अल्लाह के फज़ल से अच्छा पढ़ी-लिखी है। उसके भाई ने उसे हमल गिरवाने को कहा तो वह मान गई। उसने वक्त की नज़ाकत को समझ लिया है और आपका फ़र्जन्द कहता था कि वह उसे इस बात पर भी रजामंद कर लेगा कि वह अपने शौहर को दीन कबूल करने पर भी राजी कर ले। या फिर, किसी दूसरी जगह उसके निकाह का बंदोवस्त हम करेंगे।"१०८**

नीलू की माँ भी कभी नीलू को फटकारती है। किसी का कोई दोष नहीं है। मेरा पेट ही गंदा है, जो तुझ जैसी लड़की को जन्म दिया है।

अन्तर्जातीय विवाह के बारे में सुनकर सुधीर के पिताजी तो जलती लड़की लेकर आ गए थे। उन्हें अन्तर्जातीय विवाह से बहुत नफरत थीं। भले ही सुधीर के पिता बड़ी जाति के न हो, लेकिन हिन्दू ही तो थे। ऐसे अन्तर्जातीय विवाह में लड़कों का कुछ भी नहीं बिगड़ता है, बल्कि दुर्दशा लड़की की होती है। वह कहीं की नहीं रहती है। जब डॉ० गणेश की पार्टी चल रही थी। सभी लोग अपनी तार्नीबानी पेश कर रहे थे। पार्टी में से एक महिला जोश में आकर बोली- **"औरत तो दुनिया में वेवकूफ बनने के लिए आई है। घरवाला दो चूड़ियाँ बनवा देगा तो**

वह खुश। **सभा-सोसाइटी में कोई उसके रूप की प्रशंसा कर देगा तो वह फूली नहीं समाएगी, पर उसे जिंदगी में मिलता क्या है।"१०६**

यहाँ पर लेखक ने ऐसे अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देकर यह बताने का प्रयत्न किया है कि अन्तर्जातीय विवाह से समाज में दहेज प्रथा, एक दूसरे के प्रति मनमुटाव, छुआछूत अपने-अपने धर्म को लेकर जो लोग लड़ रहे है। अगर वे एक धर्म से दूसरे धर्म में विवाह करेंगे तो परिवार में प्रेम बढ़ेगा। विवाह ही एक ऐसा पवित्र बंधन है, जो एक धर्म से दूसरे धर्म को जोड़ता है। एक जाति से दूसरी जाति में प्रेम लाता है और आपस में भेदभाव को दूर करता है। सरकार ने भी ऐसे अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन दिया है। सरकार ऐसे अन्तर्जातीय विवाह पर प्रोत्साहन राशि एवं अन्य सुविधाएँ भी देती है। भीष्म साहनी ने अपने उपन्यास के माध्यम से अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन मिले, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण नीलू और सुधीर है।

'तमस' -

विवाह एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्कार है, जो संसार के प्रत्येक समाज में पाया जाता है। कट्टर संकीर्णता के कारण आज कल अन्तर्जातीय विवाह में हिचकिचाहट होती है। यही उपजातियों की दीवारें भी नहीं तोड़े टूटती, परन्तु प्राचीनकाल में ऐसी संकीर्णता नहीं थी। वर-वधू में जाति और उपजातियों का गुण और स्वभावों का मेल बिठाया जाता था और ऐसे विवाह सामाजिक रूप से मान्य होते थे। व्यास और पाराशर मुनि की माताएँ दूसरे वर्ण की थीं। व्यास की माँ केवल अविवाहिता थी और पाराशर की माँ शपच (चांडाल) के घर जन्मी थी।

क्षत्रिय कन्या पद्मा ने पिप्लाद और लोपामुद्रा ने अगस्त्य ऋषि से विवाह किया था। विश्वामित्र ने मेनका से सम्बन्ध स्थापित किया, जिसकी बेटी शकुन्तला दुष्यन्त से ब्याही गई। श्रंगी ब्राह्मण ने राजा दशरथ की पुत्री शान्ता से विवाह किया था। प्रियव्रत की बेटी उर्जस्वती से शुक्राचार्य ने विवाह किया था। वर्तमान परिवेश में अन्तर्जातीय विवाह का उदाहरण राजीव गाँधी और सोनिया गाँधी का है।

अंतर्जातीय विवाह का एक परिदृश्य भीष्म साहनी द्वारा लिखित **'तमस'** उपन्यास में देखने को मिलता है।

काल विस्तार की दृष्टि से साम्प्रदायिकता की लहर चारों तरफ व्याप्त थी। तुर्की लोग गुरूद्वारे पर आक्रमण कर रहे थे। अधिकांश लोग गुरूद्वारे में इकट्ठे हो गए। कुछ लोग, जिसको जिधर जगह मिली, वहाँ इकट्ठे हो गए। यह दंगा अंग्रेजों के द्वारा फैलाया जा रहा था। इस दंगे में न जाने कितने लोगों के परिवार बिखर गए थे। किसी की बेटी, बेटा खो गए थे। एक पंडित की बेटी खो गई थी। प० अपनी बेटी का पता लगाने के लिए आँकड़े वाले बाबू के पास आए थे। बाबू ने कहा कि कल नूरपुर बस जाएगी और एक सरकारी ऑफसर भी होगा। अगर आप चाहें, तो बस में जाकर अपनी बेटी का पता लगा सकते है। ब्राह्मणी का आँकड़े बाबू के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **"अब हमारे पास आकर क्या करेगी जी, बुरी वस्तु तो उसके मुँह में उन्होंने पहले से ही डाल दी होगी।"११०**

प्रकाशो एक हिन्दू लड़की थी। अल्लाहरक्खा एक मुसलमान व्यक्ति था। अल्लाहरक्खा प्रकाशो को बहुत पसन्द करता था, पर प्रकाशो उसको पसन्द नहीं करती थी। उसकी नजर प्रकाशो पर काफी समय से थी। प्रकाशो के

माता-पिता बहुत निर्धन थे। उनके पास अपनी बेटी को खिलाने के लिए दो वक्त का भोजन भी नहीं था। जब प्रकाशो अपनी माता के साथ झरने से पानी भरती व कपड़े धोती थी, तब उस समय अल्लाहरक्खा प्रकाशो पर छिपकर कंकड़ फेंका करता था। वह यह सब जानते हुए भी कुछ नही कहती थी। वह जानती थी कि मेरे माता-पिता अल्लाहरक्खा का सामना नहीं कर पाएँगे। वह अपने पिता व अल्लाहरक्खा दोनों से डरती थी। एक दिन मौका पाकर अल्लाहरक्खा प्रकाशो को उठाकर ले गया और उससे जबरन निकाह कर लिया- **"प्रकाशो को सचमुच अल्लाहरक्खा ने घर पर बैठा लिया था। गाँव में फिसाद होने पर माँ-बेटी पहाड़ी की तलहटी पर लकड़ियाँ चुन रही थीं। अल्लाहरक्खा पहले से ही दो-तीन आदमियों के साथ कहीं घात लगाए बैठा था। मौका देखकर वे भागते हुए आए और अल्लाहरक्खा रोती-चिल्लाती प्रकाशो को उठाकर ले गया था। पहली रात तो प्रकाशो अँधेरी कोठरी में पड़ी रही, पर दूसरे दिन अल्लाहरक्खा ने उसके साथ निकाह कर लिया और एक नया जोड़ा भी उसके लिए कहीं से ले आया।"**१११

अल्लाहरक्खा जब प्रकाशो को मिठाई खिला रहा था, तब प्रकाशो मिठाई खाने में सकुचा रही थी। उसने अपने मन में सोचा मैं मुसलमान के हाथ से कैसे खाऊँ? **"हिन्दू हलवाई की दुकान की है, सूरे नियें बच्चिये, खा !"**११२

प्रकाशो अल्लाहरक्खा से खुलती जा रही थी। वह अपने मन में विचार कर रही थी कि मेरे माता-पिता मेरे बारे में क्या सोच रहे होंगे, लेकिन वह मजबूर थी। वह करती भी तो क्या? **"दोनों एक-दूसरे के साथ खुलने लगे थे। अल्लाहरक्खा ने आगे बढ़कर उसे बाँहों में भर लिया। डरी-सहमी रहते हुए भी प्रकाशो इस अनूठे अनुभव में भाग लेने लगी थी, उसे ग्रहण-सी करने लगी थी। उसे लगता जैसे अतीत पीछे छूटता जा रहा है और वर्तमान बाँहें फैलाए उसे आलिंगन में भरने के लिए उतावला हो रहा है। स्थिति इतनी बदल गई थी कि उसके प्रसंगों में प्रकाशो के माँ-बाप असंगत होते जा रहे थे।"**११३

यद्यपि अन्तर्जातीय विवाह अब हमारे समाज में यदाकदा होने लगे हैं, लेकिन उन्हें पूरी तरह मान्यता नहीं मिली है। अन्तर्जातीय विवाह अब थोड़े लोग ही कर पाते है। प्रेम तो बहुत से लोग करते हैं। कस्मे वादे खाते है, लेकिन समाज से टक्कर लेने वाले एकाद ही नजर आते हैं।

उनका प्रेम जब विवाह की सीढ़ी पर पहुँचता है, तब किसी कारणवश उनका विवाह रूक जाता है, लेकिन हमारे समाज के एक ऐसे ही साहसी स्त्री और पुरूष ने अन्तर्जातीय विवाह करके दिखाया है। लड़की मुसलमान और लड़का हिंदू है। समाज ने अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देने के लिए कई संस्थाएँ व आश्रम खोले हैं। यह संस्था हिन्दुओं की हैं, जहाँ युवक युवती अपनी इच्छानुसार विवाह कर सकते हैं। इन्हें दरदर भटकने की जरूरत नहीं है। ऐसा ही एक समाचार 'आज' अखबार ने प्रकाशित किया।

"अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देने वाला एक ऐसा आश्रम है। जहाँ युवक युवतियाँ अपनी इच्छानुसार विवाह करते है। उस आश्रम का नाम श्री मत्परम हंस आश्रम बाबूगंज सगरा के पीठाधीश्वर श्री १००८ बालयोगी बाल ब्रह्मचारी स्वामी अभय चैतन्य है। इस आश्रम में एक दर्जन से अधिक विवाह

हुए हैं। ऐसा ही एक विवाह मेहरून निशा नाम की मुस्लिम लड़की तथा हिन्दू लड़के राजेन्द्र पाण्डेय ने किया है। उन्होंने स्वामी जी के आश्रम में जाकर अपनी बात रखी और स्वामीजी ने उन्हें परिणय सूत्र में बाँध दिया।"११४

अगर समाज में ऐसे अन्तर्जातीय विवाह होंगे तो सभी में प्रेम बढ़ेगा और यह नारा कहना सिद्ध होगा। "हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई आपस में है भाई-भाई।"

इस प्रकार भीष्मसाहनी ने अन्तर्जातीय विवाह का सफलता पूर्वक चित्रांकन किया है।

भीष्म साहनी ने अपने अनेक उपन्यासों मे सजातीय विवाह का वर्णन किया है।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' -

भीष्मसाहनी ने अपने उपन्यास नीलू नीलिमा नीलोफ़र में सजातीय विवाह को दिखाया है। नीलिमा हिन्दू लड़की तो है। नीलिमा का विवाह पापा के दोस्त के लड़के सुबोध के साथ हो जाता है।

यद्यपि नीलिमा को अल्ताफ़ पसन्द था, लेकिन घर में नीलिमा के वजह से उसके पिता रात को चक्कर काटते रहते है और उसकी चिन्ता करते रहते है कि हम उसका विवाह वहाँ करेंगे जहाँ मेरी बेटी खुश रहे। इधर दादी को अल्ताफ़ का घर पर आना, उससे प्यार भरी बातें करना बिल्कुल पसन्द नहीं था। नीलिमा के पिताजी का अपनी पत्नी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- "दोनों एक-दूसरे को चाहते हैं। मैं उस लड़के को जानता हूँ। उसका बाप मेरा दोस्त है। बड़े शरीफ लोग हैं। मुझे तो इसमें कोई बुराई नज़र नहीं आती, बहुत अच्छा ख़ानदान है। खाते-पीते लोग हैं।"

"अक्ल से काम लो, बेटा ! लड़का भलामानुस है, सब ठीक है, पर तुम्हारी बेटी को सारी उम्र काटनी है। ब्याह होने की देर है कि हमारी बेटी पर्दे में चली जाएगी। उन लोगों का रहन-सहन, खाना-पीना, उठना-बैठना और तरह का आँखें खोलकर चलते हुए भी तुम गड्ढे में कूद रहे हो।"११५

एक बार जब नीलिमा ने दादी और पिताजी की खटपट सुनी, तब नीलिमा के बिना सोचे ही सुबोध से विवाह का फैसला ले लिया, अगर मेरे विवाह से दादी माँ और पापा को खुशी मिले तो मैं सुबोध से विवाह कर लूँगी। जैसे ही नीलिमा ने डैडी को सुबोध से विवाह करने के लिए बताया तो पिताजी बहुत खुश हो गए और उनकी चिंता दूर हो गई। जब दादी माँ ने इस खबर को सुना, तब दादी माँ नीलू को छाती से लगा लिया, लेकिन पिताजी ने कहा कि बेटा ! तुम सुबोध से अभी मिली और इतनी जल्दी फैसला कैसे ले लिया? नीलिमा ने हँसकर कहा- "पहली नज़रवाला प्रेम ऐसा ही होता है, डैडी ! यह पहली नज़रवाला प्रेम है !"११६

डैडी ने नीलिमा को समझाया बेटी ! तुमने न सोचा न समझा और इतनी जल्दी फैसला ले लिया। जिन्दगी में पहली बार आज शाम तुम उस लड़के से मिली हो, वह भी कुछ समय के लिए और तुमने एक दूसरे को इतना जान समझ लिया है कि एक दूसरे के साथ शादी तक कर लेने का फैसला कर लिया है, तो फिर डैडी ने नीलिमा से कहा - "कुछ भी कहो, नीलिमा, अल्ताफ़ बहुत अच्छा लड़का है; बड़ा निश्छल, बड़ा हँसमुख, मिलनसार, पर

उनके रहन-सहन और हमारे रहन-सहन में फर्क तो बड़ा है ना। वे लोग तुमसे पर्दा करवाएँ, तुम पर पाबंदियाँ लगाएँ, दोस्ती की बात अलग है, पर शादी के बाद तो तरह-तरह की रस्में, रहन-सहन निभाना पड़ता है। दादी माँ तो कुछ भी कहें, पर शादी के बाद इन बातों का बोझ तो तुम्हें ही वहन करना पड़ता ना।"

हाँ, डैडी !"११७

"It was love at first sight, Daddy. यह पहली नज़र का प्यार है !"११८

सुधीर को जब नीलू के डैडी से सिफारिश से ऊँची नौकरी मिली, तब सुबोध ने सोचा क्यों न इस लड़की से मेरा विवाह हो जाएँ? यह बहुत ही सुन्दर है और बहुत अच्छी अंग्रेजी बोलता है। सुबोध के अन्दर नीलिमा के प्रति प्यार अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए था। हृदय से वास्तविक प्रेम नहीं था। विवाह के बाद नीलिमा को खूब मारता व पीटता था। नीलिमा ने अपनी ख़ुशी दरिया में झोंक दी और जल्दबाजी में फैसला लेकर जिन्दगी भर सुबोध के साथ रोई।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीष्म साहनी ने नारी की दर्दनाक दशा का चित्रण किया है। एक नारी को घर को खुश रखने के लिए अपनी खुशियों की बली चढ़ानी पड़ती है। जैसा कि नीलिमा को चढ़ानी पड़ी। नीलिमा ही बाद में पछताती है कि मैंने यह विवाह क्यों किया ?

'कुंतो' -

विवाह एक महत्वपूर्ग सामाजिक संस्कार है, जो संसार के प्रत्येक समाज में पाया जाता है। हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है। विभिन्न समाजों में विवाह के अनेक स्वरूप प्रचलित है। पश्चिमी समाजों में जहाँ विवाह सामान्य भिन्नता के रूप में स्वीकृत हैं, वहीं मुस्लिम समाज इसे समझौते के रूप में देखता है, जबकि भारत मे विवाह का स्वरूप धार्मिक है। हमारे हिन्दू समाज में माता-पिता अपने बच्चों का विवाह अपनी ही जाति में करते है, जिसे सजातीय विवाह कहा जाता है। सजातीय विवाह का एक परिदृश्य भीष्मसाहनी नामक उपन्यास 'कुन्तो' में देखने को मिलता है।

कुंतो जयदेव की पत्नी है। पूरा कथानक कुंतो के इर्द-गिर्द घूमता है। वह प्रोफ़ेस्साब की सबसे छोटी बहन है। वह घर की सबसे ज्यादा लाड़ली है, खासकर प्रोफ़ेस्साब की। उसे अपने पाँचो भाइयों और बड़ी बहन का प्यार जरूरत से ज्यादा मिलता है। माता-पिता चूंकि बचपन में ही गुजर गए थे, इसलिए प्रोफ़ेस्साब को उसके शादी-ब्याह की ज्यादा चिन्ता थी। जयदेव प्रोफ़ेस्साब का प्रिय शिष्य था, इसलिए प्रोफ़ेस्साब ने कुंतो का विवाह जयदेव से कर दिया था। जयदेव दो भाई थे। जयदेव के छोटे भाई का नाम सहदेव था। उसके विवाह का पूरा भार सहदेव के कन्धों पर पड़ा। जयदेव का सहदेव के प्रति यह कथन निम्नलिखित है- "तुम्हें बहुत काम करना पड़ा है ना? कोई ज़रूरत नहीं थी मेहमानों की इतनी ज़्यादा देखभाल करने की। वे अपने ही तो लोग थे।"

"ब्याह-शादी के मौके पर तो काम होता ही है।"

जयदेव के ब्याह पर बहुत लोग आए थे। अनेक मित्र-सम्बंधी अन्य नगरों से भी आए थे। घर में बड़ी गहमागहमी रही थी। उनकी देखरेख में छोटा भाई सारा वक़्त जुटा रहा था। एक लद्दू बैल की तरह सामान जुटाता रहा था और साथ ही साथ अपने भाई के भावी दांपत्य जीवन के लिए प्रार्थना के शब्द भी बुदबुदाता रहा था। इसी मे इतनी देर हो गई थी कि घर से बारात निकल गई थी।"११९

सहदेव काम में इतना व्यस्त था कि वह भाई की बारात में शामिल भी नहीं हो पाया और बारात आगे निकल गई थी। वह अपने मन में विचार कर रहा था कि अब भाई मुझसे बिछुड़ जाएगा। अब उनकी नई जिन्दगी की शुरूआत होगी। कल से भाई मेरे लिए पराया हो जाएगा। मुझे आज के दिन को हँसते हुए बिताना चाहिए। "सड़क पर यों भागते हुए भी उसे इस बात का ध्यान नहीं आया कि वह बड़ी फूहड़ बात कर रहा है। उसे किसी एक गाड़ी में बैठ जाना चाहिए था। यह कैसा बचपना हुआ कि ज़रूर अपने दूल्हे भाई की बगल में ही उसे बैठना है। उसे अन्य बरातियों की तरह ही हमेशा हँसना-चहकना और विवाह का आनंद लेना चाहिए। था।"१२०

कुंतो का जब विवाह जयदेव से हो जाता है, तब सभी लोग कुंतो का मुँह देखते हैं। उसे असीस देते हैं - "पिछले दिन कभी एक तो कभी दूसरी स्त्री उसके सिर पर से पल्ला उठाकर अपने दोनों हाथों में उसका चेहरा थाम लेती - "कैसा चाँद-सा मुखड़ा पाया है !" और उसे सिर पर चूम लेती, उसकी झोली में 'मुँह-दिखाई' के रूपए डाल जाती।"१२१

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि कुन्तो और जयदेव का विवाह हिन्दू विधि द्वारा हुआ। उनका विवाह अपनी जाति में हुआ। यह एक सजातीय विवाह का अच्छा उदाहरण है।

(६.३) (ख) विवाह पूर्व परपुरूष सम्बन्ध -

भीष्म साहनी के उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' में विवाह पूर्व परपुरूष सम्बन्ध का वर्णन द्रष्टव्य है।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र'

हर लड़की का ख्वाब होता है कि उसे एक सपनों का राजकुमार मिलेगा और लड़के के भी अपने ख्वाब होते हैं कि उन्हें भी एक अच्छा जीवन साथी मिलेगा। कुछ लोग इस ख्वाब को अपने दिल मे ही छुपाए रखते हैं और बाद मे पछताते हैं। काश हमने थोड़ी हिम्मत की होती तो अपने मन चाहे जीवन साथी के साथ होते। कुछ लोग बाद में अपनी बात कह देते हैं। किसी शायर ने ठीक ही कहा है -

"तेरी ख़ामोश मुहब्बत ही तुझे ले डूबी।
अगरचे जुबाँ से कहा होता तो क्या होता।"

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' के पात्र नीलिमा और अल्ताफ़ में द्रष्टव्य है -

नीलिमा एक खूबसूरत लड़की है। उसे टेनिस खेलने का बहुत शौक है। वह बी.ए. में पढ़ती है और उसके पिता वकील हैं। नीलिमा के पिता आज के बदले हुए इन्सान हैं। वे पुरानी रीति रिवाजों मे विश्वास नहीं करते हैं। वे प्रगतिशील विचारधारा के व्यक्ति है। नीलिमा के पिताजी के एक मित्र है। उनके बेटे का नाम अल्ताफ़ है। अल्ताफ़ नीलिमा के घर आता-जाता है। वह भी टेनिस का अच्छा खिलाड़ी है। उसका पढ़ने में बिल्कुल मन नहीं था। उसने टेनिस खेलने के लिए कॉलेज में दाखिला लिया और उसने कई कप व मैडल जीते। नीलिमा और अल्ताफ़ टेनिस के अच्छे खिलाड़ी थे। दोनों को टेनिस खेलने में खूब मजा आता था। वे एक दूसरे के काफी करीब आ चुके थे। वे एक दूसरे को पसन्द करने लगे थे। नीलिमा की अल्ताफ़ के साथ मित्रता थी। नीलिमा के पिताजी ने एक बार कह भी दिया था कि बेटी तुम सब कुछ करना पर एक गलती मत करना। नीलिमा अल्ताफ़ के साथ खूब चहकती थी और मस्त रहती थी। नीलिमा और उसकी सहेली नीलू अपने-अपने प्रेमियों के बारे में बार्तालाप कर रही थी – **"अल्ताफ़ कहता है, तू कोहकाफ़ की परी है। तुझे यह तेरा क्या कहता है, कि तू स्वर्ग से उतरी अप्सरा है?" फिर लम्बी साँस खींचकर बोली, "जिसे जितनी उर्दू आती है और जिसे जितनी हिंदी आती है, सब हमारे कानों में उँड़ेलते हैं।"१२२**

सुधीर जब घर जाता है, तव नीलिमा से घंटों बातें करता और दोनों झाड़ के पीछे बाँहों मे बाँहें डाले बतियाते रहते हैं। नीलिमा अल्ताफ़ की ओर कभी आँखें उठाकर देखा करती तो नीलिमा की आँखें बरबस ही हँसने लगती थी। उनमें चमक आ जाती थी।

नीलिमा की दादी को अल्ताफ़ पसन्द नहीं था, क्योंकि वह मुसलमान था। नीलिमा की दादी व डैडी की कभी-कभी अल्ताफ़ को लेकर लड़ाई भी हो जाती थी। उसे अपने डैडी व दादी माँ की खातिर सुबोध को स्वीकार करना पड़ा। जब अल्ताफ़ नीलिमा को टेनिस के लिए बुलाने आता- **"ऐ नीलिमा ! आज फिर टेनिस खेलने नहीं आई? यह कौन कनकौवा तेरे पास बैठा तेरे साथ बातें कर रहा है।? तेरे साथ चिपका हुआ है। देख लेना, यह कॉफी के पैसे भी तुमसे दिलवाएगा और टैक्सी के पैसे भी।"**

अब की बार नीलिमा बैठी-बैठी हँस दी। उसकी इच्छा नहीं हुई कि अल्ताफ़ के चेहरे को बुहारकर आँखो के सामने से दूर कर दे।"१२३

भीष्म साहनी ने अपने अनेक नाटकों मे विवाह पूर्व पर पुरुष सम्बन्ध का वर्णन किया है।

'माधवी' –

विवाह पूर्व पर पुरूष सम्बन्ध घर परिवार में ही नहीं आज कल स्कूल कॉलेजों में भी हर जगह देखने को मिलता है। ये ऐसे सम्बन्ध हैं। जब लड़का और लड़की एक दूसरे को पसन्द करते हैं। इन दोनों में प्रेम हो जाता है और ये लोग एक दूसरे के बिना रह नहीं पाते हैं। जब ये प्रेम सीमा पार कर जाता है, तब दोनों में शारीरिक सम्बंध भी स्थापित हो जाते हैं।

समाज मे कुछं ऐसे प्रेमी होते हैं, जिनमें शारीरिक सम्बंध तो होते हैं, लेकिन वह गर्भवती नहीं होती है। कुछ ऐसी प्रेमिकाएँ भी होती हैं, जो विवाह के पूर्व ही गर्भवती हो जाती हैं। समाज ऐसी लड़कियों को बदचलन कहता

है। कुछ ऐसे प्रकरण सामने आए कि लड़की कहीं जा रही है। शैतान लोग लड़की को अकेला पाकर उसके साथ जबरदस्ती एवं बलात्कार करते हैं, जिससे वह गर्भवती हो जाती है।

ऐसे ही परिदृश्य साहनी जी के नाटक 'माधवी' के पात्र माधवी में देखने को मिलते हैं।

माधवी राजा ययाति की पुत्री है। राजा ययाति मन की शांति के लिए अपना राजपाठ छोड़कर वन में विचरण करने के लिए आए हैं। ययाति एक दानवीर राजा है। जिस प्रकार कर्ण दान के लिए प्रसिद्ध हैं। उसी प्रकार ययाति भी दान के लिए प्रसिद्ध हैं। राजा की यह इच्छा है कि मेरा नाम चारों दिशाओं में हमेशा फैला रहे। वे अपने मन में यह विचार करते हैं कि मैं इतना दान दूँगा कि लोग कर्ण को भूल जाएँगे। गालव विश्वामित्र का शिष्य है। वह ऋषि से १२ विद्याओं में निपुण होता है। वह गुरूदक्षिणा के लिए गुरूजी से हठ करता है। गुरूजी क्रोध में आकर गालव से ८०० अश्वमेध घोड़े लाने को कहते हैं। जब वह राजा ययाति के पास आठ सौ अश्वमेध घोड़े लाने को जाता है। राजा ययाति ने कहा कि मेरे पास घोड़े नहीं हैं। गालव बोला कि मैं दानवीर ययाति के पास आया था; शायद मैं गलत जगह आ गया हूँ। ययाति जब यह बात सुनते हैं, तब उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। उन्होंने गालब को माधवी को दान में देकर कहा- **"यह बड़ी गुणवती युवती है। उसे पाकर कोई भी राजा तुम्हें आठ सौ अश्वमेधी घोड़े दे देगा। निश्चय ही तुम अपना विचन निभा पाओगे।"**१२४

गालव माधवी को लेकर तीनों राजाओं के पास जाता है। उससे उसे ६०० घोड़े मिलते हैं। जब माधवी को पता चलता है पूरे आर्यावर्त में घोड़े नहीं हैं, शेष घोड़े केवल विश्वामित्र के पास हैं। माधवी ने विश्वामित्र के पास जाकर कहा- **"शेष दो सौ घोड़ों के लिए आप मुझे अपने पास रख लें।"**

"मैं ययाति की बेटी हूँ, महाराज। आश्रम में रह चुकी हूँ। आश्रम के सभी विधि-नियम जानती हूँ। यज्ञ-होम में भी आपकी सेवा करुँगी। आश्रमवासियों की सेवा करूँगी। आप कहेंगे तो आश्रम की परिचारिका बनकर रहूँगी, जिस रूप मे रखेंगे, रहूँगी।"१२५

इस प्रकार माधवी ने अपने पिता के यश को बनाए रखने के लिए वह चार परपुरूषों के सम्पर्क में रहकर सभी को पुत्र लाभ दिया।

<u>'कबिरा खड़ा बजार में'-</u>

विवाह पूर्व परपुरूष सम्बन्ध आजकल हर जगह देखने को मिलते हैं। चाहे वह स्कूल, कालेज गाँव शहर हो। आजकल प्रेम करना एक आम बात हो गई है। लड़कियों के कोई न कोई Boy Friend देखने को मिलते हैं, जिससे उनमें एक दूसरे के प्रति प्रेम देखने को मिलता है। उन प्रेमियों में प्रेम तो हो जाता है। वे एक दूसरे से विवाह भी करना चाहते हैं, लेकिन माता-पिता को यह रिश्ता मन्जूर न होकर वे लड़की का विवाह किसी दूसरी जगह कर देते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक के पात्र 'लोई में देखने को मिलता है।

लोई कबीर की पत्नी है। जब कबीर का विवाह लोई से हो जाता है, तब वह लोई से उसकी निजी जिन्दगी के बारे में उससे कुछ प्रश्न पूछता है। कबीर ने कहा कि क्या तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारी शादी जबरदस्ती की या नहीं।

लोई ने कहा कि यह भी प्रश्न कोई पूछने वाला है। अगर इसके बारें में तुम्हें कुछ पूछना था, तो विवाह के पहले पूछते, लेकिन कबीर ने कहा कि अगर मैं तुमसे अब पूछना चाहूँ तो क्या तुम मुझे नहीं बताओगी। लोई ने कहा कि मैं एक साहूकार के लड़के से प्रेम करती थी। हम दोनों एक दूसरे से विवाह करना चाहते थे, लेकिन मेरे पिता ने मेरी शादी तुमसे कर दी। जब मेरे प्रेमी को मेरे विवाह के बारे में पता चला कि मेरा विवाह तुमसे होने जा रहा है, तब उसने कहा कि तुम भागकर मेरे पास चली आओ। कबीर ने कहा कि क्या तुम उससे ब्याह करना चाहती थी। लोई का कबीर के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- **''और नहीं तो क्या ! उसे हम जानती थीं, वह हमें जानता था। तुम्हें तो हम जानती भी नहीं थी।''१२६** कबीर सोच में पड़ जाता है। यह तो बड़ा अनर्थ हुआ। **लोई- "अनरथ तो हुआ ही, पर इसका दोस हम तुम्हें थोड़े ही दे रही हैं। बापू ने ब्याह कर दिया तो हम यहाँ चली आईं।''१२७**

इस प्रकार लोई के कथन से यह स्पष्ट होता है कि लोई के विवाह से पूर्व उसका प्रेम परपुरुष से था, परन्तु संस्कार के अनुरुप उसके माता-पिता ने उसका विवाह रीति-रिवाज से कबीर के साथ कर दिया।

(६.३) (ग) विवाह पूर्व परनारी सम्बन्ध-

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' एवं कुंतो में विवाह पूर्व परनारी के सम्बंध का वर्णन किया है।

'कुंतो' -

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके जीवन में समाज का विशेष महत्व है। जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति समाज में सम्बन्धित रहता है। समाज उसका एक स्वाभाविक तथा अनिवार्य संगठन है। जन्म लेते ही वह उसका सदस्य बन जाता है। समाज में रहकर ही व्यक्ति किसी न किसी व्यक्ति के सम्पर्क में आता है। चाहे वह सम्बन्ध पिता-पुत्र, माता-पिता एवं प्रेमी-प्रेमिका का हो। व्यक्ति समाज में रहकर ही किसी स्त्री से प्रेम करने लगता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के उपन्यास कुंतो के पात्र 'जयदेव और सुषमा' में देखने को मिलता है।

जयदेव कुंतो उपन्यास का नायक है। वह सुषमा का प्रेमी तथा प्रोफ़ेस्साब का शिष्य है। सुषमा जयदेव की मौसेरी बहन है। जयदेव का एक भाई तथा एक बहन विद्या है, जिसका विवाह हो चुका है। सुषमा लाला गोविन्दराम की छोटी बेटी है। वह बचपन से जयदेव के साथ खेली-कूदी और दोनों एक साथ बड़े हुए हैं। वह नाटे कद की है। प्रोफ़ेस्साब अंग्रेजी के अध्यापक हैं। जब जयदेव की पढ़ाई समापन की ओर थी, तब प्रोफ़ेस्साब ने जयदेव से पूछा कि तुम्हें कोई लड़की पसन्द है। जयदेव ने कहा- **''मेरी मौसी की बेटी मुझे अच्छी लगती है और तो मैं किसी को नहीं जानता। बचपन में हम लोग एक साथ खेला करते थे, तभी से वह मुझे अच्छी लगती है।''१२८**

जयदेव सुषमा को पढ़ाने के लिए अपने घर ले आया था। वह सुषमा पर अपना एकाधिकार समझता था। अगर सुषमा किसी परिचितवाले से भी बात कर ले तो वह भड़क उठता था - **''एक बार सुषमा के बड़े भाई का एक मित्र, जो वकालत करता था, उनके घर पर आया था। परिवार के बहुत से लोग मिल बैठे थे। भोजन**

क्यों नहीं? ऐ नीलिमा----।"१३४ नीलिमा जब तक नहीं आती है, तब तक अल्ताफ़ को खेलने का मजा नहीं आता था। वह नीलिमा को उसके घर बार-बार बुलाने के लिए जाता था। उसने हँसी-हँसी में नीलिमा से कहा- "आज टेनिस खेलने भी नहीं आई। सुन रही है, मैं तुमसे कह रहा हूँ। बड़ी भोली बन रही है, मानो मेरी आवाज़ ही न सुनी हो। इस कनकौवे से अपना पिंड छुड़ा और घर जा। न जाने यह कहाँ से टपक पड़ा है। यह है कौन? न घर न घाट, सूट-बूट पहने चले आते हैं।"१३५

वास्तव में दोनों का रिश्ता एक पवित्र मित्र का था। दोनों लोग एक दूसरे के दुख-सुख के काम आते थे। वे एक दूसरे से अपनी परेशानी हल करते थे, पर लोगों की नजर कैसी भी हो, पर नीलिमा के डैडी की नजर में ये रिश्ता एक पवित्र मित्र का था।

(६.४) विवाहेत्तर परपुरूष एवं परनारी सम्बन्ध-

विवाहेत्तर परपुरूष सम्बन्ध -

भीष्म साहनी के अपने 'कुंतो' उपन्यास में विवाहेत्तर पर पुरूष सम्बन्ध का वर्णन द्रष्टव्य है।

'कुंतो' -

विवाह की आवश्यकता पति-पत्नी को इसलिए होती है कि वे दोनों एक दूसरे के साथी-सहयोगी बनकर प्रगति पथ पर बढ़ चलने में सहायक हो सकें। दुख दर्द में हिस्सा बँटा सके। एकाकीपन की अपूर्णता दूर कर सकें। सृष्टि की प्रक्रिया को गतिमान रखें और बिना किसी अव्यवस्था के परस्पर जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। प्रेम जीवन का अमृत कहा जाता है, उसे निरन्तर उत्पन्न करते और एक-दूसरे को उपलब्ध कराते रहना है। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए मात्र गुण कर्म स्वभाव दृष्टिकोण और काम में उत्साह परखा जाता है, इसलिए शास्त्रों में कहा गया है-

"आत्म संयम सन्मार्गे नारी पुरूषयोः शुभा।
एषा सफलतैवस्य, सार्थकता च पूर्णताः।।"१३६

अर्थात् परस्पर आत्म-संयम के मार्ग में एक दूसरे की सहायता कर सकें, इसी में पति-पत्नी की सफलता, सार्थकता एवं पूर्णता है, लेकिन आज कल के कुछ दम्पत्ति विवाह का दुरपयोग भी करने लगे हैं। वे परस्पर सम्बन्ध स्थापित तो करते हैं, साथ में अन्य पुरूषों से भी प्रेमासक्त रहते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'कुंतो' उपन्यास के पात्र 'सुषमा और जयदेव' में देखने को मिलता है।

जयदेव प्रोफ़ेस्साब का शिष्य है। कुंतो प्रोफ़ेस्साब की बहन है। जयदेव का विवाह कुंतो से हो जाता है। सुषमा जयदेव की मौसेरी बहन है। सुषमा बचपन से जयदेव के साथ खेली-कूदी और दोनों एक साथ बढ़े हुए हैं। उसका विवाह गिरीश से हो जाता है, जो रिश्ते में जयदेव का भाई लगता है। वह सुषमा को छोड़ देता है। गिरीश ने कहा कि हम दोनों एक दूसरे के लिए नहीं बने हैं। वह अपने मन में विचार करती है कि जयदेव मुझे चाहता है। क्यों न मैं टिकिट कटवाकर

सीधा जयदेव के पास चली जाऊँ? "तभी उसके मन में यह विचार कौंध गया कि वह जयदेव के यहाँ चली जाए। जयदेव की नज़र में तो मेरी कोई पहचान है, वह मुझे पलकों पर बिठाता है। कुंतो को भी तो पता चल जाए कि मेरी कोई हस्ती है। अभी तक तो वह मुझ पर दया ही करती रही है। मैं इतनी दयनीय नहीं हूँ जितनी बना दी गई हूँ। कहीं पर तो मेरी माँग है, मेरी क़द्र है।"१३७

सुषमा जब जयदेव के घर पहुँचती है, तब कुंतो बीमार थी। वह खाट पर पड़ी सो रही थी। वह कुंतो से मिलना चाहती थी, लेकिन जयदेव का सुषमा के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है। "सो रही है, लगता है सो रही है। सोई रहने दो। सुबह मिल लेना। आज शाम बहुत थककर आई थी। तुम भी तो थकी होगी।"१३८

कुंतो सोई नहीं थी। वह सोने का नाटक कर रही थी। उसको अब ये लग रहा था कि मैं अब नहीं बचूँगी। मैं मर जाऊँगी। मैंने बीच में आकर तुम दोनो प्रमियों को अलग किया था।

मुझे अब उसका मूल्य चुकाना पड़ रहा है। दो प्रेमियों को एक दूसरे से अलग करने की सजा मौत है, जो मुझे मिल रही है- "कुंतो का दिल एक नई स्फूर्ति से सराबोर हो गया। मैं तुम्हें रोकूँगी नहीं। मेरे जीते जी, तुम मेरे बन्धन में बँधे छटपटाते रहे हो। मैं स्वार्थी थी जो तुम्हें अपने साथ बाँधे रही, पर अब मेरा स्वार्थ, मेरी ही तरह, सूखे पत्ते जैसा झरकर गिर रहा है। अब तो मैं तुमसे कुछ भी नहीं माँगती। अब तो अपने हाथों से तुम्हें सुषमा के हाथ सौंप रही हूँ।---१३९

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सुषमा जयदेव को विवाह के बाद भी चाहती रही है। यहाँ विवाहेत्तर पर पुरूष सम्बंध को भली भाँति चिन्हित किया जा सकता है।

विवाहेत्तर परनारी सम्बन्ध-

भीष्म साहनी ने अपने अनेक उपन्यासों मे विवाहेत्तर परनारी का सम्बंध का वर्णन किया है-

'कड़ियाँ' -

विवाह जहाँ भारतीय संस्कृति में संस्कार है वहीं विवाह संस्था में अपेक्षित कुछ पालनीय जीवनादर्श भी है। विवाह व्यक्तिगत के साथ-ही-साथ सामाजिक रूप धारण करता है, क्योंकि विवाह में दो व्यक्तियों के ऐसे सम्बन्ध का बीजारोपण होता है, जो न केवल शारीरिक है बल्कि आध्यात्मिक भी है।

विवाहित जीवन में जो हाहाकार हम लोग देख रहे हैं। उसका एक प्रधान कारण यह भी है कि पति पुरूषोचित अहंकार से ग्रस्त है। वह अपनी पत्नी से यौनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। पत्नी गृहस्थी में इतनी फँसी है कि उसे पति की इच्छाओं की पूर्ति के लिए समय नहीं मिल पाता है। वह घर की चहार दीवारी में घिसट-घिसटकर मर रही है। वह बाहर ही नहीं निकल पाती है। उसका पति उसे समय-समय पर सचेत करता है कि तुम अपने कर्तव्यों को समझो। घर का कार्य करना ही विवाह का मुख्य उद्देश्य नहीं है। विवाह का उद्देश्य कुछ और भी है। जब उसकी पत्नी ने अपनी संपूर्णता में यौन संतुष्टि का आभास नहीं करा पाती है। उसका पति खीझ से भर जाता है। वह सोचता

है और तब अक्सर कहता भी है कि मैं विवाह जैसे झंझट मैं पड़ा ही क्योंकि निर्द्वन्द्व मेरा जीवन था, न को कोई चिन्ता न झंझट। वे उमंगें, स्वप्न और वे महत्वाकांक्षाएँ इस जीवन की कड़ी धूप में नष्ट हो गई। तब वह एक लम्बी आह लेता है, अपनी किस्मत पर रोता है और उसमें अपने ही प्रति अपनी अक्षमता के प्रति, एक संघर्ष और प्रतिहिंसा पैदा होती है और उसका मन अन्धकार से भर जाता है। जब उसे अपनी पत्नी से प्रेम नहीं मिलता है, तब वह दूसरी औरत से प्रेम करने लगता है। वह औरत के देह से प्रेम करता है। वह उसी में अपना सुख ढूँढ़ा करता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य 'कड़ियाँ' उपन्यास के पात्र 'महेन्द्र और सुषमा' में देखने को मिलता

है।

प्रमिला महेन्द्र की पत्नी है। जब दोनों का विवाह हुआ था, तब दोनों एक दूसरे को बहुत चाहते थे। जब समय ज्यादा गुजर गया। प्रमिला घर की गृहस्थी में ही व्यस्त रहती है। प्रमिला को बाहर जाने-आने मे कोई रूचि नहीं थी। वह पप्पू को खिलाती रहती है। घर के कार्यो में इतनी व्यस्त रहती है कि वह अपने पति का ध्यान भी नहीं रख पाती है। वह अपने बालों को अच्छी तरह से संवारती भी नहीं है। किचिन में काम करते हुए जो कपड़े पहने थी। वही कपड़े पहनकर सो जाती है। वह अपनी पत्नी की ऐसी हरकतों से काफी परेशान हो चुका था। जब महेन्द्र प्रर्मिला को अपनी बाँहों में भर लेता है, तब प्रमिला बोली कि खिड़कियाँ खुली हुई हैं। कोई देख लेगा। पहले खिड़कियाँ बन्द कर देने दो। नहीं तो रात को दही नहीं जम पाएगा। महेन्द्र ने कहा कि तुम मेरी पत्नी ही तो हो, कोई देख लेगा तो क्या हो जाएगा? एक बार महेन्द्र ने उसकी कमर में बाँह डालकर उसे चूम लिया। इस पर प्रमिला बौखिला उठी थी। यह क्या कर रहे हो? उसने झपटकर कहा और सीट के एक कोने में दुबक गई।

महेन्द्र कई बार सोने के वक्त प्रमिला का इन्तजार करता, अखबार पढ़ता रहता कि वह अब आएगी। प्रमिला ने कहा कि मैं अभी आ रही हूँ। महेन्द्र के अन्दर काम की जो उत्तेजना बढ़ रही थी, उसके देर से आने पर ठंडी पड़ने लगती है। उसको प्रमिला पर गुस्सा आने लगता है। यह मेरी भावनाओं को नहीं समझेगी। इसके साथ दीवार से सिर फोड़ने वाली बात है। महेन्द्र यह अनुभव करने लगा था कि मेरी शादी इसके साथ भूल थी। हम दोनो एक दूजे के लिए नहीं बने हैं। हम दोंनो साथ-साथ नहीं रह सकते हैं। यह मेरी भावनाओं को समझती ही नहीं है- **"क्या पत्नी का कोई फ़र्ज़ नही होता? तुम्हें यह जानने की इच्छा भी नहीं होती कि मर्द चाहता क्या है?**

मैं जानती हूँ, मर्द क्या चाहता है। मुझे वह सब अच्छा नहीं लगता। सो जाओ।"१४०

मुझसे एक स्वामी जी ने कहा था कि साल में केवल एक बार ही सम्भोग करना चाहिए। अगर तुम्हें स्वामी के चक्कर में ही पड़ना था तो तुम्हें किसी साधु सन्यासी से शादी करनी थी।

महेन्द्र को जब अपनी पत्नी से प्रेम नहीं मिल पाता है, तब वह दूसरी औरत सुषमा से प्रेम करने लगता है। औरतें अपना घर स्वयं उजाड़ती है। उन्हें पुरूष की भावनाओं को समझना चाहिए। पुरूष की इच्छा औरत का शरीर है। जब पुरूष रात को थका हारा आता है। उसे जब पत्नी का स्पर्श मिलता है, तब उसकी सारी छटपटाहट दूर हो जाती है। ऐसा इन लोगों का मानना है जब उनकी सन्तुष्टि पूरी नहीं होती है, तब वह दूसरी औरत में अपना प्यार ढूँढ़ते हैं। महेन्द्र और सुषमा का प्रेम बढ़ता ही चला जा रहा था। वह ऑफिस से लौटकर सुषमा के घर जाता है और सुषमा

में अपनी छटपटाहट को शान्त करता है। सुषमा ने महेन्द्र से कहा कि तुम मुझसे कटे-फटे हुए क्यों रहते हो ? "मैं तुम्हें किसी से छीन तो नहीं रही हूँ" सुषमा की आवाज़ पहले से भी ज़्यादा अलसा गई थी। "मैं तुमसे कुछ नही माँगती, महेन्द्र ! केवल कभी-कभी तुम्हारे साथ दो घड़ियाँ बिताना चाहती हूँ। बस, इतना ही। इसमें किसी को क्या एतराज़ होना चाहिए? तुम्हारे वक्त से जो दो घड़ियाँ टूटकर मेरी गोद में पड़ जाएँ, मैं उन्हीं से सन्तुष्ट हूँ।"१४१

महेन्द्र ने कहा कि अब मैं चलूँगा- "जाओगे ? इतनी जल्दी ? अभी तो आए हो!" सुषमा ने जख्मी-सी आवाज़ में कहा था "मेरा तुम पर कोई हक् नहीं है क्या? और उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया था।"१४२

महेन्द्र सोचता है कि मैं सुषमा वाली बात प्रमिला को बता दूँ। वह अपने अन्दर यह बात बताने के लिए तड़प रहा था और डर भी रहा था। महेन्द्र के नाटे दोस्त ने एक बार कहा था – "भले ही बीसियों स्त्रियों के साथ सम्बन्ध रखो, पर घरवाली से छिपाए रखो। इसी में सच्ची नैतिकता है"१४३

महेन्द्र जब प्रमिला को सुषमा वाली बात बता देता है, तब पत्नी बहुत नाराज होती है। उसे बुरा भला कहती है। एक बार महेन्द्र जब घर देर से आया, तब प्रमिला ने पूछा कि आज तुम्हें देर क्यों हो गई? क्या तुम उस बंगालन के पास गए थे। यह सुनकर महेन्द्र का पारा चढ़ गया। महेन्द्र ने अपनी पत्नी के थप्पड़ मार दिया- "यह मैं क्या कर बैठा हूँ?" वह बुदबुदाया। "यह सब अपने-आप हो गया है ऐसी औरत के साथ कोई नहीं रह सकता। जब से शादी हुई है एक शब्द भी प्यार का इसके मुँह से नहीं सुना," वह अपनी सफ़ाई देते हुए बुदबुदाया। "औरत चाहे तो मर्द को अपनी मुट्ठी में रख सकती है। अगर यह सलीकेवाली होती तो मैं सुषमा के पास जाता ही क्यों? यह भी कोई ढंग है जीने का? मैं कुछ माँगता नहीं, बोलता नहीं, इसलिए मेरे साथ बेरूखी की जाती है। जाए जहन्नुम में..... मैं ज़रूर सुषमा के पास जाऊँगा। जहाँ से प्यार मिलेगा, लूँगा।" छज्जे की तीन फुट ऊँची दीवार पर दोनों कोहनियाँ टिकाए महेन्द्र का दिल आत्मानुकंपा से भर उठा।"मैंने इस औरत को सब कुछ दिया है, पर इससे मुझे मिला क्या है? न सलीका, न प्यार। मैं घर आता हूँ तो लटें बिखरी हुई, चुड़ैल-की-चुड़ैल बनी बैठी होती है। मेरा कोई दोस्त घर पर आए तो उसके सामने बुत बनकर बैठ जाती है, न हूँ, न हाँ। इतना सलीका नहीं कि उससे पूछें, कुछ पियोगे, इसे सूझता नहीं.....।"१४४

"विवाह के बाद परस्त्री से सम्बन्ध रखने वाली एक बात हमें 'आज' अखबार मे देखने को मिली है। यह घटना बांदा जिले की है। विश्वनाथ पटेल निवासी बंगालीपुरा यहाँ रेलवे क्रासिंग के गेट में गेटमैन पर तैनात है। विश्वनाथ के बच्चे डी.सी.डी. एक स्कूल में पढ़ते हैं। विश्वनाथ के बच्चे उस दिन खाना खाकर नहीं गए थे। पत्नी बच्चों को खाना देने गई थी। पत्नी ने सोचा कि हम पति से मिलते चलें। पति दूसरी औरत के गले में गलबहियाँ डाले थे।"१४५

"ऐसा ही दूसरा उदाहरण मिर्जापुर जिले के जिगना क्षेत्र में देखने को मिलता है। रामरक्षा ५ बच्चों का पिता है। उसकी पत्नी का नाम रामराजी है। रामरक्षा की प्रेमिका शैलकुमारी है। वह उससे प्रेम करता है। पंचायतों ने रामरक्षा की पत्नी की अनुमतिं लेकर वह अपनी सौतन को अपने साथ रखने को तैयार है। वह उसके साथ उसके घर रहने को चली जाती है।"१४६

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि अगर हमें दाम्पत्य जीवन को बचाए रखना है तो हमें पति की भावनाओं को समझना चाहिए। अन्यथा वही स्थिति होगी जैसी प्रमिला की हुई। तभी हमारा दाम्पत्य जीवन सुखमय रहेगा। पति का कर्तव्य है कि वह पत्नी की भावनाओं को समझे। जब तक दोनों एक दूसरे की भावनाओं को नहीं समझेंगे, एक दूसरे को दोष देते रहेंगे, तब तक दाम्पत्य जीवन टूटकर बिखरकर खाक हो जाएगा।

उन्होंने 'कुंतो' उपन्यास में विवाहेत्तर परनारी सम्बन्ध को कई स्थलों पर दिखाया है।

'कुंतो'-

पश्चिमी देशों में विवाह जहाँ केवल शारीरिक आकर्षण, सुन्दर देहयष्टि और यौनतृप्ति की आकांक्षा से प्रेरित होकर किए जाते है, वहाँ भारतीय जीवन पद्धति विवाह को जन्म-जन्म का साथ मानकर चलती है। विवाह के आदर्श और उद्देश्य को लोग न समझ पाएँ अथवा उसकी उपेक्षा करें यह बात अलग है, किन्तु भारतीय मनीषियों की यह दृढ़ मान्यता रही है कि विवाह दो पवित्र आत्माओं का मिलन है, जो जन्म-जन्मान्तरों तक चलना चाहिए। चिता की लपटों में पंचीभूत होने के उपरान्त भी विवाह संस्कार के समय बंधी गूढ़ एवं अदृश्य ग्रन्थि सदैव बनी रहनी चाहिए, लेकिन आज लोग विवाह के अर्थ को एक खिलवाड़ समझने लगे हैं। वे विवाह के बाद भी परस्त्री से प्रेम करते हैं। वे पत्नी को कष्ट देते हैं और उसका अपमान करते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य कुंतो उपन्यास के पात्र 'गिरीश और उसकी मौसेरी बहिन' में देखने को मिलता है।

सुषमा गिरीश की पत्नी है। जयदेव सुषमा का मौसेरा भाई है। सुषमा ने अपना पूरा समर्पण जयदेव से कर दिया था। सुषमा सोचती थी कि जयदेव मेरे लिए जो कुछ करेंगे। वह अच्छा ही करेंगे। जयदेव ने सुषमा की शादी गिरीश से करवा दी। गिरीश जयदेव का रिश्ते में भाई लगता था। गिरीश अपनी मौसेरी बहन से प्रेम करता था। वह हर शनिवार को मीरपुर जाता था। दो तीन शनिवार वह मीरपुर गया तो सुषमा ने कुछ नहीं कहा। जब वह हर शनिवार को मीरपुर जाने लगा, तब सुषमा को अन्दर से बेचैनी होने लगी। वह अन्दर से घबराती रहती है। वह सुषमा की उपेक्षा करने लगा था। वह सुषमा का बिल्कुल ध्यान नहीं रखता था। पत्नी और पति पास होते हुए भी एक दूसरे से दूर होते जा रहे थे। एक दिन जब वह सुबह सोकर उठी, तब गिरीश का उसे एक कागज़ का टुकड़ा मिला उसमें सुषमा के लिए यह कथन द्रष्टव्य है - **"हम एक-दूसरे के लिए नहीं बने हैं। इस विवाह को घसीटना भूल होगी।"१४७**

गिरीश एक लेखक था। उसकी मौसेरी बहन को भी साहित्य में रूचि थी। दोनों की बहुत पटती थी। सुषमा अपने अन्दर विचार करती है। - **''मौसेरी बहिन के साथ इसकी रग मिलती है। उसे भी किताबों का शौक है और दोनों की साँझी समझ है। कहीं दोनों के तार जुड़ते हैं इसीलिए यह हर शनिवार मीरपुर की ओर**

भाग खड़ा होता है। इस 'दीदी' को उसने देखा था। कुछ-कुछ वह भी अपने 'मौसेरे भाई' की तरह अन्यमनस्क रहती है। उसकी साड़ी टखनों के ऊपर चढ़ी रहती है, बाल अक्सर खुले रहते हैं, उन्हें ढीले से जूड़े में बाँध लेती है तो भी कुछ ही देर बाद खुल जाते हैं और कंधो पर छितर जाते हैं। एक बार वह गिरीश-सुषमा की शादी के बाद घर पर आई थी तो दोनों घंटों साहित्य-चर्चा करते रहे थे, किसी पत्रिका में छपी गिरीश की कहानी की चर्चा करते रहे थे। तब भी सुषमा, पानी से बाहर फेंकी हुई मछली-जैसा महसूस करती हुई घंटों रसोईघर की दहलीज पर बैठी रही थी।"१४८

गिरीश जब मीरपुर के लिए घर से निकल गया। तभी सुषमा भागती हुई गिरीश के पास पहुँच गई कि वहाँ हम आपको जाने नहीं देंगे। आप लौट आइए, घर चलिए। गिरीश ने ठंडी आवाज़ में कहा- "जो कुछ आप कर रही हैं, इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। आप घर लौट जाइए।"१४९

धनराज और डॉ० मोना-

धनराज प्रोफ़ेस्साब का छोटा भाई और थुलथुल का पति है। वह शादी के एक दो साल बाद सिंगापुर डाक्टरी पढ़ने गया था। जब वह सिंगापुर से अपने घर वापस आता है, तब अपने साथ एक लड़की की फोटो लाता है। पत्नी उस तस्वीर के बारे में अपने पति से पूछती है कि यह किसकी तस्वीर है। धनराज का अपनी पत्नी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है- "यह एक डाक्टरनी है। मेरे साथ पढ़ती थी, वाद में एक ही अस्पताल में हम दोनों एक साथ काम भी करते थे। इसके साथ अच्छी जान-पहचान हो गई थी।"१५०

धनराज अपने घर वापस भले ही आ गया, लेकिन उसका यहाँ पर मन नहीं लग रहा था। यहाँ पर कुछ खोया-खोया सा लग रहा था। वह डॉ० मोना से प्रेम करता था। मोना बहुत ही सुन्दर एवं खुले विचारों की थी। उसे अपनी पत्नी बिल्कुल पंसद नहीं थी। वह मोना के बारे में कल्पना करने लगता है- "पर, सबसे बड़ी बात, वहाँ पर मोना थी, वही जिसकी फ्रेम में मढ़ी तस्वीर उसने अपने कमरे में गोल तिपाई पर रख छोड़ी थी। मोना, अपनी ऊँची एड़ी का सैंडल पटपटाती, कभी-कभी सीधा कमरे में चली आती थी, अपनी महक लिए हुए। कहीं भी जाने-आने की रोक-रूकावट नहीं थी। मोना आज़ाद विचारों की थी। कमरे में कदम रखते ही सीधा बग़लगीर हो जाती थी। कहीं कोई झिझक या शर्म या बंदिस उसके मन में नहीं थी। वह बार-बार याद आने लगी थी। कभी-कभी तो उसे याद करते हुए मन छटपटाने लगता था।"१५१ थुलथुल ने अपने पति से कहा कि आपने सिंगापुर में मुझे इतना याद नही किया, जितना इस मरजाणी को याद कर रहे हो। उसको थुलथुल का मोना के लिए इस तरह बोलना अच्छा नहीं लग रहा था - "दोनों कान खोलकर सुन लो," ध नराज क्रुद्ध होकर बोला, "अगर मोना के बारे में कभी कुछ कहा तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।"१५२ उसको अपनी पत्नी पर गुस्सा आ रहा था। वह कहने लगा कि अच्छा होता कि मैं वहीं मर जाता है। वह मरने वाली वात सुनकर कहने लगती कि वह अशुभ-अशुभ आप क्या बोल रहे हैं? वह फूट-फूट कर रोने लगती है। "मरजाणी ने मेरे खसम पर जादू-टोणा कर दिया है, मुझे पहले ही मेरी नानी ने कहा था कि तिरछी आँखों वाली औरतें डायनें होती हैं।"१५३

धनराज थुलथुल को बहुत दुख देता था। वह अन्दर से बहुत दुखी थी। मोना के हर गुरूवार को पत्र आते थे। जब मोना के पत्र आते हैं, तब वह अपनी पत्नी को कमरे से बाहर निकाल देता है और कमरे के अन्दर प्रेम पत्र पढ़ता रहता है। **"धनराज ने मोना का चित्र तिपाई पर सजाकर रख छोड़ा है। आए दिन उस कमजात की चिट्ठी हल्के नीले रंग का लिफ़ाफ़ा पहुँच जाता है, हर बृहस्पतिवार को उस हल्के नीले लिफ़ाफ़े का इंतजार रहता है, जब धनराज सुबह से ही बेचैन रहने लगता है और पत्र मिलने पर थुलथुल को अपने कमरे से बाहर निकाल देता है और निराले में देर तक बैठा प्रेम-पत्र पढ़ता रहता है।"**१५४

इधर थुलथुल कहती है कि हे भगवान ! मैं मर जाऊँ तो अच्छा है। तुम सिंगापुर से नहीं आते तो अच्छा था। मैं जैसे भी होती सह लेती।

जयदेव और सुषमा-

जयदेव प्रोफ़ेस्साब का प्रिय शिष्य है। कुंतो जयदेव की पत्नी है। वह प्रोफ़ेस्साब की छोटी बहन है। सुषमा जयदेव की मौसेरी बहन है। जयदेव और सुषमा दोनों ही एक साथ पलकर बढ़े हुए है। जयदेव का विवाह कुंतो से हो जाता है। उसका विवाह होने के बाद भी वह सुषमा को नहीं भूल पाता है।

कभी जब जयदेव सुषमा के घर से गुजरता है, तब उसे पिछले दिन याद आने लगते है। उसके अन्दर सुषमा से मिलने की छटपटाहट होती है। वह प्रोफ़ेस्साब को अपना इष्ट मानता था। वह प्रोफ़ेस्साब से अपने हृदय की बात कभी नहीं छिपाता है। एक दिन वह प्रोफ़ेस्साब के घर पहुँच गया और अपने हृदय की बात कहने लगा - **"मैं सुषमा को भुला नहीं पाया हूँ, प्रोफ़ेस्साब। वह मुझे बहुत याद आती है।"**१५५ जयदेव सुषमा का विवाह कराने के लिए उसको मंसूरी ले जा रहा था। वह अपने अन्दर विचार करता है- **"वह नहीं जानती थी कि जयदेव को उसके साथ चले आने से जितना सुख मिल रहा था। उतना ही वह उसे खो बैठने की आशंका से उदास भी हो रहा था। जो योजना बनाकर वह आया था, यदि वह पूरी हो गई तो उसी क्षण से सुषमा पराई हो जाएगी, उसे वह एक तरह से खो बैठेगा।"**१५६

जयदेव सुषमा को बहुत चाहता था। वह अपने मन में विचार करता है कि अगर गिरीश ने सुषमा को पसन्द कर लिया, तो वह मुझसे दूर हो जाएगी। वह सुषमा को अपनी बाँहों में भर लेता है और उसे चूमने लगता है। यह दृश्य कुंतो देख लेती है। **"यह तो जयदेव है और उसने बरामदे के कोने में खड़ी सुषमा को भी पहचान लिया। उसका दिल धक् से रह गया। यह मैं क्या देख रही हूँ? और एक असह्य क्रंदन उसके अन्दर से उठा। जिस आग्रह से जयदेव, सुषमा के शरीर को बार-बार बाँहों में भर रहा था, कभी उसके गाल तो कभी माथा और कभी उसके बाल चूम रहा था।"**१५७

गिरीश सुषमा को छोड़ देता है और सुषमा अपना घर छोड़कर शान्ति निकेतन चली जाती है। वह अकेली रह जाती है। जयदेव अपने मन में विचार करता है कि मैंने ही इसका विवाह गिरीश से करवाया था। सुषमा की जिन्दगी बर्बाद करने में मेरा ही कसूर है। वह अकेली कैसे रहती होगी? कौन उसकी देखभाल करता होगा? जयदेव सुषमा के लिए तड़प रहा था। एक दिन जयदेव ने प्रोफ़ेस्साब से अपने दिल की बात कही- **"मैं उसे अकेला नहीं छोड़ सकता।**

मैं उसके बिना नही रह सकता। वह न जाने कहाँ मारी-मारी फिरेगी।"१५८ कुंतो से जयदेव की हालत नहीं देखी जा रही थी। वह सुषमा के लिए मछली की तरह तड़प रहा था। वह अपने हाल-चाल अपनी सहेली को सुनाती है। "बली ने मुझसे कह दिया है कि मैं सुषमा के बिना नही रह सकता। वह मन ही मन छटपटाता रहता है। मैंने उससे कह दिया है कि सुषमा को ले आए, मैं उसे अपने पास रख लूँगी और अगर कहोगे तो मैं कहीं चली जाऊँगी।"१५९

'बसन्ती'-

विवाह एक पवित्र संस्कार है। दीनू का विवाह रूक्मी से हुआ है। वह बाहर किसी हॉस्टल में काम करता है। उसकी पत्नी गाँव में रहती है। बसन्ती चौधरी की पुत्री है। चौधरी नाईगिरी का कार्य करता है। वह अपनी बेटी बुलाकीराम को १२०० रूपए में बेचना चाहता है अर्थात्- "बारह सौ होंगे। कहेगा तो आज ही उसके साथ पीलू कर दूँगा। चार सौ पेशगी अभी दे दे, पूरे एक हजार हो जाएँगे, दो सौ लुगाई घर आ जाने पर दे दोना।"१६० बसंती खुली विचारधारा की थी। वह इस विवाह का विरोध करती है। वुलाकीराम एक लंगड़ा दर्जी है। वह ६० वर्ष की उम्र का है। उसकी तीन बीवियाँ घर छोड़कर भाग चुकी है। वह बसंती को खोना नहीं चाहता है। बसंती की मुलाकात दीनू से होती है। दीनू और वसंती एक दूसरे को चाहने लगते हैं। वह बसंती को भगाकर अपने हॉस्टल में रख लेता है। वह स्वार्थी आदमी था। वह नारी को भोग-विलास की वस्तु समझता है। जब दीनू रात को थककर आता है, तब वह बसंती के स्तनों को छूता है। वह उसके साथ शारीरिक सम्बंध बनाता है वह बसंती को देखकर छटपटाने लगता है। उस पर काम वासना का भूत सवार होता है। बसंती यह सब करने से मना करती है, तब जवाब में दीनू का बसंती के प्रति यह कथन दर्शनीय है। "तुझे लाया किसलिए हूँ? इस घुटन भरे कमरे में बासी, मैले कपड़ो के बीच बसंती को अच्छा नहीं लगता था। लेकिन कमरे के अन्दर घुसते ही दीनू पर भूत सवार हो जाता था, वह यह भी न देखता कि दिन है या रात अगर रोकने की कोशिश करो तो एक ही जवाब देता, तुझे लाया किसलिए हूँ।"१६१ बसंती जब अपने पिता के यहाँ रहती थी, तब उसे पिछले दिन याद आते है- "मेरा बाबू भी ऐसा ही था। माँ रात को इसीलिए बड़बड़ाती रहती थी। इसीलिए कुतिया की तरह बच्चे जनती रही है। मुझे बड़ा गन्दा लगता है------"१६२ बसंती अपने मन में यह विचार करती है कि मैं यहाँ दीनू के पास दुल्हन बनकर आई थी। मगर दीनू की रूखाई और क्रूर हविश का व्यवहार पाकर दुखी हो जाती है। उसने कहा- " जिसके साथ ब्याह किया हो, उसके साथ ऐसा नहीं बोलते।"१६३

दीनू बहुत ही कामी व स्वार्थी व्यक्ति था। वह केवल अपना उल्लू सीधा करना चाहता था। एक दिन दीनू के दिल की बात जवान पर आ जाती है- "ब्याह किसने किया है तेरे साथ?१६४ बसंती ने कहा "तूने और किसने? भगवान के सामने सौगंध खाई है या नहीं? मेरी मांग में रंग भरा है या नहीं? मेरे बालों में फूल टाँके है या नहीं? और ब्याह क्या होता है।?"१६५ दीनू ने कहा कि तू मेरे पीछे पड़ गई थी, तो क्या करता। तेरी जैसे तो यहाँ रोज मिल जाती है। तू मेरे साथ भागने पर तुली थी। तू अपने को मेरी बीबी समझ बैठी है तो मैं क्या कर सकता हूँ। बसन्ती ने पुनः तर्क किया "तू अपने को मेरा घरवाला नही समझता?"१६६

(६.५) नये जीवन मूल्य - नैतिकता एवं अनैतिकता का बदलता स्वरुप -

भीष्म साहनी ने अपने नाटक 'माधवी' में अनैतिकता से नैतिकता को अनेक स्थानों पर दर्शाया है।

'माधवी' -

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। हर मानव किसी न किसी प्राणी से जुड़ा हुआ है। हर मानव यही विचार करता है कि मैं जीवन में बहुत अच्छे कार्य करुँगा, लेकिन परिस्थितियाँ मानव को मजबूर कर देती है। वह चाहता कुछ और है होता कुछ और है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के नाटक 'माधवी' में देखने को मिलता है।

माधवी ययाति की पुत्री है। गालव विश्वामित्र ऋषि का शिष्य है। जब गालव १२ विद्याओं में निपुण हो जाता है, तब गालव विश्वामित्र ऋषि से गुरुदक्षिणा के लिए कहता है। गुरु ने कहा कि तुम १२ विधओं में निपुण हो गए हो, यही मेरी गुरुदक्षिणा है। जब गालव हट करता है, तब ऋषि क्रोध में आकर ८०० अश्वमेधी घोड़े लाने को कहते हैं। गालव राजा ययाति के आश्रम में आकर उनसे ८०० घोड़ों की माँग करता है। गालव से किसी ने कहा था कि तुम राजा ययाति के आश्रम में जाओ। उनके दरबार से आज तक कोई खाली हाथ नहीं लौटा है। ययाति ने कहा कि मैं अपना राजपाट छोड़कर वन में विचरण कर रहा हूँ। मेरे पास ८०० घोड़े नहीं हैं। जब गालव ने कहा कि मैं शायद गलत जगह पर आ गया हूँ। मैं दानवीर ययाति के आश्रम में आया था। ययाति जब यह बात सुनते हैं, तब उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। राज़ा अपनी पुत्री माधवी को गालव को दान में दे देते हैं और माधवी के बारे में बताते हैं- **"राज-ज्योतिषियों ने माधवी के लक्षणों की जाँच की है। इसके गर्भ से उत्पन्न होनेवाला बालक चक्रवर्ती राजा बनेगा। सुना मुनिकुमार? ऐसे लक्षणोंवाली युवती को पाकर कोई भी राजा तुम्हें घोड़े दे देगा। माधवी को पाकर वह धन्य होगा। तुम निःसंकोच इसे ले जाओ।"१६७**

माधवी अपने पिता की आज्ञा लेकर गालव के साथ चली जाती है और तीन राजाओं के रनिवास में रहकर एक-एक चक्रवर्ती पुत्र को जन्म देती है। विश्वामित्र से भी माधवी के एक चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न होता है। माधवी का तीनों राजाओं व विश्वामित्र के साथ चक्रवर्ती पुत्र को जन्म देना समाज की मर्यादा के खिलाफ था। यह एक अनैतिक कार्य था। समाज में नारी को परपुरुष के साथ सम्बन्ध स्थापित करना एक अभिशाप माना जाता है, लेकिन माधवी ने अपने पिता के प्रति कर्तव्य, उनकी कीर्ति हमेशा बनी रहे तथा गालव को माधवी को सौंपना, उनकी आज्ञा समझकर इसे नैतिक कार्य माना। आज के समाज में कोई भी स्त्री अपनी देह बेचकर अपने माता-पिता की आज्ञा का पालन नहीं कर सकती, लेकिन माधवी ने इसे अपना नैतिक कर्तव्य समझकर अपने यौवन की आहुति दे दी।

आज हर मानव परतन्त्र है। जब मानव अपने मन में यह विचार करता है कि आज हम अच्छे से अच्छा कार्य करेंगे। किसी के प्रति हम बुरे भाव तथा किसी को नहीं सताएँगे, लेकिन परिस्थितियाँ मानव को मजबूर कर देती है। **ऐसी ही एक परिस्थिति 'माधवी' नाटक के एक पात्र गालव के सामने आती है।**

गालव विश्वामित्र ऋषि का शिष्य था। उसने ऋषि विश्वामित्र से बारह विद्याएँ सीखी थीं। उसने अपने गुरुजी

से गुरुदक्षिणा के लिए कहा था। ऋषि ने कहा कि तुम १२ विद्याओं में निपुण हो गए यही मेरी गुरुदक्षिणा है, लेकिन गालव ने गुरु जी से दक्षिणा के लिए हट की। गुरु ने क्रोध में आकर कहा कि मेरे लिए ८०० अश्वमेधी घोड़े लाओ। गालव यह सोचने लगा कि मैं ये घोड़े कहाँ से लाऊँगा? गालव ने राजा ययाति का नाम सुना था कि वे बहुत दानवीर हैं। आज तक उनके द्वार से कोई भी खाली हाथ नहीं लौटा। वे राजा ययाति के पास जाते हैं। उन्हें अपना पूरा समाचार सुनाते हैं। राजा ययाति ने कहा कि मैं महल छोड़कर वन में विचरण करने आया हूँ। मेरे पास तुम्हें देने को कुछ भी नहीं है। गालव ययाति से बोला कि मैं दानवीर ययाति के पास आया था; शायद मैं गलत जगह आ गया हूँ। ययाति जब यह बात सुनते हैं, तब उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। राजा ययाति अपनी पुत्री माधवी को गालव को दान में दे देते हैं और गालव को माधवी के बारे में बताते हैं -

"राज-ज्योतिषियों ने माधवी के लक्षणों की जाँच की है। इसके गर्भ से उत्पन्न होनेवाला बालक चक्रवर्ती राजा बनेगा। सुना मुनिकुमार? ऐसे लक्षणोंवाली युवती को पाकर कोई भी राजा तुम्हें घोड़े दे देगा। माधवी को पाकर वह धन्य होगा। तुम निःसंकोच इसे ले जाओ।"[१६८]

माधवी गालव की गुरुदक्षिणा को पूरा करने के लिए तीन राजाओं के रनिवास में रहती है तथा वह विश्वामित्र के पास भी रहती है। सभी को पुत्र लाभ होता है। गालव अपने मन में यह विचार करता है कि माधवी का परपुरुषों के सम्पर्क में जाना एक अनैतिक कार्य है, लेकिन गालव के सामने भी एक मजबूरी थी कि उसे गुरुजी की गुरुदक्षिणा पूरी करनी थी। वह माधवी को अपना निमित्त नहीं बनाना चाहता था, लेकिन गुरुदक्षिणा ने उसे इस कार्य के लिए मजबूर कर दिया। उसने गुरुदक्षिणा को पूरा करना अपना नैतिक कार्य समझा, इसलिए उसने माधवी को अपना निमित्त बनाया जो एक अनैतिक कार्य था, लेकिन गुरुदक्षिणा के संकल्प को उसने अपना नैतिक कार्य समझकर पूरा किया।

संसार में ऐसा कौन सा प्रार्णी होगा, जो अपना यश न चाहता हो। अगर किसी भूखे को रोटी चाहिए, तो वह यह नहीं देखेगा कि मैं रोटी की चोरी कर रहा हूँ। उसका उस समय कार्य होगा कि किसी भी तरह से मेरे पेट की आग बुझ जाए। जैसे- सर्पिणी अपने बच्चे को ही खा जाती है। वैसे ही हर प्राणी जो जिन्दगी में यह चाहते हैं कि उनका यश चारों तरफ फैले। चाहे मुझे अपने कलेजे के टुकड़े को ही दाँव में क्यों न लगाना पड़े? बल्कि वे उस दाँव को ही अपना कर्तव्य समझते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य साहनी जी के नाटक माधवी नाटक के एक पात्र ययाति में देखने को मिलता है।

ययाति एक राजा था। माधवी उसकी पुत्री थी। उस राजा के पास एक नवयुवक गालव आता है, जो ऋषि विश्वामित्र का शिष्य था। उसने अपने गुरुजी से १२ विद्याएँ सीखी थीं। उसने गुरुजी से हठ की कि वे उससे गुरु दक्षिणा ले। गुरुजी ने क्रोध में आकर कहा कि मेरे लिए ८०० अश्वमेधी घोड़े लाओ। उन्हीं घोड़ों को लेने के लिए गालव राजा ययाति के पास जाता है। ययाति ने कहा कि मेरे पास देने को कुछ भी नहीं है। गालव ने कहा कि शायद मैं किसी गलत जगह पर आ गया हूँ। गालव जब इस बात को सुनते हैं, तब उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। राजा ययाति अपनी पुत्री माधवी को दान में दे देते हैं और गालव को माधवी के बारे में बताते हैं -

"राजज्योतिषियों ने माधवी के लक्षणों की जाँच की है। इसके गर्भ से उत्पन्न होनेवाला बालक चक्रवर्ती राजा बनेगा। सुना मुनिकुमार? ऐसे लक्षणोंवाली युवती को पाकर कोई भी राजा तुम्हें घोड़े दे देगा। माधवी को पाकर वह धन्य होगा। तुम निःसंकोच इसे ले जाओ।"१६९

राजा ययाति को अपनी पुत्री माधवी को किसी परपुरुष गालव को देना एक अनैतिक कार्य था। ययाति ये भी नहीं जानते थे कि गालव कौन है? कहाँ से आया और क्या करता है? ययाति यह नहीं चाहते थे कि मैंने हमेशा दान दिया है। मेरी ख्याति चारों ओर फैली है। अगर मैंने इसकी पूर्ति नहीं की तो लोग मेरी हँसी उड़ाएँगे। लोग मेरे मुँह पर कालिख पोतेंगे। इस समय मेरा धर्म भी यही कहता है कि मुझे अपनी कीर्ति नैतिकता के लिए माधवी का दान करना ही उचित है।

भीष्म साहनी ने अपने अनेक उपन्यासों में नैतिकता एवं अनैतिकता का बदलता स्वरुप व्यक्त किया है। 'तमस' उपन्यास में अनैतिकता से नैतिकता अनेक स्थानों पर देखने को मिलती है।

'तमस' -

नत्थू एक चमार जाति का था। वह जानवरों की खाल उतारने का काम करता था। सालोतरी साहब ने मुरादअली से डाक्टरी परीक्षण के लिए एक सुअर लाने को कहा था। मुरादअली जानवरों की खाल दिलवाने में नत्थू की मदद करता था, जिससे उसके घर में चूल्हा जलता था। उसके मुरादअली पर काफी ऐहसान थे। उसको मजबूरन सुअर को मारना पड़ा। मुरादअली ने उस सुअर को मस्जिद पर फिकवा दिया। जब मुसलमानों ने उस सुअर को मस्जिद पर पड़ा पाया, तब उनका खून खौल उठा। उन्होंने नगर में दंगा, फिसाद और मारकाट शुरु कर दी। उन्होंने एक गाय को काट डाला और गाय के अंग जगह-जगह फेंक दिए, जिससे नगर में साम्प्रदायिकता की लहर तेजी से बढ़ गई। कुछ आदमी आपस में बार्तालाप करते हुए कह रहे थे कि जिस आदमी ने सुअर को मारकर मस्जिद पर फिकवाया था। वह आदमी अभी पकड़ा गया या नहीं। सभी लोग उस आदमी को बुरा भला कह रहे थे, क्योंकि उसी आदमी के कारण ही समाज में ये दंगा फैला था -

"वह आदमी पकड़ा गया है या नहीं जिसने मस्जिद की तौहीन की थी? खंजीर का बच्चा ! उसके हाथ-पाँव में कीड़े पड़ें।"१७०

नत्थू ने जब यह सारी बातें सुनी, तब वह बहुत घबरा गया था। उसने अपने मन में यह विचार किया कि यह सब मेरे ही कारण हो रहा है। अगर मैंने सुअर को न मारा होता, तो यह दिन मुझे नहीं देखना पड़ता।

यद्यपि नत्थू सुअर को मारना नहीं चाहता था, लेकिन उसने मजबूरन सुअर को मारा। मानव परिस्थितियों का दास होता है। वह कभी भी कोई गलत कार्य करना नहीं चाहता है, लेकिन परिस्थितियाँ मानव को मजबूर कर देती हैं। उसने अपनी रोजी रोटी के कारण ही सुअर को मारा था। सुअर का मारना यद्यपि एक अनैतिक कार्य था। नत्थू ने सुअर को अपनी नीति का कर्तव्य समझकर मारा था, क्योंकि वह यह नहीं जानता था कि कोई उसे मस्जिद के पास फेंक देगा। वह और पशुओं को मारकर उनकी खाल निकालता था और उस खाल को बेचकर अपनी गृहस्थी चलाता था। अपनी गृहस्थी चलाना यद्यपि एक नीति का कार्य था, लेकिन लोगों ने नत्थू को गलत समझ लिया कि उसने सुअर

को मारकर अनीति का कार्य किया, जबकि अनीति का कार्य अंग्रेजों का था। सालोतरी साहब अंग्रेज थे। उन्होंने ही सुअर को मुरादअली से मरवाया था। मुरादअली मुसलमान था। वह सुअर को कैसे मार सकता था? मुसलमान लोग सुअर का मांस नहीं खाते हैं, इसलिए उसने नत्थू से सुअर मँगवाया और मुरादअली ने अंग्रेजों के कहने पर सुअर को मस्जिद पर डाल दिया। गलती कोई करे और दोष किसी और पर लगाया जाए। सारी गलती अंग्रेजों की है और परिणाम उसको भुगतना पड़ा। नत्थू अपने अन्दर से इतना परेशान हो जाता है कि वह आत्महत्या कर लेता है। **'अंग्रेजों की फूट डालो और शासन करो'** की नीति के कारण ही उसे आत्महत्या करनी पड़ी।

इकबालसिंह सिक्ख था। दंगा होने के कारण वह अपने पिता के घर जा रहा था। रमजान व उसके साथी शत्रुओं का सामान लूटकर अपने घर जा रहे थे। इकबालसिंह का किसी से लड़ाई झगड़ा नहीं था। दंगे के कारण सभी अपने लिए सुरक्षित स्थान खोज रहे थे। रमजान का कार्य अपने शत्रु को मारना था। रमजान ने इकबालसिंह को खूब पत्थर मारे। उसे अधमरा कर दिया। एक बेकसूर को मारना एक अनैतिक कार्य था, लेकिन रमजान की नजर में अपने दुश्मन को मारना नैतिक कार्य था। कहा जाता है जब आदमी के ऊपर खून सवार होता है, तब उसे अच्छे और बुरे का ज्ञान नहीं रहता है। उसे तो बस यही लगता है कि हम जो भी कार्य कर रहे हैं। वह अच्छा है। इसी भावावेश में रमजान के अन्दर बदला लेने की भावना भरी हुई थी कि वह अपने दुश्मनों को मारेगा। रमजान को न तो इकबाल का खून का रिसना नजर आ रहा था और न ही उसकी दर्द भरी सिसकियाँ। रमजान इकबाल पर इतना अत्याचार करता है कि यदि वह इस खोह से बाहर नहीं निकला तो वह जो पत्थर लिए है, उससे उसका भरता बना देगा। यदि उसने इस्लाम कबूल कर दिया तो वह उसका भाई है, नहीं तो वह उसे उसी पत्थर से मारकर वहीं ढेर कर देगा। रमजान के अन्दर मानवता खत्म हो चुकी थी और पशुवृत्ति जाग्रत हो गई थी। जब इकबाल धर्म कबूल करने के लिए हाँ कह देता है, तब रमजान व उसके साथी उसे परेशान नहीं करते हैं, लेकिन रमजान आँख मिचकाकर अपने साथियों से उसे परेशान करने को कहता है। उसके साथी उसे फिर गिरा देते हैं -

"घृणा और द्वेष इतनी जल्दी प्रेम और सद्भावना में नहीं बदल सकते, वे केवल भौंड़े हास्य और व्यंग्य में ही बदल सकते हैं। वे इकबालसिंह को पीट नहीं सकते थे तो कम-से-कम उसे अपने क्रूर व्यंग्य का लक्ष्य तो बना ही सकते थे।"१७१

'कुंतो' -

आज़ादी आई। खोई निधि पाई। हम मगन हो गए। हमने सोचा अब हमारे समाज से बुराइयाँ उसी तरह दूर हो जाएगी जैसे गधे के सिर से सींग, किन्तु सोचा कुछ, हुआ कुछ। खोदा पहाड़ निकली चुहिया। ज्यों-ज्यों सामाजिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया। वे बढ़ती गईं।

समाज में कुछ नवयुवक ऐसे हैं, जो विवाह के पूर्व तथा विवाह के बाद भी अपनी मौसेरी बहिनों से प्रेम करते हैं। कुछ नवयुवक ऐसे भी हैं, जो विवाह के बाद किसी विदेशी लड़की से प्रेम करते हैं और अपनी पत्नी को दुख देते हैं। **कुछ ऐसा ही परिदृश्य भीष्म साहनी के उपन्यास 'कुंतो' में पात्रों 'जयदेव और सुषमा', 'गिरीश और उसकी मौसेरी बहिन', 'धनराज और सिंगापुर वाली डॉ. मोना' में देखने को मिलता है।**

जयदेव सुषमा की मौसेरी बहिन है। सुषमा बचपन से जयदेव के साथ खेली-कूदी और दोनों एक साथ बड़े हुए। वह सुषमा को बचपन से चाहता था। जब जयदेव की माता को जयदेव व सुषमा के प्रेम के बारे में पता चलता है, तब जयदेव की माता ने कहा-

"अगर तेरा सुषमा के साथ उन्स हो गया है और तू उसके साथ ब्याह करना चाहता है तो बता दे। सारी दुनिया एक तरफ और मेरे बेटे की खुशी एक तरफ मैं जैसे भी होगा तेरा साथ दूँगी।"१७२

इधर जयदेव का विवाह कुंतो से हो जाता है। वह कुंतो को पलकों में बैठाकर रखता था। उसे कभी कोई कष्ट नहीं देता था। वह भी जयदेव के साथ बहुत खुश रहती थी। जयदेव ह्रदय का बिल्कुल साफ था। वह अपनी पत्नी से कोई भी बात छिपाता नहीं था। कुंतो जब अपने हालचाल अपनी सहेली को बताती है, तब कुंतो का अपनी सहेली के प्रति यह कथन रेखांकित है -

"बली ने मुझसे कह दिया है कि मैं सुषमा के बिना नहीं रह सकता। वह मन-ही-मन छटपटाता रहता है। मैंने उससे कह दिया कि सुषमा को ले आए, मैं उसे अपने पास रख लूँगी और अगर कहोगे तो मैं कहीं चली जाऊँगी।"१७३

गिरीश का विवाह सुषमा से हुआ था। वह जयदेव का रिश्ते में भाई लगता था। जयदेव ने ही सुषमा का विवाह गिरीश से करवाया था। गिरीश अपनी मौसेरी बहिन से प्रेम करता था। उसकी मौसेरी बहिन शादी शुदा थी। वह हर शनिवार को मीरपुर जाता था। वह गिरीश को बहुत प्रेम करती थी। एक बार जब गिरीश ने एक पर्चा लिखकर तखिए के नीचे रख दिया। जब सुषमा ने सफाई की, तब वह पर्चा उसे मिला। उस पर्चे में लिखा था -

"हम एक-दूसरे के लिए नहीं बने हैं। इस विवाह को घसीटना भूल होगी।"१७४

गिरीश अपनी मौसेरी बहिन की वजह से उसकी अपेक्षा करने लगा था और उसे कष्ट देता था। एक बार सुषमा ने गिरीश को मीरपुर जाने से रोका -

"जो कुछ आप कर रही हैं, इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। आप घर लौट जाइए।"१७५

यद्यपि गिरीश और जयदेव का अपनी मौसेरी वहिनों के प्रति प्रेम करना समाज की दृष्टि में एक अनैतिक कार्य था। हमारे समाज में मामा, मौसी, चाचा, बुआ, ताऊ आदि इन रिश्तों में विवाह नहीं होता है। उनके बच्चे हमारे भाई-बहन माने जाते हैं, लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि लेखक का जीवन मुस्लिम समुदाय के साथ बीता है, क्योंकि मुस्लिम परिवारों में ऐसे विवाह नैतिक माने जाते हैं, जिसका प्रभाव भीष्मजी के ऊपर पड़ा है। जिसका वर्णन उन्होंने अपने साहित्य 'कुंतो' में किया है, लेकिन गिरीश व जयदेव अपनी मौसेरी बहिनों के प्रति प्रेम को नैतिक मानते हैं।

धनराज प्रोफ़ेस्साब का छोटा भाई है। उसकी पत्नी का नाम थुलथुल है। धनराज के विवाह को जब दो साल हुए थे, तब वह डॉक्टर बनने के लिए सिंगापुर चला गया था। वह सिंगापुर में मोना नाम की एक युवती से प्रेम करने लगा था। जब वह अपने घर ७ साल बाद लौटा, तब वह अपनी प्रेमिका की एक तस्वीर लेकर आया। उसकी तस्वीर को देखकर थुलथुल ने पूछा कि यह युवती कौन है? धनराज ने कहा कि यह मेरी मित्र है -

"यह एक डाक्टरनी है। मेरे साथ पढ़ती थी, बाद में एक ही अस्पताल में हम दोनों एक साथ काम भी करते थे। इसके साथ अच्छी जान-पहचान हो गई थी।"१७६

धनराज को थुलथुल बिल्कुल पसंद नहीं है। वह थुलथुल को बहुत कष्ट देता है। जब हर गुरुवार को मोना के पत्र आते हैं, तब धनराज सुबह से ही मोना के पत्र के लिए बेचैन हो जाता है और उस दिन थुलथुल को कमरे से बाहर निकाल देता है -

"धनराज ने मोना का चित्र तिपाई पर सजाकर रख छोड़ा है। आए दिन कमजात की चिट्ठी हल्के नीले रंग का लिफ़ाफ़ा पहुँच जाता है, हर वृहस्पतिवार को उस हल्के नीले लिफ़ाफ़े का इंतज़ार रहता है जब धनराज सुबह से ही बेचैन रहने लगता है और पत्र मिलने पर थुलथुल को अपने कमरे से बाहर निकाल देता है और निराले में देर तक बैठा प्रेम-पत्र पढ़ता रहता है।"१७७

एकबार थुलथुल ने अपने पति से कहा कि जब आप सिंगापुर में थे, तब आपने हमें कभी भी इतना याद नहीं किया, जितना आप इस मरजाणी को याद करते हैं। धनराज को गुस्सा आया कि यह मोना के लिए ऐसा बोल रही है -

"दोनों कान खोलकर सुन लो", धनराज क्रुद्ध होकर बोला, "अगर मोना के बारे में कभी कुछ कहा तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।"१७८

यद्यपि धनराज का परस्त्री मोना से प्रेम करना, हिन्दू समाज की दृष्टि में अनैतिक कार्य था। समाज ऐसे सम्बन्धों को अनैतिक मानता है। समाज दूसरी स्त्री से प्रेम करने की इज़ाज़त नहीं देता है, लेकिन धनराज की नजर में मोना के प्रति प्रेम नैतिक था।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि गिरीश, जयदेव व धनराज की नजर में उनका प्रेम नैतिक था, लेकिन समाज ऐसे प्रेम सम्बन्धों को अनैतिक मानता है। समाज हमें यही सीख देता है कि हम जिस स्त्री से विवाह करें उसी से प्रेम करें, लेकिन मजबूरियाँ कुछ ऐसी भी हो जाती हैं कि हम जिसको चाहते हैं, उससे हमारा विवाह न होकर किसी और से हो जाता है, तभी धनराज का प्रोफ़ेस्साब के प्रति यह कथन अधोलिखित है -

"यह भी कुदरत का कोई क़ानून ही होगा, भइया, जिसके तहत थुलथुल का ब्याह मेरे साथ हुआ। किसी दूसरे के साथ ब्याही गई होती तो शायद सुखी होती। गलत आदमी के साथ उसे बाँध दिया गया तो बैचेन रहती है, रोती-बिलखती है।............पर जहाँ तक कोशिश का सवाल है, मैंने कोई कोशिश उठा नहीं रखी है।"१७९

उन्होंने अपने उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' में नैतिक एवं अनैतिकता का बदलता स्वरुप अनेक स्थानों पर व्यक्त किया है।

'नीलू नीलिमा नीलोफर' (नैतिक)

भीष्म साहनी ने 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यास में समाज को एक नई दिशा देने के लिए लिखा है। आज हर मानव गलत रास्ते पर भटकता चला जा रहा है। उसे यह समझ में नहीं आ रहा है कि क्या सही है और क्या गलत है। आज हम लोग अगर नजर डालें तो हर जगह गन्दे काम हो रहे हैं। उन्हें रोकने और सही दिशा देने

आगे नहीं रहा है। जब लेखक समाज में फैली ऐसी गन्दगी को देखता है, तब उससे रहा नहीं जाता है और हौल में कोई किसी से कुछ नहीं कह सकता है। अगर किसी को कोई अच्छी बात बताओ। भैया ऐसा कार्य तो वह अपमान समझकर कहीं लड़ाई पर उतारु न हो जाए, इसलिए लेखक अपनी लेखनी के माध्यम से सही दिशा देने का प्रयत्न कर रहा है।

यद्यपि सुधीर और नीलू का विवाह एक अनैतिक विवाह था, क्योंकि सुधीर एक हिन्दू लड़का था, जबकि मुसलमान लड़की थी। दोनों के धर्म अलग-अलग थे। दोनों एक दूसरे को बेहद चाहते थे और एक-दूसरे के भी नहीं सकते थे। नीलू और सुधीर ने विवाह तो कर लिया, लेकिन उनके इस विवाह को न तो नीलू के परिवार और न ही सुधीर के परिवार वालों ने स्वीकार किया है। प्राचीनकाल में ऐसे विवाह अनैतिक माने जाते थे। ल का समाज रुढ़िवादी एवं भाग्यवादी था। वे विवाह अपनी ही जाति में करते थे। लोगों में शिक्षा की कमी थी, उनकी बुद्धि का पूर्ण विकास नहीं हुआ था। लड़कियों को बाहर पढ़ने नहीं भेजा जाता था। उन्हें घर पर ही रखा जाता था, लेकिन नीलू बाहर पढ़ने गई और उसने सुधीर को अपना जीवन साथी बनाया। सुधीर ने अपने लोगों को यह बताया कि मैं नीलू से विवाह करने जा रहा हूँ तो उसके पिताजी ने आग में से जलती लकड़ी निकाल ऐसे सम्बन्ध को अनैतिक मानते थे -

"तेरा भेजा फोड़ दूँगा, अगर फिर उस लड़की का नाम लिया।"१८०

सुधीर के पिता शराब पीते थे और उनके ऊपर प्राचीन संस्कार हावी थे -

"उसे अव्वल तो प्रेम-विवाह से ही चिढ़ थी, वह भी मानता था कि प्रेम-विवाह करने वाले -युवतियाँ गिरे हुए लोग होते हैं, जिनका नैतिक पतन हो चुका होता है। उसे भी प्रेम में उच्छृंखलता कामुकता ही नज़र आती थी। जो युवक कर्तव्यपरायण होते हैं, वे लड़कियों के चक्कर में नहीं पड़ते। तियों के लिए प्रेम करना तो और भी घृणास्पद है, जघन्य पाप है। लज्जा स्त्री का ज़ेवर है, उसे ही दिया तो पीछे क्या रह गया ! कहाँ तो युवतियों का संकोची भीरू स्वभाव जो उनके सौंदर्य का अंग और कहाँ उनका मुँह उघाड़कर घूमना, गली-बाज़ार में मुँह फाड़कर हँसना, लड़कों की कमर में हाथ कर घूमना, क्या उन्हें शोभा देता है? यह गिरावट नहीं तो क्या है?"१८१

इधर जब नीलू और सुधीर डॉ. गणेश और अंजली के मकान में रूके तो सुधीर ने अंजली के बारे में कुछ बता दिया। अंजली ने कहा कि कहीं तुम लोगों ने छिपकर तो विवाह नहीं किया है। अंजली ने डॉ. गणेश कहा-"जवानी कैसी मस्तानी होती है, जी ! प्यार में अंधे होकर ये लोग आग में कूद गए हैं।"

जब गणेश ने कहा-"गलती तो इस लड़के ने की है। छोटी-सी लड़की को ब्याहकर ले आया इस पर न घर, न घाट। वह भी इसके बहकावे में घर-बाहर छोड़कर इसके साथ आ गई है।" अंजली ने कहा-

"लड़की न ससुराल की रही, न मायके की।"१८२

नीलू का सुधीर से विवाह होना क्या जलते अंगारों को पीना था। नीलू के परिवार वालों ने नीलू के साथ

बहुत अत्याचार किया था। उसका बच्चा गिरवा दिया और उसे बंद कोठरी में डाल दिया। नीलू के पिताजी को उस समय धक्का लगा। जब जामा मस्जिद के एक मौलवी ने उनसे कहा-

"यह हम क्या सुन रहे हैं खान साहिब? क्या सचमुच आपकी बिटिया किसी हिन्दू लौंड़े के चक्कर में पड़ गई है? पहले तो हमें यक़ीन ही नहीं हुआ। हम कहें, खान साहिब तो बड़े खानदानी आदमी हैं, ज़रुर किसी ने गलत अफ़वाह फैला दी होगी, पर नहीं, यह तो बड़ी नावाजिब बात हुई।.. ..."[१८३]

नीलू की माँ ने कहा कि हर औरत दूसरी औरत के साथ फुसफुसाकर कहती है कि इसकी बेटी ने एक काफ़िर के साथ मुँह काला किया है, फिर उसके साथ भाग गई। नीलू की माँ ने अपनी बेटी को थप्पड़ मार दिया। मैंने कौन सा पाप किया था। तू जैसी कंजूड़ी को जन्म दिया। तू जन्म लेती ही क्यों न मर गई?

"मेरा पेट ही गंदा निकला है, इसमें किसी का क्या दोष। उसे हमारी इज़्ज़त-आबरू का ख्याल होता तो ऐसा काम क्यों करती?"[१८४]

नीलू को यह सब गलत काम के कारण भोगना पढ़ रहा था। समाज के लोगों की दृष्टि में यह विवाह अनैतिक था, लेकिन भीष्म जी की दृष्टि में इस विवाह को अनैतिक न मानकर इसे नैतिक माना था। साहनी चाहते थे कि अगर ऐसे विवाह होंगे तो लोगों के अन्दर एक दूसरे के प्रति जो नफरत भरी है। वह दूर होगी। आपस में प्रेम बढ़ेगा, क्योंकि अच्छे कार्य में हमेशा बाधाएँ ही आती हैं।

हमारे ऊपर जब विपत्ति आए, तब उस समय हमें धैर्य से काम लेना चाहिए।

नीलू और सुधीर पर आँधियों के बादल मंडरा रहे थे, लेकिन उन्होंने अपना धैर्य नहीं खोया था। उन्होंने समाज की परवाह न करके बल्कि आज के बदलते परिदृश्य में उन्होंने अपनी मंजिल को पा ही लिया था, क्योंकि कहा गया है-

"शक्ति मिटती नहीं, अवतार लेती है,
तुम में सदैव है, तो योग्य तो बनो"

नीलू और सुधीर का प्रेम भले ही अनैतिक हो, लेकिन भीष्म साहनी ने दोनों धर्मो में प्रेम, सद्भाव बढ़ाने के लिए एक दूसरे को समझाने के लिए **'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना'** के सन्देश को उन्होंने नैतिक माना है।

(अनैतिक) भीष्म साहनी ने अपने दूसरे पात्र नीलिमा और अल्ताफ़ के रिश्ते को अनैतिक न मानकर उसे भी नीति का रुप दिया है।

नीलिमा नीलू की सहेली थी। उसके पिता वकील थे। नीलिमा हिन्दू लड़की थी। उसके पिता के दोस्त का लड़का अल्ताफ़ था। वह मुसलमान था। नीलिमा और अल्ताफ़ मित्र थे। वे एक दूसरे के घर आते-जाते थे। नीलिमा के पिताजी स्वंय चाहते थे कि अगर नीलिमा को अल्ताफ़ पसंद है, तो मैं उसके विवाह में रूकावट न बनकर उनका विवाह करवाऊँगा।

यद्यपि नीलिमा की दादी को अल्ताफ़ पसंद नहीं था, क्योंकि वह मुसलमान था। वह पुरानी विचार धारा

की थी। नीलिमा और अल्ताफ़ का एक दूसरे के साथ घंटों बैठकर बातें करना बाँहों में बाँहें डालकर घूमना, रात को देर तक घर में घुसे रहना, नीलिमा की दादी यह सब अनैतिक कार्य मानती थी, लेकिन नीलिमा के पिताजी आज की नई पीढ़ी के प्रगतिशील विचारक थे। वह बैरिस्टर थे। वे पुरानी, रूढ़ियों, रीति-रिवाजों परम्पराओं में विश्वास नहीं करते थे। वे अपनी बेटी के ऊपर कोई दबाव भी नहीं डालना चाहते थे। वे अपनी बेटी को सही दिशा समय-समय पर देते रहते थे। बेटी एक गलती मत करना। इसके अलावा जो तुम्हें उचित लगे वह करना। नीलिमा के पिताजी स्वंय अपनी बेटी को अनैतिक कार्य से रोकते थे, लेकिन वे अल्ताफ़ और नीलिमा के विवाह को नैतिक मानते थे।

नीलिमा के पिता अपने मन ही मन कहते थे-

"माँ से बहस करना फ़िजूल है, बड़ी उम्र का हर व्यक्ति परम्परावादी होता है। माँ की नज़र में प्रेम, वासना का ही दूसरा नाम है और वह उस पर नाक-भौंह सिकोड़ेगी ही। यही मेरी माँ, एक बार नहीं, बीसियों बार उन यातनाओं की चर्चा कर चुकी है जो उसे अपने ब्याह के बाद, ससुराल में सहनी पड़ी थीं, "कोई सीधे मुँह बात नहीं करता था, बात-बात पर उलाहने देते थे। ऐसी-ऐसी कड़वी बातें कहते थे। मुझे लगता था जैसे मेरे माँ-बाप ने मुझे जलते कुंड में झोंक दिया है। स्त्री की तो जून ही खोटी है, बेटा, मैं तुमसे क्या कहूँ।" वही माँ अब पुराने रीति-रिवाज की लीक पर ही अपने बेटे को चलाना चाहती है।"[१८५]

(६.६) नारी संचेतना -

(क) उपन्यास -

भीष्म जी ने 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' नामक उपन्यास में नारी संचेतना को अनेक स्थानों पर व्यक्त किया है।

भारत के युग बदलने से परिवर्तन की हवा हमेशा से चलती आई है। यहाँ परम्पराओं, रुढ़ियों, प्रथाओं के साथ परिवर्तन के भी खिलाफ आन्दोलन कितना सशक्त रहा या फिर आन्दोलन के सूत्रधारों ने अपनी बाद की पीढ़ी को सामाजिक न्याय के आन्दोलन की वह विरासत किस रूप में सौंपी। यहाँ सवाल यह भी उठता है कि नई पीढ़ी ने कितनी प्रतिबद्धता से सकारात्मक सोच की मानसिकता वाले समाजशास्त्रियों तथा बुद्धजीवियों से अपने रिश्ते बनाए। कभी गौतमबुद्ध, मनु, रैदास, फूले, अम्बेडकर, सावित्री सभी का नाम लिया जाता है, पर आज के पीछे छिपी महिला की क्या स्थिति है। उसका जिक्र बहुत कम ही होता है।

समाज में नारियों को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है। नारी को घर की लक्ष्मी माना गया है। नारी पति की अर्द्धांगिनी, सहचरी, उसका कन्धा से कन्धा मिलाने वाली सुख-दुःख की साथी होती है। वह अपना ध्यान नहीं रखती हैं, लेकिन पति के लिए हमेशा समर्पित रहती है। **कामायनी में जयशंकर प्रसाद ने कहा है-**

"नारी ! तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पदतल में।

पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।।"[१८६]

मनु ने कहा है कि विवाह के पहले वह पिता के संरक्षण में, विवाह के बाद पति, फिर पुत्र के संरक्षण

में रहती है। हम और आप जानते भी होंगे कि पुरूषों से पहले नारी को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। जब कभी हम लोग भगवान का नाम लेते हैं। पहले नारी का नाम आता है जैसे-सीताराम, राधेश्याम, गौरीशंकर, राधेकृष्ण। जब नारी पर अत्याचार होता है, तब विवाह के बाद उसे बेटी का रूप न देकर बहू का रूप ही दिया जता है। नारी चाहे बेटी हो या बहू। उसे कभी भी सुख नहीं मिलता है। नारी अगर किसी से प्रेम करती है तो उसे समाज में उचित स्थान नहीं मिलता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी ने अपने उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' के पात्र 'नीलू' के माध्यम से दर्शाया है-

नीलू सुधीर से प्रेम करती है। वह सुधीर से विवाह कर लेती है। नीलू के इस विवाह के रिश्ते को कोई भी स्वीकार नहीं करता है। उसके घर के लोग उसे बुरा भला कहते हैं। हमीद ने अपनी बहिन से कहा-

"यह हमारी बहिन हमें रूसवा करने पर तुली हुई है, हमारी नाक कटवाने यहाँ पहुँच गई है, बेपर्द होकर, हरामज़ादी।"१८७

नीलू पूरी तरह सुधीर के प्यार में डूब चुकी थी। नीलू के साथ ऐसा दुर्व्यवहार इसलिए किया गया कि नीलू मुसलमान लड़की थी, जबकि सुधीर हिन्दू लड़का था। जब थाने में नीलू ने यह कहा कि मैं सुधीर के साथ जाऊँगी, तब नीलू के अब्बा ने कहा "और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू हमारे लिए मर गई।"१८८

नीलू सुधीर के साथ शिमला में अच्छी तरह से रहने लगती है। सुधीर डॉ. गणेश के वाचनालय में रुकते हैं। अंजली नीलू को बुरा भला कहती है। उसने अपने पति डॉ. गणेश से कहा-

"जवानी कैसी मस्तानी होती है, जी! प्यार में अन्धे होकर ये लोग आग में कूद गए हैं।"

"लड़की न ससुराल की रही, न मायके की। लड़की पर तरस आता है, और क्या!"

"तू तरस नहीं खाया कर। जो उसे ब्याहकर लाया है, वह उसकी देखभाल भी करेगा... और सुन, उनके सोने का प्रबंध तुमने उस सीलन-भरे कमरे में क्यों कर दिया है? बेचारा लड़की को हनीमून करवाने शिमला में लाया है और तुमने उन्हें उस फटीचर-सी जगह में धकेल दिया।"१८९

हमीद जब नीलू से मिलने के लिए उसके घर पहुँचा जाता है, तब वह नीलू को माँ से पिटने के लिए अपने घर ले जाता है। हमीद ने नीलू से कहा कि हम लोग वहाँ तड़प रहे हैं। तुम यहाँ गुलछर्रे उड़ा रही हो। हमीद नीलू का हमल (बच्चा गिरवाना) चाहता है। नीलू मना करती है पर-

"बच्चा तो तुम्हें निकलवाना होगा। एक काफ़िर का तुख़्म तुम्हारे अंदर पल रहा है। उसे अपने पेट में लिए हुए तुम हमारे घर के अंदर दाख़िल नहीं हो सकती।"१९०

इधर नीलू को अपने ही घर में कोठरी में बन्द कर दिया जाता है। नीलू की माँ उसे खूब मारती है। तुमने मेरा मुँह काला कर दिया है। हमें कहीं का नहीं छोड़ा है। तुम पढ़ने गई थी। तुम्हें हिन्दू लड़के के अलावा कोई और लड़का नहीं मिला। तुम्हारी वजह से हम सिर ऊँचा करके नहीं चल पा रहे हैं। पिताजी पहले बाहर बैठा करते थे। वह भी अब घर में ही घुसे रहते हैं। घर में जो भी आता है, वह भी एक तमाचा-सा मार जाता है। इनकी बेटी ने एक काफ़िर

के साथ मुँह काला किया है, फिर उसके साथ भाग गई।

एक मौलवी ने नीलू के पिताजी से कहा -

"मैं सोचता हूँ, अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। लड़की समझदार है। अल्लाह के फ़ज़ल से अच्छा पढ़ी-लिखी है। उसके भाई ने उसे हमल गिरवाने को कहा तो वह मान गई। उसने वक्त की नज़ाकत को समझ लिया है और आपका फ़र्ज़न्द कहता था कि वह उसे इस बात पर भी रजामंद कर लेगा कि वह अपने शौहर को दीन कबूल करने पर भी राजी कर ले। या फिर, किसी दूसरी जगह उसके निकाह का बंदोबस्त हम करेंगे.........।"१६१

इधर नीलू की माँ रोती है। वह अपने पेट को गन्दा मानती है। नीलू ने कहा-

"माँ जी, तू कहेगी मत लौटकर जा तो मैं नहीं जाऊँगी, यहाँ तेरे पास रहूँगी। तेरी खिदमत करुँगी। तू कहेगी घर से निकल जा तो निकल जाऊँगी। मत रो माँ, मुझसे तेरा रोना नहीं देखा जाता।"१६२

सभी लोग नीलू का दूसरा विवाह करवाने पर तुले हुए थे। नीलू का शौहर या तो हमारा धर्म कबूल कर ले या नीलू का दूसरा विवाह करेंगे। नीलू को अपना ही घर काटने को दौड़ रहा था। नीलू सोचती थी। माँ मुझे गले से लगा लेगी, लेकिन माँ मुझे ही बुरा भला कह रही थी। नीलू सोचती मेरे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं क्या करुँ, कहाँ जाऊँ और किस कोठरी में जाकर बैठूँ। नीलू स्वयं को असहाय मान रही थी। वह निपट अकेली पड़ गई थी। नीलू स्वयं सोच रही थी कि मैं यहाँ क्यों आई?

"नीलू का स्वभाव किसी का सहारा मिल जाने पर सब कुछ उसी पर छोड़ देने का था, इसलिए उसके लिए भी ज़ेहनी उधेड़बुन कोई मायने नहीं रखती थी।"१६३

नीलिमा -

नीलिमा अल्ताफ़ से प्रेम करती थी। दोनों एक दूसरे को चाहते थे। नीलिमा के डैडी को यह रिश्ता पसन्द था। डैडी ने कहा कि नीलिमा को अगर अल्ताफ़ पसन्द है, तो मैं उसके मार्ग में बाधक नहीं बनूँगा। नीलिमा की दादी को अल्ताफ़ पसंद नहीं था। वह मुसलमान था। नीलिमा को अपने डैडी व दादी को खुश रखने के लिए सुबोध से विवाह करना पड़ा। सुबोध से विवाह करके नीलिमा हमेशा दुखी रही। सुबोध समय का पक्का था। वह नीलिमा को नहीं चाहता था। उसका उसके प्रति केवल स्वार्थ था। एक बार नीलिमा ने सुबोध के घर में आत्महत्या करने की कोशिश की, लेकिन भाग्यवश बच गई। नीलिमा सुबोध का हर समय ध्यान रखती थी।

एक बार नीलिमा बाजार से ग्रामोफोन खरीद लाई। नीलिमा ने सोचा कि सुबोध यह सोचकर खुश होगा। जब सुबोध ने ग्रामोफोन देखा। यह सब फिजूलखर्ची है। नीलिमा ने कहा कि मैं अपने पैसों से खरीद कर लाई हूँ। नीलिमा ग्रामोफोन को बजाने ही वाली थी। सुबोध ने उसे दीवार से दे मारा -

"तुम सारा वक्त अपने बाप की अमीरी मुझे सुनाती रहती हो।"१६४

नीलिमा ने कभी-कभी घबराकर स्वयं से कहा -

"मैं क्यों उससे सकुचाने-घबराने लगी हूँ। पहले उसके दफ़्तर से आने का वक्त होता तो मैं बार-बार छज्जे पर जा पहुँचती थी। अब उसके घर लौटने का वक्त होता है तो मैं घंटा-भर पहले से ही घर की सफाई करने लगती हूँ। धागे का एक टुकड़ा, एक फ़ालतू कागज़ कहीं पड़ा रह जाए तो उसके तेवर चढ़ जाते हैं।.....मुझे क्या हो गया है? बात-बात पर मैं उसका मुँह ताकने लगी हूँ, उसकी हाँ में हाँ मिलाने लगी हूँ। मैं जो इतनी बेपरवाह हुआ करती थी कि मुझे घर में 'मस्त मौला' कहा करते थे।"१६५

नीलिमा जब अपने डैडी के पास आ गई, तब कहीं जाकर उसे आराम मिला। एक दिन नीलिमा ने अपने डैडी व आंटी का वार्तालाप सुन लिया। उस रात नीलिमा सो नहीं सकी। डैडी ने कहा कि मैं नीलिमा को उसके घर में नहीं जाने दूँगा। कहीं वह ऐसी हरकत फिर न कर दे। नीलिमा की दादी ने कहा कि कुछ नहीं होगा, जी क्यों चिंता करते हो? मियाँ बीबी के मनमुटाव किस घर में नहीं होते?

बच्चा-ताला हो जाएगा तो सारी बात सँभल जाएगी। आंटी ने कहा कि बेटी को सारी उम्र के लिए घर बैठा लोगे? कभी ऐसा हुआ है? भगवान न करे, तुम्हें कुछ हो गया तो उसका क्या होगा? वह न इधर की रहेगी, न उधर की। किस घर में परेशानियाँ नहीं उठतीं।"

नीलिमा ने स्वयं विचार लिया और सुबोध के घर चली गई। उसने अब हिम्मत से काम लिया। वह सुबोध से अब नहीं डरती थी। उसको जवाब अच्छा सुनाती थी। नीलू अपनी सहेली को ख़त लिखती है -

"नीलू, मेरी जान, अगर इन्सान में साहस आता है तो यातनाएँ भोगने पर ही और वह साहस बड़ा बेजोड़ होता है। अगर उस रोज़ थप्पड़ न खाया होता और सड़क पर लुढ़कते पत्थर की तरह भटकती न रही होती और अल्ताफ़ के घर के अंदर से ढोलक की आवाज़ न सुनी होती और आंटी और डैडी का बार्तालाप नहीं सुना होता-या फिर, तुमसे न मिली होती तो इस समय मैं सुबोध के सामने उसकी खिल्ली नहीं उड़ा रही होती।"१६६

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि साहनी जी ने नारी की करुण दशा का वर्णन किया है। एक नारी को अपने प्रेम की खातिर तथा बेटी हो तो परिवार के खातिर अपनी खुशी का गला घोंटना पड़ता है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'यशोधरा' में कहा है -

"अबला-जीवन, हाय! तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी ।।"१६७

"नारी लेने नहीं संसार में देने ही आती है और सच में वह अपने पास केवल आँसुओं को ही शेष रखती है।"

'कड़ियाँ' -

आज भारत को पुनः नारी के रमणी तथा कामिनी स्वरुप की आवश्यकता न होकर उसके शक्ति, दुर्गा

तथा चण्डी स्वरुप की ही आवश्यकता है। दुर्गा स्वरुप, केवल हाथ में तलवार लेकर युद्ध क्षेत्र में उतर पड़ने से ही प्रगट नहीं होता। आज के इस बुद्धि प्रधान युग में प्रत्येक वस्तु का स्वरुप सूक्ष्म तथा बुद्धिग्राही हो गया है। आज का संघर्ष, बौद्धिक संघर्ष ही है। उदाहरणार्थ- अभी तक जितने भी देश स्वतन्त्र हुए अथवा जीते गए केवल तलवार तथा तोपों के बल पर ही, किन्तु पहला उदाहरण है कि भारत ने बौद्धिक संघर्ष करके, अहिंसात्मक युद्ध किया और विदेशियों के हाथ में गई हुई सत्ता को पुनः प्राप्त किया।

बिना विकसित नारी के नर का विकास अवरुद्ध हो जाएगा, इस मर्म को दृष्टि में रखकर ही संसार का प्रथम मानव भी नर-नारी के जोड़े के रुप में ही पृथ्वीतल पर अवतरित हुआ था। संसार की सभी पुराण कथाओं में इसका उल्लेख है। हमारे प्राचीन धर्म ग्रन्थ **'मनु स्मृति'** में लिखा गया है -

"द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमर्धेन पुरुषोऽभवत् ।

अर्धेन नारी तस्यां स विराजम सृजत्प्रभुः ।।"१६८

अर्थात् 'उस हिरण्यगर्भ (ईश्वर) ने अपने शरीर के दो भाग किए। अपने शरीर के आधे भाग से पुरुष और शेष आधे से स्त्री का निर्माण किया।"

कवियत्री महादेवी वर्मा ने नारी की महानता का वर्णन जिन शब्दों में किया है, उनका एक-एक शब्द उद्बोधक है -

"नारी केवल माँस पिण्ड की संज्ञा नहीं है, आदिमकाल से आज तक विकास पथ पर पुरुष का साथ देकर उसकी यात्रा को सफल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानव ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास किया है, उसी का पर्याय नारी है।"१६९

लेकिन पुरुष ने नारी को वासना की पूर्ति समझकर उसका शोषण किया है। जब पत्नी से इच्छा की पूर्ति नहीं हुई, तब वह पत्नी को छोड़कर दूसरी नारी से भोग करता है। ऐसे हाल में विवाहिता स्त्री पति के गम में पागल हो जाती है। **ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्मसाहनी के 'कड़ियाँ' उपन्यास के पात्र प्रमिला में देखने को मिलता है।**

प्रमिला भगवानदास नारंग (बी.ए., एल.एल.बी.) वकील साहब की दो संतानों में छोटी लड़की थी, जिसकी शादी बारह-पन्द्रह वर्ष पूर्व महेन्द्र नाम के युवक के साथ हुई थी। उसकी माँ बचपन में ही मर गई थी। बड़ा भाई परशुराम तो बचपन से ही आवारा निकल गया था। प्रमिला का पति महेन्द्र है। महेन्द्र एक सरकारी आफीसर है। जब दोनों की शादी हुई थी, तब दोनों प्रसन्न रहते थे। प्रमिला के एक सात साल का लड़का था। उसका नाम पप्पू है। प्रमिला को पुराने रीति-रिवाज और पति परमात्मावाली बात पर ज्यादा विश्वास है। वह बाहर की तड़क-भड़क में ज्यादा विश्वास नहीं करती है। वह पूरा समय गृहस्थी में लगी रहती है। वह न तो चोटी करती है बल्कि पूरे दिन जूड़ा ही बाँधे रहती है। वह प्याज खाती है। उसकी गंध महेन्द्र को बिल्कुल पसन्द नहीं है। प्रमिला रसोई में कार्य करते समय जो कपड़े पहने रहती है। वही कपड़े पहनकर सो जाती है। उसको उन कपड़ों में गंध आती है। महेन्द्र को प्रमिला की ऐसी हरकतों से काफी नफरत

है। जब महेन्द्र रात को सोने जाता है, तव वह प्रमिला का इन्तज़ार करता है। प्रमिला ने कहा कि मैं अभी आ रही हूँ, लेकिन वह महेन्द्र की बातों में ज्यादा ध्यान नहीं देती है।

एकबार महेन्द्र ने उसकी कमर में बाँह डालकर चूम लिया। प्रमिला महेन्द्र पर बौखला उठी थी।

"यह क्या कर रहो हो? "उसने छटपटाकर कहा और सीट के एक कोने में दुबक गई।

"नहीं प्रमिला, इसमें कुछ भी बुरा नहीं है, तुम मेरी पत्नी ही तो हो।"

" नहीं जी, बस यह बेशर्मी है, मैंने कह दिया। मुझे अब हाथ नहीं लगाना। तुम गंदी किताबें पढ़ते रहते हो, इसलिए ऐसा करते हो।"२००

प्रमिला जब अपने पति की इच्छाओं की पूर्ति नहीं करती है। उसकी बात पर ध्यान नहीं देती है, तो महेन्द्र प्रमिला से अन्दर से टूटने लगता है। उसने अपनी पत्नी से अलग रहने का विचार बना लिया था। वह सुषमा नाम की एक लड़की से प्रेम करने लगा था। उसने सुषमा वाली बात अपनी पत्नी को बताई, जिससे प्रमिला महेन्द्र से नाराज रहने लगी। महेन्द्र जब भी देरी से घर आता है, तब उसे लगता है कि वह सुषमा के पास गया था। उसका शक सही भी रहता है। वह तपाक से पूछ बैठती है कि तुम देरी से क्यों आते हो? क्या पुनः उस काली कलूटी के पास गए थे? वह बुरी तरह खीझ जाता है और उसे एक थप्पड़ मार देता है -

"ऐसी औरत के साथ कोई नहीं रह सकता। जब से शादी हुई है एक शब्द भी प्यार का इसके मुँह से नहीं सुना," वह अपनी सफाई देते हुए बुदबुदाया।

"औरत चाहे तो मर्द को अपनी मुट्ठी में रख सकती है। अगर यह सलीकेवाली होती तो मैं सुषमा के पास जाता ही क्यों? यह भी क़ोई ढंग है जीने का? मैं कुछ माँगता नहीं, बोलता नहीं, इसलिए मेरे साथ बेरुखी की जाती है। जाए जहन्नुम में........मैं ज़रुर सुषमा के पास जाऊँगा। जहाँ से प्यार मिलेगा, लूँगा।"२०१

प्रमिला अपनी बर्बादी का स्वयं कारण बनी। इसी कारण महेन्द्र प्रमिला को उसके पिता के घर भेज देता है। महेन्द्र की पत्नी अन्दर से बहुत दुखी थी। उसने पप्पू को वोडिंग में डाल दिया था। उसने महेन्द्र से कई बार कहा कि तुम मुझे पप्पू को दे दो। तुम्हें जो उचित लगे, वही करो। वह पति के गम में पागल जैसी हरकतें करने लगी थी। पिता का व्यवसाय अच्छा नहीं चलता था। दो जून की रोटी भी मुश्किल से उपलब्ध होती थी। वह सड़क पर घूमती रहती है। पिता ने बेटी को पागल खाने में भरती करवा दिया था। जब महेन्द्र अपने दोस्त नाटे की शर्त पर पत्नी को पागल खाने में देखने जाता है, तब वह क्या देखता है -

"अख़बारों के कागज़ और खपचियाँ इकट्ठा करने वाली औरत चलती हुई खिड़की के पास आ गई थी। साँवले रंग की इस पगलाई हुई औरत ने खिड़की के पीछे खड़े इन लोगों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। बालों की लटें उसके माथे पर गिर रही थीं, दुपट्टे में बनाई अपनी झोली में उसने पहले से ही बहुत-सी खपचियाँ और मुचड़े हुए कागज़ों के टुकड़े जमा कर रखे थे। वह धीरे-धीरे आँगन के दूसरी ओर बढ़ गई।"२०२

महेन्द्र ने जब प्रमिला को देखा कि यह गर्भवती है। वह सोचने लगा कि जब हम दोनों नाटे के घर मिले थे। यह उसी रात का नतीजा तो नहीं है, फिर थोड़ी ही देर में उसका सिर घूमने लगा। यह मेर बच्चा नहीं हो सकता है। यह रात-दिन सड़क पर घूमती रहती है। पता नहीं किसका वेटा अपने पेट में डाल लाई।

"अरे वाह रे!" नाटा बोला, "अरे हमारे सामने बनता है, यह किसी दूसरे का बच्चा कैसे हो सकता है साले, हमारे साथ मक्कारी करता है। इसे बसाना नहीं चाहता तो बात दूसरी है, मगर हमारे सामने यह फ़रेब तो नहीं कर। हमें तो यह उसी रात की करामात जान पड़ती है।"२०३

सतबंत प्रमिला की एक अच्छी सहेली थीं। उसने हमेशा प्रमिला की मदद की थी। प्रमिला से महेन्द्र के बारे में पूछती है कि अगर कल वो तुझे अपने पास रखना चाहे तो तुम क्या करोगी। प्रमिला का अपने पति के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है -

"उसके साथ रहने को मेरा मन नहीं करता। हाँ, कभी -कभी यह मन में आता है कि बच्चे बड़े होंगे तो क्या कहेंगे, हमारा बाप था भी, फिर भी हम अनाथों की तरह पले हैं।"२०४

उपर्युक्त विवचेन से यह स्पष्ट है कि प्रमिला ने महेन्द्र की खातिर कितना कष्ट सहा। आज समाज में स्त्रियों की दशा बड़ी शोचनीय हो गई है। आज की नारी जब तक आत्मनिर्भर नहीं होगी, तब तक उसकी दशा बड़ी दयनीय रहेगी।

'कुंतो'-

भारतीय संस्कृति विविधता अनेकता में एकता तथा समावेशिता से परिपूर्ण है। उसे परिभाषित करना तत्वतः कठिन है। यह निरन्तर गतिमान रही है, अनेकानेक संस्कृतियों को अपने में समाविष्ट करती रही है। इतिहास साक्षी है कि भारत की नारी तमाम दुख झेलकर भी इस संस्कृति की गरिमा बनाए रखने के लिए निरंतर तप और उत्सर्ग करती रही है। भारतीय नारी की जीवन जीने की कला उसकी धर्म और संस्कृति के प्रति आस्था और विश्वास ने सदैव उसके आचरण का रुप निर्धारण किया है।

भारतीयता के गौरव गाथा में जिन नारियों का योगदान रहा है। वे जाति, धर्म और सम्प्रदाय से ऊपर उठकर स्मरणीय कार्य करती रही है। जब-जब मानवता पर संकट आया है स्त्री ने ही समाज का पथ प्रशस्त करने का प्रयास किया है। हर युग में वह माता, गुरुमाता, भगिनी, सखी, प्रेयसी, पत्नी और पुत्री किसी न किसी रुप में प्रेरक और सहायक रही है, लेकिन आज के पुरुष ने हमेशा नारी को यातना के अलावा कुछ नहीं दिया। पुरुष दूसरी स्त्रियों से इश्क लड़ाते रहते है और अपनी पत्नियों को दुख देते हैं। गलती कोई करता है और परिणाम किसी और को भुगतना पड़ता है। **ऐसा ही एक परिदृश्य 'कुंतो' उपन्यास पात्र सुषमा और थुलथुल में देखने को मिलता है।**

सुषमा जयदेव की मौसेरी बहन है। जयदेव सुषमा को बचपन से चाहता था। सुषमा कुंतो उपन्यास की सहनायिका है। सुषमा बचपन से जयदेव के साथ खेली-कूदी और दोनों एक साथ बड़े हुए हैं। जयदेव का विवाह कुंतो के साथ हो जाता है। जयदेव सुषमा का विवाह ऐसी जगह करना चाहता था, जहाँ सुषमा खुश रहे और मेरी नजर में

करती रही। जयदेव उसका विवाह गिरीश से करवा देता है। गिरीश जयदेव का रिश्ते से भाई लगता है। शुरुआत में वह गिरीश के साथ बहुत खुश रही, लेकिन गिरीश का चक्कर उसकी मौसेरी बहिन से है। उसकी मौसेरी बहिन का विवाह हो चुका है। वह मीरपुर में रहती है। वह हर शनिवार को मौसेरी बहिन से मिलने मीरपुर जाता है। उसका कोई भरोसा नहीं है कि वह कब प्यार से बात करे, कब सुषमा का दिल तोड़ दे। वह सुषमा का बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखता है। सुषमा को अपने अन्दर से ऐसा महसूस होने लगा कि गिरीश ने उसको त्याग दिया हो। वह अन्दर से टूटती जा रही है। वह गिरीश को अपना चुकी थी, लेकिन उसने सुषमा को नहीं अपनाया था। लगाम गिरीश के हाथ में है। एकबार जब वह सुबह सोकर उठी, तब उसने देखा कि गिरीश बिस्तर पर नहीं है। उसने सभी जगह देखा, लेकिन उसे गिरीश नहीं मिला। तभी सुषमा की नजर पलंग के पास गई –

"पलंग के पास, तिपाई पर कागज का एक पुर्जा रखा था जिसे वह लिखकर छोड़ गया था।" हम एक-दूसरे के लिए नहीं बने हैं। इस विवाह को घसीटना भूल होगी।"२०५

वह सुषमा को पहाड़ी पर अकेला छोड़कर चला गया। वह हर शनिवार को मीरपुर जाता है। एक दिन सुषमा ने उससे मना किया कि आप वहाँ न जाएँ। हम आज प्रदर्शिनी देखने चलेंगे। गिरीश ने कहा-

"आप हमें कहीं भी जाने से नहीं रोकेंगी। हम आपको नहीं रोकेंगे।"२०६

सुषमा ने जब गिरीश से बहुत प्रार्थना की आप वहाँ न जाएँ। वह नहीं माना और हर शनिवार की तरह वहाँ जाने लगा। वह कुछ दूर आगे निकल ही गया था कि सुषमा ने उसका रास्ता रोक लिया। हम आपको जाने नहीं देंगे।

उसको इस बात का भी होश नहीं था कि मेरी साड़ी का पल्लू जमीन पर घिसटता रहा है। सुषमा और गिरीश के इस व्यवहार से रास्ते के लोग व दुकान के लोग देख रहे थे। उसने मुड़कर देखा कि उसे सभी लोग देख रहे हैं। गिरीश वहीं पर रुक गया –

"गिरीश बुत की तरह खड़ा था। निश्चेष्ट, कठोर, बिना कुछ कहे, बिना एक भी शब्द बोले, ज्यों-का-त्यों खड़ा था। उसके चेहरे की एक भी मांसपेशी में थिरकन तक नहीं आई, जबकि सुषमा पागलों की तरह बोलती जा रही थी। बैचेनी में उसने आगे बढ़कर गिरीश के बैग को पकड़ लिया और ज़मीन पर बैठ गई थी।

"मैं आपको नहीं जाने दूँगी। कहीं नहीं जाने दूँगी। लौट चलिए, घर लौट चलिए।" और वह उसका बैग खींचने लगी थी।

तभी गिरीश की ठंडी, समतल आवाज़ उसे सुनाई दी,"जो कुछ आप कर रही हैं, इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। आप घर लौट जाइए।"

बैग को थामे, सुषमा का हाथ काँप-सा गया। गिरीश की आवाज़ में वही ठंडापन, वैसी ही कठोरता थी जैसी पहले सुनने को मिलती थी जब वह अपनी दिनचर्या के बारे में अपना कोई निर्णय सुनाया करता था। फ़र्क इतना था कि तब उसके होंठों पर हल्की-सी मुस्कान रहती थी जबकि इस समय

उसका चेहरा पत्थर की तरह कठोर हो रहा था, केवल पैनी आँखें, निश्चेष्ट-सी, सुषमा की ओर देखे

जा रही थीं।"२०७

थुलथुल धनराज की पत्नी है। प्रोफ़ेस्साब की भाभी है। प्रोफ़ेस्साब पाँच भाई हैं। उनके माता-पिता का

स्वर्गवास हो चुका था। धनराज शादी के २ साल बाद सिंगापुर पढ़ने गया था। वहाँ से धनराज सात साल में लौटा था।

धनराज की सिंगापुर में एक प्रेमिका है, जिसका नाम डॉ० मोना है। धनराज जब अपने घर वापस आता है, तब उसे

मोना की बहुत याद आती है। डॉ० मोना के हर गुरुवार को पत्र आते हैं। उसके पत्र धनराज की बेचैनी को बढ़ाते हैं।

थुलथुल मोना को गाली देने लगती है कि इस मरजाणी ने मेरे पति पर जादू कर दिया है। धनराज थुलथुल को बहुत

दुःख देने लगता है। वह कमरे के अन्दर रोने लगती है। प्रोफ़ेस्साब को जब यह आवाज़ सुनाई देती है, तब उनसे रहा

नहीं जाता है। प्रोफ़ेस्साब ने अपना डंडा उठाया और धनराज के कमरे को ठकोर –

"बस बहू, चुप हो जाओ। बहुत हो गया। किसको सुनाने के लिए इतना रो रही हो? अब

तुम्हारी आवाज़ बाहर न निकले।"२०८

बड़े भाई जब पढ़ने के लिए बाहर गए, तब बड़ी भाभी ने भी हाथ पैर पटके। छोटी बच्ची को लेकर मायके

चल पड़ती थी। तब प्रोफ़ेस्साब के पिताजी जिन्दा थे। वे घर की बागडोर सँभाले रहते थे। एक दिन बड़ी भाभी तख्त पर

दोनों टाँगें चढ़ाए बैठी विसूर रही थी। उसी समय बाबूजी ने चिल्लाकर भाभी से यह कहा –

"बहू से कह दो, यहाँ यह सब नहीं चलेगा। यहाँ पर रहना है तो इसी घर की होकर रहेगी।

इसके बाद मेरे कान में इसकी आवाज़ नहीं पड़े।"२०९

प्रोफ़ेस्साब धनराज को बहुत समझाते हैं कि जब से तुम गए हो, तब से वह तुम्हारी पलकें बिछाए इन्तज़ार

करती रही है। वह जिंदा लाश की तरह जी रही है। धनराज ने प्रोफ़ेस्साब से कहा –

"यह भी कुदरत का कोई क़ानून ही होगा, भइया, जिसके तहत थुलथुल का ब्याह मेरे साथ

हुआ। किसी दूसरे के साथ ब्याही गई होती ते शायद सुखी होती। गलत आदमी के साथ उसे बाँध दिया

गया तो बेचैन रहती है, रोती-बिलखती है।..............पर जहाँ तक कोशिश का सवाल है, मैंने कोई

कोशिश उठा नहीं रखी है।"२१०

धनराज एक दिन इंगलिश पिच्चर देखकर आया। उसने अपनी पत्नी को बाँहों में भर लिया। उसके साथ

रात गुजारी। जब थुलथुल गर्भवती हो गई, तब उसने यह बात पति को बताई। पति पत्नी पर क्रोधित हुआ और उसे

अपने विस्तर से खदेड़कर बाहर निकाल दिया। वह बहुत रोई। उसने अपने अन्दर की भड़ास निकालकर धनराज को

खूब सुनाया –

"मैं कहाँ जाऊँगी, मुझे तो जीना भी यहीं है और मरना भी यहीं है।" फिर सहसा ही उसे

घोर अपमान का भास हुआ। बिस्तर पर से यों खदेड़ दिए जाने पर उसने आहत महसूस किया था। कहीं

उसके दिल की गहराइयों में तीखा दर्द-सा उठा जिसे वह सहन नहीं कर पाई। उसे लगा जैसे बिना किसी

अपराध के, उस पर कोड़े बरसाए जा रहे हैं। उसका दिल जैसे छलनी हो गया। अपनी पत्नी के साथ

यों भी कोई व्यवहार करता है? धनराज ने उसकी गरिमा पर, स्त्री के नाते उसके आत्म-सम्मान पर प्रहार किया था। मेरे पेट में तुम्हारा बच्चा है, जी। मुझे भी मार दो और उसे भी मार दो और लौट जाओ अपनी उस रखैल के पास। मैं तुम्हें कहाँ रोकती हूँ।"२११

थुलथुल अपने बाल नोचने लगी और उसने कहा -

"तुम लौट क्यों आए हो? उसी के पास चैन से रहते। मैंने तो तुम्हें नहीं बुलाया था। मेरी भी जैसे-तैसे कट जाती।"

वह दीवार पर अपना सिर पटकने लगती है -

"हे भगवान, मुझे उठा लो! हे रब्बजी, मुझे उठा लो ! मुझे उठा लो !"२१२

एक दिन थुलथुल के दुपट्टे में आग लग जाती है और वह मर जाती है।

'तमस' -

तमस उपन्यास के पात्र लीजा व प्रकाशो में नारी संचेतना का चित्रण कई स्थानों पर देखने को मिलता है।

लीजा डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड की पत्नी है। रिचर्ड एक अंग्रेजी ऑफीसर है। वह दिन भर काम में व्यस्त रहता है। वह लीजा को बहुत चाहता है। उसकी पत्नी विलायत की रहने वाली है। उसे भारत में कम अच्छा लगता है। वह विलायत से छः महीने में लौटी है। रिचर्ड जब ऑफिस से रात को थककर आता है, तब वह अपने काम में इतना व्यस्त रहता है कि वह लीजा को बिल्कुल समय नहीं दे पाता है। वह लीजा को जगह-जगह घुमाने का प्रयास करता है कि वह खुश रहे। वह अपने मन में यह विचार करता है कि मेरी और लीजा की पट पाएगी या नहीं -

"दोनों के ही मन में अन्दर-ही-अन्दर इस बात का खटका भी था कि वह ज्यादा देर चल पाएगा या नहीं, चाहते हुए भी निभ पाएगा या नहीं।"२१३

लीजा बहुत ही निर्मल स्वभाव की स्त्री थी। रिचर्ड अहंकारी पुरुष था। जब शहर में हिन्दू और मुसलमानों का दंगा होता, तब लीजा ने कहा कि तुम चाहो तो दंगे को रुकवा सकते हो, लेकिन रिचर्ड ने कहा कि तुम्हें अपनी समस्या स्वयं सुलझानी चाहिए -

"मैं उनसे कहूँगा तुम्हारे धर्म के मामले तुम्हारे निजी मामले हैं, इन्हें तुम्हें खुद सुलझाना चाहिए। तुमने मुझे यही बताया था न रिचर्ड?"२१४

लीजा हमेशा प्रेम का वातावरण चाहती है। जब वह विलायत से लौटी थी। उसने अपने अन्दर बहुत ही सपने संजोए थे। वह भारत आकर बहुत घूमेगी। वह पति की रूचि में भाग लेगी। वह कभी शराब नहीं पिएगी। वह भारत की दस्तकारी के नमूने इकट्ठे करेगी और तस्वीरें उतारेगी, शेर की पीठ पर बैठकर तस्वीर खिंचवाएगी साड़ी पहनकर घूमा करेगी, लेकिन उसे यहाँ सिर्फ मिली घर की चार दीवारी। रिचर्ड अपनी किताबों में मस्त रहता है। लीजा गौतम के बुतों को देखकर हैरान हो जाती है। वह अपना दिन काटने के लिए शराब पीने लगती है। रिचर्ड ने जब लीजा

से विवाह किया था, तब उसका फर्ज बनता था कि वह उसे खुश रखे। उसे थोड़ा बहुत समय दे। उसकी भावनाओं की कद्र करो। उसके पति रिचर्ड का घर बहुत बड़ा था। उसके घर में बहुत बड़े-बड़े साँप निकलते थे। साँप कभी अलमारी में घुस जाते हैं। वह डर के मारे अलमारी तक नहीं खोलती थी। उसको बुतों से नफरत थी। उसको शराब की आदत ज्यादा पड़ गई, जब रिचर्ड ऑफिस से लौटता, तब वह लीजा को सोफे पर सोता हुआ पाता है। उसने लीजा से कहा कि खाना खा लो। वह कुछ नहीं बोली। जब रिचर्ड लीजा को सोफे पर से उठाता है, तब वह लीजा के कपड़े गीले पाता है। सोफे पर से पेशाब की तीखी गन्ध आ रही थी, जिससे रिचर्ड का मन कुण्ठा और वितृष्णा से भर गया। उसे लीजा अब मांस की गुथली व अनाकर्षक लग रही थी। वह मोटी होती जा रही थी। रिचर्ड ने एक जगह सुना था कि एक कमिश्नर की पत्नी थी। वह ऐसी बोरियत का शिकार बनी थी। वह भी रात-दिन नशे में रहती या हँसते-हँसते या रोते रोते बिस्तर गीले करती थी। अन्त में कमिश्नर की पत्नी ने उसे छोड़ दिया और एक फौजी से विवाह कर लिया। उसे भी कभी-कभी ऐसा एक लगने लगा था कि हमारे साथ भी कहीं ऐसा न हो जाए।

वास्तव में देखा जाए तो नारी का शोषण हर जगह होता है। उसे न तो अपने पिता के घर सुख मिलता है और न पति के घर में। पिता के घर भी वह शोषण का शिकार होती है। उसे घर से बाहर नहीं दिया जाता है। उसकी हर खुशियों पर पानी फेर दिया जाता है। पति के घर बंधन हैं उन्होंने जो कह दिया बस वही करो। औरत का मतलब ही है त्याग। अपनी खुशियों का गला घोंटकर औरों यानि दूसरों के लिए जिओ। इसी का शिकार लीजा होती है। रिचर्ड अपने मन में यह विचार कर रहा है कि मैं अब लीजा का क्या करूँ? वह मेरे साथ अब सैट नहीं हो पा रही है। मैं इससे अपना विवाह का रिश्ता बनाए रखूँ या तोड़ दूँ,

"रिचर्ड के मन में लीजा के प्रति घृणा का भाव भी उठता, जितना ज़्यादा वह नशा करने लगी थी, उतना ही ज्यादा वह उसके लिए अनाकर्षक होती जा रही थी। मांस का लोथड़ा बनती जा रही थी। इस तरह का रिश्ता ज्यादा दिन नहीं चल सकता। रिचर्ड की आँखें लीजा के चेहरे पर ठिठकी रहीं। लीजा के प्रति उसकी भावनाएँ भी स्पष्ट नहीं थीं। इस लड़की से विवाह-सम्बन्ध बनाए रखे या तोड़ दे।"२१५

संसार में सृष्टि की रचना, गृहस्थ धर्म के पालन आदि विभिन्न दृष्टियों से पुरूषों के साथ ही नारी का विशिष्ट महत्व है। हमारे शास्त्रों में नारी को देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। मनु का कथन है, **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः'** जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं, लेकिन आज नारी को पूजनीय न मानकर उसका शोषण किया जा रहा है।

प्रकाशो एक निर्धन ब्राह्मण की बेटी है। अल्लाहरक्खा उसे बेहत चाहता है। जब वह लकड़ियाँ चुनती थी, तब अल्लाहरक्खा उसके ऊपर कंकड़ फेंकता था। प्रकाशो डर के मारे अपने पिता से कुछ भी नहीं कहती थी कि ये मुझे पत्थर मारता हैं। वह अपने पिता व अल्लाहरक्खा दोनों से डरती है। प्रकाशो को लाचार समझकर अल्लाहरक्खा उसे अपने घर उठा ले जाता और उससे निकाह कर लेता है। प्रकाशो अल्लाहरक्खा को नहीं चाहती थी, लेकिन मजबूरन उसे अल्लाहरक्खा की पत्नी बनना पड़ा। वह जानती थी कि अल्लाहरक्खा उसे उठाके लाया। एक मुस्लिम और हिन्दू

के इस निकाह को हिन्दू समाज कभी मान्यता नहीं देगा। प्रकाशो के माता-पिता इतने गरीब हैं कि वे उसका बोझ उठा नहीं पाएँगे। समाज में ताने मिलेंगे कि एक मुसलमान उसे अपने घर पर रखे हुए हैं। समाज में एक स्त्री की स्थिति बड़ी दयनीय है। गलती अल्लाहरक्खा ने की और परिणाम प्रकाशो को भुगतना पड़ा। उसका अपना घर है, पर वह अल्लाहरक्खा के हाथ बिक चुकी थी। वह मजबूरी में अल्लाहरक्खा को स्वीकार कर लेती है -

"दोनों एक-दूसरे के साथ खुलने लगे थे। अल्लाहरक्खा ने आगे बढ़कर उसे बाँहों में भर लिया। डरी-सहमी रहते हुए भी प्रकाशो इस अनूठे अनुभव में भाग लेने लगी थी, उसे ग्रहण-सी करने लगी थी। उसे लगता जैसे अतीत पीछे छूटता जा रहा है और वर्तमान बाँहें फैलाए उसे आलिंगन में भरने के लिए उतावला हो रहा है। स्थिति इतनी बदल गई थी कि उसके प्रसंगों में प्रकाशो के माँ-बाप असंगत होते जा रहे थे।"२१६

(६.६) (ख) कहानी -

भीष्मजी ने अपनी अनेक कहानियों में नारी संचेतना का वर्णन किया है।

'झूमर'-

संसार में सृष्टि की रचना, गृहस्थ धर्म के पालन आदि विभिन्न दृष्टियों से पुरूषों के साथ ही नारी का विशिष्ट महत्व है। हमारे शास्त्र में तो नारी को देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। विद्या, धन और शक्ति की देवी के प्रतीक के रूप में सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा की पूजा की जाती है।

गार्गी जब जनक के दरबार में आई। गार्गी ने शास्त्र के लिए जनक को ललकारा। सभी कहने लगे कि एक अबला जनक को ललकारती है। गार्गी ने अपनी मूँछें मड़ोरते हुए कहा-

"मैं अबला नहीं हूँ; मैं सबला हूँ। अबला तेरा बाप होगा।"

नारी को अबला न मानकर सबला माना गया है। उसे जगदम्बा, सावित्री, अनुसुईया, इंदिरा सीता माना गया है। आज की नारी इतनी शिक्षित हो चुकी है कि वह चन्द्रमा तक पहुँच चुकी है। उसका नाम कल्पना चावला है जो आज हमारे बीच नहीं है।

लेकिन आज के इस बदलते परिदृश्य में नारी का विकास केवल थोड़ी जगह हुआ है। वह भी पूर्णतः नहीं। जब नारी जन्म लेती है। उसे शुरू से ही नम्र, शान्त, अनाक्रामक होने की शिक्षा दी जाती है। **तू लड़की है, तू भाई को क्यों मारती है,'तू झगड़ालू बनेगी तो ससुराल में हमारी नाक कटाएगी।** यह सब कहकर लड़कियों को गुस्सा पीना सिखाया जाता है। निम्न और मध्य वर्ग की लड़कियों को भी शारीरिक शिक्षा व व्यायाम नहीं करवाया जाता है, जिससे वे शरीर से कमजोर रहती हैं। उन्हें दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है तथा सब कुछ सहने की शिक्षा दी जाती है।

अगर कोई औरत निर्भय, आज़ाद, हिम्मतवाली होती है और पुरूषों से मुकाबला करती है। उसे मर्द का रूप दिया जाता है जैसे **'खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसी वाली रानी थी'**। इंदिरा गाँधी के लिए कहा जाता **'मंत्री मंडल में सिर्फ वही एक मर्द थीं'**।

लेकिन भीष्म साहनी की नारी कमला यहाँ पर अबला न होकर सबला मानी गई। वह आज के दुःखों से

घबराती नहीं है। बल्कि उसका सामना करती है। अर्जुनदास को अपने कामों से फुर्सत ही नहीं है। उसने विवाह कर

लिया है। उसके दो बच्चे हैं। वह न तो अपना पारिवारिक दायित्व निभाता और न ही कुछ कमाकर लाता है। जब नाटकों

की मंडली में बैठे सभी साथी अपना-अपना कुछ न कुछ अनुभव सुनाते हैं, तब कमला से रहा नहीं जाता है। वह कहती

है-

“तुम तो दिन भर बैलगाड़ी पर बैठे गीत गा सकते थे, शहर भर की सैर कर सकते थे।

तुम्हें **में जो मिली हुई थी, घर में पिसनेवाली।”२१७**

अर्जुनदास को जेल की २ साल की सजा हो गई थी। कमला पाँच कोस चलकर उससे मिलने जाती थी।

घर में खाने को कुछ भी नहीं था। बच्चे भूख से तड़फ रहे थे। वह प्राइमरी स्कूल में पढ़ाने जाती थी। उसने अपने पति

से कहा- **“अब तुम स्वतंन्त्र हो, जो मन में आये करो।”२१८**

अर्जुनदास को पत्नी के ताने बहुत लगते थे। वह चैन से नहीं रह पाता था। कमला उसे अपने बच्चों

का वास्ता देती थी, लेकिन वह टस से मस नहीं होता था। एक बार जब बेटी को खसरा हो गया। वह अपने पति का

इन्तज़ार करती रही, लेकिन वह नहीं आया-

“जब कठिनाई बढ़ जाती तो वह रो देती पर मन ही मन उसने अपनी नियति को स्वीकार

कर लिया था और नियति को स्वीकारने का एक परिणाम यह भी हुआ था कि कमला की भावनाओं में

से कटुता और झल्लाहट कम होने लगी थी और कभी-कभी उसके मन में अपने प्रति सहानुभूति-सी भी

उठने लगी थी। करता है, पर कोई बुरा काम तो नहीं करता, अपनी भूख-प्यास भी तो भूले हुए हैं।”२१६

एक बार जब देवराज अर्जुनदास से नौकरी के लिए कहता है। अर्जुनदास नौकरी से मना कर देता है।

जब वह अपनी पत्नी को नौकरी के बारे में बताता है। पत्नी ने कहा-

तुम तो आदर्शवाद के घोड़े पर

“तुम्हें घर-परिवार की चिंता होती तो तुम नौकरी करते।

नहीं टिकते थे।”२२०

सवार तीसमारखाँ बने घूम रहे थे। जमीन पर तुम्हारे पाँव ही

अर्जुनदास ने एक नाटक देखा था। जब नाटक वाला झोली फैलाए दर्शकों से कुछ माँगता है, तब एक औरत

अपने कान का झूमर उसकी झोली में डाल देती है। उसी दिन से अर्जुनदास ने नाटक में भाग लेना शुरू कर दिया था।

इसका परिणाम कमला को भुगतना पड़ा था। अगर उस दिन उस औरत ने झूमर न दिया होता तो उसका जीवन न

बदलता। अमरजीत को अपनी पत्नी का यह वाक्य लग गया-

“तुम्हें ब्याह नहीं करना चाहिए था। तुम-जैसे लोग ब्याह करके अपने घरवालों को भी दुखी

करते हैं और खुद भी दुखी होते हैं...”२२१

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पुरूष प्रधान देश में हर दम नारी को ही समझौता करना पड़ता है। चाहे

वह पिसे चाहे उसे कुछ भी हो। जब नारी की जरूरत पढ़ती, तब पुरुष हमदर्दी दिखाने लगता है। उसके दुःख को महसूस

करने लगता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य साहनी जी ने अपनी कहानी झूमर में दिखाया है। कमला को अर्जुनदास

के सामने हर परिस्थिति से समझौता करना पढ़ और कमला को क्य मिला, इसलिए कहा गया है-

"नर-कृत शास्त्रों के बन्धन, सब है नारी ही को लेकर

अपने लिए सभी सुविधाएँ, पहले ही कर बैठे नर ।।"२२२

'आवाजें'-

भारत में नारी को सावित्री, सती अनुसुईया तथा सीता माना गया है। सती अनुसुईया ने अपने सतीत्व के बल पर ब्रह्मा, विष्णु महेश को ६-६ महीने के बालक बना दिए थे। सावित्री यमराज से अपने पति को जीवित ले आई थीं। सीता माता ने धोबी के कहने पर अग्नि परीक्षा दी थी, लेकिन आज के समाज में पुरूषों ने कभी भी अग्नि परीक्षा नहीं दी। नारी को अबला मानकर असका तिरस्कार किया। लेकिन गार्गी जैसी १७ वर्ष की विद्वान लड़की ने राजा जनक को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। सभा में उपस्थित लोगों ने कहा कि एक अबला राजा जनक को ललकारती है। गार्गी ने भरी सभा में अपनी मूँछें मड़ोरते हुए कहा-

"मैं अबला नहीं मैं सबला हूँ। अबला होगा तेरा बाप।"

मनुस्मृति में नारियों की पूजा की गई। साहनी जी ने अपनी कहानी 'आवाजें' के माध्यम से बताया कि नारी को हिम्मतवाला बनना चाहिए। कायर नहीं। देवकी का पति छोड़कर चला गया था। उसके दो बच्चे थे। ऊपर से सास घर से निकालने पर तुली हुई थी। नीचे का पूरा पोरसन सास ने किराए पर दे दिया। देवकी घबराने लगी है। उसने हिम्मत से काम लिया। देवकी समझ गई थी कि अब रास्ता कहीं से निकल नहीं रहा है। वह अन्दर से कठोर हो गई। उसने कहा कि देखे तो मुझे निकालकर। मैं उल्टे इसे और इसके बेटे को जेल भिजवा दूँगी-

"अब या तो नीचे पाताल में या फिर अपने बल-बूते अपने पाँवों पर।"२२३

देवकी की पक्की नौकरी लग जाने के कारण उसने अपनी सास के छक्के छुड़ा दिए, इसलिए किसी ने कहा है-

"मैं छुई मुई का पौधा नहीं, जो छूने से मुरझा जाऊँ।

मैं वो माई का लाल नहीं, जो हौवा से डर जाऊँ।।"२२४

सरला इंजीनियर अहूजा की बेटी थी। उसने विवाह नहीं किया था। पिताजी का स्वर्गवास हो चुका था। दोनों भाई इंग्लैंड में रहते थे। माता का स्वर्गवास हो चुका था। वह अपना एकाकीपन अपनी सहेली के पास जाकर दूर करती है। वह जिस घर में रहती है। उसके घर में किराएदार रहते थे। जब सरला घर से बाहर निकलती थी। उसके किराएदार उसके ऊपर कूड़ा डालते थे। सरला उन लोगों के मुँह नहीं लगती थी-

"ये लोग हमारे घर के सामने कमीना हरकत करता, हम सब जानता, पर हम उनको मुँह नहीं लगाता।"२२५

सरला को पड़ोस वाले परेशान करते थे। सरला किसी से कुछ नहीं बोलती थी। सरला ने कहा कि उनसे न बोलना ही यही मेरा सुरक्षा कवच है। जिसे वे जिंदा रखे हुए है। अन्य लोगों का कहना है-

"अगर सरला बीबी अपनी भारतीयता बनाए रखती और चिल्लाती, झगड़ती, हाथ पसार-पसारकर गालियाँ देती तब शायद कोहली के कारिंदे उसकी खिड़की के नीचे 'कमीना हरकत' नहीं करते। चंडी का रूप ही शायद स्त्री का सबसे बड़ा सुरक्षा-कवच है। मुहल्ले में यहाँ-वहाँ जितनी भी स्त्रियाँ चंडी का रूप धारण किए हुए हैं, सभी ज्यादा सुरक्षित हैं।"२२६

(६.६) (ग) नाटक -

'माधवी' -

"नारी पुरूष की पूर्णता है। सृष्टि की मूल है। उसके अभाव में मानवता की कल्पना भी असम्भव है। वह माँ, पत्नी, प्रेयसी, पुत्री, देवी, दानवी भी है। वह पतिव्रत का अदभुत आदर्श प्रस्तुत करने वाली सती भी है, कामान्ध कुटिलता फुकारती विष कन्या भी है। नाना रूपों में मानव-जीवन को सदैव से प्रभावित करने वाली नारी एक अनसूझ पहेली रही है, पर उसके सम्बन्ध में यह सबसे बड़ा सत्य है कि वह जीवन रथ का एक चक्र है जिसकी उपेक्षा करके मानव-जीवन एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता है।"२२७

स्त्री मुक्ति के सवसे वड़े मसीहा डॉ. राम मनोहर लोहिया को माना जाता है। उन्होंने नर और नारी के समानता की बात कही थी। मेरी दृष्टि में स्त्री मुक्ति का स्वप्न तब तक असंभव है, जब तक वह भौतिक स्तर पर आत्मनिर्भर न हो। इसके लिए हर स्त्री का शिक्षित होना परम आवश्यक है। नारी ने हमेशा दुख सहकर अपने प्रेमी, पति भाई, पिता का साथ दिया। जैसे-दशरथ के साथ कैकयी के युद्ध में जाने और रथ के पहिए की धुरी टूट जाने पर अपनी शक्ति से उसे रोके रखने का प्रयत्न किया। रामायण का एक प्रसंग आता है, जब राम बन को जाने लगे, तब सीता ने कहा था हे राम ! मुझे भी अपने संग ले चलो, वन में मैं तुम्हारे आगे-आगे चलूँगी और तुम्हारे रास्ते में पड़ने वाले काँटे बुहारती चली जाऊँगी। हे राम! मुझे इस सेवा से वंचित मत करो, यही मेरी साधना है, यही मेरा पुण्य है। शिव की कल्पना 'अर्द्ध-नारीश्वर' के रूप में हुई है। नारी को गृहलक्ष्मी स्वीकार करते हुए यह घोषित किया गया-

'गृहहि गृहंणीहीनम् अरण्य सदृशं मतम्' गृहणी विहीन धर निर्जन वन के समान है। प्राचीन भारत की नारी देवी है। 'मातृ देवोभव' उस युग की प्रथम शिक्षा है।"२२८

प्राचीनकाल में नारी को देवी माना जाता था। आज नारी को देवी न मानकर धर्म की आड़ में उसका शोषण हो रहा है। यह सच है कि विवाह के पहले नारी पिता के संरक्षण में, विवाह के बाद पति, फिर पुत्र के संरक्षण में रहती है, लेकिन आज उसका शोषण घर से ही शुरू हो रहा है। वह पिता के संरक्षण में भी स्वंय को असुरक्षित मानती हैं। हर पिता अपनी बेटी की कल्याण-कामना करता है। उसकी सुख सविधाओं का ध्यान रखता है। भीष्मसाहनी ने अपने नाटकों में नारी संचेतना का चित्रण किया है। नारी संचेतना का एक ऐसा ही चित्रण 'माधवी' में द्रष्टव्य है।

पिता चाहे कितना भी निर्धन हो, लेकिन अपनी बेटी को कभी किसी अनजान व्यक्ति को दान में नहीं देता है, लेकिन भीष्मजी ने एक ऐसे पिता व प्रेमी का चित्रण किया है, जो अपने यश की खातिर अपनी बेटी को किसी अनजान

व्यक्ति को दान में दे देता हैं।

“अज्ञात नहीं है कि अस्सी के दशक से हिन्दी-साहित्य में स्त्री विमर्श की आवाज व्यापक धरातल पर उठने लगी। इसी क्रम में भीष्म ने 'माधवी' नाटक (१९८४) लिखकर स्त्री-विमर्श को एक नई दिशा दी। उन्हें ऐसा लगा कि अतीत की पुरूषवादी रूढ़ियों को कामनी, रमणी और पुनः-पुनः गर्भ-संभवा' परिधि से मुक्त नहीं होने दे रही है। मनुस्मृति में कह गया कि 'स्वभाव एवं नारीणां नराणां इह दूषणामृ' २/१३ अर्थात् भारतीय समाज की स्त्रियाँ मर्दों को प्रदूषित करने का स्वभाव लेकर ही पैदा होती हैं। 'माधवी' नाटक स्त्रियों के सन्दर्भ में तथाकथित धार्मिक निर्वचनों की कुत्सा को जानने और साथ ही 'स्त्री-अहं' का सम्बोधित करने के लिए लिखा गया था।”२२९

माधवी एक सर्वगुणसम्पन्न आदर्शों वाली स्त्री है। उसके पिता ययाति है। अगर इतिहास उठाकर देखा जाए तो माधवी का स्थान सीता व द्रौपदी माँ की तरह है। जिस प्रकार सीता माता अपने कर्तव्य से पीछे कभी नहीं हटी। उसीप्रकार माधवी ने भी अपने माता-पिता के प्रति कर्तव्य, अपने गुरू के प्रति कर्तव्य, अपने धर्म के प्रति और अपने वचन देने के प्रति कर्तव्य निभाया। इसी कर्तव्य की खातिर माधवी पिता ययाति ने बेटी माधवी को दान में दे दिया। ययाति के पास गालव नाम का एक युवक आता है। वह राजा से ८०० अश्वमेधी घोड़े माँगता है। राजा घोड़े देने से मना कर देते हैं। उन्होंने कहा कि मैं अपना राजपाट छोड़कर वन में विचरण करने आया हूँ। मेरे पास घोड़े नहीं हैं। गालव बोला कि मैं जहाँ भी गया सभी ने आपका नाम बताया कि राजा ययाति बहुत दानवीर हैं। आज तक उनके द्वार से कभी कोई खाली हाथ नहीं गया। मैं शायद गलत जगह आ गया हूँ। राजा ने जब यह बात सुनी, उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँची। राजा की पुत्री विशेष लक्षणों वाली है। माधवी के पिता उसे गालव को बिना सोचे समझे दान में दे देते हैं। बेटी ने पिता से कहा कि यदि आज मेरी माँ होती तो शायद ऐसा कभी नहीं करती। ययाति ने कहा कि बेटी इस समय मेरा धर्म ही सर्वोपरि है, माधवी को चिर कौमार्य का वर प्राप्त है। गालव माधवी को पाकर बहुत ही प्रसन्न होता है कि इसके गर्भ से एक चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न होगा और बदले में कोई भी राजा मुझे घोड़े दे देगा। माधवी गालव से प्रेम करने लगी थी। गालव भी माधवी की सुन्दरता और चक्रवर्ती पुत्र की लालसा में उसको चाहने लगा था। गालव यह नहीं चाहता था कि माधवी किसी राजा के रनिवास में रहे, लेकिन गालव के सामने अपने गुरू की गुरूदक्षिणा का प्रश्न उपस्थित था। गालव ने कहा कि मैं कहाँ आत्महत्या करने जा रहा था; कहाँ माधवी मेरा भाग्य बनकर आई। माधवी ने गालव से कहा कि तुम्हें अपनी जिद छोड़ देनी चाहिए और गुरू से माफी माँगनी चाहिए। गालव ने कहा कि अगर गुरू ने हमें माफ कर दिया तो तुम अपने पिता के यहाँ जाओगी। वह अपने मन में सोचती है कि मैं दान में दी जा चुकी हूँ। मुझे तो पता भी नहीं कि मेरा क्या होगा?

“मैं दान में दी जा चुकी हूँ, गालव। पिताजी को तो इस बात की अपेक्षा भी नहीं है कि मैं उनके पास लौट आऊँगी। दान में दी हुई चीज भी कभी वापिस ली जाती है?”२३०

माधवी हमेशा स्वंय को अकेला महसूस करती थी। उसका अपना अब कोई नहीं था। वह गालव को ही अपना सब कुछ मानने लगी है। वह हमेशा अपने मन में यह विचार करती है कि मैं गालव की गुरूदक्षिणा पूरी करके स्वतन्त्र हो जाऊँगी और उसको अपना पति बनाऊँगी। इसी भावना को लेकर उसने अपना पूरा यौवन गालव की गुरू

दक्षिणा में लुटा दिया। वह तीन राजाओं के रनिवास में रहती है। सभी से उसको एक-एक पुत्र उत्पन्न होता है। ऋषि विश्वामित्र के पास ६०० घोड़े पहुँच जाते हैं। पूरे आर्यावर्त में केवल ८०० घोड़े हैं। शेष २०० घोड़ों विश्वामित्र के पास थे। माधवी ने विश्वामित्र से कहा कि शेष २०० घोड़ों के लिए आप मुझे अपने पास रख लें, जिससे गालव गुरूदक्षिणा के भार से मुक्त हो जाए।

साहनी जी ने इस नाटक में रहने वाले साधुओं, संन्यासियों, दीक्षा-गुरूओं, अन्तेवासियों और मुनिकुमारों में गहरी चिन्ता व्यक्त की है। ये आश्रमधर्मी महात्मा, कर्तव्यपरायणता, मर्यादा, धर्म और उपदेश वृति की आड़ में नारियों का यौन-शोषण करने में बलात्कारियों से भी दो कदम आगे होते हैं। झूठे यश का लोभ, प्रसिद्धि की लोक वासना, गेरूआवस्त्रधारी, राजनीतिक अधिकार की दुर्दमनीय कामनाएँ, सब कुछ किसी अपराधी की तरह है। गालव की एक हठ ने सभी को संशय में डाल दिया। वह जब अपने पुत्रों को जन्म देती है, तब माधवी का मन गालव के कर्तव्य से हटकर बच्चे की ममता में फँस जाता है। गालव का माधवी के प्रति यह कथन है-

"मैं नहीं जानता था कि सन्तान पैदा हो जाने पर तुम इतनी दुर्बल हो जाओगी। इसीलिए शायद स्त्रियाँ जोखिम के काम नहीं कर सकती, किसी बड़े काम का दायित्व वहन नहीं कर सकतीं।"२३१

माधवी ने चार बच्चों को जन्म दिया उसने अपना यौवन गालव के वचन के लिए अर्पित कर दिया। पर माधवी को क्या मिला,? जब गालव की गुरू दक्षिणा पूरी हो जाती है, तब वह माधवी को देखकर घबरा जाता है। माधवी ने गालव से कहा कि तुम मुझे देखकर क्यों चौंक गए? मैं बूढ़ी हो गई हूँ इसलिए । उसने कहा कि तम्हें तो चिर कौमार्य का वर प्राप्त है, फिर तुमने अनुष्ठान क्यों नहीं किया? उसने कहा कि मैंने सोचा कि अब तुमसे क्या छिपाना? गालव ने कहा कि माधवी अब तुम स्वतन्त्र हो।. स्वंयवर में बहुत से राजा आए हैं। अब तुम जिसे चाहो, अपना पति बना लो। माधवी यह सुनकर चौंक जाती है कि तुम मुझे छोड़कर जा रहे हो। तुमने मेरे यौवन की आहुति देकर अपनी गुरू दक्षिणा जुटाई है। उसने कहा कि मैं तुम्हें अपनी पत्नी नहीं बना सकता। तुम मेरे गुरू के आश्रम में रह चुकी हो। इस समय मेरा कर्तव्य यही है। माधवी ने कहा-

"चलते नहीं, दूसरों को चलाते हैं, गालव। यही तो विडम्बना है और संसार तुम्हें ही तपस्वी और साधक कहेगा, मेरे पिता को दानवीर कहेगा और मुझे? चंचल वृत्ति की नारी, जिसका विश्वास नहीं किया जा सकता। यही ना......?"२३२

माधवी ने कहा कि तुम तो आदर्शों और कर्तव्यों के पुजारी थे। तुम रूप के पुजारी कब से हो गए। गालव बार-बार माधवी से अनुष्ठान करने को कहता है, पर माधवी मना कर देती है। वह गालव की छिपी हुई वृतियों को परख लेती है। वह गालव से कहती है कि तुमने केवल एक ही व्यक्ति से प्रेम किया है और वह अपने आप से, पर मैं तुम्हें पहचानते हुए भी नहीं पहचान पाई। **"मैं सारा वक्त यही समझती रही कि गालव सच्ची साधना और निष्ठावाला व्यक्ति है। तुम भी गुरूजनों जैसे ही निकले, गालव..."२३३**

माधवी गालव को छोड़कर वहाँ से जाने लगती है। वह कहती है-

"संसार बड़ा विशाल है, गालव, उसमें निश्चय ही मेरे लिए कोई स्थान होगा।

माधवी द्वार की ओर बढ़ जाती है। वहाँ से मुड़कर -

तुम जाओ, गालव, गुरूजन तुम्हारी राह देख रहे हैं। युग-युगों तक तुम्हें मेरा आशीर्वाद मिलता रहे। मैंने अपनी भूमिका निभा दी....''२३४

गालव अपनी गुरुदक्षिणा में भले ही पास हो गया हो, लेकिन उसके अन्दर व्यावहारिक ज्ञान बिल्कुल नहीं था। माधवी सरल स्वभाव वाली स्त्री जरूर है, लेकिन बेवकूफ नहीं है। वह गालव की लैकिक ऐषणाओं को दूर तक जानती है और उसके प्रति अपनी प्रेमासक्ति को भी, लेकिन क़िसी भी मनोवृत्ति को वह विवेक पर आच्छादित नहीं होने देती है। वह अब स्वतन्त्र है। वह परम्परा एवं व्यवस्था के दबावों के वशीभूत अपनी निजता पर कृत्रिमता का आरोपण कर पति पाने की रीति का विरोध करते हुए वह उस पुरूष का वरण करना चाहती है जो देह के साथ खिलवाड़ करने की अपेक्षा उसके मानसिक-वैचारिक जगत का हमसफर बन सकें।

साहनीजी ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि नारी के पास कैसी भी परिस्थितियाँ हो, कैसी भी समस्याएँ हो उसे अपनी मुक्ति का रास्ता स्वयं खोजना चाहिए। उसमें मुसीबतों का सामना करने की हिम्मत होनी चाहिए। उसे अपने मन से यह विचार निकाल देना चाहिए कि मैं असहाय, अवला हूँ। मेरा इस जीवन में कोई नहीं है। उसे अपने विचारों में परिवर्तन लाना चाहिए और महारानी लक्ष्मीवाई, मीरा, सावित्री, सती अनुसुईया जैसे विचारों को ध्यान में लाना चाहिए। इंदिरागाँधी के लिए कहा जाता था कि-

''मंत्रिमण्डल में सिर्फ वही एक मर्द थी।''२३५

कहा जाता है कि ईश्वर उसी की मदद करता है, जो अपनी मदद स्वंय करता है। माधवी अगर बुद्धि से काम नहीं लेती और स्वंय को कमजोर मानती है तो वह अनुष्ठान करके गालव की पत्नी वन सकती थी, लेकिन उसने बुद्धि से काम लेकर अपने जीवन को वर्वाद होने से बचा लिया।

नारियाँ दिव्य चिंतन जगाएँ अगर
हर मनुष्य देव वनता जाएगा
नारियाँ देश की जाग जाए अगर
देश खुद ही बदलता जाएगा।

'हानूश' -

भारत के संतों और आचार्यों ने जहाँ वैराग्य की प्राप्ति के प्रसंग में नारी-निन्दा की है, वहाँ उन्हीं संतों और आचार्यों ने स्त्री-धर्म की प्रशंसा करने में भी कोई कोर-कसर नहीं रक्खी। नारी का सबसे बड़ा गुण पतिव्रत पालन है। पति को वह परमेश्वर के रूप में देखती है। वह उसकी तन-मन और वचन से पूर्णनिष्ठा तथा भक्तिभाव से पूजा-अर्चना करती है। उसके आदेश का कदापि उल्लंघन नहीं करती है।

ऐसी ही पतिव्रता स्त्रियों का संसार में आदर होता है और वे ही संसार पर राज्य करने की क्षमता रखती हैं। घोर वन को भी वे राजाप्रासादों से अधिक सुखकर बनाने में समर्थ होती हैं।

स्त्री के वास्तविक आभूषण उसके सुन्दर गुण हैं। गुणवती स्त्री दीन-हीन मनुष्य के घर को साकेत तुल्य बना देती है, जिसप्रकार पाटलप्रसून अपनी कण्टकमय डाली को रम्य कर दिखाता है। ऐसी देवी बाहरी शोभा-सुन्दरता

की परवा नहीं करती है। उसका हृदय इतना सुन्दर होता है कि उसकी दिव्य सुन्दरता से सभी कुछ सुन्दर हो जाता है।

संत कबीरजी ने ऐसी देवी की स्तुति इस प्रकार की है-

पतिव्रता मैली भली, गले काँच की पोत।

सब सखियन में यों दिपै, ज्सों रबि ससि की जोत।।"२३६

नारी हमेशा पुरूष की सहचरी रही है। वह उसे सुखी रखने के लिए स्वंय कष्ट सहती है। उसकी खुशी में अपनी खुशी समझती है, इसलिए एक जगह नारी को अबला कहा गया है। पुरूष का कार्य पैसा कमाकर परिवार का भरण पोषण करना है, पर स्त्री पति के लक्ष्य को पूरा करने के लिए वह अपने परिवार का भरण पोषण करती है। जो दायित्व पुरुष के होते हैं। उन दायित्वों का निर्वाह भी स्त्री करती है। हमारे शास्त्रों में कहा गयी है-

"नारी का सहयोग पुरूष को बन्धन नहीं, मुक्ति के रूप में मिलना चाहिए।"

ऐसा ही एक परिदृश्य 'हानूश' नाटक में देखने को मिलता है।

कात्या हानूश की एक आदर्श पत्नी है। उसके अन्दर ममत्व, वात्सल्य, कर्तव्यपरायण, पतिपरायणता, सहिष्णुता कूटकूट कर भरा हुआ है। उसको घड़ी बनाने की धुन सवार है। घड़ी बनाने के चक्कर में वह अपने परिवार का पालन पोषण नहीं कर पाता है। बच्चे भूख से तड़पते रहते हैं। एक बच्चा शर्द ऋतु में मर गया। उसने हानूश को बुरा भला कहा-

"घड़ियाँ बनाने का शौक था तो फिर ब्याह नहीं करना चाहिए था। यह नहीं हो सकता कि घर-गिरस्ती भी बनाओ और उसके खाने-ओढ़ने का इन्तज़ाम भी नहीं करो...।"२३७

कात्या थोड़े बहुत ताले बाजार में बेचती है, जिससे परिवार का खर्च चलता है। गिरजावालों ने भी अनुदान देने से मना कर दिया। घड़ी बनाने की धुन में उसके १३ वर्ष व्यतीत हो गए।

कात्या सही समय पर हानूश को भोजन देती है। अगर हानूश कात्या की जगह पर होता, तो उसे परिवार की स्थिति व घर के खर्च का पता चलता, जिसे खाने को समय पर भोजन मिले, वो क्या जाने घर के खर्च? कात्या का पादरी के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है-

उन्हें दुख भी कौन-सा है? अच्छा खाते-पहनते हैं, प्रजा पर राज करते हैं, लाखों पर उनकी कलम चलती है और सुख क्या होता है? मुझसे पूछो तो हानूश को भी किस बात का दुख है। दिन-भर अपना शौक पूरा करता रहता है। पिसती तो मैं हूँ!"२३८

कात्या अपने मन में विचार करती है कि मैं कितनी भी हानूश की शिकायत करूँ। वे अपने काम से बाज नहीं आएँगे। मैं भी बड़ी मूर्ख हूँ, जो रोती चिल्लाती हूँ। मेरी सुनने वाला कोई नहीं है। हम औरतों के भाग्य में दुःख झेलना ही बदा है। पुरूष अपने शौक पूरे करे। मैं दुख के झपेडों में मरती फिरूँ-

"मैं भी बड़ी मूर्ख हूँ। मैं जानती हूँ मेरे रोने-चिल्लाने से कुछ नहीं बनेगा। पहले भी कई बार ऐसा हो चुका है। यह दस दिन के लिए घड़ी बनाना छोड़ देगा, पर ग्यारहवें दिन फिर उससे जा चिपकेगा, फिर वही कमानियाँ और जाने क्या-क्या। मैं रो-धोकर चुप हो जाऊँगी।"२३९

कात्या ने ताले बनाने के लिए जेकब को अपने पास रख लिया। वह उन तालों को बाजार में बेचती है।

त्या का हानूश के प्रति यह कथन अधोलिखित है -

"घड़ियाँ बनाने का शौक था तो फिर ब्याह नहीं करना चाहिए था। यह नहीं हो सकता कि घर-गिरस्ती भी बनाओ और उसके खाने-ओढ़ने का इन्तज़ाम भी नहीं करो.........।"२४०

उपर्युक्त विवचेन से यह स्पष्ट है कि हिन्दू नारी की महिमा का कहा तक वर्णन किया जाए? उसका पार पा पाना मुश्किल है, जिन्होंने वेद तक की ऋचाएँ निर्मित की? पद्मिनी जैसी वीरांगनाओं ने जौहर रचकर पतिव्रत धर्म का प्रतीक प्रस्तुत किया, जिसकी प्रशंसा में कविवर केसरीसिंह सोन्याण ने लिखा है -

"पदमिन तेरे रुप को, रह्यो अनूपम हाल ।
के निरख्यौ रावल रतन, के जौहर की ज्वाल ।"

"एकचक्रो रथो यद्वदेकपक्षो यथा खगः ।
अभार्योऽपि नरस्तद्वदयोग्यः सर्वकर्मसु ।।"२४१

जैसे - एक पहिए का रथ नहीं चल सकता और एक पाँख की चिड़ियाँ नहीं उड़ सकती, वैसे ही भार्या से रहित अकेला पुरुष कोई भी कार्य नहीं कर सकता।

'कबिरा खड़ा बजार में'-

युगों-युगों का इतिहास किसी न किसी अंश में नारी के गौरव को प्रतिष्ठित करता रहा है। मानव जीवन का प्रत्येक क्षेत्र नारी के अभाव में अपूर्ण है। वह प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रुप में नारी से प्रभावित रहा है। नारी जीवन का प्रधान अंग है। परमात्मा ने नारी को सृजन शक्ति का वरदान देकर समाज के लिए उसे उतना ही आवश्यक बना दिया, जितना सृष्टि के लिए वह स्वयं आवश्यक है।

स्त्री पुरुष की अर्धांगिनी होती है। वह पुरुष के हर सुख-दुख में उसकी मदद करती है। नारी को ममत्व, त्याग, करुणा, दया, सेवा की मूर्ति माना गया है। वह कर्तव्यनिष्ठ तथा सहनशील होती है। वह अपने पति, पिता, पुत्र भाई का हमेशा साथ देती है। अगर कोई स्त्री अपरिचित व्यक्ति को भी मुसीबत में पड़ा देख ले तो भी उसकी मदद करती है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी के 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक के पात्र लोई में देखने को मिलता है।

लोई कबीर की पत्नी है। वह बहुत ही समझदार औरत है। वह दया, ममता, सेवा, करुणा की मूर्ति है। वह स्वयं कष्ट सहकर दूसरों को सुख पहुँचाने का प्रयास करती है। वह कबीर से बोली कि आपने विवाह के पहले मुझे कहीं देखा था। कबीर ने कहा कि मुझे कुछ भी याद नहीं आ रहा है। पत्नी ने कहा कि जब पण्डों ने आपको गंगा में डुबोया था, तब हम अपनी सहेलियों के साथ चोर महीचनी खेल खेल रहे थे। पण्डे आपको नदी में फेंक देना चाहते थे। पण्डों ने आपके हाथ बाँधे और नदी के बीचोंबीच में ले जाकर फेंक दिया। वे नाव खेकर भाग गए। नदी के आस-पास कुछ लोग खड़े थे। वे भी भाग गए। मेरी सहेलियाँ भी डरकर भाग गईं। मैंने भी भागना चाहा, लेकिन मुझसे खड़े होते

ही नहीं बना। मेरी डर के मारे जान सूखी जा रही थी। मैं शाम होने तक वहीं बैठी रही। नदी में पानी घुटनों तक था। आपकी लाश नदी के किनारे तक आ गई थी। आपके हाथ बँधे हुए थे। मैं बहुत डर गई। मुझसे रहा नहीं गया -

"फिर क्या? हम भागकर अपने घर गई और बापू से कहा और बापू बस्ती के बहुत से लोगों को लेकर आए और तुम्हें नदी में से निकाला। तुम मरे नहीं थे।"२४२

मेरे बापू आपको अपने घर ले गए। बापू ने आपको उल्टा करके आपके पेट से पानी निकाला। मेरे बापू ने मुझसे आधी रात को कहा कि बेटी इसके लिए कटोरे में गरम-गरम दूध लाओ। मैंने आपको दूध दिया। कबीर बोले कि मुझे तुम्हें देखना था, इसलिए मैं जिन्दा हूँ।

अगर कोई और स्त्री होती, तो यह सोचती कि मुझे क्या करना आदमी डूब रहा है, तो डूब जाए? उसकी लाश नदी के किनारे लगी है, तो लगी रहे। मुझे इससे क्या लेना-देना है? लोई त्याग, दया, ममता की मूर्ति है। उसने अपने पति को मरने से बचा लिया।

नारी प्रकृत्या संवेदनशील एंव भावुक होती है। वस्तुतः नारी को स्वभावज ममता, स्नेह, वात्सल्य, सेवाभाव आदि अपना चरमोत्कर्ष मातृत्व में ही प्राप्त होते हैं। नारी का मातृत्व लोक कल्याण की क्षमता रखता है।

संदर्भ संकेत -

१. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ.प्र. लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो० एम.एल. गुप्ता एवं डॉ० डी.डी. शर्मा, पृ०सं० २६१

२. वही, पृ०सं० २६१

३. वही, पृ०सं० २६१

४. वही, पृ०सं० २६१

५. वही, पृ०सं० २६२

६. वही, पृ०सं० २६२

७. वही, पृ०सं० २६२

८. भारतीय समाज एवं सामाजिक संस्थाएँ, प्रो०एम.एल.गुप्ता एवं डॉ० डी.डी.शर्मा, पृ०सं० ३४०

९. वही, पृ०सं० ३४०

१०. कुंतो, भीष्म साहनी, पृ०सं० ११६

११. वही, पृ०सं० १४५

१२. वही, पृ०सं० २३०

१३. वही, पृ०सं० २८८

१४. वही, पृ०सं० २८६

१५. समाजशास्त्र, एम.एल गुप्ता एवं डॉ० डी.डी. शर्मा, पृ०सं० १४८

१६. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ.प्र. लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो० एम.एल.गुप्ता एवं डॉ० डी.डी. शर्मा, पृ०सं० २८४

१७. वही, पृ०सं० २८४

१८. वही, पृ०सं० २८४

१९. वही, पृ०सं० २८४

२०. वही, पृ०सं० २८४

२१. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २२६

२२. वही, पृ०सं० २३२

२३. वही, पृ०सं० २३२

२४. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २३

२५. वही, पृ०सं० २४

२६. वही, पृ०सं० ४१

२७. वही, पृ०सं० १४२

२८. वही, पृ०सं० १४७

२६. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २१

३०. वही, पृ०सं० २२

३१. वही, पृ०सं० २४

३२. वही, पृ०सं० २४

३३. हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २६

३४. वही, पृ०सं० ३१

३५. वही, पृ०सं० ३३

३६. वही, पृ०सं० ४१

३७. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५६

३८. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २३२

३६. वही, पृ०सं० २३३

४०. वही, पृ०सं० ४४

४१. वही, पृ०सं० ४४

४२. वही, पृ०सं० ४४

४३. वही, पृ०सं० ४५

४४. वही, पृ०सं० ४५

४५. वही, पृ०सं० ४७

४६. वही, पृ०सं० ४७

४७. माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६

४८. वही, पृ०सं० १६

४६. वही, पृ०सं० ८६

५०. वही, पृ०सं० ८५

५१. वही, पृ०सं० १६

५२. वही, पृ०सं० २०

५३. गृहस्थ : एक तपोवन, श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय, पृ०सं० ३.२६

५४. वही, पृ०सं० २.२६

५५. वही, पृ०सं० ३.२७

५६. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

५७. वही, पृ०सं० १७

५८. वही, पृ०सं० २३

५६. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२१
६०. वही, पृ०सं० १४६
६१. वही, पृ०सं० २६०
६२. वही, पृ०सं० २६०
६३. वही, पृ०सं० ३०७
६४. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३४
६५. वही, पृ०सं० १६५
६६. वही, पृ०सं० १६६
६७. वही, पृ०सं० १६६
६८. वही, पृ०सं० १७२
६६. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १८
७०. वही, पृ०सं० १६
७१. वही, पृ०सं० २०
७२. वही, पृ०सं० २१
७३. वही, पृ०सं० २२
७४. वही, पृ०सं० २२
७५. पाली, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १५०
७६. वही, पृ०सं० १६२
७७. वही, पृ०सं० १५७
७८. वही, पृ०सं० १५७
७६. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७२
८०. वही, पृ०सं० ७३
८१. वही, पृ०सं० ७३
८२. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७६
८३. वही, पृ०सं० ७७
८४. हानूश, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २६
८५. वही, पृ०सं० ५५
८६. वही, पृ०सं० ७७
८७. वही, पृ०सं० ७८
८८. वही, पृ०सं० ७८
८६. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला समाजशास्त्र, प्रो० एम.एल.गुप्ता एवं डॉ० डी.डी. शर्मा, पृ०सं० २७६

९०. वही, ,पृ०सं० २७६

९१. वही, पृ०सं० २७६

९२. वही, पृ०सं० २७७

९३. वही, पृ०सं० २७७

९४. वही, पृ०सं० २७७

९५. वही, पृ०सं० २७७

९६. वही, पृ०सं० २७७

९७. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ११

९८. वही, पृ०सं० २०

९९. वही, पृ०सं० २१

१००. वही, पृ०सं० २१

१०१. वही, पृ०सं० २२

१०२. वही, पृ०सं० २२

१०३. वही, पृ०सं० २६

१०४. वही, पृ०सं० २७

१०५. वही, पृ०सं० २८

१०६. वही, पृ०सं० ३५

१०७. वही, पृ०सं० ८७

१०८. वही, पृ०सं० ९२

१०९. वही, पृ०सं० ३२

११०. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २४

१११. वही, पृ०सं० २४५

११२. वही, पृ०सं० २४६

११३. वही, पृ०सं० २४७

११४. आज (५ अगस्त २००७) पृ०सं० ८

११५. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७६

११६. वही, पृ०सं० १०३

११७. वही, पृ०सं० १०७

११८. वही, पृ०सं० १०५

११९. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १२३

१२०. वही, पृ०सं० १२३

१२१. वही, पृ०सं० १२४

१२२. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५५

१२३. वही, पृ०सं० १००

१२४. माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

१२५. वही, पृ०सं० ८०

१२६. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७३

१२७. वही, पृ०सं० ७३

१२८. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६

१२६. वही पृ०सं० ५२

१३०. वही पृ०सं० ५०

१३१. वही पृ०सं० ७३

१३२. वही पृ०सं० ८१

१३३. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्म साहनी पृ०सं० ५४

१३४. वही पृ०सं० १००

१३५. वही पृ०सं० १००

१३६. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान, पं श्री रार्म शर्मा आचार्य वाङ्मय, पृ०सं० १.६२

१३७. कुंतो, भीष्मसाहनी पृ०सं० ३१५

१३८. वही, पृ०सं० ३१६

१३६. वही, पृ०सं० ३१६

१४०. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २२

१४१. वही, पृ०सं० ६

१४२. वही, पृ०सं० ११

१४३. वही, पृ०सं० २४

१४४. वही, पृ०सं० ४१

१४५. आज, (२२ सितम्बर २००७) पृ०सं० ३

१४६. आज, (२३ सितम्बर २००७)

१४७. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६६

१४८. वही, पृ०सं० २००

१४६. वही, पृ०सं० २०५

१५०. वही, पृ०सं० ११६

१५१. वही, पृ०सं० १२६

१५२. वही, पृ०सं० १३३

१५३. वही, पृ०सं० १३४

१५४. वही, पृ०सं० १३७

१५५. वही, पृ०सं० १५०

१५६. वही, पृ०सं० १५६

१५७. वही, पृ०सं० १६३

१५८. वही, पृ०सं० २६२

१५९. वही, पृ०सं० २६०

१६०. बसंती, भीष्म साहनी, पृ०सं० १६

१६१. वही, पृ०सं० ८२

१६२. वही, पृ०सं० ८३

१६३. वही, पृ०सं० ८३

१६४. वही, पृ०सं० ८३

१६५. वही, पृ०सं० ८३

१६६. वही, पृ०सं० ८५

१६७. माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं०१८

१६८. माधवी, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १८

१६९. वही, पृ०सं० १८

१७०. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १०१

१७१. वही, पृ०सं० २०८

१७२. कुंतो, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ७३

१७३. वही, पृ०सं० २६०

१७४. वही, पृ०सं० १६६

१७५. वही, पृ०सं० २०५

१७६. कुंतो,भीष्मसाहनी, पृ०सं० ११८

१७७. वही, पृ०सं० १३७

१७८. वही, पृ०सं० १३३

१७९. वही, पृ०सं० १४०

१८०. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २४

१८१. वही, पृ०सं० २४

१८२. वही, पृ०सं० ३६

१८३. वही, पृ०सं० ६२

१८४. वही, पृ०सं० ८६

१८५. वही, पृ०सं० ८१

१८६. कामायनी,जयशंकर प्रसाद, पृ०सं० ६८

१८७. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्मसाहनी, पृ०सं० २०

१८८. वही, पृ०सं० २१

१८९. वही, पृ०सं० ३६

१९०. वही, पृ०सं० ७५

१९१. वही, पृ०सं० ६२

१९२. वही, पृ०सं० ११५

१९३. वही, पृ०सं० १६

१९४. वही, पृ०सं० १४३

१९५. वही, पृ०सं० १४४

१९६. वही, पृ०सं० २००

१९७. यशोधरा, मैथिलीशरण गुप्ता, पृ०सं० ४७

१९८. इक्कीसवीं सदी-नारी सदी, नारी उत्कर्ष अपने युग की महती आवश्यकता,पं.श्रीराम शर्मा आचार्य वाड्.मय, पृ०सं०

४.६८

१९९. वही, पृ०सं० ४.६६

२००. कड़ियाँ, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

२०१. वही, पृ०सं० ४१

२०२. वही, पृ०सं० १५५

२०३. वही, पृ०सं० १५८

२०४. वही, पृ०सं० १६६

२०५. कुंतो, भीष्म साहनी, पृ०सं० १९६

२०६. वही, पृ०सं० १९६

२०७. वही, पृ०सं० २०५

२०८. वही, पृ०सं० १३६

२०९. वही, पृ०सं० १३५

२१०. वही, पृ०सं० १४०

२११. वही, पृ०सं० १४५

२१२. वही, पृ०सं० १४५

२१३. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ३४

२१४. वही, पृ०सं० ४७

२१५. वही, पृ०सं० २३२

२१६. वही, पृ०सं० २४७

२१७. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० १५०

२१८. वही, पृ०सं० १५७

२१९. वही, पृ०सं० १५८

२२०. वही, पृ०सं० १५९

२२१. वही, पृ०सं० १५७

२२२. भाषाभूषण इण्टरमीडिएट, महेशप्रसाद शर्मा एवं डॉ० रामनिवास शर्मा (अधीर), पृ०सं० ३१०

२२३. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० १२४

२२४. बाल संस्कार, श्री योग वेदान्त सेवा समिति संत श्री आसारामजी आश्रम, पृ०सं० २३

२२५. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० १२१

२२६. वही, पृ०सं० १२१

२२७. हिन्दी नवनीत, डॉ० रामस्वरुप त्रिपाठी, पृ०सं० २३

२२८. वही, पृ०सं० २३

२२९. स्त्री विमर्श और माधवी, भवदेव पाण्डेय, आलोचना त्रैमासिक २००४ सहस्राब्दी अंक सत्रह-अठारह अप्रैल-सितम्बर, पृ०सं० १६८

२३०. माधवी, भीष्म साहनी, पृ०सं० २७

२३१. वही, पृ०सं० ५४

२३२. वही, पृ०सं० ६३

२३३. वही, पृ०सं० ६४

२३४. वही, पृ०सं० ६६

२३५. 'हिंसा और धार्मिक कट्टरता पर हम औरतों की सोच' कमला भसीन, 'सबला', दिसम्बर, २००२-मार्च, २००३

२३६. हिन्दू-संस्कृति में नारी-धर्म का उत्कर्ष, कवि भूषण श्री जगदीश जी विशारद, पृ०सं० ६२७

२३७. हानूश, भीष्म साहनी, पृ०सं० ३३

२३८. वही, पृ०सं० ३२

२३९. वही, पृ०सं० ३३

२४०. वही, पृ०सं० ३३

२४१. हिन्दू-संस्कृति में नारी धर्म का उत्कर्ष, कवि भूषण श्री जगदीशजी विशारद, पृ०सं० ६२७

२४२. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ०सं० ७०

- संदर्भ संकेत

अध्याय - ७

भीष्म साहनी के साहित्य में धर्म का स्वरुप

७.१ - धर्म-अर्थ एवं स्वरुप

७.२ - बीसवीं शताब्दी के चौथे एवं पाँचवे दशक में धर्म का विकृत रुप

७.३ - भीष्म साहनी के साहित्य में धर्म के बदलते परिदृश्य का चित्रण

(अ) उपन्यासों में

(ब) कहानियों में

(स) नाटकों में

(द) अन्य में

(७.१) धर्म - अर्थ एवं स्वरुप -

धर्म मानव समाज का ऐसा व्यापक, स्थाई, शाश्वत, सार्वभौमिक तत्व है। जिसे समझे बिना हम समाज के रुप को समझने में असफल रहेंगे। धर्म मानव का अलौकिक भक्ति से सम्बन्ध जोड़ता है। इसका सम्बन्ध मानव की भावनाओं, श्रद्धा एवं शक्ति से है। धर्म मानव के आन्तरिक जीवन को ही प्रभावित नहीं करता वरन् उसके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन को भी प्रभावित करता है। धर्म जीवन की कड़ी है। हर युवक कोई न कोई धर्म से जुड़ा होगा। उसकी किसी न किसी के प्रति आस्था अवश्य होगी। धर्म आदिम एवं आधुनिक सभी समाजों में पाया जाता है।

धर्म शब्द से केवल मानव के बीच का सम्बन्ध ही नहीं, एक उच्चतर शक्ति के प्रति मानव का सम्बन्ध भी सूचित करता है, चाहे वह भूत-प्रेतों के भय के कारण से हो या आज कल के 'दैवी-क्रोध' के कारण से या मृत्यु के पश्चात् नरक की यन्त्रणाओं के कारण से हो। इसी तरह कोई भी अध्यादेश धार्मिक नियम का एक अंश है जो किसी अवस्था के निर्वचनकर्ता या 'ईश्वर के प्रतिनिधि' के रुप में धार्मिक आधार पर स्वीकृत अधिकार से उत्पन्न होता हैं। मानव-मानव के बीच भी धर्म सम्बन्ध के रुप में निर्देशित करता है।

धर्म का अर्थ एवं परिभाषा -

एडबर्ड टायलर के अनुसार - "धर्म आध्यात्मिक शक्ति में विश्वास करता है।"१

सर जेम्स फ्रेजर के अनुसार - "धर्म से ....मैं मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की सन्तुष्टि या आराधना समझता हूँ जिनके सम्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है कि ये प्रकृति और मानव जीवन को मार्ग दिखातीं और नियन्त्रित करतीं हैं।"२

मैलिनोवस्की के लिखा है - "धर्म क्रिया की एक विधि है और साथ ही विश्वासों की एक व्यवस्था भी धर्म एक समाजशास्त्रीय घटना के साथ-साथ एक व्यक्तिगत अनुभव भी है।"३

पी० हॉनिगशीम ने लिखा है - "प्रत्येक उस मनोवृत्ति को हम धर्म कहेंगे जो इस विषय पर आधारित है कि अलौकिक शक्तियों का अस्तित्व है तथा उनसे सम्बन्ध स्थापित करना न केवल महत्वपूर्ण है वरन् सम्भव भी है।"४

हॉबल ने लिखा है - "धर्म अलौकिक शक्ति में विश्वास पर आधारित है जिसमें आत्मावाद और मानावाद दोनों सम्मिलित हैं।"५

क्यूबर के अनुसार - "धर्म सांस्कृतिक जीवन से सम्बन्धित व्यवहार का वह प्रतिमान है जिसका निर्माण पवित्र विश्वासों, विश्वासों से सम्बन्धित उद्वेगपूर्ण विचारों तथा इन्हें व्यक्त करने वाले बाहरी आवरणों आदि से होता हैं।"६

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि धर्म किसी न किसी प्रकार की अतिमानवीय या अलौकिक या समाजोपरि शक्ति पर विश्वास है जिसका आधार भय, श्रद्धा, भक्ति और पवित्रता की धारणा है और जिसकी अभिव्यक्ति प्रार्थना, पूजा या आराधना आदि के रुप में की जाती है।

धर्म की विशेषताएँ -

अलौकिक शक्ति में विश्वास- जॉन्सन का कथन है कि **"एक अलौकिक शक्ति में विश्वास धर्म का सबसे प्रमुख तत्व है।"७** धर्म के अन्तर्गत एक ऐसी शक्ति में विश्वास किया जाता है जो अलौकिक और दिव्य चरित्र की होती है।

पवित्रता की धारणा- दुर्खीम ने धर्म में पवित्रता पर बल देते हुए लिखा है कि **"धर्म पवित्र वस्तुओं से सम्बन्धित विश्वासों और आचरणों की वह समग्र व्यवस्था है जो इस पर विश्वास करने वालों को एक नैतिक समुदाय में संयुक्त करती है।"८**

वर्णाश्रम धर्म -

वर्णाश्रम धर्म आत्मा को बुद्धि से कहीं अधिक श्रेयस्कर मानते हुए सामाजिक जीवन में व्यक्ति को आत्मा के प्रति अधिक निष्ठावान बनाने की चेष्टा करता है, जो शान्त, विनम्र, सहिष्णु, प्रेमयुक्त, सन्तुष्ट और परिस्कृत आत्मिक जीवन का प्रतीक है। हमें मनुष्य को बाहरी आडम्बरों से हटाकर मनुष्य को सही रास्ते पर लाना होगा। हमें धर्म को ऐसे मार्ग पर लाना है जिससे मनुष्य समाज में सुख शान्ति से अपना जीवन व्यतीत कर सके और उसके चारों अभ्युदय प्रशस्त हो सके। ऐसी व्यवस्था का नाम वर्णाश्रम है। डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार -

"धर्म चारों वर्णों के और चारों आश्रमों के सदस्यों द्वारा जीवन के चार प्रयोजनों (धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष) के सम्बन्ध में पालन करने योग्य मनुष्य का समूचा कर्तव्य है।"९

१. ब्राह्मण- **"देवाः परोक्षदेवाः प्रत्यक्षदेवा ब्राह्मणाः ।"१०**

ब्राह्मण तीनों वर्णों का आध्यात्मिक गुरु है। ब्राह्मण को विराट पुरुष के मुख से उत्पन्न माना जाता है। ब्राह्मण को सभी में श्रेष्ठ कहा गया है। कहा जाता है कि ब्राह्मण में बुद्धि की अधिक मात्रा होती है।

क्षत्रिय- ब्राह्मण के बाद क्षत्रिय का दूसरा स्थान आता है। क्षत्रिय शक्ति का प्रतीक माना गया है। क्षत्रिय विराट पुरुष की भुजाओं से उत्पन्न हुआ है। क्षत्रिय का कार्य देश की रक्षा व दीन दुखियों की सेवा करना है। रामायण व महाभारत में क्षत्रियों का उल्लेख किया गया है। महाभारत में क्षत्रियों के कर्तव्यों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि "युद्ध में शरीर को आहूत करना, प्राणी मात्र, पर दया रखना, प्रजा की रक्षा करना, विषाद ग्रस्त एवं पीड़ितों को कष्ट मुक्त करना ये क्षत्रिय के धर्म हैं या रामायण में श्रीराम ने विश्वामित्र के कहने पर वह राक्षसों को मारने के लिए वह उनके साथ उनके आश्रम में गये तथा रावण का संघार किया। कुछ स्थानों पर धर्म युद्ध को क्षत्रियों का प्रमुख कर्तव्य बताया गया -

"यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ।।"११

अपने आप प्राप्त हुआ युद्ध खुला हुआ स्वर्ग द्वार है। वे पार्थ वे क्षत्रिय सुखी हैं जिन्हें ऐसा युद्ध प्राप्त होता है। गीता में वार्ष्णेय पृथानन्दन को क्षात्रकर्मों के बारे में उपेदश करते हैं -

"शौर्य तेजो धृतिः दाक्ष्य युद्धे चाप्यपलायनम्
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।"१२

वैश्य- वैश्य उसे कहते हैं जो विराट पुरुष की जंघाओं से उत्पन्न हुआ है। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य को 'द्विज' कहा जाता है। ऋग्वेद में वैश्य शब्द पुरुष सूक्त में दृष्टिगत होता है। वैश्यों का प्रमुख कार्य कृषि, पशुपालन, एवं व्यापार वैश्य है जिसके द्वारा वह राष्ट्र की सेवा व आर्थिक उत्थान का दायित्व उसके ऊपर रहता है। वैश्य अपने परिवार का पालन-पोषण करता है। महाभारत में ऋषि भृगु भरद्वाज मुनि को वैश्य की परिभाषा देते हुए कहा गया है -

"वाणिज्या पशुरक्षा च कृष्यादान रतिः शुचिः।

वेदाध्ययन सम्पन्न स वैश्य इति संज्ञितः।।"१३

वेदाध्ययन द्वारा सम्पन्न वाणिज्य, पशुपालन एवं कृषि कार्यों को करते हुए जो अन्न संग्रहादि द्वार पवित्र रहता है वह वैश्य कहलाता है।

हरिवंश पुराण में कहा गया है -

"कान्त नारी नरगणा वाणिग्भिरुपशोभिता

नाना पण्गणाकीर्णा खेचरीव च गां गता।"१४

शूद्र- शूद्र का स्थान सबसे निम्न माना गया है। गाँधीजी ने शूद्रों को 'हरिजन' कहा। शूद्र विराट पुरुष के पैरों से उत्पन्न हुए हैं। गीता में परिचर्या (सेवा) को ही शूद्र का स्वभावजन्य कर्म माना गया।

'परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्'

शूद्र तीनों वर्णों की सेवा करता है।"शूद्र पूर्त धर्म यथा तालाब, कुएँ, मन्दिर इत्यादि का निर्माण, साधारण अग्नि में प्रतिपादित किए जाने वाले पंचमहायज्ञ, श्राद्ध, देवताओं का (नमः) शब्द के साथ सम्बोधन करते हैं। महाभारत में शूद्रों को छूट दिया गया और कहा है **"सभी वर्ग ब्राह्मण द्वारा महाभारत को सुन सकते हैं। महाभारत के अनुशासन पर्व में आगे कहा गया है कि "शूद्र केवल गृहस्थ आश्रम ही ग्रहण कर सकते हैं।" क्योंकि उन्हें पढ़ने का अधिकार नहीं है।"१५**

आश्रम धर्म - आश्रम को चार भागों में बाँटा गया है।

१. ब्रह्मचर्य २. गृहस्थ ३. वानप्रस्थ ४. परिव्राजक हैं।

गौतम ऋषि के अनुसार इन्हें ब्रह्मचारी, गृहस्थ, भिक्षु, वैखानस चार कहा गया ।

<u>ब्रह्मचर्य आश्रम-</u>

यह जीवन का आगे बढ़ने के लिए प्रथम सीढ़ी मानी गई है। साधारण शब्दों में ब्रह्मचर्य सर्वेन्द्रिय संयम एवं तप का नाम ही ब्रह्मचर्य है। दूसरे शब्दों में इसे शक्ति एवं ज्ञान के संचय का काल है। आपस्तम्ब धर्मसूत्र के अनुसार -

"ब्रह्म वेदस्तदर्थ व्रतं चरतीति ब्रह्मचारी"१६

वेद स्वरुप ब्रह्म के अर्थ एवं व्रत को आचरित करने वाला ब्रह्मचारी कहलाता है। विद्यार्थी के ब्रह्मचर्य का श्रेष्ठ गुण माना गया है, क्योंकि विद्यार्थियों पर ही देश का भार है। वे ही भारत के सपूत हैं। विद्यार्थी का जीवन साधना का जीवन था-

"काक-चेष्टा वको-ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च

स्वल्पाहारी गृहत्यागी, विद्यार्थी पंच लक्षणम्।"१७

कौए जैसा सतर्क, बगुले जैसा एकाग्रचित, कुत्ते जैसी सचेत नींद सोने वाला, ठूँस-ठूँस कर न खाने वाला, घर के झंझटों से दूर रहने वाला ये विद्यार्थी के पाँच लक्षण माने गए। श्रीराम अपने आरम्भिक समय में माता-पिता एवं गुरु का आदर करते थे। वे ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। इस संसार में जितने भी महापुरुष हए हैं। वे ब्रह्मचर्य धर्म में रहकर ही महान बने हैं। महात्मा गाँधी ने ३५ वर्ष की उम्र में ही ब्रह्मचर्य का पालन करने लगे थे। स्वामी विवेकानन्द जो केवल ४० साल जिए, लेकिन उन्होंने ब्रह्मचर्य का पालन किया और वे इतने तेजस्वी महापुरुष हए तथा तुलसीदास जो कितने कामी थे ब्रह्मचर्य के पालन से ही वे इतने बड़े सन्त बने।

ब्रह्मचर्य के ऊपर कुछ पंक्तियाँ हैं -

"ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, नहीं किसी ने यश पाया।
ब्रह्मचर्य से परशुराम ने, इक्कीस बार धरणी जीती।
ब्रह्मचर्य से वाल्मीकि ने, रच दी रामायण नीकी।
ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, किसने जीवन रस पाया।"

राजा जनक शुकदेव जी से बोले - "बाल्यावस्था में विद्यार्थी को तपस्या, गुरु की सेवा तथा ब्रह्मचर्य का पालन एवं वेदाध्ययन करना चाहिए।

तपसा गुरुवृत्या च ब्रह्मचर्येण वा विभो।"१८

गृहस्थ आश्रम- ब्रह्मचर्य के बाद गृहस्थ आश्रम आता है जैसे सैनिक युद्ध में जाने से पूर्व युद्धभ्यास करते हैं । युद्ध के विभिन्न पहलुओं पर विचार करते हैं। उसी प्रकार ब्रह्मचर्य आश्रम की सैद्धान्तिक शिक्षा को गृहस्थ अपने व्यावहारिक जीवन में चरितार्थ करता है। गृहस्थ आश्रम सभी आश्रमों में श्रेष्ठ माना गया है।

विवाह जब हो जाता है नवदम्पत्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करते हैं। विवाह के सम्बन्ध में ताण्ड्य महाब्राह्मण में कहा गया है - "पृथ्वी एवं स्वर्ग में पहले एकता थी, परन्तु वे अलग हो गये तब उन्होंने कहा - "आओ हम लोग विवाह कर लें, हम लोगों में सहयोग उत्पन्न हो गए।"

गौतम ने कहा - "गृहस्थ देव, पितर, मनुष्य, भूत एवं ऋषि लोगों की पूजा करें।"

देव पितृमनुष्य भूतर्षिरजकः।

तीनों आश्रम गृहस्थ पर ही आधारित हैं। गृहस्थों में दान देने का विधान है। परिवार को सुचालित चलाना अपने वंश को आगे बढ़ाना ये गृहस्थ आश्रम के कार्य है। ऋग्वेद में कहा गया है- "गो दान करने वाले को स्वर्ग में उच्च्व स्थान प्राप्त होता है। अश्व, दानदाता सूर्यलोक में निवास करता है, स्वर्ग का दानी देवता होता है एवं परिधान का दानकर्ता दीर्घायु होता है।"१९

वानप्रस्थ आश्रम-

व्यक्ति जब गृहस्थ के सभी दायित्वों को पूरा कर लेता है और उसकी त्वचा में झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं बाल सफेद होने लगते हैं तब वह वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। इसमें वन जाने का प्रावधान है। जिससे वह आत्मा

अधोगामी जीवन जीना जो कुछ भी हो मानवता तो नहीं है।

मनुष्य को कर्तव्य पथ पर प्रवृत्त करने के लिए ही भगवतगीता का प्रादुर्भाव हुआ है। अपने कर्तव्य का ठीक-ठीक पालन करने से ही चरित्र का निर्माण होता है और कर्तव्य से च्युत होने से ही चरित्र का नाश होता है।

धर्म का सच्चा अर्थ ही सच्चरित्रता है। चरित्र सदाचार से पृथक नहीं है। मनसा, वाचा, कर्मणा किसी से द्रोह न करना, वरन् अनुग्रह करना एवं दान देना ही शील है। शील पर ही सत्य, धर्म, सदाचार एवं बल आश्रित है। मनुष्य का चरित्र अथवा आचरण शील से ही उत्पन्न होता है। मनुष्य का भूषण शील है। विदुर जी ने कहा है कि मनुष्य के चरित्र के नष्ट हो जाने पर वह शरीरधारी होते हुए भी मृतक के समान समझा जाता है। सत्कर्मों से ही और अच्छी शिक्षा पद्धति का मुख्य उद्देश्य चरित्र निर्माण करना ही है।

भारतीय मनीषियों ने धर्म के दस लक्षण या कर्तव्य बताए है, जो मनुष्य इन दस गुणों को अपनाता है। वह न केवल स्वयं सुखी रहता है, अपितु दूसरों के लिए भी सुख का हेतु बनता है। १. धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय, निग्रह, धी, विद्या, सत्य एवं अक्रोध यह धर्म के दस लक्षण हैं। धर्म का अर्थ 'धारण करना' है। महर्षि व्यास ने 'धारणाद्धर्म मित्याहुः' अर्थात् धारण करने से ही धर्म बना है।

धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा था कि धर्म का तत्व बड़ा गूढ़ है। महापुरुष जिस मार्ग से चले वही पथ है। यह संसार धन से नहीं चरित्र से शासित होता है। नैतिकता और बुद्धिमता दोनों मिलकर संसार का उज्जवलतम चरित्र बनाते हैं। महाभारत ने धर्म को जीवन का विधान माना है, जो समाज को एक साथ रखे वह धर्म है।

शान्तिपर्व में भीष्मजी ने कहा है कि जो कार्य समाज के कल्याण के विपरीत है और जिसे करने में लज्जा या ग्लानि का आभास होता हो वह कदापि न करें। भारत में सदाचार को ही धर्म माना गया है। धर्म का अर्थ मजहब, रिलीजन व सम्प्रदाय नहीं है। मनुस्मृति का मत है – 'आचारः प्रथमो धर्मः।' सदाचार में सद् शब्द सज्जन या साधु का वाचक है। सज्जन पुरुषों का आचरण ही सदाचार है। धर्म का सच्चा अर्थ ही सदाचार है।

भागवत में भगवान् कपिल ने स्पष्ट रुप से कहा है कि मैं आत्मारुप से सदा सभी जीवों में स्थित हूँ, इसलिए जो लोग मुझ सर्वभूतस्थित परमात्मा का अनादर करके केवल प्रतिमा में ही मेरा पूजन करते हैं, उनकी वह पूजा स्वांग मात्र है। वैसे दैवीय गुणों की सूची बहुत लम्बी है। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि परोपकार धर्म का सार है। गोस्वामी तुलसीदास जी का कथन है कि –

"परहित बस जिन्ह के मन माहीं,
तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ।
परहित सरिस धर्म नहिं भाई,
परपीड़ा सम नहिं अधमाई ।।"२३

बिल्कुल यही विचार एक दूसरे भक्त कवि ने व्यक्त किया है –

"चार वेद छः शास्त्र में बात मिली है दोय
दुख दीन्हे दुख होत है, सुख दीन्हे सुख होय।"

श्रीकृष्ण, तुलसीदास, गौतमबुद्ध – **'जीवदया सो मम दया'** के भी यही विचार थे।

सभी मनीषियों ने मानव को सच्ची मानवता तक ले जाने का भागीरथ प्रयत्न किया है। इसी भाव को लक्ष्य

कर कबीर ने कहा था –

"सीलवन्त सबतें बड़ो, सबै रतन की खान ।

तीन लोक की सम्पदा, रही सील में आन ।।"२४

हम अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछें कि क्या हम वर्णाश्रम धर्म वाले इस धर्म-प्राण देश में धर्म

नीति के अनुसार चल रहे हैं? क्या हम कल्याण राज्य के अनुरुप अपने अधिकार एवं कर्तव्यों का ईमानदारी से निर्वाह

कर रहे हैं? क्या हम सब छल, दम्भ, द्वेष, पाखण्ड, झूठ, हिंसा, प्रतिहिंसा, बेईमानी आदि दुर्गुणों से बचे हैं? क्या हम

राष्ट्र के गौरव एवं बल को गिराने वाले उत्कोच, अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, जमाखोरी, चोर-बाजारी, प्रभृति, अनैतिक

आचारों से बचे एवं समाज को बचाए हुए हैं? यदि आपका हृदय कहता है कि नहीं तो सोचिए हम कहाँ जा रहे हैं?

भारतवर्ष 'सोने की चिड़िया' था। यहाँ दूध की नदियाँ बहती थीं। भारत का अध्यात्म विश्व के लिए प्रेरणास्रोत

था, लेकिन हमारे भारतवर्ष की सम्पन्नता को विदेशी ताकतों ने अपने-अपने आक्रमणों द्वारा भारतवर्ष को खूब लूटा।

सबसे अधिक अत्याचार हिन्दुओं के धर्म पर होते थे। हिन्दू स्त्रियों को बलपूर्वक मुसलमान अपनी स्त्री बनाते थे। फिरोज

तुगलक की माँ भी इसी प्रकार लाई गई थी। कोई भी हिन्दू अपना सिर उठाने का साहस नहीं कर सकता था।

प्रो० एन वी राय के अनुसार सल्तनत काल में हिन्दुओं को नागरिकता के अधिकार से वंचित रखा गया

था। उसे काफ़िर के रुप में घृणा की दृष्टि से देखा जाता था और दरबार में प्रवेश करते समय उसका **'हड़ाकल्लाह'**

(ईश्वर तुम्हारी सहायता करे) कहकर स्वागत किया जाता था।

अनेक स्त्रियाँ समाज में अपना और अपने परिवार का सम्मान बनाए रखने के लिए सती हो जाती थीं।

मजबूरन राजपूत स्त्रियों को जौहर व्रत अपनाना पड़ता था।

इसी बीच सन् १६०० ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की भारत में स्थापन हुई। अंग्रेज लोग भारत में व्यापार

के उद्देश्य से आए थे। भारत में छोटे-छोटे राज्यों के राजा आपस में लड़ने में मस्त थे। वे ऐशोआराम में मस्त थे।

अंग्रेजों ने शक्ति के बल पर आक्रमण करके धीरे-धीरे भारत पर पूर्ण शासन-स्थापित कर लिया। भारत की जनता को

काफी सताया व लूटपाट की। भारतीय धन इंग्लैंड ले गए। हिन्दू मुसलमानों को व सिक्खों को आपस में खूब लड़ाया व

एक दूसरे के दुश्मन बना दिया, जिससे कि वह स्वतन्त्रता पूर्वक भारत में एकक्षत्र राज कर सके।

कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए महात्मा गाँधी के नेतृत्व में एक विशेष भारतीय ढंग अहिंसात्मक,

असहयोग अपनाकर आन्दोलन किया। सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन अपने प्रारम्भिक वर्षों को छोड़कर साम्प्रदायिकता के जहर

से प्रभावित रहा हैं।

जिन्ना की राजनीति की शुरुआत कांग्रेस के मंच से हुई थी। जिन्ना प्रारम्भ में मुस्लिम अलगाववाद के

समर्थक नहीं थे, इसलिए जिन्ना ने कभी मुस्लिम लीग के ढाका सम्मेलन में शिरकत करने से परहेज किया था, इसलिए

पहले जिन्ना ऐसे नहीं थे। **"राजद्रोह के आरोप में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को गिरफ्तार कर लिए जाने**

पर जिन्ना ने उनके एडवोकेट के रुप में जोरदार वकालत की। सन् १६१८ में भारत कोकिला सरोजनी

नायडू ने जिन्ना के लेखों और भाषणों का एक संकलन संपादित किया था, जिसकी भूमिका में सरोजनी नायडू ने जिन्ना को हिन्दू-मुसलमान एकता का अग्रदूत कहा था।

गाँधी के उदय के साथ कांग्रेस की राजनीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आ गया। जिन्ना ने गाँधी के असहयोग आन्दोलन का जमकर विरोध किया। जिन्ना कांग्रेस से अलग हो गए और लार्ड रीडिंग से उनके मधुर सम्बन्ध खुलकर सामने आ गए। लन्दन प्रवास के बाद जिन्ना सन् १६३४ में भारत आ गए और वह मुस्लिम अलगाववाद के नए पुरोधा बनने की कवायद में जुट गए। इस तरह राष्ट्रवादी जिन्ना का रुपान्तरण सांप्रदायिक धर्मोन्मादी के रुप में हो गया। एक राष्ट्रभक्त ब्रिटानी सत्ता की 'बाँटो और राज करो' की कार्यनीति का मोहरा बन गया। डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने भविष्यवाणी की थी कि विभाजन से सद्भाव नहीं बढ़ेगा बल्कि दोनों फिरकों में दुर्भावना बढ़ना सुनिश्चित है। जिन्ना रक्तपात और हिंसा की राह पर चल पड़े। तब अकेले कलकत्ता में एक ही दिन में दस हजार निरपराध लोग मौत के आगोश में सुला दिए गए। इसके बाद देश में धर्मोन्माद की आँधी ने इतिहास के स्याह अध्याय की शुरुआत कर दी। ३१ मार्च १६४७ को गाँधीजी ने कहा कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा, लेकिन जिन्ना पाकिस्तान के बनाने पर तुले रहे।"२५

सुभाषचन्द्र बोस ने दीनदुखियों की बड़ी सेवा की। डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने अछूतों के उद्धार के लिए संघर्ष किया व दलित वर्गों को संगठित करने तथा सवर्णों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों का विरोध किया। डॉ० अम्बेडकर का विचार था कि हिन्दू धर्म में दलितों को सम्मानजनक स्थिति प्राप्त नहीं है। वे देशभक्त थे और उनकी आस्था भारत के राष्ट्रीय एकीकरण में थी। सन् १६४२ में भारत छोड़ो आन्दोलन का अम्बेडकर द्वारा विरोध किया गया। उनका विरोध देश की स्वतन्त्रता का विरोध नहीं था। वरन् देश की स्वतन्त्रता के लिए अपनाई गई रणनीति तथा ब्यूह रचना के मतभेद थे। दलितों के लिए मुसलमानों तथा ईसाईयों की जगह पृथक प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाना चाहिए। उनकी दृष्टि में देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता की अपेक्षा दलितों की नागरिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता तथा समानता का कार्य अधिक महत्वपूर्ण था, इसलिए उन्होंने कांग्रेस को शोषक व दलितों को शोषकों की जमात बताते हुए इसका विरोध किया, इसलिए इनको हरिजनों का मसीहा कहा गया।

उनका मत था कि यदि कोई धर्म मनुष्य-मनुष्य के बीच भेदभाव को अपनाता है या अपने ही अनुयायियों को एक वर्ग को दूसरे वर्ग के अधीन रहने के लिए प्रेरित या वाध्य करता है तो वह धर्म नहीं वरन् मानवता का ह्रास है। महात्मा गाँधी ने सभी प्रकार की असमानताओं (जन्म, जाति, धर्म, धन) को समाप्त करने का प्रयास किया। अछूतों के उद्धार के लिए कार्य किया और उन्हें हरिजन, ईश्वर के लोभ की संज्ञा दी। नशाबन्दी के लिए, हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए व भारत व पाकिस्तान के बँटवारे को रोकने का भरसक प्रयास किया, लेकिन जिन्ना की जिद के कारण अन्त में भारत का विभाजन मजबूरन स्वीकार किया। इधर पाकिस्तान व भारत दो टुकड़ों में बँट गया। उधर १५ अगस्त सन् १६४७ को भारतवर्ष स्वतन्त्र हुआ।

२० वीं शताब्दी के चौथे व पाँचवे दशक में धर्म का विकृत रुप इतना अधिक हो गया कि लोग जुआ खेलने

लगे, परस्त्री का संग करने लगे। मनुष्य और पशुओं को मन और वाणी से कष्ट देने लगे। निरपराध, उपकारी गौ की हिंसा करने लगे। मांस खाने व मद्यपान करने लगे। पराए धन का हरण करने लगे। इस प्रकार सचरित्रता ने धर्म के सभी गुणों को त्याग दिया। साम्प्रदायिकतावाद, जातिवाद, अलगाववाद व भ्रष्टाचार ने देश को सम्पूर्ण विश्व समुदाय को घोर संकट में डाल दिया।

बर्बाद गुलिस्ताँ करने को, बस एक ही उल्लू काफी है।

हर शाख में उल्लू बैठा हो, अन्जाने गुलिस्ताँ क्या होगा।

सच्चरित्रता की लीक से हटते ही त्रिलोक विजई रावण की दशा कुत्ते जैसी हो गई। गोस्वामी ने लिखा है-

'जाकें डर सुर असुर डेराहीं। निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं

सो दससीस स्वान की नाई। इत उत चितइ चला भड़िहाई

इमि कुपंथ पग देत खगेसा। रह न तेज तन बुधि बललेसा'

इस समय हमारे देश में कुछ साहित्यकार हुए जैसे- प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', आचार्य चतुरसेन शास्त्री, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, वृन्दावन लाल वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी हुए। प्रेमचन्द ने गोदान (१९३६) में समाज में फैली छुआछूत तथा साम्प्रदायिकता की समस्या को अपने उपन्यास का केन्द्र बिन्दु बनाया। प्रगतिवाद में समाज में फैली कुरीतियों, नारी का शोषण, पूँजीपतियों द्वारा निर्धनों का शोषण किया जा रहा है। प्रगतिवाद में निराला, केदारनाथ अग्रवाल, दिनकर, मुक्ति बोध, पन्त आदि कवि हुए है।

१. प्रगतिवादी कपि ने अकाल पीड़ित व्यक्ति की मर्म व्यथा का उद्घाटन करते हुए उनकी यथार्थ स्थिति का चित्रण किया है।

बाप बेटा बेचता है, भुख से बेहाल होकर।

धर्म धीरज प्राण खोकर हो रही अनरीति बर्बर।।

प्रगतिवादी कवि ने नारी को वासनातृप्ति का साधन नहीं माना। वे उसे सम्मान देते थे, क्योंकि वह पुरूष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर जीवन संग्राम में भाग लेती है। नारी मुक्ति का समर्थन करते हुए छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पन्त जी ने कहा है -

२. **योनि नहीं है रे नारी वह भी मानवी प्रतिष्ठित,**

उसे पूर्ण स्वाधीन करो वह रहे न नर पर अवसित।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि हमें सारे बुरे व्यसन को त्यागकर सन्मार्ग की ओर अग्रसर होना चाहिए। तभी हम उन्नति के शिखर तक पहुँच सकते हैं, जिससे हमारा व राष्ट्र का व समाज का उत्थान होगा। तभी **"बहुजन हिताय व बहुजन सुखाय का नारा"** सार्थक सिद्ध होगा।

(७.३) (अ) उपन्यासों में -

भीष्म साहनी ने अपने 'तमस' एवं 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यासों में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का सुन्दर चित्रण किया है। धर्म का बदलता हुआ परिदृश्य 'तमस' उपन्यास में अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है।

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। यहाँ विविधता में एकता पाई जाती है। भारत में अनेक धर्म होने से यहाँ यह किसी को मनाही नहीं है कि आप इस धर्म को मानें। भारत में किसी भी धर्म का व्यक्ति हो, वह यहाँ पर रह सकता है, लेकिन हिन्दू लोग धर्म से ज्यादा जुड़े होने से वे अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारते हैं। वे भक्ति में इतने लीन हो जाते हैं कि उन्हें इस बात की भी चिन्ता नहीं रहती कि हमारे आगे पीछे क्या हो रहा है? **ऐसा ही एक परिदृश्य 'तमस' उपन्यास में देखने को मिलता है।**

मुरादअली ने नत्थू से एक सुअर मारने को कहा था। नत्थू सुअर को मारना नहीं चाहता था। अंग्रेज ऑफीसर सालोतरी साहब ने मुरादअली से एक सुअर डाक्टरी परीक्षण के लिए मँगवाया था। मुरादअली मुसलमान होने से सुअर को मार नहीं सकते थे, इसलिए उसने नत्थू से सुअर मारने को कहा। उसने नत्थू की जेब में ५ रू. का नोट रख दिया। वह नत्थू को हमेशा मरे पशुओं की खाल दिलवा दिया करता था, जिससे उसकी रोजी रोटी चलती थी।

नत्थू यह नहीं जानता था कि इस सुअर को मस्जिद में फेंक दिया जाएगा, जिससे इतना बड़ा दंगा हो जाएगा। अंग्रेज भारत में **'फूट डालो शासन करो'** की नीति अपना कर हिन्दू और मुसलमानों को आपस में लड़ा रहे थे। अंग्रेज स्वयं मजे से शासन कर रहे थे। वे यह कभी नहीं चाहते थे कि हिन्दू और मुसलमान एक हो। अगर हिन्दू और मुस्लिम एक हो गए तो उनका शासन करना मुश्किल हो जाएगा। जब अंग्रेज भारत छोड़ कर गए, तब हिन्दुस्तान और पाकिस्तान को दो अलग-अलग राष्ट्रों में बाँट गए। बंगभंग आन्दोलन से ही अंग्रेजों ने तय कर लिया था कि हम तुम्हें साथ नहीं रहने देंगे। हम तुम्हारे दो हिस्से कर ही देंगे।

लीजा ने अपने पति से पूछा कि शहर की स्थिति कैसी है? रिचर्ड ने कहा कि हिन्दू और मुसलमानों के दंगों का डर है। हिन्दू लोग बहुत ही जज्वाती लोग हैं। ये लोग धर्म के नाम पर खून करने को भी तैयार हो जाते है। इनके अन्दर जरा भी सहन शक्ति नहीं है। इनके अन्दर बुद्धि की कमी है- **"सुनो ! सभी हिन्दुस्तानी चिड़चिड़े मिजाज के होते हैं, छोटे-से उकसाव पर भड़क उठनेवाले, धर्म के नाम पर खून करनेवाले, सभी व्यक्तिवादी होते हैं और......और सभी सफेद चमड़ीवाली औरतों को पसंद करते हैं....।"२६**

मस्जिद में जब सुअर डला रहा, तब दंगे का फिसाद बढ़ गया। बख्शीजी के पास उड़ते हुए पत्थर आए। उन्हें तीन-चार आदमी वहाँ दिखाई दिए। हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए। ऐसा ही एक उदाहरण अयोध्या में रामजन्मभूमि एवं वावरी मस्जिद ६ दिसम्बर १९९२ का है। प्रसिद्ध उपन्यासकार दूधनाथ सिंह की औपन्यासिक कृति **'आखरी कलाम'** इस सम्बन्ध में पठनीय एवं प्रासंगिक है। उस समय फैजाबाद के तत्कालीन वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के द्वारा अयोध्या ६ दिसम्बर का सेच शीर्षक से पूरी कहानी लिखी है, जो इस प्रसंग में देखने योग्य है-

"धर्म के नाम पर आपस में लड़ते हैं, देश के नाम पर हमारे साथ लड़ते हैं।" रिचर्ड ने मुस्कराकर कहा।

"बहुत चालाक नहीं बनो, रिचर्ड। मैं सब जानती हूँ। देश के नाम पर ये लोग तुम्हारे साथ लड़ते हैं और धर्म के नाम पर तुम इन्हें आपस में लड़ाते हो। क्यों, ठीक है ना?"

"हम नहीं लड़ाते, लीजा, ये लोग खुद लड़ते हैं।"२७

बख्शीजी जब मस्जिद में सुअर को मरा देखते है, तब वे सोचते है कि सुअर को यहाँ से हटा देना चाहिए, जिससे दंगा न बढ़े। कांग्रेस कमेटी में कुछ लोग देश प्रेमी, कुछ स्वार्थी लोग भरे हुए थे।

वे दंगे के चक्कर में फँसना नहीं चाहते थे। उन्होंने बख्शीजी से कहा कि हमें जितनी जल्दी हो सके यहाँ से निकल जाना चाहिए-

"मैं इनसे इत्तफाक करता हूँ", मेहता जी बोले, "हमें इसमें नहीं पड़ना चाहिए। इससे मामला बिगड़ सकता है।"२८

दंगे के आसार जब चारों तरफ बढ़ते नजर आ रहे थे, तब हिन्दू लोग आराम से बैठे हुए थे। वे बिल्कुल भी असलाहा इकठ्ठा नहीं कर रहे थे। जब हिन्दुओं को मुसलमानों से ज्यादा खतरा नजर आने लगा, तब हिन्दुओं ने फिर लाठी चलाना सीखा। उन्होंने अपनी सुरक्षा के लिए अपने पास कड़वा तेल व कोयला रखा, जिससे जलते अंगारे उन पर फेंके जा सकें। ऐसी सलाहें उस समय दी जा रही थी। हिन्दू यही सोचते थे क्या करना असलहे इकठ्ठा करके? एक सदस्य ने कहा कि तुम लोगों में अक्ल नहीं है। जब विपत्ति सामने आ गई, तब असलाहा इकठ्ठा करने की सोच रहे हो। पहले नींद में सोए हुए थे।

हिन्दुओं में बहुत बड़ी कमजोरी प्यास लगने पर कुएँ खुदवाने की है। हिन्दू हमेशा विपत्तियों से डरते रहते थे। वे विपत्ति को टालते रहते थे, जबकि मुसलमानों की यह विशेषता थी कि वे हर कार्य के लिए हमेशा पहले से ही तैयार रहते थे। शहर के बीचोंबीच एक मन्दिर के ऊपर घड़ियाल लगा हुआ था। यह १९२७ में लगवाया गया था। लोग उसे शिवाला कहते थे। लोगों की यह धारणा थी कि खतरे के समय इसे बजाना उचित होगा। वर्षो से यह खराब पड़ा हुआ था। इसे सही करवा लेना चाहिए, लेकिन एक सज्जन वहाँ पर बैठे हुए थे। उन्होंने कहा

"न ही बजे तो अच्छा है, भगवान कभी न बजवाए !"

" इसी भाव ने हमें कायर बना दिया है।" वानप्रस्थीजी तुनककर बोले- "बात-बात पर खतरे से डरना। इसी कारण म्लेच्छ हमारी खिल्ली उड़ाते हैं, हमारे युवकों को 'कराड़' और 'बनिया' कहकर पुकारते हैं।"२९

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश हैं। यहाँ विभिन्नता में एकता पाई जाती है। यहाँ कुछ अच्छे लोग भी हैं, जो धर्म के नाम पर लड़ते नहीं है और न ही समस्या को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करते है। बल्कि वे यह प्रयास करते है कि जैसे भी हो सके। समस्या वहीं सुलझ जाए।

हिन्दुओं और मुसलमानों में दंगा मचा हुआ था। रिचर्ड हमेशा यह सोचते थे कि ये लोग आपस में लड़ते झगड़ते रहे, जबकि इसमें कुछ पात्र ऐसे भी थे, जो देश में शान्ति चाहते थे। जब हिन्दू और मुसलमानों में दंगा चल

रहा था, तब लीजा ने रिचर्ड से कहा कि आप चाहे तो दंगे को रूकवा सकते है। रिचर्ड इन दंगों को मामले में फँसना नहीं चाहता था। हिन्दू लोग धर्म के नाम पर आपस में लड़ते हैं। ये लोग देश के नाम पर हमारे साथ लड़ते है। लीजा के अन्दर हिन्दू और मुसलमान के प्रति प्रेम भरा हुआ था। वह यह नहीं चाहती थी कि कहीं पर दंगा हो, जिससे देश में खून खराबा हो, जबकि रिचर्ड का यह प्रयास था कि हिन्दू और मुसलमान आपस में लड़ते रहें। रिचर्ड का यह प्रयास था -

"डार्लिंग, हुकूमत करनेवाले यह नहीं देखते कि प्रजा में कौन-सी समानता पाई जाती है, उसकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती है कि वे किन-किन बातों में एक-दूसरे से अलग हैं।"३०

लीजा ने रिचर्ड से कहा कि तुम डिप्टीकमिश्नर हो। शहर में जो दंगा बढ़ रहा है। उसकी वजह भी तुम जानते हो कि यह दंगा क्यों बढ़ रहा है? पूरे देश की समस्या का हल तुम्हारे हाथ में है? अगर तुम चाहो, तो पूरी समस्या को साल्व कर सकते हो।

लीजा ने कहा- **"तुम उनसे यह भी कहना कि तुम एक ही नस्ल के लोग हो, तुम्हें आपस में नहीं लड़ना चाहिए। तुमने मुझे यही बताया था न रिचर्ड?"३१**

सुअर मस्जिद के पास पड़ा हुआ था, मस्जिद के पास से जो भी निकलता है। वह मुँह सिकोड़कर वहाँ से चला जाता है। सुअर के वहाँ पड़े रहने से विवाद बढ़ता ही चला जा रहा था। बख्शीजी ने यह सोचा कि सुअर को यहाँ से हटा दें, जिससे विवाद और न बढ़े। कांग्रेस के अन्य सदस्यों ने कहा कि हमें इस विवाद में नहीं पड़ना चाहिए। जितनी जल्दी हो सके, हमें यहाँ से भाग लेना चाहिए। बख्शीजी ने कहा कि अगर हमने यहाँ के माहौल को देखा न होता तो हम जरूर भाग जाते-

"मेहताजी, आप क्या कह रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी," फिर कश्मीरीलाल और जरनैल को सम्बोधन करके बोले:"तुम आ जाओ मेरे साथ।" और वे गली में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगे।"३२

धर्म हमें धारणा करना सिखाता है कि हम भाई-भाई है। आपस में झगड़ें नहीं। हम लोग मिल जुलकर रहें। वानप्रस्थीजी, रणवीर व देवव्रत भी ऐसे आदमी थे, जो अपने धर्म की रक्षा के लिए जी जान से लगे हुए थे। रणवीर अपने देश के लिए मर मिटने को हमेशा तैयार रहता था। वह एक मुर्गी मारने में हिचकिचाता था, जबकि उसके गुरू ने कहा कि एक और अवसर तुम्हें दिया जाता है। जो युवक एक मुर्गी को मार नहीं सकता है। वह शत्रु को कैसे मार सकता है? उसने बहुत प्रयास करके मुर्गी को मार दिया। उसके गुरू ने कहा कि अब तुम वास्तव में दीक्षा के अधिकारी हो। उसको अब अपने दुश्मन को मारना बड़ा सरल लग रहा था। रणवीर अपने मन में विचार करता-

"मारना मुश्किल नहीं है। इसे मैं आसानी से कत्ल कर सकता था। हाथ उठाया और बस! हाँ, लड़ना मुश्किल होता है। वह भी जब अगला आदमी मुकाबला करने के लिए खड़ा हो जाए, पर छुरा घोंपकर मार डालना आसान काम है, इसमें कौई मुश्किल नहीं।"३३

शहर में दंगे बढ़ते जा रहे हैं। बख्शीजी को शहर में बुरे आसार नजर आ रहे थे। उन्होने जब मस्जिद पर मरे सुअर को देखा, तब वे कहने लगे कि मुझे लग रहा था कि जरूर कही दाल में काला है। वे सीढ़िओं पर से

रहा था, तब लीजा ने रिचर्ड से कहा कि आप चाहे तो दंगे को रूकवा सकते है। रिचर्ड इन दंगों को मामले में फँसना नहीं चाहंता था। हिन्दू लोग धर्म के नाम पर आपस में लड़ते हैं। ये लोग देश के नाम पर हमारे साथ लड़ते है। लीजा के अन्दर हिन्दू और मुसलमान के प्रति प्रेम भरा हुआ था। वह यह नहीं चाहती थी कि कहीं पर दंगा हो, जिससे देश में खून खराबा हो, जबकि रिचर्ड का यह प्रयास था कि हिन्दू और मुसलमान आपस में लड़ते रहें। रिचर्ड का यह प्रयास था -

"डार्लिग, हुकूमत करनेवाले यह नहीं देखते कि प्रजा में कौन-सी समानता पाई जाती है, उसकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती है कि वे किन-किन बातों में एक-दूसरे से अलग हैं।"३०

लीजा ने रिचर्ड से कहा कि तुम डिप्टीकमिश्नर हो। शहर में जो दंगा बढ़ रहा है। उसकी वजह भी तुम जानते हो कि यह दंगा क्यों बढ़ रहा है? पूरे देश की समस्या का हल तुम्हारे हाथ में है? अगर तुम चाहो, तो पूरी समस्या को साल्व कर सकते हो।

लीजा ने कहा- **''तुम उनसे यह भी कहना कि तुम एक ही नस्ल के लोग हो, तुम्हें आपस में नहीं लड़ना चाहिए। तुमने मुझे यही बताया था न रिचर्ड?''३१**

सुअर मस्जिद के पास पड़ा हुआ था, मस्जिद के पास से जो भी निकलता है। वह मुँह सिकोड़कर वहाँ से चला जाता है। सुअर के वहाँ पड़े रहने से विवाद बढ़ता ही चला जा रहा था। बख्शीजी ने यह सोचा कि सुअर को यहाँ से हटा दें, जिससे विवाद और न बढ़े। कांग्रेस के अन्य सदस्यों ने कहा कि हमें इस विवाद में नहीं पड़ना चाहिए। जितनी जल्दी हो सके, हमें यहाँ से भाग लेना चाहिए। बख्शीजी ने कहा कि अगर हमने यहाँ के माहौल को देखा न होता तो हम जरूर भाग जाते-

''मेहताजी, आप क्या कह रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी,'' फिर कश्मीरीलाल और जरनैल को सम्बोधन करके बोले:''तुम आ जाओ मेरे साथ।'' और वे गली में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगे।''३२

धर्म हमें धारणा करना सिखाता है कि हम भाई-भाई है। आपस में झगड़ें नहीं। हम लोग मिल जुलकर रहें। वानप्रस्थीजी, रणवीर व देवव्रत भी ऐसे आदमी थे, जो अपने धर्म की रक्षा के लिए जी जान से लगे हुए थे। रणवीर अपने देश के लिए मर मिटने को हमेशा तैयार रहता था। वह एक मुर्गी मारने में हिचकिचाता था, जबकि उसके गुरू ने कहा कि एक और अवसर तुम्हें दिया जाता है। जो युवक एक मुर्गी को मार नहीं सकता है। वह शत्रु को कैसे मार सकता है? उसने बहुत प्रयास करके मुर्गी को मार दिया। उसके गुरू ने कहा कि अब तुम वास्तब में दीक्षा के अधिकारी हो। उसको अब अपने दुश्मन को मारना बड़ा सरल लग रहा था। रणवीर अपने मन में विचार करता-

''मारना मुश्किल नहीं है। इसे मैं आसानी से कत्ल कर सकता था। हाथ उठाया और बस! हाँ, लड़ना मुश्किल होता है। वह भी जब अगला आदमी मुकाबला करने के लिए खड़ा हो जाए, पर छुरा घोंपकर मार डालना आसान काम है, इसमें कोई मुश्किल नहीं।''३३

शहर में दंगे बढ़ते जा रहे हैं। बख्शीजी को शहर में बुरे आसार नजर आ रहे थे। उन्होने जब मस्जिद पर मरे सुअर को देखा, तब वे कहने लगे कि मुझे लग रहा था कि जरूर कही दाल में काला है। वे सीढ़िओं पर से

सुअर को हटाना चाहते थे, लेकिन मेहता जी ने मना किया कि हमें क्या करना सुअर को हटा के? इससे मामला और बिगड़ सकता है। हमें जितनी जल्दी हो सके। यहाँ से भाग जाना चाहिए। बख्शीजी एक वृद्ध आदमी थे। वे कई साल जेल में रहकर आए थे। उन्हें जिन्दगी का तजुर्वा था कि लड़ाई में कोई सार नहीं है। हम जेल में रहे। हमें क्या मिला? पूरी जिन्दगी इसी जेल व लड़ाई झगड़े में बीत गई। इस झगड़े में कितने निसहाय लोग मारे गए? अगर हमने शान्ति की बात सोची होती; तो शायद यह नौवत न आती। वे कांग्रेस पार्टी के हैड थे। वे जो भी निर्णय लेते थे। वही होता था। उन्होंने मेहता की बात में भी रूचि नहीं ली। अगर बख्शीजी भी यही सोच लें कि हमें क्या करना है? दंगे रोकने से, तो आम जनता के अन्दर देश प्रेम की भावना कैसे बढ़ेगी? हमारे आज के नवयुवक उस दंगे को रोकने में कैसे मदद करेंगे? जब हम ही भाग जाएँगे

"मेहताजी, आप क्या कह रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी,"।३४

भीष्मसाहनी के 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' नामक उपन्यास में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य अनेक स्थानों पर देखे जा सकते हैं।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' भारत अनेक धर्मो का देश है। यहाँ पर कोई भी धर्म एक दूसरे से बँधा हुआ नहीं है।

सभी लोग अपने-अपने धर्म को मानते है। पहले के जमाने में लोग अपने धर्म के लिए मर मिट भी जाते थे। धर्म के नाम पर ही ६ दिसम्वर सन् १६६२ का अयोध्या कांड हुआ। धर्म के नाम पर ही **पाकिस्तान के पूर्व सैन्य प्रमुख राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ़ पर आतंकवादियों ने दो बार हमला किया। पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री बेनजीर भुट्टो की हत्या के पीछे भी धार्मिक कारण ही बताए जाते हैं।**

धर्म की परिकल्पना मनुष्य ने मानव समाज को विकृतियों एवं दोषों से बचाने के लिए की थी। धारण करने योग्य कर्मो का समूह ही धर्म था।

इसमें व्यक्तिगत हित की वात न होकर समाज के कल्याण की विचारधारा ही प्रस्फुटित एवं पल्लवित थी, परन्तु धीरे-धीरे धर्म में अनेक विकृतियाँ आती गई और धर्म मनुष्य के स्वार्थ साधन का आधार बन गयाा। धर्म में निहित मानव प्रेम का भाव तिरोहित होने लगा और इसका ध्यान विद्वेष और हिंसा ने ले लिया। मानव मनुष्य समाज अनेक सम्प्रदायों में बँट गया और अपने सम्प्रदाय को दूसरे से श्रेष्ठ मानने का भाव प्रबल हो गया।

आज के वैज्ञानिक युग में भी धर्म का जन्म अतिभुख्खड़, कामुक और बर्बर समय धर्म में हुआ। जब मनुष्य की भौतिक क्षमता सीमित थी। आज कम्प्यूटर भरे महानगरों में भी धर्म का सघन प्रभाव है। विकसित से विकसित देश की जनता भी देश के स्पर्श से मुक्त नहीं है। पिछड़े ही नहीं, अमीर भी उसकी जकड़ में है। कम शिक्षित ही नहीं, वैज्ञानिक, डॉक्टर और इंजीनियर भी कड़ा, जनेऊ, ताबीज और गृहशांति कारक अंगुठियाँ पहनते हैं।

हर धर्म में ऐसे तत्व हैं, जिन्हें उभारकर कट्टरतावादी अपना उल्लू सीधा करते हैं, क्योंकि सभी धर्म उस दौर की आध्यात्मिक लहरें हैं। जब सभ्यता पिछड़ी और भयानक रूप से हिंसा थी। हर धर्म में ऐसे तत्व भी है, जिनसे

आदर्श मानव समाज को प्रेरणा मिलती है। आधुनिक और प्रगतिशील ताकतों ने ऐसे तत्वों का उपयोग कर मिश्रित भारतीय समाज को विकृत दिशा दी, कट्टरवादियों ने धर्म के आदर्श रूप को सीखने नहीं दिया।

हमारे धर्म में नारी को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है, इस लिए नारियों का नाम पुरूषों की अपेक्षा पहले आता है। वह घर की लक्ष्मी मानी जाती है। मनु ने स्त्री को पिता पति और पुत्र के अधीन रखने का विधान किया है। इस विधान में फैलने वाले असंतोष का आभास उन्हें था, इसलिए यह भी कहा गया-

"जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता का वास होता है।' अर्थात् नारी पर वर्चस्व की मनोवृत्ति की धार्मिक आदर्श के अंतर्गत रखकर उसने स्त्री आन्दोलन के उभरने से पूर्व ही कुचलने ही पहली ईट रख दी।"३५

नीलू मुसलमानी लड़की और सुधीर हिन्दू लड़का है। वे एक दूसरे को दिलों जान से चाहते हैं और एक दूसरे के बिना रह भी नहीं सकते हैं। जब वे विवाह कर लेते हैं, तब उनके विवाह को लेकर अर्थात् अलग-अलग धर्म को लेकर विवाद का घेरा बन जाता है। सभी समाजों में विवाह अपने-अपने धर्म में ही होते हैं। जो इसके विरूद्ध जाते हैं। उन्हें न तो घर के लोग स्वीकार करते हैं और न ही समाज के लोग स्वीकार करते हैं।

प्राचीनकाल में ऐसे विवाह को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। उन्हें समाज से अलग कर दिया जाता था। इस विवाह से नीलू के घर के लोग कोई खुश नहीं थे। बाहर के लोग नीलू के पिताजी को ताने देते थे और पढ़ालो लड़की को बाहर, पढ़ने के लिए गई थी और क्या करके लौटी? उसे विवाह ही करना था तो अपनी जाति के लड़के से नहीं कर सकती थी, जो दूसरे धर्म में मर मिटने को चली। नीलू के छोटे भाई हमीद को यह रिस्ता बिल्कुल पसंद नहीं था। उसने नीलू से कहा-

"तुम उसे ख़त डाल सकती हो कि वह दीन कबूल कर ले। कलमा पढ़ ले। हम लोग उसे छाती से लगा लेंगे। वह हमारा अपना हो जाएगा, पर वह अगर दीन कबूल नहीं करे तो उसके साथ रिश्ता अपनों जैसा नहीं हो सकता।"३६

नीलू जब सुधीर के साथ शिमला में रहने लगती है, तब उसका भाई हमीद उसे बहलाकर अपने घर ले जाता है। हमीद ने रास्ते में नीलू को बहुत बुरा भला कहा। तुम यहाँ गुलछर्रे उड़ा रही हो। वहाँ हम लोगों को क्या स्थिति हो रही हैं? उधर माँ तुम्हारे लिए मरी जा रही है।

सुधीर जब नीलू को ड्योढ़ी में ले जाता है, तब नीलू वहाँ चीख उठती है-

"मुझे यहाँ से ले चलो, हमीद भाई ! मैं बच्चा नहीं निकलवाऊँगी। मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।"

"बच्चा तो तुम्हें निकलवाना होगा। एक काफिर का तुखम तुम्हारे अन्दर पल रहा है। उसे अपने पेट में लिये हुए तुम हमारे घर के अन्दर दाख़िल नहीं हो सकती।"३७

भीष्मजी ने ऐसा इसलिए दिखाया कि जो लोग अपने धर्म को छोड़कर दूसरे धर्म में विवाह करते हैं। उन्हें कैसी-कैसी परेशानियाँ सहनी पड़ती है। दूसरे धर्म में विवाह करना तलवार की नोंक पर चलना है। आज के बदलते परिदृश्य में ऐसा नहीं हो रहा है। आज युवा पीढ़ी शिक्षित हो रही है। वह पुराने रीति-रिवाजों को नहीं मानती है। वे विदेशों में पढ़ने जा रहे हैं। आज लड़कों व लड़कियों को बराबरी की शिक्षा दी जा रही है, जिससे उनके विचार बदल

रहे हैं। वे पुरानी रूढ़ियों को तोड़कर आज के बदलते नये परिप्रेक्ष्य से जीना चाहते हैं। भीष्म साहनी जी ने कहा है कि अगर दोनों धर्म एक सूत्र में बँधेंगे तो दोनों में आपसी प्रेम बढ़ेगा, वैमनस्यता घटती चली जाएगी और सभी जगह "हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख एवं ईसाई हम सब है भाई-भाई नजर आएगा।" उन्होंने नीलू नीलिमा नीलोफ़र उपन्यास के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि नीलू और सुधीर की धर्म अलग-अलग होते हुए भी उनमें एक दूसरे के प्रति त्याग की भावना है। जब नीलू के परिवार वाले नीलू को आधे घंण्टे के लिए अपने साथ ले जाते हैं, तब सुधीर ने कहा- **"नीलू जो फ़ैसला करे, मुझे मंजूर है। उसका फ़ैसला सिर-आँखों पर। मुझे उसी की खुशी मंजूर है। वास्तव में हमीद को चिल्लाता देखकर सुधीर को नीलू की स्थिति पर दया आने लगी थी। एक तो अपने घर-परिवारवालों को छोड़े, इस पर उनके मुँह से बुरा-भला सुने। मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे नीलू की खुशी चाहिए। वह बार-बार मन में कहता रहा था।"**३८

जब पुलिस थाने में नीलू के भाई पिताजी थे, जब पुलिस वाले ने कहा कि जो लड़की फैसला करेगी वही माना जाएगा। नीलू ने कहा-

"मैं सुधीर के साथ जाऊँगी।"३९

वास्तव में इस विवाह ने पुराने रूढ़िवादी धार्मिक विचारों को तोड़कर एक नए धर्म को जन्म दिया है जो दोनों धर्मो को करीब लाता है। दोनों धर्मो में एक दूसरे को नींचा दिखाने की जो भावना है। वह दूर हो जाती है। जब नीलू की माँ हमीद से कहती है कि तुमने उसका बच्चा निकलवा कर अच्छा नहीं किया और तुम अपनी बहिन को विधवा करना चाहते हो। माता और पिताजी हमीद को बहुत डाँटते है। वह तुम्हारी बहिन है। वे एक दूसरे को चाहते हैं। तुम्हे तो खुश होना चाहिए कि तुम्हारी वहिन खुश रहे और तुम्हीं उसका घर मिटाने पर तुले हुए हो।

नीलिमा हिन्दू लड़की है। उसके पिता वकील है। नीलिमा का एक मित्र है। उसका नाम अल्ताफ़ है। वह मुसलमान है। दोनों एक दूसरे को पसंद करते हैं। अल्ताफ़ नीलिमा के पिताजी का दोस्त का लड़का है। नीलिमा के पिता स्वयं चाहते है कि अगर नीलिमा अल्ताफ़ से विवाह करना चाहे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

नीलिमा के पिता अपनी बेटी की खुशी चाहते हैं। वे यह नहीं चाहते हैं कि मेरी बेटी घुट-घुटकर जिए। नीलिमा की दादी को यह रिस्ता पसंद नहीं है। दादी पुराने विचारोंवाली है। दादी जानती है कि अल्ताफ़ मुसलमान लड़का है। उसे अल्ताफ़ का घर आना-जाना पसंद नहीं है। पिताजी ने कहा-

"घर में अल्ताफ़ जब आए तो उसे शेखर कहकर बुलाया करे, ताकि माँ को पता ही न चले कि वह मुसलमान है।"४०

दादी ने कहा के तुम्हारी बेटी पर्दे में चली जाएगी। उन लोगों का कुछ भी पता नहीं है। वह बेटी के साथ कैसा व्यवहार करें? मुसलमान एक के साथ दूसरा विवाह भी कर सकते हैं, फिर तुम अपनी बेटी का क्या करोगे? उनका रहन-सहन, खाना-पीना, रीति-रिवाज बिल्कुल अलग हैं। उन लोगों का कुछ भी पता नहीं है। वे तीन बार कहकर बेटी को तलाक दे देते हैं। माँ के इन विचारों का नीलिमा के पिताजी के ऊपर कोई असर नहीं हो रहा था। उसके पिताजी की अजीब स्थिति हो रही थी-

"उसके लिये बेटी की खुशी सर्वोपरि थी, वह बेटी को निराश नहीं कर सकता था, न ही

बेटी पर किसी प्रकार का अंकुश लगाना चाहता था।"४१

नीलिमा की दादी कभी खाना नहीं खाती तो कभी चिढ़ जाती और कहती-

"कोई उसे बसाएगा? क्या दर-दर की ठोकरें खाएगी? क्यों अपनी बेटी की ज़िंदगी के साथ खिलवाड़ करनाा चाहते हो, बेटा? वह फूल-सी कोमल बच्ची है। मैं उसे जानती नहीं हूँ क्या? मैं उसका चाँद-सा मुखड़ा देख-देखकर ही जी रही हूँ। मैं नहीं चाहती उसका बाल भी बांका हो। मेरे दिल में हौल पड़ता है जब मैं उन दोनों को एक साथ देखती हूँ और सब लड़के-लड़कियाँ अपने-अपने घर चले जाते हैं, वह यहीं पर डोलता रहता है। यहाँ देर तक डोलने का उसका मतलब क्या है? लड़की एक बार जाल में फँस गई तो कभी उस जाल से निकल नहीं पाएगी। जो काम करो, सोच-समझकर, आँखें खोलकर करो। मैं पुराने ख्यालों की हूँ, बेटा पर मुझे तो लड़के-लड़कियों का बाँहों में बाँहें डालकर डोलना बेशर्मी लगता है। ये बातें ब्याह के बाद भी हो सकती हैं। बेटी को संयम से रहना सिखाओ। इसी में उसकी इ़ज़्ज़त है, शोभा है...."४२

पिता ने अपनी बेटी का साथ दिया। उन्होंने कहा कि मेरी बेटी B.A. कर चुकी है। वह अपना अच्छा-बुरा स्वयं सोच सकती है। मैं उसके पैर नहीं बाँध सकता हूँ। उसे जैसा अच्छा लगे, मुझे वैसा मंजूर है।

नीलिमा के पिता पुरानी विचारधारा के व्यक्ति नहीं थे। वे प्रगतिशील विचारधारा के धनी थे। वे प्राचीनकाल की रूढ़िवादी विचारधारा में विश्वास नहीं करते थे। वे आजकल की विचारधारा में विश्वास करते थे। लेखक ने नीलिमा के पिताजी के माध्यम से हिन्दू और मुसलमान में आपसी प्रेमालाप बना रहे। सभी कटुताएँ दूर हों। मुसलमान दीवाली और हिन्दू ईद मनाएँ। दोनों एक दूसरे के धर्म का आदर करें। कोई किसी को नीचा दिखाने का प्रयत्न न करें, तभी यह कहना सार्थक होगा,

'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।'

"नाते रिश्तेदार खबर पाते, तब दौड़ लगाते
रात विरात पड़ोसी ही तो, काम हमारे आते
काम हमारे आते, काफी कुछ राहत पहुँचाते।
तन-मन धन अर्पण कर विधिवत है, सहयोग जताते
कहे अनाड़ी पड़ोसियों से, भूल बैर न ठानो
लाख टके की बात बताता, मानो या न मानो"४३

हमारा पड़ोसी देश पाकिस्तान ही है। हमें अपने पड़ोसी देश से दुश्मनी न रखकर भाई और मित्रता का रूप रखना है, तभी भीष्म साहनी के उपन्यास लिखना सार्थक होगा।

इस प्रकार भीष्म साहनी ने उपन्यासों में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का सफलता पूर्वक वर्णन किया ।

(७.३) (ब) कहानियों में -

भीष्मसाहनी ने अपनी अनेक कहानियों में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का अद्वितीय वर्णन द्रष्टव्य है -

'झुटपुटा' -

"आज देश में साम्प्रदायिक उपद्रव होना एक आम बात है। प्रायः ये दंगे कभी राजनीति या कभी धर्म को लेकर हो रहे हैं। कोई न कोई मुद्दा आतंकवादियों को आतंक फैलाने का है। अब पाकिस्तान को एक आतंकवादी देश कहा जाने लगा है, परन्तु पाकिस्तान आतंकवादियों की पूर्व प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो के अनुसार पाकिस्तान आतंकवादियों की शरण स्थली होता जा रहा है।"४४

लेकिन पाकिस्तान के राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ इस बात को स्वीकार नहीं करते है। भारतीयों पर प्रहार करने के लिए पाकिस्तानियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। आज़ादी के समय के माहौल पर नज़र डालें तो हिन्दू और मुसलमान को लेकर दंगे हो रहे थे, लेकिन अब सिक्खों को लेकर हुए है। जब इंदिरागाँधी भारत की प्रधानमंत्री थी। उस समय पंजाब में सिक्खों ने दंगे किए, जिसे इंदिरागाँधी ने सख्ती से दबा दिया, जिससे सिक्ख लोग १९८४ में भड़क उठे। एक सिक्ख ने जो इंदिरागाँधी का सुरक्षा गार्ड था, इंदिरागाँधी की जघन्य हत्या कर दी। इसी मुद्दे को लेकर यह कहानी लिखी गई है।

आज के बदलते परिदृश्य में हर जगह धर्म ही मुद्दा बना हुआ है। प्रो० कन्हैयालाल ने कहा कि आज हर जगह सन्नाटा छाया हुआ है। एक दिन में ही सारा परिदृश्य बदल गया। दुकानदार कहने लगे कि आपको जो सामान चाहिए। वह ले लीजिए पता नहीं कव दुकान खुले? हर जगह यही सुनने में आ रहा था। इधर आग फैल रही हैं और आग की लपटें ऊँची-ऊँची आसमान में फैल रही हैं। दिन को लगाई गई आग में दहशत नहीं होती, जबकि रात के वक्त लगी आग साँपों की तरह ऊपर उटती हुई नजर आती हैं। कन्हैयालाल ने क्या देखा कि लोग छत पर जा जाकर देख रहे हैं कि कहाँ लगी हुई है आग? सभी छतै भरी हुई है, लेकिन सरदार की छत खाली है। कवि इकबाल की यह पंक्ति 'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना' कहाँ हमें प्रेम करना सिखाती है? कहाँ हिन्दू सिक्खों की हर वस्तु, जो मिले उसे नष्ट करते तथा यदि कोई सरदार ने ज्यादा प्रतिरोध किया तो उसे मार भी देते हैं। जब कुछ लठैत आराम से आकर दुकानों में घुस जाते हैं। वे ऐसे घुस जाते हैं जैसे इनके पिताजी की दुकान हो और एक सरदार की दुकान के अन्दर घुसकर अलमारी को सड़क के बीचोंबीच ले जाकर उसे जला देते है। जैसे ही वे साइनबोर्ड पर छड़ से अलमारी को पीटते है वैसे ही-

"दुकान सरदार की है मगर घर तो हिन्दू का है।" ४५

ऐसा ही एक परिदृश्य वहाँ दिखलाई देता है, जब लोगों ने यह सोचा कि यह कार तो सेठी की है। इसे जला दो, लेकिन बाद में पता चला कि यह कार तो हिन्दू की है। मद्रासी को समझ में नहीं आया कि हम क्या करें? 'वेस्ट पटेलनगर के पीछे एक सरदार को भून डाला' मद्रासी ने पूछा कौन था वह-

" कोई बढ़ई था। अपनी बेटी से मिलने आया था। उसे कुछ मालूम तो था नहीं, बलबाई

आए तो बीच में कूद पड़ा। उन्हें रोकने लगा। अब वहाँ कौन सुननेवाला था? उसे वहीं....." ४६

ऐसे परिदृश्य जहाँ देखो वहाँ नजर आते हैं। कोई हिन्दू गुरूद्वारे जहाँ देखो वहाँ नजर आते हैं। कोई हिन्दू गुरूद्वारे को मानता है। वह जानता है कि यह सिक्खों का धर्म है, लेकिन उस हिन्दू को गुरूद्वारे में श्रद्धा है। वह किसी को बताए बिना भी अपने घर में छोटा-सा गुरूद्वारा बनाए हुए हैं। उसने हिन्दू मद्रासी से कहा है-

"मेरे घर में दरबार साहिब रखा है ना ! एक कमरे में हमने छोटा-सा गुरूद्वारा बनाया हुआ है ना, साई । अब किसी बदमाश को पता चल जाता तो मेरे घर को ही आग लगा देता। अब अपना ही कोई आदमी उन गुंडों को बता देता कि इधर दरबार साहिब रखा है, तो वे मेरे घर को ही आग लगा देते। हम हिन्दू तो एक-दूसरे को ही काटते हैं ना ।"४७

पहले हिन्दू और सिक्खों में दंगा हुआ था। वे एक दूसरे के खून के प्यासे थे। उन्होंने उनका सारा सामान नष्ट कर दिया। दूसरी जगह यह देखने को मिला कि एक तरफ विद्वेष तो दूसरी तरफ दोनों में प्रेम है। जब कुछ दुकानदार सिक्ख की अलमारी जला चुके, तब एक आदमी ने कहा-

"इधर पीछे ड्राईक्लीनर की दुकान को आग नहीं लगाई।"

"क्यों ?

"क्योंकि उसमें एक हिन्दू और एक सिक्ख दोनों भाईवाल हैं।"

"यह भी अच्छी रही ।" इस पर कुछ लोग हँस दिए ।

"पीछे, मोतीनगर में, ड्राईक्लीनर की एक दुकान किसी सिक्ख-सरदार की है। उसे जलाने गए तो किसी ने पुकारकर कहा, 'ओ कमबख़्तों, दुकान सिक्ख की है, पर उसमें कपड़े तो ज्यादा हिन्दुओं के ही हैं !" इस पर उसे भी छोड़ दिया।" ४८

एक जगह सिक्ख व हिन्दू में इतना प्रेम दिखाया है कि एक लड़की दूध लेने के लिए जाती है। बस्ती में दंगा मचा हुआ है। कन्हैयालाल ने अपने मित्र की बेटी से कहा कि बेटी! इधर दूध उपलब्ध नहीं है और तुम तीन-तीन डोलची किसके लिए जा रही हो लड़की धीरे से बोली-

"एक डोलची साथ वालों की है, सरदार अंकल की, दूसरी ऊपरवालों की, एक हमारी।"४६

कन्हैयालाल यह सुनकर चौकन्ना हो जाते हैं।

ऐसा ही एक परिदृश्य वहाँ देखने को मिलता है। जब शहर में बहुत दंगा हुआ था, तब शहर में दूध कहीं पर उपलब्ध नहीं था। लोगों की डेरी में दूध लेने के लिए भीड़ लगी थी। चौधरी साहब पब्लिक की सेवा करते थे। वह स्वयं को 'पब्लिक का सरदार' कहते थे। एक मद्रासी ने चौधरी साहब से पूछा कि दूध की क्या पोजीशन है? दूध हम लोगों को मिलेगा या नहीं। चौधरी ने कहा कि अभी हमने बाबू से फोन पर बात की थी। बाबू ने कहा-

"दूध तो बहुत है, आओ और आकर ले जाओ।"

"क्या मतलब ! क्या हम दूध लेने जाएँगे? ऐसे भी कभी हुआ है ! दूध है तो भेजता क्यों नहीं?"

"बोलता है, दूध के तो ड्रम-के ड्रम भरे हैं, पर भेजें कैसे?"

"क्यों ?"

"सभी ड्राइवर सरदार हैं। उन्हें नहीं भेजा जा सकता। खतरा है ना।"५०

चौधरी ने मद्रासी से धीमे स्वर में कहा कि अगर कोई हिन्दू ट्रक चलाना जानता हो, तो वहाँ जाकर ले आए। चौधरी खड़े-खड़े ऊँची आवाज में बोला-

"इधर, दूध लेने के लिए सभी दौड़े आएँगे, पर वहाँ से लेने कोई नहीं जाएगा। पब्लिक की सेवा करने में हिन्दू की माँ मरती है।"५१

दूध लेने के लिए जब कोई नहीं जाता है, तब एक सरदार अपनी जान पर खेलकर सबके लिए दूध लाता है। वहाँ किसी एक घर का नौकर चिल्लाता है- "दूध आ गया ! दूध की लारी आ गई।" ५२

कन्हैयालाल से जब रहा नहीं गया, तब उसने सरदार से पूछा कि आप यहाँ कैसे? सरदार ने मुस्कराकर कहा-

"बाबा, बच्चों ने दूध तो पीना है ना। मैंने कहा, चल मना; देखा जाएगा जो होगा। दूध तो पहुँचा आएँ। ५३

जीवन के कई ऐसे मोड़ दिखाए गए हैं। जहाँ कट्टरवादिता भी है, हिन्दू ही हिन्दू का दुश्मन है तो कहीं हिन्दू और सिक्ख आपस में धार्मिक उदारता तथा भाईचारे की भावना दिखाकर प्रेम **'मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना, हिन्दी है हम वतन है हिन्दुस्ता हमारा'** के आदर्श को चरितार्थ करते नजर आते हैं-

' आओ अमन के दीप जलाकर,
हर हिंसा को हर जाएँ।
आओ प्यार के गीत सुनाकर,
हम घावों को भर जाएँ ।।'

"यूँ ही हमेशा उलझती रही है जुल्म से खल्क
न उनकी रस्म नई है, न अपनी रीत नई
यूँ ही हमेशा खिलाए हैं हमने आग में फूल
न उनकी हार नई है, न अपनी जीत नई।"५४

'आवाजें' -

आज समाज में मर्यादाएँ समाप्त होती जा रही हैं। पहले के जमाने में लोग एक पत्नी व्रत का पालन करते थे। वे एक-दूसरे के सुख-दुख के साथी होते थे, लेकिन आज के बदलते परिदृश्य में पुरूष एक पत्नीव्रत का पालन नहीं करता है। वह पहले विवाह करता है। संतान बढ़ाता है। जब मौका आता तो पत्नी का साथ छोड़कर दूसरा विवाह कर

लेता है।

ऐसा ही एक परिदृश्य भीष्म साहनी जी ने अपनी कहानी 'आवाजें' में दिखाया है। देवकी के दो बच्चे हैं। उसका पति उसे तथा अपने दो बच्चों को छोड़कर चला जाता है। देवकी का पति दूसरा विवाह कर लेता है। वह लड़की दूसरे धर्म की है। देवकी का पति लड़की के धर्म को स्वीकार कर लेता है और अलग से रहने लगता है।

ऐसे माहौल में पुरूष ने तो दूसरा विवाह कर लिया, पर जरा नजर डालें तो देवकी का तथा उसके बच्चों का क्या होगा? अगर आपको दूसरा विवाह करना है, तो आप अपनी प्रेमिका को घर पर ले आओ। घर छोड़ने की क्या जरूरत है? अगर घर में रहेंगे तो परिवार तो नहीं बिखरेगा। हमें जरूरत आपस में समझौता करने की है। न कि परिवार को तोड़ने की।

(७.३) (स) नाटकों में -

भीष्मसाहनी ने अपने अनेक नाटकों में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का सुन्दर चित्रण किया है -

'माधवी' -

धर्मग्रन्थों में मनुष्य के बहुत से गुण गिनाए हैं, पर कहा है कि कर्तव्यपालन मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है, जो मनुष्य कर्तव्य परायण है, वही सच्चा साधक है। अपने माता-पिता, गुरु एवं अपने धर्म के प्रति क़र्तव्य इसी को सच्ची साधना कहते हैं। कर्तव्यपालन क्या है? अगर किसी को वचन दे दिया, तो उसे पूरा करना है। मुँह से जो बात हमने कही, वह पत्थर की लकीर बन जाए। तुलसीदास ने कहा है -

"रघुकुल रीति सदा चली आई।
प्राण जायें पर वचन न जाई ।।"५५

कर्तव्यपालन का एक ऐसा ही परिदृश्य 'माधवी' नाटक में देखने को मिलता है। माधवी अपने पिता की एक आज्ञाकारी पुत्री है। राजा ययाति ने जब अपनी बेटी माधवी से कहा कि बेटी तुम्हें इस युवक के साथ जाना है। बेटी सोच में पड़ गई कि मेरे पिता मुझे अपने पास क्यों नहीं रखना चाहते? मुझे उस युवक के पास क्यों भेजना चाहते है? माधवी को गालव से पता चला कि वह अपनी गुरूदक्षिणा के संकल्प को पूरा करने के लिए राजा ययाति के पास आया है, लेकिन उनके पास ८०० अश्वमेधी घोड़े न होने से उन्होंने तुम्हें मुझे दान में दे दिया। तुम विशिष्ट लक्षणोंवाली युवती हो। तुम एक चक्रवर्ती पुत्र को जन्म दोगी, जिससे कोई भी राजा तुमको ८०० अश्वमेध घोड़े दे देगा। अगर कोई भी कुंवारी लड़की किसी पर पुरूष से सम्बन्ध स्थापित करती है और पुत्र को जन्म देती है, तो समाज में उस पुत्र को नाजायज माना जाता है। उसे समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है, लेकिन माधवी ने यह सब काम अपनी पिता की आज्ञा व गालव के संकल्प को पूरा करने के लिए किया। आज समय बदल रहा है।

आज हर व्यक्ति अपने स्वार्थ को पूरा करना चाहता है। हम किसी नौकरी का साक्षत्कार देने जाते है।

हम उसमें उत्तीर्ण हो जाते हैं, लेकिन अधिकारी हमसे रिश्वत माँगते हैं। उसे रिश्वत देना हमारा कर्तव्य नहीं है, हमारे धर्म के खिलाफ हैं, लेकिन मजबूरी बस हमें अपने परिवार का भरण पोषण करना है, इसलिए हमें रिश्वत भी देनी पड़ती है। उसी प्रकार माधवी अन्य पुरूषों के सम्पर्क में नहीं जाना चाहती थी, लेकिन अपने पिता की कीर्ति को बनाए रखने एवं उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए उसे कार्य ऐसा करना पड़ा।

'कबिरा खड़ा बजार में'-

भारत एक धर्म निरपेक्ष देश हैं। यहाँ अनेकता में एकता पाई जाती हैं। कोई भी धर्म हमें लड़ना नहीं सिखाता है। वह हमें भाई-चारें की भावना को अपनाने पर बल देता है, लेकिन आज लोग धर्म के नाम पर लड़ रहे है। एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। जब पृथ्वी पर ज्यादा अत्याचार बढ़ जाता है, तब कोई न कोई महापुरुष जन्म लेता है। **तुलसीदास** का कथन है-

"जब-जब होइ धरम कै हानी।

बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।

तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा।

हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।" ५६

ऐसे पाखंडी संत जो धर्म के नाम पर लड़ते हैं। एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं। धर्म के नाम पर आडम्बर फैलाते हैं। साधु महात्मा तिलक लगाकर घूमते हैं। सोने की पालकी में जाकर भोली-भाली जनता को अपने पैरों का चरणामृत पिलाते हैं और स्त्रियों से भोग करते हैं। हिन्दू और मुसलमानों को आपस में लड़ाते हैं। लोगों को गुमराह करते हैं। इनके संकट को दूर करने के लिए महापुरूष आगे आते हैं। ऐसा ही एक परिदृश्य **'कबिरा खड़ा बजार में'** में देखने को मिलता है।

कबीर एक क्रान्तिकारी महापुरुष हैं। वे सभी धर्मों की कुरीतियों का विरोध करते हैं। वे मानव को मानव से प्रेम करना सिखा रहे हैं। कबीर बोले कि मैं सेठिया की दुकान के पास खड़ा था। उधर मैंने दो कसाई देखे। वे गाय को बाँधे लिए जा रहे थे। पीछे-पीछे गाय का बछड़ा जा रहा था। मुझे यह सब देखकर बहुत बुरा लगा। एक मासूम को वह कसाई काटने जा रहा था। हिन्दुओं में गाय को माता के समान पूजा गया है। मुसलमान लोग गाय को खाते हैं। मुझसे यह सब देखा नहीं गया। मैंने अपना एक कवित्त पढ़ दिया-

"दिन भर रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय।

यह तो खून वह बन्दगी, कैसी खुसी खुदाय।।"५७

महन्त जी की जब सवारी काशी आ पहुँची, तब सभी भक्त रास्ते में उनका अभिवादन कर रहे थे। एक बच्चा रास्ते में आ गया, तो साधु लोगों ने उस बच्चे पर कोड़े बरसाए। कबीर ने उस बच्चे को बचा लिया। उन्होने कहा कि तुम उस बच्चे को क्यों मार रहे थे ? साधु ने कहा कि यह चांडाल का बेटा है, देखते नहीं महन्त जी की सवारी आ रही है। इस बच्चे की छाया पड़ने से मेरा धर्म भंग हो जाएगा। कबीर ने कहा कि तुम ऊपर से तो साधु दिखते

हो, लेकिन अन्दर से तुम कपटी दिखते हो। साधु का काम अपनी साधुता दिखलाना है। हर दुखी लोगों की मदद करना है। कबीर ने कहा-

कहाँ से मिली इतनी बड़ी चाबुक महाराज, भगवान के नाम पर चाबुक चलाते हो?

"माला फेरी, तिलक लगाया, लम्बी जटा बढ़ाता है।।

अन्तर तेरे कुफ़र कटारी, यों नहीं साहिब मिलता है।" ५८

एक जगह कबीर ने कहा कि खुदा को चिल्लाकर पुकारने से क्या तुम्हें खुदा मिल जाएगा? इसकी कड़ी आलोचना की है। अगर तुम्हें चिल्लाने से खुदा मिल जाए तो और चिल्लाओ। कबीर ने देखा कि अज़ान का समय हो गया। लगे मुल्लाजी मस्जिद में अल्लाह को पुकारने लगे। कबीर जी ने मुल्ला जी पर टिप्पणी करते हुये कहा कि मुल्लाजी जरा जोर से चिल्लाओ। क्या तुम्हारी आवाज़ सातवें आसमान तक पहुँचेगी? वे ऐसी धार्मिक रूढ़ियों का विरोध करते हैं। अगर चिल्लाने से खुदा सुन ले तो मैं और ऊँचा चिल्लाऊँ-

"अल्लाह ताला भी कुद ऊँचा सुनने लगे हैं क्या? वाह, वाह मुल्लाजी, जरा और ऊँचा ।।

काँकर पाथर जोर करि,

मस्जिद लयी चुनाय

ता चढ़ मुल्ला बाँग दे,

क्या बहरो भयो खुदाय?"५६

सिकन्दर लोदी ने कबीर का बहुत नाम सुना था कि वह कवित्त गाता है। लोदी कबीर से मिलना चाहते थे और उन्हें अपने साथ दिल्ली ले जाना चाहते थे। लोदी ने कबीर से कहा कि तुम क्या करते हो? कबीर ने उत्तर दिया कि मैं जुलाहा हूँ लोदी ने पुनः कबीर से पूछा कि तुम्हारा मजहब क्या है? कबीर ने कहा कि मैं खुदा का बन्दा हूँ। मेरा मजहब इन्सान की मोहब्बत एवं खुदा की बन्दगी है। लोदी ने कहा कि तुम्हारा दीन कौन-सा है? कबीर बोले-

"मैं उस खुदा की इबादत करता हूँ जो हर इन्सान के दिल में बसता है।"६०

सिकन्दर बोले कि कौन वह खुदा। कबीर ने कहा-

"मेरा परवरदिगार मेरे चारों ओर है, वह मेरे दिल में बसता है। उसकी नजर में न कोई हिन्दू है, न तुर्क। मैं अल्लाह का नूर हर इन्सान में देखता हूँ, इन्सान के दिल में देखता हूँ।"६१

इस प्रकार भीष्म साहनी ने अपने नाटकों में धर्म के बदलते हुए परिदृश्य का सफलता पूर्वक वर्णन किया।

सन्दर्भ संकेत -

१. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ० प्र० लोक सेवा आयोग समाज शास्त्र, प्रो० एम.एल. गुप्ता एवं डॉ. डी.डी. शर्मा, पृ. सं० २२७

२. वही, पृ० सं० २२७

३. वही, पृ० सं० २२७

४. वही, पृ० सं० २२७

५. वही, पृ० सं० २२७

६. वही, पृ० सं० २२७

७. वही, पृ० सं० २२७

८. वही, पृ० सं० २२७

९. धर्म निरपेक्षतावाद एक दार्शनिक विवेचन, डॉ० सुनील मेहडू, पृ. सं. १३

१०. वही, पृ० सं० १३

११. वही, पृ० सं० १४

१२. वही, पृ० सं० १४

१३. वही, पृ० सं० १५

१४. वही, पृ० सं० १५

१५. वही, पृ० सं० १६

१६. वही, पृ० सं० १७

१७. हाईस्कूल भाषाभूषण, महेशप्रसाद शर्मा एवं डॉ. राम विलास शर्मा 'अधीर', पृ०सं.० २५६

१८. पंचामृत, श्री योग वेदान्त सेवा समिति (संत श्री आसाराम जी आश्रम), पृ० सं० ७६

१९. धर्म निरपेक्षता एक दार्शनिक विवेचन, डॉ. सुनील मेहडू पृ सं. १९

२०. वही, पृ० सं० २०

२१. वही, पृ० सं० २०

२२. वही, पृ० सं० २१

२३. कल्याण, पृ० सं० १४९

२४. कल्याण, पृ० सं० १५३

२५. दैनिक जागरण झाँसी, (१८ अगस्त २००७)- '१९४७ में देश के विभाजन के रूप में इतिहास के एक दुःखद दौर का स्मरण, शिवकुमार मिश्र, पृ० सं० ८

२६. तमस, भीष्म साहनी, पृ० सं० ४४

२७. वही, पृ० सं० ४५

२८. वही, पृ० सं० ५७

२९. वही, पृ० सं० ६५

३०. वही, पृ० सं० ४५

३१. वही, पृ० सं० ४७

३२. वही, पृ० सं० ५८

३३. वही, पृ० सं० ७४

३४. वही, पृ० सं० ५८

३५. सुधारक, (अक्टूबर २००१)- 'धर्म के प्रति हमारा रवैया कैसा हो'-
बसंत त्रिपाठी, पृ० सं० १०२

३६. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्म साहनी , पृ० सं० ७१

३७. वही, पृ० सं० ७५

३८. वही, पृ० सं० २१

३६. वही, पृ० सं० २२

४०. वही, पृ० सं० ७६

४१. वही, पृ० सं० ८०

४२. वही, पृ० सं० ८०

४३. आज, (२५ सितम्बर २००६)- 'मानो या न मानो' , पृ० सं० ६

४४. दैनिक जागरण झाँसी, (१३ फरवरी २००८)- 'बेनजीर को आशंका थी, टूट सकता है पाकिस्तान',पृ० सं० १०

४५. पाली, भीष्मसाहनी, पृ० सं० ४८

४६. वही, पृ० सं० ५३

४७. वही, पृ० सं० ५२

४८. वही, पृ० सं० ४६

४६. वही, पृ० सं० ५५

५०. वही, पृ० सं० ५१

५१. वही, पृ० सं० ५१

५२. वही, पृ० सं० ५६

५३. वही, पृ० सं० ५६

५४. सवला, (दिसम्बर, २००२- मार्च, २००३) 'अमन एकता मंच', खुर्शीद अनवर, पृ० सं० ४५

५५. माधवी, भीष्म साहनी, पृ० सं० ११

५६. प्रतियोगिता साहित्य श्रंखला U.G.C. NET/SLET हिन्दी तृतीय प्रश्न पत्र, डॉ० अशोक तिवारी, पृ० सं० ३४

५७ कबीरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ० सं० १७

५८. वही, पृ० सं० ६१

५६. वही, पृ० सं० ६३

६०. वही, पृ० सं० ६५

६१. वही, पृ० सं० ६५

● संदर्भ संकेत

अध्याय - ८

भीष्म साहनी के उपन्यासों में जातीय एवं साम्प्रदायिक सद्भाव का स्वरुप

(क) जाति

(ख) जातीय सद्भाव

(ग) जातीय सद्भाव देश के रचनात्मक विकास के लिए आवश्यक

(घ) भीष्म साहनी के साहित्य में जातीय विद्वेष की स्थिति

(ङ) भीष्म साहनी के साहित्य में जातीय सद्भाव की परिकल्पना

(च) सम्प्रदाय : अर्थ एवं स्वरुप

(छ) साम्प्रदायिकता का अर्थ एवं स्वरुप

(ज) साम्प्रदायिक सद्भाव

(झ) साम्प्रदायिक सद्भाव राष्ट्रीय एकता की महती आवश्यकता

(ञ) अनेकता में एकता : भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता

(ट) वर्तमान परिस्थितियों में साम्प्रदायिक सद्भाव की आवश्यकता

(ठ) भीष्म साहनी के साहित्य में साम्प्रदायिक सद्भाव/विद्वेष का स्वरुप

१. साम्प्रदायिक सद्भाव २. साम्प्रदायिक विद्वेष

(ड) संवेदनहीन अंग्रेजों के प्रति भारतीयों की भावनाएँ

(ढ़) अंग्रेजों की भारत के प्रति दुर्भावनाएँ

(८.१) भीष्म साहनी के उपन्यासों में जातीय एवं साम्प्रदायिक सद्भाव का स्वरुप -

(क) जाति -

भारतीय सामाजिक संस्थाओं में जाति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। आदिकाल से ही भारत में जाति-प्रथा का प्रचलन रहा है। **डॉ० आर० एन० सक्सेना** का मत है -

"जाति हिन्दू सामाजिक संरचना का एक मुख्य आधार रहा है, जिससे हिन्दुओं का सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन प्रभावित होता रहा है। हिन्दुओं के सामाजिक जीवन के किसी भी क्षेत्र का अध्ययन बिना जाति के विश्लेषण के अपूर्ण ही रहता है। सामान्यतः भारत जातियों एवं सम्प्रदायों की परम्परात्मक स्थली माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि यहाँ की हवा में भी जाति घुली हुई है और यहाँ तक कि मुसमलान तथा ईसाई भी इससे अछूते नहीं बचे हैं।"१

जाति का अर्थ तथा परिभाषा -

'जाति' शब्द अंग्रेजी भाषा के कास्ट (Caste) का हिन्दी अनुवाद है, अंग्रेजी के (Caste) शब्द की व्युत्पत्ति पुर्तगाली भाषा के 'Casta' शब्द से हुई है जिसका अर्थ मत विभेद तथा जाति से लिया जाता है। **'जाति'** शब्द की उत्पत्ति का पता १६६५ में ग्रेसिया -डी ओरेटा नामक विद्वान ने लगाया। उसके बाद में फ्रांस के अल्बे डुब्बाय ने इसका प्रयोग प्रजाति के सन्दर्भ में किया।

मजूमदार एवं मदान के अनुसार - **"जाति एक बन्द वर्ग है।"२**

कूले के अनुसार - **"जब एक वर्ग पूर्णतः आनुवंशिकता पर आधारित होता है तो हम उसे जाति कहते हैं।"३**

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि **"जाति की सदस्यता जन्म पर आधारित है।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जाति एक ऐसा सामाजिक समूह है, जिसकी सदस्यता जन्म पर आधारित है और जो अपने सदस्यों पर खान-पान, विवाह, पेशा और सामाजिक सहवास सम्वन्धी अनेक प्रतिबन्ध लागू करती है।

जाति का महत्व -

जाति व्यवस्था ने हिन्दू समाज की रक्षा की है और सदस्यों को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य भी किया है। करनीवाल के अनुसार - **"जाति-प्रथा के कारण भारत में एक बहु समाज स्थिर रह पाया है।"४** हट्टन का मत है - **"जाति-प्रथा का सबसे महत्वपूर्ण कार्य, जो कि उसे एक अद्वितीय संस्था बना देता है, यह है या रहा है कि यह भारतीय समाज को अखण्ड बनाती है और विभिन्न प्रतिद्वन्द्वी समूहों को एक समुदाय में जोड़ती है।"५** जोड के अनुसार- **"जाति-प्रथा अपने सर्वोत्कृष्ट रुप में इस विशाल देश में निवास करनेवाले विभिन्न विचार, विभिन्न धार्मिक विश्वास, रीति-रिवाज और परम्पराएँ रखने वाले विविध वर्गों को एक सूत्र में पिरौने का एक सफलतम प्रयास था।"६**

जाति ने भारत की राजनैतिक एवं सांस्कृतिक रक्षा की है। अब्बे डुब्बॅाय के अनुसार - **"मैं हिन्दुओं की**

जाति प्रथा को उनके अधिनियम का सबसे अधिक सुखमय प्रयास समझता हूँ। मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि यदि भारत की जनता उस समय भी बर्बरता के पंक में नहीं डूबी, जबकि सारा यूरोप डूबा हुआ था और यदि भारत ने सदा अपना सिर ऊँचा रखा, विविध विज्ञानों, कलाओं तथा सभ्यता का संरक्षण और विकास किया तो इसका पूर्ण श्रेय उसकी उस जाति-प्रथा को है जिसके लिए वह बहुत प्रसिद्ध है।"७

जाति प्रथा की कुछ हानियाँ निम्नलिखित है -

रिजले का मत है कि "जाति एक निम्न स्तर का संगठन है जो विकास के मार्ग में बाधक है।"८

डॉ० राधाकृष्णन का मत है - "दुर्भाग्यवश वही जाति -प्रथा जिसे सामाजिक संगठन को नष्ट होने से रक्षा करने के साधन के रुप में विकसित किया गया था, आज उसी की उन्नति में बाधक बन रही है।"९

प्रो० वीडिया के अनुसार - "उपनिषदों का उच्चकोटि का तत्व दर्शन और गीता का कर्म-ज्ञान इस व्यवस्था में अत्याचारों के कारण केवल वाकजाल बन गया। एक तरफ तो भारत सम्पूर्ण विश्व को एकता का उपदेश देता है और दूसरी ओर उसने एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था को अपनी छाती से चिपटा रखा है जिसने उसकी सन्तानों का निर्ममतापूर्वक अलग-अलग गुटों में विभाजन कर रखा है, उनको अनन्त शताब्दियों के लिए एक-दूसरे से पृथक् कर दिया हैं"१०

जाति से निम्नलिखित हानियाँ है -

१. श्रमिक की गतिशीलता में बाधक २. श्रमिक की कुशलता में बाधक ३. आर्थिक विकस में बाधक ४. राष्ट्रीय एकता में बाधक ५. प्रजातन्त्र विरोधी ६. निम्नजातियों का शोषण ७. धर्म परिवर्तन ८. समाज का विभाजन ९. सामाजिक समस्याओं का जन्म १०. स्त्रियों की निम्न स्थिति ११. अस्पृश्यता को जन्म दिया १२. समाज की प्रगति में बाधाएँ

उपर्युक्त दोषों को देखने पर यह पता चलता है कि इनमें सुधार किया जाए, मजूमदार व मदान के अनुसार - "इस व्यवस्था की हानिकारक सहवर्ती प्रथाओं- अस्पृश्यता, एक जाति द्वारा दूसरों का शोषण और ऐसी ही अन्य को समाप्त कर देना चाहिए, न कि सम्पूर्ण व्यवस्था को, टूटी हुई विषैली अंगुली को काटना चाहिए न कि पूरे हाथ को।"११

जाति का भविष्य-

भारत में जाति का भविष्य अच्छा होगा इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। पहले हरिजनों को सबसे नीचा स्थान दिया जाता था, लेकिन गाँधीजी ने उन्हें **'हरिजन'** कहकर ईश्वर का अवतार माना है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में धर्म आदि प्रजातियों ने जन्म लिया। जिनमें ब्राह्मणों को सर्वोच्च स्थान दिया गया। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना की गई। जाति, लिंग व रंग पर भेदभाव व अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया। प्रजातन्त्र की स्थापना की गई, जिसमें देश के सभी नागरिकों को समान अधिकार प्रदान किए गए! डॉ० शर्मा का कथन है **"जाति में समय के साथ अनुकूलन करने एवं समुत्थान की शक्ति निहित है जो जाति व्यवस्था के समाप्त होने**

के झूठे भय को अप्रमाणित सिद्ध करती।"१२ डॉ० श्री निवास ने गुजरात, उड़ीसा, मद्रास और आन्ध्र, मैसूर, बिहार तथा उत्तर प्रदेश में जाति में उभरती हुई जागरुकता और नवीन संगठनों के निर्माण के कारण जाति के शक्तिशाली होने की बात कही है।" डॉ० धुरिए एवं डॉ० श्री निवास का मत है - "जहाँ एक ओर अंग्रेजी शासन काल में होने वाले परिवर्तनों ने जाति प्रथा के बन्धन ढीले किए, वहाँ उन्होंने जाति-प्रथा को प्रोत्साहन भी दिया। अछूत आन्दोलन ने जाति की जड़ों को मजबूत करने में सहयोग दिया। जातीय संगठनों के निर्माण में भी जाति को सुदृढ़ बनाए।"१३ डॉ० योगेन्द्र सिंह का मत है कि जाति में होने वाले परिवर्तन को समुत्थान एवं लचीलेपन की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। लम्बे समय तक जाति, राजनीति, अर्थव्यवस्था तथा संस्कृति के क्षेत्र में आधुनिकीकरण करने वाली सामाजिक संरचनाओं के संचालन के लिए संस्थापक आधार प्रदान करती रहेगी। यह कहना वैज्ञानिक दृष्टि से तार्किक नहीं है कि जाति-व्यवस्था समाप्त हो रही है। डॉ० श्रीनिवास कहते हैं कि भारत में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं, जो संख्या में थोड़े हैं, किन्तु शक्तिशाली है, उनका मत है कि जाति प्रथा समाप्त हो जानी चाहिए। दूसरी ओर अधिकांश जनता विशेषतः हिन्दू लोग ही केवल जाति प्रथा को समाप्त करने के विरोधी है, वरन् वे किसी ऐसी समाज व्यवस्था की भी कल्पना नहीं कर सकते, जिसमें जाति व्यवस्था न हो। ग्रामों में निवास करने वाली ८० प्रतिशत जनता के लिए जाति आज भी वे सारे कार्य करती है, जो पाश्चात्य औद्योगिक नगरों के लिए कल्याणकारी राज्य करता है। जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं, किन्तु प्रस्ताव पास कर देने एवं कानून बनाने से ही कोई कार्य नहीं हो जाता है। श्री निवास कहते हैं, "मैं आपको स्पष्ट शब्दों में कह देना चाहता हूँ कि यदि आप सोच रहे हैं कि आप जाति से सरलता से मुक्ति पा सकते हैं तो आप गम्भीर त्रुटि कर रहे हैं। जाति एक बहुत ही शक्तिशाली संस्था है और यह समाप्त होने से पूर्व बहुत ही खून खराबा करेगी।"१४

अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में जाति-व्यवस्था एक गतिशील संस्था है जो समय एवं परिस्थितियों के साथ सदैव परिवर्तित होती रही है और आने वाले समय में भी वह आवश्यकता के अनुरुप अपने को ढालने में समर्थ है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि इसके समाप्त होने के कोई आसार नहीं आते हैं।

(ख) जातीय सद्भाव -

मानव सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना गया है, परन्तु सृष्टि ने उसके अन्दर की इच्छा शक्ति को प्रबल कर दो रास्ते बना दिए हैं। उसे इस बात में स्वतन्त्र बना दिया गया है कि वह चाहे तो अधोगामी प्रवृत्ति अपनाकर पशुतुल्य जीवन जिए अथवा उत्कृष्ट जीवन अपनाकर देवोपम एवं सर्वश्रेष्ठ जीवन को अंगीकार करें। अतः विवेकशीलता ही मनुष्य का परम धर्म है। इसके आधार पर ही वह भले-बुरे के बीच अंतर समझकर श्रेष्ठता, महानता के मार्ग पर अग्रसर होता है। मनुष्य अपने विवेक के आधार पर ही जीवन के रहस्यों को समझता है। शरीर को भी स्वीकार करता है। शरीर उपभोग हेतु मिला है, परन्तु आत्मा आदर्श को अपनाती है। उपभोग और आदर्श दोनों में सन्तुलन बिठाना ही धर्म का लक्ष्य है विवेक की परिणति है। दूसरे शब्दों में 'सदाचरण, प्रेम, संयम, परोपकार, पवित्रता, अनुशासन, सत-संगति, सत्कर्म, सहिष्णुता, त्याग, नम्रता, सत्साहित्य, सत्संग, अहिंसा, स्नेह ही धर्म के पर्याय है।

जातियों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई। इस विषय में कोई भी ठोस, तर्क सम्मत सिद्धान्त नहीं मिलता है। इसके विषय में प्राचीनतम कल्पना पुरुष सूक्त में मिलती है, जो कि कवि की कल्पना है।

आज हमारा समाज अनके जातियों में बँटा हुआ है। जिनकी गिनती करना हमारी पहुँच के बाहर है। प्राचीनकाल में हमारे यहाँ जाति व्यवस्था कार्यों में बँटी हुई थी। जो व्यक्ति जिस कार्य को करता था, वही उसकी जाति मानी जाती थी। जैसे- कपड़े धोने वाला धोबी, बर्तनों को ठीक करने वाला ताम्रकार, लोहे के बर्तनों को ठीक करने वाला लोहार, सोने चाँदी का कार्य करने वाला सुनार माना जाता था। मेगास्थिनिस् के लेख में आता है कि भारत में सात जातियाँ थीं। १. दार्शनिक २. योद्धा ३. शिल्पी ४. कृषक ५. पशुपालक ६. सदस्य ७. परिदर्शक।

पाश्चात्य विद्वान एवं उनके अनुयायी यह बताना चाहते हैं कि भारत में प्राचीन काल में जन्मगत वर्ण अथवा जाति भेद नहीं था, यदि जातिभेद था तो कर्मद्वारा और विभिन्न जातियों के बीच विवाह में कोई बाधा नहीं थी।

मेगास्थिनिस् का कहना है कि **"किसी को न तो अपनी जाति के बाहर विवाह करने की और न अपनी वृत्ति को छोड़कर अन्य वृत्ति ग्रहण करने की अनुमति है। उदा०- योद्धा कृषक नहीं बन सकता और शिल्पी दार्शनिक नहीं बन सकता।"**[१५]

मनु ने 'चतुर्वर्ण व्यवस्था' की व्याख्या की है। मनु को भारत का प्रथम संहिताकार माना गया है। मनु के अनुसार जातियाँ अनेक हैं। वर्ण केवल चार हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। इनमें पहले तीन वर्णों को 'द्विज' कहा जाता है। इन लोगों को यज्ञोपवीत ग्रहण करने का अधिकार होता है, जबकि चौथे वर्ण को यज्ञोपवीत ग्रहण करने का अधिकार नहीं है।

मेगास्थिनिस् ने दार्शनिकों के ब्राह्मण और श्रमण दो भाग किए। क्षत्रिय एवं राजाओं के लिए विषय में मेगास्थिनिस् ने लिखा है - "राजा के लिये दिवानिद्रा का नियम नहीं है।"[१६]

ह्वेनसांग का कहना है कि **"विभिन्न जातियों में विवाह नहीं होता। प्रथम जाति ब्राह्मण धार्मिक पुरुष हैं; वे धर्मरक्षा करते हैं। पवित्र जीवन यापन करते हैं एवं अत्यन्त कठोर नियमों का पालन करते हैं। द्वितीय क्षत्रिय राजाओं की जाति है। वे युग-युग से शासन करते आ रहे हैं। कर्तव्यपरायण एवं दानशील हैं। तृतीय वैश्य वणिक जाति है। वे वाणिज्य में क्रय-विक्रय करते हैं एवं देश-विदेशों में लाभजनक व्यवसाय करते हैं। चतुर्थ शूद्र कृषि जीवी हैं। वे खेती और खेत के कामों में परिश्रम करते हैं। इन चार वर्णों में जाति की शुद्धता अथवा अशुद्धता से अपना-अपना स्थान निश्चित होता है। निकट आत्मीयों में विवाह निषिद्ध है। कोई स्त्री एक विवाह के बाद पुनः दूसरा स्वामी ग्रहण नहीं कर सकती।"**[१७]

शूद्रों का कार्य सभी वर्णों की सेवा करना था। उस समय शूद्र पर बहुत ही अत्याचार होते थे और शूद्र को अत्यन्त कठोर दण्ड दिया जाता था। ब्राह्मण या क्षत्रिय को भला-बुरा कहने वाले शूद्र की जिह्वा काट ली जाती थी।

"शूद्र किसी दूसरे वर्ण की स्त्री से व्यभिचार करे तो उसके लिंग को काट दिया जाता था या उसका वध कर दिया जाता था, लेकिन ब्राह्मण यदि किसी शूद्र स्त्री से व्यभिचार करे तो उसको कोई दण्ड नहीं दिया जाता था, बल्कि यह धारणा थी कि ऐसे संग से शूद्र स्त्री स्वर्ग में जाने का अधिकार प्राप्त कर

लेती है। केवल इसी एक उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि वर्ण व्यवस्था की चहार दीवारी में शूद्र किस प्रकार घुट-घुटकर मरता रहा।"१८

जाति से तात्पर्य यह एक बन्द वर्ग है, जबकि दूसरे लेखक के अनुसार जब एक वर्ग पूर्णतः आनुवंशिकता पर आधारित होता है तो हम उसे जाति कहते हैं तथा सद्भाव से तात्पर्य अच्छे भाव से है। यह सद्भाव हमें हर मानव में प्रेम करना सिखाता है। जब हमारे पूर्वज मनु है। हम उन्हीं की संतानें हैं, तो फिर हम सब भाई-भाई हैं। हमारे माता-पिता भी एक हैं, फिर ये अनेक जातियाँ हमें भेद करना क्यों सिखाती हैं -

"एक ही माँ के बच्चे हम सब, एक ही पिता हमारा है।

न जाने किस मूरख ने हमें, जातियों में भेदभाव करना सिखाया है।"

हमारे समाज में अस्पृश्यता, छुआछूत, वर्णभेद, जाति-पाँति सभी जगह छाई हुई है। छुआछूत के नाम पर लोग एक दूसरे का छुआ हुआ पानी पीना भी पसंद नहीं करते हैं। बड़े जाति के लोग छोटी जाति के लोगों का तिरस्कार करते हैं।

नारी युग-युग से शोषित और प्रताड़ित है। वह ग्रह-स्वामिनी नहीं ग्रह सेविका ही समझी जाती रही है, जिससे कोई भी निम्न और जघन्य से जघन्य कार्य कराया जा सकता है। वह पुरुष की काम साधना का एक अंग बनी हुई है।

स्वामी का है अधिकार दास का पूरा ।

दासी को नंगी करे, भोग ले बेच ले ।।

एक पीड़ित नारी को सदैव पुरुष के साथ गुलामी का जीवन विताना पड़ता है। पुरुष उसके साथ कैसा भी बुरा बर्ताव करे, फिर भी वह पुरुष का संग नहीं छोड़ती है।

भगवान अभिताभ

देकर तिलांजलि मिथ्या संकोच को

X X X X X X X

स्त्रीत्व का सुफल पाकर अनायास

धन्य में होती हूँ ।

जाति व्यवस्था में ऊँची और नीची जाति के लोगों का स्तर भिन्न-भिन्न था। नीची जाति के लोगों को शहर या गाँव में अलग जमीन पर बसाया जाता था। उन्हें मन्दिरों में प्रवेश नहीं दिया जाता था। सवर्णों के कुओं और तालाबों से उन्हें पानी भी नहीं मिलता था। अछूतों पर दृष्टिपात होने मात्र से लोग अपवित्र हो जाते थे और यदि कोई अछूत किसी ब्राह्मण के सामने आ जाए तो उसे कठोर सजा भी मिलती थी।

हमारे समाज के समाज सुधारकों जैसे महात्मा गाँधी, भीमराव अम्बेडकर, कबीर, रैदास, एनीबेसेन्ट, राजाराम मोहन राय, लाला लाजपतराय, ज्योतिराव फूले आदि लोगों ने समाज में फैली जातीय भेदभाव, छुआछूत, अस्पृश्यता, ऊँच-नीच की भावना जैसी कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया था और समाज में जातीय सद्भाव लाना उनका उद्देश्य

था।

गाँधीजी जिस रुप में मानव (प्राणी) समाज की स्थापना करना चाहते थे। उसका वर्णन करते हुए डॉ० अरविन्द जोशी लिखते हैं - वे (गाँधी जी) एक ऐसा समाज चाहते थे, जिसमें स्त्री पुरुष को समान अधिकार प्राप्त हो, जहाँ सब परस्पर प्रेमभाव से रहें, जहाँ साम्प्रदायिकता और अस्पृश्यता जैसी कुरीतियाँ न हों, गाँधी जी की राज्य की स्थापना देश के सामाजिक उत्थान की चरम सीमा है।

गाँधीजी ने अस्पृश्यता, हरिजनों के उद्धार का कार्य किया। अस्पृश्यता के बारे में **गाँधी जी 'हरिजन सेवक'** पत्रिका में लिखते हैं **"अस्पृश्यता का घाव इतना गहरा चला गया है कि इसका जहर हमारी रग-रग में फैल गया है। ब्राह्मण-अब्राह्मण के भेदभाव की ओर अलग-अलग धर्मों के बीच के भेदभाव की जड़ अस्पृश्यता में ही है। अस्पृश्यता का यह जहर क्यों रहना चाहिए।"१९**

वे यह कहना चाहते थे कि जब तक आपस के जातीय एवं प्रान्तीय भेदभाव नहीं मिटेंगे, तब तक भारत एकात्म नहीं बन पाएगा। उनका कहना है कि हम सारे भारत को अपना परिवार क्यों न मानें और दरअसल सारी मनुष्य जाति हमारा परिवार है। क्या हम सब एक ही वृक्ष की शाखाएँ नहीं? जब छुआछूत जड़ से नष्ट हो जाएगी, तब ये सारे भेद-भाव अपने आप मिट जाएँगे और कोई अपने आप को दूसरों से ऊँचा नहीं समझेगा। इसका सीधा नतीजा यह होगा कि गरीबों और दलितों का शोषण बन्द हो जाएगा और चारों तरफ परस्पर प्रेम और सहयोग देखने में आएगा।

गाँधीजी स्वयं मेहतर के साथ खाना खाते थे।

कबीर ने हमेशा ऊँच-नीच, जाति-पाँति का विरोध किया। कबीर का मानना था कि ऊँची जाति में जन्म लेने से व्यक्ति श्रेष्ठ नहीं हो जाता। व्यक्ति में कर्म की महत्ता होनी चाहिए, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान।

कबीर के शब्दों में -

"ऊँचे कुल का जनमियां करणी ऊँच न होय,
सुबरन कलश सुरा भया साधू निन्दय सोय ।।"२०

जिस प्रकार ईश्वर हमारा पिता है। वह किसी के साथ बुरा व्यवहार नहीं करता, फिर हम लोग जांत-पांत क्यों मानें?

"जाति-पाँति पूछे नहिं कोई ।
हरि को भजै सो हरि का होई ।।"२१

कबीर ने ब्राह्मण पण्डितों के ब्राह्मणतत्व को चुनौती देते हुए कहा- हम सब एक ईश्वर की सन्तान है।

एक रक्त से सबहि बने हैं, को ब्राम्हन को सूदा।।

कबीर जुलाहे थे रैदास चमार थे, नामदेव धोबी थे, दादू दयाल मोची थे। ऐसी दशा में इन लोगों ने बड़ी उग्रता के साथ जाति-पाँति का विरोध किया। इन कवियों ने उन सभी कष्टों को भोगा था, जो प्रायः निम्न जाति के लोगों पर उच्च जाति के लोगों द्वारा आरोपित थे। ये कवि मानव धर्म के प्रति आस्थावान थे। अतएव उन्हें झूठा अहंकार किसी कीमत पर बर्दाश्त नहीं था, इसलिए कबीर ने हिन्दू और मुसलमान सबकी भर्त्सना की।

"अरे इन दोउन राह न पाई।
हिन्दु अन की हिन्दुआई देखी।
तुरकन की तुरकाई।" २२

अकबर बादशाह सभी जाति के लोगों के साथ समानता का व्यवहार करते थे और उनके हृदय में एक परमात्मा का नूर देखते थे। श्री कृष्ण भगवान क्षत्रिय थे। उन्होंने अपने भक्त विदुर जो शूद्र जाति के थे। यहाँ साग खाते थे। भगवान श्री कृष्ण भी निम्न जाति के लोगों का आदर करते थे। वे सबके हृदय में एक परमात्मा का नूर देखते थे। भीमराव अम्बेडकर ने जु० १६२४ में बम्बई में एक संस्था 'बहिस्कृत हितकारिणी सभा' बनाई जिसका उद्देश्य अश्पृश्य लोगों की नैतिक तथा भौतिक उन्नति करना था। उन्होंने आन्दोलन की नीति अपनाई और अछूतों के लिए मन्दिरों में प्रवेश तथा जन साधारण के कुओं से पानी भरने के नागरिक अधिकारों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया। ज्योतिराव फूले ने निम्न जाति के लोगों के लिए संघर्ष किया, जिससे उन्हें उनके अधिकार मिल सकें, लेकिन एक ब्राह्मण ने उन्हें फटकारा, क्योंकि उन्होंने एक ब्राह्मण की बारात में सम्मिलित होने की धृष्टता की। उन्होंने स्त्रियों तथा निम्न जातियों के लिए एक पाठशाला चलाई। ब्राह्मणों के दबाव के कारण ज्योतिवा को पाठशाला बन्द करनी पड़ी। ऊँची जाति के दबाव के कारण उनके पिता गोविन्दराव ने ज्योतिबा तथा उनकी पत्नी को वंशानुगत गृह से बाहर निकाल दिया। इसी के सम्बन्ध में कबीर ने कहा है- **कस्तूरी कुण्डलि बसै, मृग ढूंढ़ै बनमाहि ऐसेहिं घट-घट राम हैं दुनिया जानै नाहिं।** जिस प्रकार मृग की नाभि के अन्दर कस्तूरी है। वह उसे वन-वन ढूँढ रहा है। उसी प्रकार जातीय सद्‌भाव मानव के अन्दर है, लेकिन वह स्वार्थ व अहं में भ्रमित हो जाता है।

"जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं ।
वह हृदय नहीं पत्थर है जिसमें प्राणी जाति का सद्‌भाव नहीं ।"

जाति धर्म की भेद-भाव की बातें बहुत पुरानी हैं।
सब जातियों को गले लगाए, यह बात अपनानी है।

इसी भूमि पर राघव ने, केवट को गले लगाया था।
षट्रस व्यंजन त्याग कृष्ण ने साग विदुर घर खाया था।

स्वयं भीलनी के जूठे फल यही राम ने खाए थे,
श्रेष्ठ कार्य के लिए रीछ-वानर भी सखा बनाए थे ।

श्रेष्ठ कर्म से शूद्र यहाँ पर ऋषि का पद गाते थे,
सद्‌चिंतन से सम्मानित हो वही संत कहलाते थे ।

हमने पूजा वाल्मीकि ऋषि को, रैदास-कबीरा को
राजभवन को त्याग चली आई मतवाली मीरा को ।

जाति धर्म की सारी सीमाएँ बेईमानी है।

युग-ऋषि ने नवयुग व सबको उज्जवल रुप दिखाया है।
जाति-पाँति की समरसता का सबको पाठ पढ़ाया है।

(ग) जातीय सद्भाव देश के रचनात्मक विकास के लिए आवश्यक -

यह संसार क्या है? एक सनातन वृक्ष, इस वृक्ष का आश्रय है- एक प्रकृति। इसके दो फल हैं- सुख और दुख, तीन जड़ें हैं - सत्व, रज और तम, चार रस हैं - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इसके जानने के पाँच प्रकार हैं - श्रोत, त्वचा, नेत्र, रसना और नासिका। इसके छः स्वभाव है - पैदा होना, रहना, बढ़ना, बदलना। घटना और नष्ट हो जाना। इस वृक्ष की छाल हैं - सात धातुएँ- रस, रुधिर, मांस, भेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र। आठ शाखाएँ हैं- पाँच महाभूत, मन, बुद्धि और अहंकार। इसमें मुख आदि नौ द्वार खोडर हैं। प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कर्म, कृकल, देवदत्त और धनंजय- ये दस प्राण ही इसके दस पते हैं। इस संसार रुप वृक्ष पर दो पक्षी हैं - जीव और ईश्वर ।

सम्पूर्ण जगत ईश्वर का वास्तविक रुप है। हर जड़ व चेतन में आत्मा है, इसलिए आत्मा को परमात्मा कहा गया है।

भारतवर्ष **'सोने की चिड़िया'** था। आर्यावर्त, हिन्दुस्तान एवं भारतवर्ष उसके पुरातन नाम हैं, जो परिस्थिति के अनुसार बदलते रहे हैं। मेरा मुकुट हिमालय, कन्याकुमारी मेरे पैर हैं, जिन्हें सागर सदैव धोता रहता है। द्वारिका एवं जगन्नाथपुरी मेरी दो भुजाएँ है। गंगा-यमुना मेरे हृदय के द्वार हैं। कावेरी, कृष्णा, गोदावरी, महानदी मेरी शिराएँ है। हमारा भारतबर्ष कभी विश्वगुरू कहा जाता था, लेकिन अज्ञानता, अशिक्षा, आपसी फूट, भेदभाव, जाति-पाँति, नफरत, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, भाषावाद, भ्रष्टाचार, ऊँच-नीच, प्रान्तवाद, अलगाववाद जैसी कटीली झाड़ियों ने हमारे देश को उलझा लिया है। आज मानव सर्पिणी बनकर अपने ही बच्वों को खा रहा है। हम सब एक ही पिता की सन्तानें हैं। हम उन्हीं के बच्चे है। हम सब भाई-भाई हैं। वे भाई-भाई ही जातीयता के नाम पर एक दूसरे के गले काट रहे हैं। वे कुर्सी की लालच में एक-दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। वे एक दूसरे के शत्रु वन गए हैं। ये उसी का परिणाम है कि आज मानव-मानव को अप्रत्यक्ष रूप से गिद्ध की तरह देख रहा है। कुछ समय बाद सीधे ही मानव, मानव का अन्त करेगा। जातिवाद मानवता का विभाजन करने का सबसे बड़ा कारण है। ऐसा लगता है कि इन्हीं सब के कारण मानव का ही अन्त नहीं होगा, अपितु सारे संसार का अन्त ऐसा होगा कि चारों ओर आग ही आग होगी, चाहे वह आग भुखमरी-जातिवाद, युद्ध आदि विभिन्न रूपों में क्यों न हो पर होगा जरूर

साफ दर्पण कह रहा है
आदमी बेहाल है
खा रहा मानव को मानव
अब बचा कंकाल है
ये तमाशा देखकर

गिद्ध सारे उड़ गए

X X X X X

कातिलों ने कत्ल करने का, एक नया दस्तूर निकाला है

कत्ल करके हरेक से पूछते है, अरे भाई इसे किसने मारा है

आज बहुत से निम्न वर्ग एवं विपन्नता से बदहाल किसान भूखों मर रहे हैं। उनके पास दो वक्त का भोजन नहीं है। जब कवि ऐसे दलितों की हालत देखता है तो उसका हृदय रोने लगता है। उसके अन्दर से आवाज़ निकलती है-

"श्वानों को मिलते दूध-वस्त्र, भूखे बालक अकुलाते हैं,

माँ की हड्डी से चिपक, ठिठुर जाड़ों की रात बिताते हैं।

युवती के लज्जा-वसन बेच, जब ब्याज चुकाए जाते हैं,

मालिक जब तेल-फुलेलों पर, पानी-सा द्रव्य बहाते हैं,

पापी महलों का अहंकार, देता मुझको तब आमंत्रण ।।" २३

हमें अपने मुल्क को फिर से **'सोने की चिड़ियाँ'** बनाना है, जिससे हमारे मुल्क से भुखमरी, निर्धनता, बेरोजगारी, साम्प्रदायिकता, जातिपाँति, अशिक्षा दूर हो सके, जिससे हमारा मुल्क खुशहाल हो जाए और सभी जगह जातीय सद्भाव व प्रेम ही नजर आए। बंकिम चन्द्र चटर्जी ने कहा है -

"सुजलां, सुफलां मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलां मातरम् ।"२४

डॉ० भीमराव अम्बेडकर दलितों व जनजातियों के मसीहा थे। उन्होंने देखा कि मानव चातुर्वर्ण्य की परम्परा व दरिद्रता की आग में जल रहा है, वह अपनी मानवता खोता जा रहा है, धर्म के ठेकेदारों ने मानव समाज की इन्सानियत लूट ली और दलितों पर जो अत्याचार हुए, उसके लिए उन्होंने क्रान्ति की और कहा, **"पहले तो हम यह देखें कि हमारे अस्पृश्य माने जाने मात्र से हम पर क्या-क्या जुल्म ढाये जाते हैं। हम बच्चों को पढ़ा नहीं सकते, कुओं से पानी नहीं खींच सकते, अपने दूल्हे को घोड़े पर नहीं बैठा सकते, यदि हम अधिकार पूर्वक ऐसा करना चाहते हैं तो हमें मारा-पीटा जाता है। अच्छी पोशाकें पहनने, सोने-चाँदी के जेबर पहनने, पानी के लिए ताँबे-पीतल के बर्तनों का उपयोग करने, जमीन जायदाद खरीदने, मरे जानवरों का मांस न खाने, हिन्दुओं को जुहार न करने, शौच के लिए लोटे में पानी ले जाने आदि का विरोध किया जाता देख कर तो विदेशी भी दाँतों तले अंगुली दबा लेते हैं।"२५** जो अत्याचार दलित तथा निम्न जाति के लोगों ने सहे। वे ही अत्याचार अम्बेडकर ने स्वयं सहे। अम्बेडकर ने स्वयं एक अस्पृश्य की झोपड़ी में जन्म लिया। अम्बेडकर ने कहा कि अस्पृश्यों का उद्धार अस्पृश्य ही कर सकते हैं। महान समाज सुधारक राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज ने दलितों के लिए भविष्यवाणी की -

"मेरे दलित भाईयो डॉ० अम्बेडकर के रुप में तुम्हें अपना परमेश्वर मिला है। तुम्हारी गुलामी की जंजीरें वही तोड़ेगा। मेरा दिल कहता है कि भविष्य में दलितों का उद्धार कर्ता एवं भारत के एक महान नेता के नाते यह युवक कार्यकर्ता विश्व के इतिहास में बड़ी क्रान्ति सफल कर देगा।"२६

अम्बेडकर चाहते थे -

"इन्साँ को इन्साँ से अगर प्यार हो जाए

तो ये दुनिया स्वर्ग हो जाए।"

हम सब मानवों को एक दूसरे के प्रति प्रेम, त्याग, परोपकार, सहिष्णुता, सेवा, सत्संगति, सत्साहित्य की भावना को अपने अन्दर लाना होगा तभी सद्भाव हर जगह नजर आएगा। अगर हम अपने अन्दर ऐसा सद्भाव नहीं लाए तो हमें कहना ही पड़ेगा -

"क्या करेगा प्यार वो भगवान को, क्या करेगा प्यार वो ईमान को ।

जन्म लेकर गोद में इन्सान की, कर न पाया प्यार जो इन्सान को ।।"

जिस प्रकार सूर्य सबको प्रकाश देता है, चन्द्रमा की शीतल किरणें सभी का ताप हरती हैं, मेघ सभी के लिए जल की वर्षा करते हैं, वायु सभी के लिए जीवनदायिनी है, फूल सभी के लिए अपनी सुगन्ध लुटाते हैं, वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते औरर नदियाँ अपने जल को संचित करके नहीं रखती। इसी प्रकार सत्पुरुष भी दूसरों के हित के लिए ही शरीर धारण करते हैं। तभी हमारे अन्दर सद्भाव वाली बात आती है। **कविवर रहीम** लिखते हैं -

"तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पानि ।

कहि रहीम पर काज हित, संपति संचहि सुजानि ।।"२७

हमारे अन्दर ऐसे सद्भाव होने चाहिए कि यदि हमें अपने देश व मानव जाति की भलाई के लिए अपने प्राणों का बलिदान भी देना पड़े तो पीछे नहीं हटें।

जैसे- दधीचि ने वृत्रासुर राक्षस के वध के लिए अपनी हड्डियों को दान में दिया तथा महाराज शिबि ने एक कबूतर के लिए अपने शरीर का मांस दिया। गौतम बुद्ध ने आम्रपाली गणिका (वेश्या) को दीक्षा दी। आम्रपाली समाज में कलंकित थी। गौतम बुद्ध के दरबार में सभी को प्रवेश मिलता था। उन्होंने मानव जाति को महत्व दिया। सोपाक, सुप्पिय, सुमंगल, सप्रबुद्ध जैसे निर्धन उपेक्षित लोग ही इनके शिष्य बने।

"वेद प्रमाण्यं कस्यचित कर्तृवादः,

स्नाने धर्मेच्छा जातिवादावलेपः ।

संतापारंभः पापहानायचेति,

ध्वस्त प्रज्ञानां पञ्च लिंगानि जाड्ये ।।"२८

वेद की प्रमाणिकता को मानने वाला, किसी को ईश्वर की सृष्टि का निर्माण कर्ता मानने वाला, स्नान से धर्म की प्राप्ति मानने वाला, जातिवाद अर्थात् ऊँच-नीच, छुआछूत आदि मानता है। अपने आप कर्मों को दूर करने के लिए शरीर को सन्तप्त करता है अर्थात् व्रत, उपवास आदि शारीरिक तपस्याएँ करता है। प्रज्ञा (बुद्ध) के मारे हुए लोगों की मूर्खता की ये पाँच निशानियाँ हैं।

कबीर ने जाति-पाँति का विरोध किया। उन्होंने सवर्ण ब्राह्मणों के सामने सवाल उपस्थित किया कि तुम किस प्रकार ब्राह्मण हो और हम किस प्रकार शूद्र । हम किस प्रकार घृणित रक्त है और तुम किस प्रकार पवित्र हो। उन्होंने

जाति-पाँति के बदले मानव की महत्ता का उदघोष किया -

"जाति न पूछै साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान ।

मोल करो तलवार का, पड़ी रहन दो म्यान ।।"२६

'काले गोरे' की समस्या अफ्रीका में जटिल रुप ले चुकी है। काले वर्ण वालों को लोग अस्पृश्य मानकर उनसे घृणा करते है। इस सन्दर्भ में **कवि नरेश** लिखते है -

"इस दक्षिण के अफ्रीका में,

श्वेत-श्याम का युद्ध हो रहा ।

मनुज-मनुज की घृणा जल रही,

और जल रहा

जीवन का सुख ।"३०

कवि बच्चन जी ने तो **'मधुशाला'** और **'मधुबाला'** के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि समाज में जाति-पाँति, छुआछूत तथा अछूतों की अवहेलना होती रही है, किन्तु अपनी **'मधुशाला'** में सभी जाति के लोग साथ बैठ कर मधुपान करते हैं। वहाँ कोई भी किसी की जाति नहीं पूछता तथा अस्पृश्यों एवं हरिजनों की अवहेलना का वहाँ प्रश्न ही नहीं उठता। इन्हीं विचारों को व्यक्त करते हुए **कवि हरिवंशराय वच्चन** ने कहा है -

"मुसलमान और हिन्दू दो है

ये मगर उनकी हाला

एक मगर उनका मदिरालय,

ये मगर उनकी प्याला

दोनों रहते एक

न जब तक

मन्दिर मस्जिद में जाते

वैर कराते मन्दिर मस्जिद

मेल कराती मधुशाला ।"३१

"कभी नहीं सुन पड़ता, इसने,

हा, छू दी मेरी हाला,

कभी न कोई कहता, उसने

जूठा कर डाला प्याला,

सभी जाति के लोग यहाँ पर

साथ बैठकर पीते हैं

सौ सुधारकों का करती है

काम अकेली मधुशाला ।"३२

भगवतीचरण वर्मा जब अछूतों पर अत्याचार देखते हैं तो उनकी लेखनी शान्त नहीं बैठती। समाज में अस्पृश्यों की इतनी उपेक्षा क्यों है कि उनका जीवन पशुतुल्य बन गया है? समाज के सवर्ण लोग पशुओं पर भी दया करते हैं, लेकिन अस्पृश्य मानव को अछूत मानकर उसकी मानवता पर ही आघात करते हैं।

"पशुओं पर हैं दया, मनुष्यों पर है अत्याचार ।
व्यंग-मात्र है अरे अतीत यह सब तेरा आचार ।
अरे ये इतने कोटि अछूत
तुम्हारे बे कौड़ी के दास ।
दूर है छूने की ही बात,
पाप है आना इनका पास। "३३

आज मानव चाँद पर पहुँच गया है। आज जो कार्य असम्भव था। मानव ने वो कार्य कर दिखाया है, लेकिन वर्णव्यवस्था के प्रति हिन्दू का क्षुद्र व्यवहार आज भी दृष्टिगोचर होता है।

"हिन्दू का व्यवहार छुद्र था,
दर्शन कितना ही महान हो
छूतछान थी जात-पाँत थी
आत्मबोध कुलधर्म मात्र था
था समाज में न्याय न बाकी ।
चाहे जितना शास्त्र-ज्ञान हो।"३४

समाज में दलितों के साथ जो अत्याचार हो रहा था। निर्धनों, पीड़ितों, कमजोरवर्गों, अस्पृश्य निम्न जाति के लोगों को सताया जा रहा था। उसके लिए हमें क्रान्ति व हिंसा से नहीं लड़ना है। बल्कि हमें गाँधीवाद को ध्यान में रखना है। हमें जो भी कार्य करना है। वह हमें शान्ति, अहिंसा से करना है, इसलिए नरेश मेहता कहते हैं-

"मैं सत्य चाहता हूँ,
युद्ध से नहीं
खड्ग से भी नहीं,
मानव का मानव से सत्य चाहता हूँ।"३५

हमें अपने पूरे विश्व को मानवता को एक सूत्र में बाँधना है। सभी जगह समता प्रेमभाव रहे। कहीं भी युद्ध न हो हमें ऐसा प्रयास करना है।

"जनमुख की नींव धरे
यह नया विहान
आदमी रचे नये समाज का भवन

ओ भविष्य सूर्य, धरो मुक्ति के चरन।"३६

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी जब अछूतों पर अत्याचार देखते हैं तो उनका हृदय कराह उठता है। वे कहते हैं -

"जिनके बल पर खड़ा समाज, रहता है शुचिता की लाज ।

उसका त्राण न करना खेद, है अपना ही मूलोच्छेद ।"३७

गाँधीजी ने हमेशा दलितों व निर्धनों की सेवा की। अछूतों का उद्धार किया। गाँधीजी ने अछूतों को **'हरिजन'** कहकर पुकारा। उनके हृदय में हर मानव के प्रति दया व करुणा, सेवा व त्याग की भावना थी। वे इसे अपने जीवन का लक्ष्य मानते थे। उनका कहना है **"पाप से घृणा करो, पापी से नहीं।"**

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हमारा राष्ट्र अनेक जातियों, उपजातियों में बँटा हुआ है। हमें अपने हृदय से साम्प्रदायिकता, जातिवाद, ऊँचनीच, कट्टरपन, भेदभाव, अस्पृश्यता, हीनभावना, अलगाववाद को दूर कर जातीय सद्भाव को लाना होगा। हमें सभी जातियों को गले लगाना होगा, तभी हमारा राष्ट्र उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है।

हमें आपस में मिल-जुलकर, एक दूसरे की सहायता करके, भूखे को रोटी खिलाके, स्त्री की रक्षा करके, दलितों की सहायता करके आदर्श समाज बनाना है तभी हम सबके हृदय में विश्वबन्धुत्व की भावना, सच्ची शान्ति, सच्चा प्रेम, सद्भाव विश्वास कायम कर पायेंगे। हमें **बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, वसुधैव कुटुम्बकम** की भावना को लाना होगा। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि "हमें १०० वर्षों तक सभी देवी देवताओं की आराधना छोड़ भारतमाता की आराधना करनी चाहिए।

अहा ! वही उदार है परोपकार, सद्भाव जो करे वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे। हमें अपने देश को अन्धकार से प्रकाश की ओर लाना है, तभी हमारा जातीय सद्भाव देश के रचनात्मक विकास के लिए आवश्यक होगा।

अन्धकार है वहाँ, जहाँ प्रेम सद्व्यवहार नहीं है ।

मुर्दा है वह देश, जहाँ जातीय सद्भाव नहीं है ।

श्री कृष्ण भगवान कहते हैं कि, **"हे पुत्रो ! तुम सम्पूर्ण चराचर भूतों को मेरा ही शरीर समझकर शुद्ध बुद्धि से पद-पद पर उनकी सेवा करो, यह मेरी सच्ची पूजा है।"३८**

(घ) भीष्म साहनी के साहित्य में जातीय विद्वेष की स्थिति -

आज समाज में जाति प्रथा हर जगह पाई जाती है। कोई भी मानव जाति से अछूता नहीं है। चाहे वह राजा हो या भिखारी। हर मानव की कोई न कोई जाति अवश्य होती है। प्राचीनकाल में निम्न जाति के लोगों को हेय दृष्टि से देखा जाता था। बड़े जाति के लोग निम्न जाति के लोगों का बहुत अपमान करते थे। वे उनके हाथ का छुआ हुआ पानी पीना भी पसन्द नहीं करते थे। अगर वह उनसे छू जाए, तो वे स्वयं को अपवित्र मानते थे ।

प्राचीनकाल में एक अकाल पुरुष की कल्पना की गई, जिसके बारे में ऐसा विचार था कि

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्वाहू राजन्नयः कृतः ।

ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ।"३८

उनके मुख से ब्राह्मण की उत्पत्ति, भुजाओं से क्षत्रियों की उत्पत्ति, जंघाओं से वैश्यों की उत्पत्ति एवं पैरों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई। ब्राह्मण का कार्य वेद मन्त्रों का पाठ करना, पूजा अर्चना करना था। ब्राह्मण को बुद्धिमान माना जाता है। उनको सबसे ऊँचा पद प्राप्त है। क्षत्रिय का कार्य कमजोर तथा असहाय लोगों की मदद करना व दुष्टों का वध करना है। वैश्य का कार्य सभी के लिए पैसा कमाना और उनके लिए भोजन की व्यवस्था करना है। शूद्रों का कार्य तीनों वर्गों की सेवा करना हैं। महात्मा गाँधी ने अस्पृश्यता को हटाने का वहुत प्रयास किया। गाँधीजी ने निम्न वर्ग के लोगों को **'हरिजन'** नाम दिया। उन्होंने कहा कि सभी मानव ईश्वर की सन्तान है। कोई भी मानव निम्न जाति का नहीं है। सभी के अन्दर एक परमात्मा का वास है। मुगलकाल में अनेक सन्तों ने इस जातीय विषमता को समाप्त करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिसमें कबीर, नानक, दादू, पीपा, रैदास आदि सन्त प्रमुख थे।

हमारे समाज में कई समाज सुधारक हुए, जिनमें महात्मा गाँधी, स्वामी दयानन्द सरस्वती, एनीबेसेन्ट, अम्बेडकर, राजाराममोहन राय आदि लोगों ने जाति प्रथा का विरोध किया। सभी को समान अधिकार मिले। उन्होंने जातीय विद्वेष को दूर करने का प्रयत्न किया। सरकारी नौकरियों में 'हरिजन' के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई, जिससे कम शैक्षिक गुणवत्ता पर लोगों का चयन हो सके। सामान्य वर्ग के लिए प्रतिशत बहुत ऊँचा कर दिया गया। आज बुद्धिमान व्यक्ति का शोषण किया जा रहा है। कमजोर वर्ग को IAS, PCS, एक ऑफीसर बनाया जा रहा है। ब्राह्मण लोग निम्न जाति के लोगों का बहुत ही शोषण कर रहे हैं। **ऐसा ही परिदृश्य साहनी जी के नाटक 'कबिरा खड़ा बजार में' में देखने को मिलता है।**

कबीर नीमा और नूरा का पुत्र है। वे जुलाहे का व्यवसाय करते हैं। वे निम्न जाति के मनुष्य हैं। उनका कार्य लोगों की फटकार लगाना है। वे किसी भी असहाय तथा दुखी व्यक्ति पर जुल्म देखते हैं, तो वे उनकी मदद करते हैं। लोग इसी बात पर उनसे झगड़ते हैं। वे सीढ़ियों पर चढ़कर दीन की तौहीन करते हैं, जिससे लोग उन पर कोड़े बरसाते हैं। उनसे हिन्दू और मुसलमान दोनों ही लोग दुखी है। कोतवाल साहव मुसलमान हैं। वे बहुत ही जल्लादी व्यक्ति हैं। उनके अन्दर दया नाम की कोई चीज नहीं है। कायस्थ एक बुरा आदमी है। वह कोतवाल तथा महन्त के साथ रहता है। सिकन्दर लोदी दिल्ली के बादशाह है। सेना, रैदास, पीपा, बशीरा कबीर के मित्र हैं। कबीर सत्संग करते हैं। उनके सभी मित्र कबीर का साथ देते हैं। सभी निम्न जाति के मनुष्य हैं। कुरुक्षेत्र के एक महन्त साहब ब्राह्मण हैं। वह काशी में मूर्ति स्थापना के लिए आ रहे हैं। वे निम्न जाति के लोगों से घृणा करते हैं। एक भिखारी है। उसकी माँ अन्धी है। वह कबीर के कवित्त गाता है। वह भी निम्न जाति का है।

कुरुक्षेत्र के महन्त काशी आ रहे हैं। वे बहुत पहुँचे हुए महन्त हैं। लोगों की उन पर काफी श्रद्धा है। सभी भक्त उनको देखने के लिए बाहर आ रहे हैं। वे काशी में पहुँच चुके हैं। वे किसी मन्दिर मूर्ति की स्थापना करने आ रहे हैं।

महन्त साहब निम्न जाति के लोगों से घृणा करते हैं। कोतवाल ने कहा कि मैंने सुना है कि मूर्तियाँ तो

मुसलमान बनाते हैं। कायस्थ ने कहा कि हमारे यहाँ ऊँच-नीच बहुत माना जाता है। निम्न जाति के लोगों को बड़े जाति के लोगों से बहुत दूर रखा जाता है। मूर्ति भले ही मुसलमान बनाए पर उन्हें स्थापित करने से पहले उनको शुद्ध किया जाता है। कायस्थ ने कोतवाल से कहा - **"जी ! पर स्थापित करने से पहले उन पर गंगाजल छिड़ककर उन्हें पवित्र कर लिया जाता है। प्राण-प्रतिष्ठा तो बाद में होती है। प्राण-प्रतिष्ठा के बाद मूर्ति देवता बन जाती है, उसके पहले तो पत्थर है।"४०**

महन्त जी जटाधारी पुरुष हैं। जब बड़े महन्त जी गरीबों व निम्न जाति पर ऐसा व्यवहार करेंगे, तब आम लोग तो ऐसा व्यवहार करेंगे ही । घोड़ों और नगाड़ों की आवाज़ सुनाई दे रही है। एक जटाधारी साधु हाथ में बड़ा-सा चाबुक लिए हुए है। कोतवाल ने कायस्थ से पूछा कि यह चाबुक तुम किसलिए लिए हुए हो। कायस्थ ने कहा कि हमारे यहाँ नीच जाति के बहुत से लोग है। वे रास्ते पर हमेशा घूमते रहते हैं। उनके अन्दर यह अक्ल तो नहीं है कि बड़े लोग आ रहे हैं। हम बीच से हट जाएँ। महन्त जी की सवारी के पास से अगर नीच जाति के लोग आ गए तो उन्हें रास्ते पर से हटाने के लिए चाबुक तथा रास्ते को पवित्र करने के लिए गंगाजल का प्रयोग किया जाएगा। कायस्थ का कोतवाल के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है - **"यह नीच जात के लोगों को रास्ते पर से हटाने के लिए मालिक। झाँकी पर किसी कमीन का साया नहीं पड़ना चाहिए। यह गंगाजल छिड़क रहा है। रास्ते को पवित्र करने के लिए गंगाजल के थोड़े-से छींटे भी बहुत हैं।"४१**

महन्त जी को लोग भगवान की तरह पूजते हैं। जिस प्रकार हम मन्दिर में जाकर भगवान का चरणामृत लेते हैं। उसे अपने मस्तिष्क से लगाते है। उसी प्रकार महन्त जी को लोग यहाँ पर भगवान का दर्जा देते हैं। वे अन्दर से भले ही ढ़ोगी हो, लोगों का अनादर करते हो, लेकिन ऊपर से बहुत बड़े सन्त नजर आते हैं। ऐसे लोग ही समाज के लोगों को गुमराह करते हैं। उन्हें पतन के रास्ते पर ले जाते हैं। महन्तजी एक पालकी में बैठे हुए हैं। वे प्याजी रंग के वस्त्र धारण किए हुए हैं। वे बहुत-सी मालाएँ पहने हुए हैं। महिलाएँ उन्हें चँवर डुला रही हैं। वे चाँदी की पालकी में बैठे हुए हैं। उस पालकी को छः साधु पकड़े हुए हैं। महन्त जी की पालकी रास्ते में रुक जाती है। वे चाँदी के पात्र में से पानी भरकर कुल्ला करते हैं। उस कुल्ले की धार सीधी जमीन पर पड़ती है, जिसे सभी भक्तजन उसे चरणामृत समझकर माथे से लगाते हैं -

"एक साधु, महन्तजी के चरणों को तनिक ऊपर उठाता है। भक्तजन भागकर चरणों के निकट आ जाते हैं। महन्तजी का चरण- प्रक्षालन होता है। चरणों को धोने पर, नीचे गिरनेवाला जल, अनेक स्त्रियाँ-पुरुष, अंजुली में ले-लेकर पीते हैं, मस्तक पर धारण करते हैं। महन्तजी पर पुष्प-वर्षा होती है। शंख, डमरु और नगाड़े बजते हैं, शोभायात्रा आगे बढ़ जाती है।"४२

महन्तजी कितने भी ऊँचे पहुँचे हुए हो। ये लोग हमेशा गन्दे कार्य करते हैं। बाहर से ये बहुत ऊँचे महात्मा दिखते हैं। लोग इन्हें भगवान की तरह मानते हैं। कोई भी मानव इनके अन्दर झाँककर नहीं देख सकता है। इनके अन्दर क्या भरा हुआ है? ये पाखंडी हैं या महात्मा हैं। ये स्त्रियों के साथ भोग व उन्हें अपने साथ रखते हैं, फिर भी इनका तेज नष्ट नहीं होता है। पहले नागरिक का महन्त के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है -

"सुना है, सौ-सौ स्त्रियों के साथ भोग करते हैं फिर भी वीर्यपात नहीं होता।"४३

कोतवाल मुसलमान है। उनके पास दो तीन लोग बैठे हुए हैं। उनमें एक महन्त जी हैं। वे अखाड़े के सबसे बड़े महन्त हैं। महन्त ने कोतवाल से कहा कि मठ के सामने जो ज़मीन है। वह हमारी है। हम वहाँ इमारत खड़ी करेंगे। हमारी इमारत के सामने नीच लोगों की बस्ती पड़ती है। कोतवाल ने कहा कि आप तो जानते हैं। हमारे यहाँ धार्मिक भेदभाव अधिक है। कोतवाल ने कहा कि ये कौन-सी जाति के लोग हैं। महन्त ने कहा कि वे चमार हैं। कोतवाल बोले कि आप यह चाहते हैं कि हम इन्हें वहाँ से हटा दें। वे यह कार्य शेख़ साहिब को करने को कहते हैं। शेख़साहिब जब इस पर विचार करते हैं, तब उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है। शेख़साहिब ने कहा - **"जानता हूँ हुजूर। यह डोमों की बस्ती है। यह बहुत दिन से यहाँ बैठे हैं। बहुत दिन पहले ये लोग बंगाल से आये थे जब वहाँ बदअमनी फैली थी।"४४**

यह ऊँच-नीच हर जगह पाई जाती है। ये बड़े-बड़े लोग गरीबों का शोषण करते हैं और अपनी इमारत को बनवाने के लिए निर्धनों को वहाँ से हटाने का प्रयत्न करते हैं। वे स्वयं अपने महल बनाकर गरीबों की झोपड़ी को हटाना चाहते हैं।

आज के जीवन में हर आदमी अपना स्वार्थ देखता है। हम चैन से रहें। दूसरा चाहे कुएँ में गिरे। ये विचार बड़े मुल्ला मौलवी ज्यादा रखते हैं।

मौलवी साहब ने कोतवाल से कबीर की शिकायत की कि वह हमारे दीन की तौहीन करता है। लोगों को अपने साथ मिलाने का प्रयत्न कर रहा है। हमारी बिरादरी के लोगों को भड़काने का प्रयत्न कर रहा है। उन्हें अपने कवित्त सुनाकर हमारी जाति के प्रति विद्वेष फैला रहा है, जिससे पूरी जनता हमारे खिलाफ हो जाएँ। मौलवी ने कहा -

"बहुत लोग तो नहीं हैं, उस जैसे कवित्त कहनेवाले तो दो-तीन ही हैं, लेकिन गरीब लोगों, हिन्दू-मुसलमान नीच जात के सभी लोगों को ये घेर लेते हैं। वे इनकी बात सुनते हैं।"४५

इस नाटक में ही जातीय विद्वेष की स्थिति अन्य जगह भी देखने को मिलती है।

भारतवर्ष में ऋषियों-मुनियों का निवास रहा है। जहाँ ऋषि-मुनि तपस्या करते हैं और ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं, लेकिन आजकल के महात्मा अलग तरह के होते हैं। वे ऊपर से योग साधना करते हुए नजर आते हैं और अन्दर से कपटी स्वभाव के होते हैं। महात्मा मुनि ऊँची जात के लोगों को योग की शिक्षा देते हैं। नीची जाति के लोगों का तिरस्कार करते हैं। उनका बहुत बुरी तरह अपमान करते हैं।

प्रभात का जब समय होता है, तब सभी व्यक्ति आपस में बार्तालाप करते हैं। एक आदमी ने कहा कि हमारे गाँव में एक महात्मा जी आए। आदमी ने सोचा कि मैं महात्मा जी से कुछ शांति के उपाय पूछूँ। साधु ने मेरी ओर देखकर मुझसे पूछा-

"कौन जात ? हमने कहा, 'भगवन, मैं आपका सेवक हूँ।' वह फिर तेवर चढ़ाकर बोले, 'कौन जात?' हमने कहा, 'कम-जात, बदजात, नीच जात। हम चमार हैं मालिक।' इस पर साधु महाराज ने डण्डा उठा लिया और हम वहाँ से चले आये।"४६

कबीर जब सत्संग की मण्डली लगाते हैं, तब उस मण्डली में सभी तरह के लोग आकर सत्संग सुनते हैं। उस मण्डली में एक नाई आकर बैठता है। सत्संग मण्डलियों में थोड़ी बहुत बार्तालाप होने लगती है। मण्डली में एक जजमान आकर बैठ जाता है। वह उसके ऊपर रेस्तरा चलाता है। नाई जम्हाई लेता है तथा उसके मुँख से 'या अल्लाह' निकल जाता है। वह उस आदमी को गालियाँ देकर भगा देता है। यहाँ लोग छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ते हैं और उसमें अपनी शान समझते हैं। नाई ने कहा,

"कल दच्छिन का कोई जजमान आया। मैं उसके सिर पर उस्तरा चला रहा था जब मुझे जम्हाई आ गयी और मेरे मुँह से निकल गया, 'या अल्लाह !' वह तड़पकर उठ खड़ा हुआ और भागता हुआ, मुझे गालियाँ देता हुआ, धोती समेट गंगाजी में कूद गया।"

तभी रैदास एक गीत गाकर सुनाते हैं -

"जात भी ओधी, करम भी ओछा
ओछा कसब हमारा,
नीचे से प्रभु ऊँच कियो है,
कहे रैदास चमारा ।"४७

आज की दुनिया में हर बड़ा आदमी छोटे कमजोर वर्गों पर अत्याचार करता है। अगर कोई बड़ा आदमी या महन्त जी रास्ते से गुजर रहे हैं। अगर कोई छोटी जाति का आदमी उस रास्ते से निकल जाएँ, तो उस पर कोड़े बरसाए जाते हैं।

काशी में जब महन्त जी की सवारी निकल रही थी, तब वहाँ घोड़ों नगाड़ों की आवाज़ सुनाई दे रही थी। साधु लोग नीच जाति का कोई भी व्यक्ति बीच में न आ जाएँ। अपने हाथों में चाबुक लिए खड़े थे। जब महन्त साहब की सवारी निकल रही थी, तब रास्ते में चाण्डाल का बेटा आ गया। साधुओं ने उस बेटे पर कोड़े बरसाए। साधु लोग चाण्डाल के बेटे को मार देना चाहते थे, लेकिन कबीर से यह स्थिति नहीं देखी गई। कबीर साधु पर टूट पड़े और उस बच्चे को बचा लिया। उन्होंने कहा कि क्या तुम उस बच्चे को मार डालोगे? साधु ने कहा कि तुम बीच में आने वाले कौन होते हो?

"कबीर : साधु की ओर देखते हुए -
हिन्दू की दया, मेहर तुरकन की
दोनों घट से भागी ।

कहिए महाराज, पहुँच गये काशी? कै दिन की लूट-पाट रहेगी काशी में ? हम नहीं आये होते तो आपने तो उस बच्चे को ठिकाने लगा दिया था। कहाँ से मिली इतनी बड़ी चाबुक महाराज, भगवान के नाम पर चाबुक चलाते हो ?

माला फेरी, तिलक लगाया
लम्बी जटा बढ़ाता है
अन्तर तेरे कुफ़र कटारी

यों नहीं साहिब मिलता है।"४८

हर मनुष्य अपनी जाति के लोगों से प्रेम करता है। अगर मेरी जाति का आदमी होगा, तो लोग उसे बहुत सम्मान देते हैं। अगर वह उसकी जाति का नहीं है तो लोग उसे बुरा भला कहते हैं। हमारे समाज में ऐसी घटनाएँ रोज देखने को मिलती हैं। अगर हमारे घर में हमारी जाति का कोई व्यक्ति आता है ,तो हम उसे बहुत सम्मान देते हैं। अगर कोई नीच जाति का व्यक्ति आता है, तो हम लोग उसका आदर सत्कार नहीं करते हैं।

कबीर रैदास को एक किस्सा सुनाते हैं कि एक बार मन्दिर के पुजारी ने रैदास का गीत सुना और पुजारी रैदास से कहने लगे कि तुम मन्दिर में आकर आरती किया करो। जब पुजारी को यह पता चला कि वह चमार जाति का है, तब पुजारी उसे डण्डे से मार-मार कर भगा दिया। हम लोग रोज आए दिन अखबार पढ़ते हैं। ऐसी घटनाएँ हमें हर जगह देखने को मिलती हैं। आज लोग जाति-जाति के नाम पर लड़ रहे हैं। हमारे बहुत से समाज सुधारकों ने इसे रोकने का प्रयत्न किया, लेकिन फिर भी यह जातीय विद्वेष सभी जगह फैला हुआ है।

कबीर ने गम्भीर होकर कहा - **"कोई ऐसा धर्माचार जो इन्सान को इन्सान के साथ जोड़े, सभी इन्सान को इन्सान से अलग करते हैं, एक को दूसरे के दुश्मन बनाते हैं।"४६**

(ङ) भीष्म साहनी के साहित्य में जातीय सद्भाव की परिकल्पना -

भारतवर्ष अनेक जातियों का देश है। यहाँ अनेक प्रत्येक मानव अपनी-अपनी जाति से प्रेम करता है। हमारे समाज के वैवाहिक विधान अपनी-अपनी जातियों में होते हैं। हमें किसी भी कार्य को करने के लिए मिल जुलकर आगे आना चाहिए। यह जातिवाद वैदिक काल से चला आ रहा है। आज का मानव अनेक जातियों, उपजातियों में बँटा हुआ है।

हिन्दू समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण माने गए हैं, जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को क्रमशः पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा स्थान दियां गया है। वस्तुतः भारतवर्ष में जातीय विद्वेष अपने चरम रुप में है। जातीय कटुता का बीज बोने वाले कदाचित समझ पाते कि सभी मनुष्य एक प्रभु की सन्तान हैं। वास्तव में सामाजिक ढाँचा भेदों-उपभेदों, वर्णों, जातियों, उपजातियों में बँटकर परस्पर लड़-झगड़ रहा है। ऐसे दौर में जातीय सद्भाव की परम आवश्यकता है। **ऐसा ही एक परिदृश्य 'अमृतसर आ गया' कहानी में भीष्म जी ने दिखाने का प्रयास किया है।**

गाड़ी जब स्टेशन पर पहुँचती है, तब गाड़ी के अन्दर बैठा वावू शोर मचाने लगता है कि **'अमृतसर आ गया'** है। स्टेशन पर बहुत भीड़ थी। कहीं पर दंगा हुआ था। लोग गाड़ी के अन्दर घुस रहे थे। सभी डब्बे भरे हुए थे। गाड़ी के अन्दर बैठे लोग मना कर रहे थे कि कोई अन्दर न आए। अन्दर जगह नहीं है। एक आदमी लोगों की परवाह किए बिना अन्दर घुस आया। उसके साथ काफी सामान था। उस आदमी की पत्नी तथा एक बेटी थी। जो करीब १६-१७ वर्ष की थी। डब्बे के अन्दर बैठे लोगों ने कुछ नहीं कहा। सभी यात्री शान्त हो गए। एक पठान से जब सहन नहीं हुआ, तब उसने एक लात उस आदमी को मार दी। वह लात उस आदमी के न लगकर उसकी पत्नी के कलेजे में लग गई। एक पठान ने उस आदमी का सामान बाहर फेंक दिया। आदमी अपने सामान के चक्कर में नीचे उतर गया, फिर उसकी

पत्नी व लड़की भी उतर गई। पठान मुसलमान था। बाबू हिन्दू था। उस आदमी की औरत भी हिन्दू थी। 'हरवंशपुरा' शहर निकल चुका था। जब बाबू का इलाका **'अमृतसर आ गया'** तब बाबू ने पठान को खूब मारा और चिल्लाने लगा -

"और चीख-चीखकर गालियाँ बकने लगा था। तसबीह वाले पठान ने करवट बदली और बाबू की ओर देखकर बोला- ओ क्या ए बाबू ? अम को कुछ बोला?

बाबू को उत्तेजित देखकर अन्य मुसाफिर भी उठ बैठे।

नीचे उतर, तेरी मैं.....हिन्दू औरत को लात मारता है, हरामजादे, तेरी उस........।"५०

(च) सम्प्रदाय : अर्थ एवं स्वरुप

संप्रदाय का अर्थ है - 'धर्म का विशेष पथ' अर्थात् धर्म के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई न कोई पथ अपनाना पड़ता है। तो वह है- संप्रदाय। संप्रदाय बनते हैं, बदलते हैं और मिट जाते हैं। धर्म भूमि है। उसके बदलने और नष्ट होने का अर्थ है - प्रलय। वह नित्य है, सत्य है।

धर्म आत्मा है तो विविध संप्रदाय उसके शरीर है। सभी शरीरों में आत्मा एक है।

संप्रदायों का निर्माण आचार्यों ने किया है। उसका विभाजन साहित्य दर्शन और धर्म के आधार पर किया जा सकता है।

धर्म संप्रदायों में १. जैन धर्म २. बौद्ध धर्म ३. इस्लाम धर्म ४. ईसाई धर्म ५. सिद्ध सप्रदाय ६. नाथ संप्रदाय ७. संत संप्रदाय ८. सूफी सम्प्रदाय ९. शैव सम्प्रदाय १०. शाक्त सम्प्रदाय ११. वैष्णव सम्प्रदाय १२. आचार्य सम्प्रदाय १३. चैतन्य सम्प्रदाय । इन सम्प्रदायों के अनेक उपसंप्रदाय भी हैं। जो सभी भारतवासी हैं।

जहाँ सम्प्रदाय उपासना विधि, कर्मकाण्डों और रीति-रिवाजों का समुच्चय है। सम्प्रदायपरक मान्यताएँ देशकाल, क्षेत्र, परिस्थिति के अनुसार बदलती रह सकती है। वह अस्थिर इसलिए है कि समय के प्रवाह में वह घिसती टूटती रहती है, इसलिए नाव की तरह उसकी बार-बार मरम्मत करनी पड़ती है।

सम्प्रदाय धर्म का वह कलेवर है जो समय-समय पर देशकाल की विभिन्न परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुरुप अनेकों रुपों में विकसित हुआ है। यह परिवर्तनशील है। अपरिवर्तनीय, शाश्वत तत्व धर्म के वे सिद्धान्त हैं जो हर काल में एक जैसे रहते हैं तथा सभी धर्म सम्प्रदायों में एक से पाए जाते हैं। सम्प्रदायों का विशालकाय कलेवर इसलिए चुना गया होता है कि वे उच्चस्तरीय सिद्धान्तों के परिपोषण में अपना योगदान दें।

कलह सम्प्रदायों के बीच होती है। आग्रह-आग्रह से टकराता है। सत्य की आराधना और उपलब्धि लक्ष्य हो तो साथ चलने और भूल सुधारने और सहयोग करने का ही प्रसास रहेगा। ऐसी दशा में टकराहट की कोई गुंजाइश नहीं रहती।

सम्प्रदायों के बीच ऐसा दुराग्रह पाया जाता है कि हमारी मान्यताएँ प्रथाएँ एवं परम्पराएँ ही सही है। इसके अतिरिक्त और सब झूठे हैं। अपनी पुस्तकों में जो कुछ कहा गया है, वही ईश्वर का वचन है और जिसकी मान्यता इससे भिन्न है, वे सभी नास्तिक है और इस योग्य हैं कि उन्हें प्रताड़ित किया जाए, धरती पर से मिटा दिया जाए। वे ऐसे प्रतिपादन

ईश्वरकृत नहीं हो सकते। वे सम्प्रदायों के दुराग्रह हैं। इसी के कारण खून-खरावी होती है और घृणा से द्वेष की, पराएपन की भावना फैलती है।

भारत में अनेकों धर्म हैं जिनमें प्रमुख धर्म इस प्रकार हैं - ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म, हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, जरपुस्ट्र धर्म या पारसी धर्म, सिक्ख धर्म, यहूदत धर्म है।

(छ) साम्प्रदायिकता का अर्थ एवं स्वरुप -

संविधान द्वारा भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है, फिर भी भारतीय राजनीति में धर्म की एक विशेष भूमिका है। हम धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना तो कर पाए हैं, किन्तु धर्मनिरपेक्ष समाज की नहीं। धार्मिक विभिन्नता के कारण समाज में विभिन्न प्रकार के तनाव पैदा होते हैं और इन तनावों को बढ़ाने में राजनेता भी भूमिका निभाते हैं।

स्वाधीनता के बाद भारत की राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था के व्यवहारिक विकास को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि साम्प्रदायिकता राष्ट्र के समक्ष एक बड़ी आन्तरिक चुनौती है, इसलिए **रामधारी सिंह दिनकर** ने अपनी कृति **''संस्कृति के चार अध्याय''** में लिखा है कि **"साम्प्रदायिकता एक रोग है और वह भी संक्रामक है।"**

प्राचीनकाल से भारत विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों ने विचारधाराओं तथा परम्पराओं का समन्वय स्थल रहा है। यहाँ समय-समय पर न केवल विभिन्न धर्मों का प्रादुर्भाव और विकास हुआ बल्कि एक-एक धर्म के अन्दर ही विभिन्न मतमतान्तर वाले समूहों का निर्माण हुआ। यहाँ एक दूसरे से भिन्न विचारधारा वाले समूह थे। वहाँ संस्कृति को विकसित करने में अपना अपूर्व योगदान दिया, लेकिन धीरे-धीरे इन समूहों के बीच विभिन्न आधारों पर पृथक्करण की भावना इतनी प्रवल होती गई कि आज यह हमारे समाज की एक प्रमुख समस्या वन गई। इसी भावना के कारण प्रत्येक धार्मिक समूह स्वयं को एक बिल्कुल पृथक इकाई मानकर अपने हितों को सर्वोच्च स्थान देने लगा तथा विरोध, संघर्ष तथा हिंसा के द्वारा दूसरे समूहों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के प्रयत्न करने लगा। धार्मिक पूर्वाग्रहों तथा धार्मिक अन्धभक्ति की यही प्रवृत्ति सम्प्रदायवाद है। जिसने मध्यकाल से लेकर आज तक भारतीय समाज को विघटित करने में कोई कसर नहीं उठा रखी हैं। **पंडित नेहरु** ने एक बार कहा था **"साम्प्रदायिकता को मैं भारत का सबसे बड़ा शत्रू मानता हूँ। हम सभी को साम्प्रदायिकता करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देनी चाहिए, क्योंकि यह भारतीयता और हमारे राष्ट्र के विरुद्ध एक भारी चुनौती है।"**

साम्प्रदायिकता का अर्थ -

साम्प्रदायिकता वह भावना है जो धर्म, संस्कृति, भाषा, क्षेत्र तथा प्रजाति में से किसी भी एक आधार पर एक समूह को दूसरे से पृथक रहने तथा उसका विरोध करने की प्रेरणा देती है। सम्प्रदायवाद में संस्कृति, भाषा तथा क्षेत्र के पृथक्करण का कोई महत्व नहीं होता। अमेरिका, यूरोप तथा अफ्रीका के कुछ हिस्सों में प्रजातीय आधार पर साम्प्रदायिक संघर्ष अवश्य हुए हैं, लेकिन भारत में साम्प्रदायिकता की धारणा पूर्णतया धार्मिक अन्धभक्ति से संबंधित है। यह उनकी ऐसी

एक उग्र भावना है, जिसमें एक धर्म अथवा धार्मिक विचारधारा के अनुयायी यह मानने लगते हैं कि उनका सम्प्रदाय उनका मत अथवा उनका ही सर्वोच्च है।

उन्हीं का दूसरों पर सर्वोपरि महत्व है। उन्हीं का सर्वोपरि महत्व होना चाहिए। दूसरे धार्मिक समूह हेय है। उन्हें या तो समाप्त कर देना चाहिए या उन्हें उनके आधिपत्य में रहना चाहिए। विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच जो पारस्परिक घृणा, विद्वेष, उपेक्षा, तिरस्कार, निन्दा तथा हिंसां जन्म लेती है। उसी की समग्रता को हम सम्प्रदायवाद कहते हैं।

परिभाषा- स्मिथ के अनुसार, "एक साम्प्रदायिक व्यक्ति अथवा समूह वह है जो अपने धार्मिक या भाषा-भाषी समूह को एक ऐसी पृथक् राजनीतिक तथा सामाजिक ईकाई के रुप में देखता है जिसके हित अन्य समूहों से पृथक् होते हैं और जो अक्सर उनके विरोधी भी हो सकते हैं।"५१

रेण्डम हाउस डिक्शनरी के अनुसार, "साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति न कि समग्र समाज के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है।"५२

श्री कृष्णदत्त भट्ट के अनुसार- "सम्प्रदायवाद का अर्थ है, मेरा सम्प्रदाय, मेरा पन्थ, मेरा मत ही सबसे अच्छा है। उसी का महत्व सर्वोपरि होना चाहिए। मेरे सम्प्रदाय की ही तूती बोलनी चाहिए। उसी की सत्ता मानी जानी चाहिए। अन्य सम्प्रदाय हेय हैं। उन्हें या तो पूर्णतः समाप्त कर दिया जाना चाहिए या यदि वे रहें भी तो मातहत होकर रहें। मेरे आदेशों का सतत पालन करें। मेरी मर्जी पर आश्रित रहें।" वे पुनः लिखते हैं, "अपने धार्मिक सम्प्रदाय से भिन्न अन्य सम्प्रदाय अथवा सम्प्रदायों के प्रति उदासीनता, उपेक्षा, दयादृष्टि, घृणा, विरोध और आक्रमण की भावना 'साम्प्रदायिकता' है, जिसका आधार वह वास्तविकता या काल्पनिक भय या आशंका है कि उक्त सम्प्रदाय हमारे अपने सम्प्रदाय और संस्कृति को नष्ट कर देने या हमें जान-माल की क्षति पहुँचाने के लिए कटिबद्ध हैं।"५३

साम्प्रदायिकता की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार है -

१. साम्प्रदायिकता का सम्बन्ध धार्मिक समूहों से है अर्थात् एक धर्म के व्यक्ति अपने को एक सम्प्रदाय से सम्बन्धित मानते हैं, किन्तु जहाँ एक धर्म में ही विभिन्न मत-मतान्तर हैं वहाँ साम्प्रदायिकता का सम्बन्ध एक धर्म में ही विभिन्न छोटे-छोटे सम्प्रदायों से होता है।

२. साम्प्रदायिकता में यह भाव विद्यमान होते हैं कि अपना ही धर्म श्रेष्ठ है, अपनी ही भाषा एवं संस्कृति श्रेष्ठ है।

३. साम्प्रदायिकता में अन्य धर्मों, भाषाओं, एवं संस्कृतियों के प्रति घृणा, तिरस्कार एवं उपेक्षा के भाव पाए जाते हैं। ये विरोधी भाव ही साम्प्रदायिक तनाव एवं संघर्ष पैदा करते हैं।

४. साम्प्रदायिकता पारस्परिक स्नेह एवं सहयोग के स्थान पर सामाजिक एवं राजनीतिक अलगाव पैदा करती है।

५. साम्प्रदायिकता का आधार लोगों में उत्पन्न यह वास्तविकता या काल्पनिक भय है कि अन्य धार्मिक समूह उनके सम्प्रदाय और संस्कृति को नष्ट कर देंगे और जान-माल की अति पहुँचाएँगें।

६. साम्प्रदायिकता चरमवादी होती है, जिसमें अनुकूल और समझौते का कोई स्थान नहीं होता।

७. साम्प्रदायिकता की मानसिकता तभी सन्तुष्ट होती है, जब तिरस्कार, विरोध अथवा हिंसा के द्वारा अन्य धार्मिक समूहों

को भी दबाने में सफलता प्राप्त कर ली जाए।

८. साम्प्रदायिकता का आधार धार्मिक विश्वास है, इसलिए धार्मिक कट्टरता में होने वाली वृद्धि तथा कमी के साथ ही साम्प्रदायिकता के प्रभाव में भी वृद्धि अथवा कमी होती रहती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारत में धर्म के नाम पर हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच होने वाले संघर्ष ही साम्प्रदायिकता का उदाहरण नहीं है, बल्कि हिन्दुओं में ही वैष्णवों-शैव के बीच होने वाले संघर्ष, मुसलमानों में शिया और सुन्नियों के बीच होने वाले संघर्ष अथवा सिक्खों में अकालियों और निरंकारियों के पारस्परिक संघर्ष भी साम्प्रदायिकता के उदाहरण हैं। वर्तमान युग में साम्प्रदायिकता की धारणा में धार्मिक अन्धभक्ति के साथ राजनैतिक उद्देश्य भी जुड़ते जा रहे हैं। यही कारण है कि आज साम्प्रदायिकता का उपयोग खुलकर राजनैतिक स्वार्थों को पूरा करने के लिए किया जाने लगा। पंडित नेहरु ने कहा था कि साम्प्रदायिक संगठन धर्म का नारा लगाते हैं, लेकिन धार्मिक नहीं होते, संस्कृति का नाम लेते हैं, लेकिन संस्कृति के लिए कुछ काम नहीं करते। नैतिकता की बात करते हैं, लेकिन नैतिकता से कोसों दूर रहते हैं। ये आर्थिक समूह भी नहीं होते। अपने को अराजनैतिक की वर्तमान प्रकृति के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साम्प्रदायिकता एक ऐसी संघर्षपूर्ण मनोवृति है, जिसके अन्तर्गत एक विशेष धर्म अथवा सम्प्रदाय के अनुयायी अपने धार्मिक तथा राजनैतिक हितों को पूरा करने के लिए अपने समूह को अन्य धार्मिक समूहों के विरुद्ध संगठित करते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर उन्हें उग्र प्रदर्शनों तथा हिंसा के लिए भड़काते हैं।

साम्प्रदायिकता के कारण -

१. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि -

अतीत में धार्मिक आधार पर जो साम्प्रदायिक संघर्ष हुए हैं उससे भारत के दो सवसे बड़े धार्मिक समूहों में अनेक पूर्वाग्रहों का विकास हो गया। इन पूर्वाग्रहों के कारण आज न केवल साम्प्रदायिक आधार पर धर्म और भाषा का नारा बुलन्द किया जाता है, बल्कि अकारण की विभिन्न धार्मिक समूह एक दूसरे को अविश्वास की दृष्टि से देखते रहते हैं। यह स्थिति साम्प्रदायिक तनाव के लिए एक अनुकूल वातावरण का निर्माण करती है।

२. साम्प्रदायिक संगठन-

अपने यहाँ आरम्भ में मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा ही दो ऐसे साम्प्रदायिक संगठन थे जो हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के प्रति भड़काते रहते थे। अब सिक्खों में भी यह स्थिति देखेने को मिलती है जैसे हिन्दू और मुसलमानों में थी। ये संगठन अपने धर्म अथवा सम्प्रदाय के लोगों को संगठित करते हैं। अन्य धर्मों और सम्प्रदायों के प्रति घृणा और विद्वेष का प्रचार करते हैं। वे अपने सदस्यों में हथियारों का वितरण करते हैं। अपने अस्तित्व के लिए झूठी अफवाहें फैलाकर अपने सदस्यों को दूसरों के विरुद्ध भड़काते हैं। इन संगठनों का यही प्रयास रहता है कि यदि एक स्थान पर साम्प्रदायिक झगड़े हो तो दूसरे स्थान पर उससे तुरन्त बदला लिया जाए।

३. मनोवैज्ञानिक कारक-

मनोवैज्ञानिक दबाव भी हमारे देश में साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न कर देते हैं। इनसे सन्देह, भय, अविश्वास तथा हीनता की भावनाएँ पैदा हो जाती हैं। उदा० के लिए भारत का मुस्लिम समूह अकारण ही हिन्दुओं को अपनी प्रगति

का शोषण का कारण मानकर असन्तुष्ट महसूस करता है। वह इसे अपनी धार्मिक कट्टरता और शैक्षिक पिछड़ेपन के रुप में ही नहीं देखता। वह ऐसे सन्देह एवं अविश्वास के रुप में देखता है कि अतीत में मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं पर किए गये अत्याचारों का बदला आज उनके सामाजिक और आर्थिक शोषण के रुप में किया जा रहा है। उनकी हीनता उनमें तनाव उत्पन्न करती हैं। जबकि हिन्दू वर्ग उनकी राष्ट्रीय निष्ठा में अविश्वास करने लगता है। यह स्थिति विस्फोटक बनकर साम्प्रदायिक तनावों का बढ़ा देती है। १९८३ अकालियों और निरंकारियों के बीच होने वाली सन्देह और भय के मनोवैज्ञानिक कारणों का परिणाम है।

राजनैतिक स्वार्थ -

जनतन्त्र हमारे लिए सर्वोत्तम शासन प्रणाली है। इससे सम्बद्ध वोटों की राजनीति ने आज साम्प्रदायिक संघर्षों को बढ़ाने में सबसे सक्रिय भूमिका निभाई है। चुनाव के समय साम्प्रदायिकता अपने खुले रुप में सामने आती है और कुछ समय बाद इसकी परिणति साम्प्रदायिक संघर्ष में देखने को मिलती है। चुनाव चाहे संसद के लिए हो, अथवा गाँव पंचायत के स्तर पर। विभिन्न दलों द्वारा चुनाव के लिए अक्सर ऐसे प्रत्याशी को खड़ा किया जाता है, जो उस क्षेत्र के सबसे बड़े धार्मिक समूह का सदस्य होता है। फिर धर्म के नाम पर लोगों को संगठित किया जाता है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से अपने अनुयायियों की सहानुभूति पाने के लिए दूसरे धर्मावलम्बियों की निन्दा की जाती है तथा चुनाव से सम्बन्धित मामूली मतभेदों को साम्प्रदायिक झगड़ों का रुप दे दिया जाता है। अनेक प्रत्याशी तो नियोजित रुप से चुनाव के समय साम्प्रदायिक दंगे करवाने का प्रयत्न करते हैं, जिससे परिस्थिति के अनुसार उसका पूरा लाभ उठा सकें। मुहम्मद अली जिन्ना की प्रेरणा से भारत में सन् १९३१ तथा १९४४ के बीच सबसे व्यापक साम्प्रदायिक संघर्ष हुए वे उनकी राजनैतिक महत्वाकाँक्षाओं के परिणाम थे।

सांस्कृतिक भिन्नता-

हमारे यहाँ हिन्दुओं, मुसलमानों, सिक्खों, ईसाईयों तथा पारसियों के रीति-रिवाज एक दूसरे से भिन्न हैं। उनके उत्सवों और त्यौहारों के मनाने के ढंग अलग-अलग हैं। वेशभूषा तथा धार्मिक विश्वासों में कोई समानता नहीं है। राष्ट्र का अंग होने के बाद भी उनके लिए बनाए गए। अनेक सामाजिक विधान एक दूसरे से भिन्न हैं। कभी ऐसा प्रयत्न नहीं किया गया कि नियोजित रुप से सभी समूहों को सांस्कृतिक आधार एक दूसरे के निकट लाया जाए।

धार्मिक कट्टरता-

प्रत्येक धर्म के नेता और प्रचारक अपने धर्म को सर्वोच्च मानते हैं और वहीं दूसरे धर्मों को हेय दृष्टि से देखते हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर सभी मुल्ला, मौलवी, महन्त, मठाधीश और पादरी अपने अनुयायियों को धार्मिक कट्टरता की और दूसरे धर्मावलम्बियों से अपनी रक्षा करने की सीख देते हैं। जब अतीत में एक विशेष धर्म के प्रतिनिधियों द्वारा दूसरे धर्म के अनुयायियों की काफिर, म्लेच्छ तथा पाखण्डी कहकर अपने अनुशरणकर्ताओं को दूसरों के विरुद्ध भड़काते रहते हैं। इस कार्य के पीछे धार्मिक प्रतिनिधियों के अपने निजी स्वार्थ होते हैं, जिससे उनमें अन्दर ही अन्दर विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच तनाव बढ़ता ही रहता है। प्रत्येक समूह के अधिकांश व्यक्ति धर्मधीरु और अन्ध-विश्वासी होते हैं। ऐसी स्थिति में उनके धर्मगुरुओं के द्वारा उन्हें जो भी शिक्षा दी जाती है वे उनके औचित्य अथवा अनौचित्य पर

ध्यान देना आन्तरिक रुप से ग्रहण कर लेते हैं।

अराजक तत्वों के स्वार्थ -

प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे अराजक अथवा समाज विरोधी तत्व अवश्य होते हैं। जिनका कार्य विभिन्न समूहों के बीच संघर्ष उत्पन्न करना और संघर्ष की स्थिति में अपनी स्वार्थ साधना करना होता है। ऐसे व्यक्ति अत्यधिक चालाकी और धूर्तता से परस्पर विरोधी दो धार्मिक समूहों अथवा सम्प्रदायों के बीच संघर्ष उत्पन्न करने में सफल हो जाते हैं। पहले वे व्यक्ति दोनों समूहों में एक-दूसरे के विरुद्ध अफवाहें फैलाते हैं, किसी विशेष त्यौहार या उत्सव के अवसर पर मनगढन्त झूठे समाचार देते हैं, एक समूह द्वारा दूसरे के विरुद्ध की जाने वाली का भय दिखाते हैं और स्वयं ही होली, दीवाली ईद अथवा किसी महत्वपूर्ण दिन अपने समूह के आयोजन या जुलूस में स्वयं ही बाधा उत्पन्न करके अपने साथियों को दूसरे सम्प्रदाय के विरुद्ध भड़का देते हैं। एक बार साधारण सा झगड़ा हो जाने पर इन्हीं के द्वारा सबसे पहले आगजनी, लूटपाट और हत्या का दौर शुरु किया जाता है, जो बाद में एक गम्भीर साम्प्रदायिक तनाव का रुप ले लेता है।

दोषपूर्ण धर्मनिरपेक्षता-

धर्म निरपेक्षता का यह अर्थ है सभी धर्मों के विकास में किसी प्रकार की बाधा न डाली जाए तथा सभी ध ार्मिक समूहों को स्वतन्त्र रुप से अपना विकास करने के समान अवसर प्रदान किए जाएँ। एक धर्मनिरपेक्ष समाज में धार्मिक विश्वासों की स्वतन्त्रता राष्ट्रीयता से अधिक महत्वपूर्ण नहीं हो सकती । इसका तात्पर्य है कि स्वस्थ्य राष्ट्रीयता के विकास तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिए यदि सभी धार्मिक समूहों के समान सामाजिक कानून बनाएँ और लागू किए तो भी धर्मनिरपेक्षता की भावना सुरक्षित रह सकती है। भारत में सभी के लिए हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाईयों के लिए कानून अलग-अलग हैं। जिससे विभिन्न धार्मिक समूहों में न केवल सामाजिक दूरी बनी रहती है, बल्कि सभी धार्मिक समूहों का यह प्रयास रहता है कि वे धर्म के आधार पर अधिक से अधिक संगठित होकर अपने लिए एक पृथक सामाजिक व्यवस्था की माँग कर सके।

साम्प्रदायिकता के दुष्परिणाम-

भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या ने राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक एकीकरण तथा सामाजिक प्रगति के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न की। साम्प्रदायिकता से उत्पन्न सभी परिस्थितियाँ भावनात्मक एकीकरण में बाधा उत्पन्न करके एक स्वस्थ राष्ट्र के विकास के लिए गम्भीर चुनौती बन गई।

राष्ट्रीय एकता-

राष्ट्रीय एकता के लिए भावनात्मक एकीकरण तथा चरित्र की दृढ़ता का विशेष महत्व है। सांम्प्रदायिकता के फलस्वरुप धर्म व्यक्ति के विकास का साधन न रहकर चारित्रिक पतन का माध्यम बन जाता है। **विनोबा भावे** का कथन है - **"हिन्दू और मुसलमान आपस में लड़कर यह सोचते हैं कि वे अपने धर्म को लाभ पहुँचा रहे हैं, परन्तु वास्तव में दोनों ही अपने धर्म को नष्ट कर रहे है। मैं यह भी मानता हूँ कि यह संघर्ष और हत्याएँ धर्म की रक्षा नहीं कर सकती।"**

पारस्परिक तनाव -

जब समाज में लड़ाई छिड़ जाती है दोनों समूहों में पारस्परिक घृणा, अविश्वास, ईर्ष्या, जलन, एक दूसरे के खून

के प्यास से साम्प्रदायिकता में तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती। यह तनाव मानव की आन्तरिक शान्ति को भंग कर देता है, जिससे समाज में हिंसा और मारकाट की भावना भड़क उठती है। जब यह हिंसा विकराल रुप धारण कर लेती है, भविष्य में गहरे तनाव को जन्म देती है। कभी-कभी यह तनाव प्रतिशोध की भावना में परिवर्तित होकर एक बड़े क्षेत्र को साम्प्रदायिक संघर्ष में झोंक देते हैं, जिससे आरोप-प्रत्यारोप धमकी और हिंसा का एक ऐसा विषम चक्र आरम्भ हो जाता है। इसका समाधान करना राष्ट्रीय जीवन के लिए एक गम्भीर चुनौती बन जाती है।

सार्वजनिक धन-जन की हानि-

जब समाज में साम्प्रदायिकता फैलती है इसका अनुमान साधारण जनता नहीं लगा सकती। इससे जान माल व धन की हानि होती है। आज हम लोग आर्थिक तंगी से वैसे ही गुजर रहे हैं। गरीबों के पास दो वक्त का भोजन खाने को भी नहीं है और दंगे होने से कितना नुकसान हो जाता है। दंगों के कारण अरबों की सम्पदा बारुद की तरह जलकर राख हो जाती हैं। इसमें जोश में आकर लोग बाजारों के सामान को आग लगा देते तथा सार्वजनिक इमारतों को नष्ट कर देते तथा रेलों तथा बसों को तोड़ डालते और कारखानों के उत्पादन को रोकना उनके लिए साधारण सी बात बन जाती है। जब दंगा होता तो कितने ही व्यक्तियों की जानें चलीं जाती। हजारों बच्चे अपंगिता के शिकार हो जाते और हत्याओं के कारण कितने ही परिवार विघटित हो जाते और माताओं व बहनों के साथ दुराचार के कारण वे क्रूर व हिंसक स्वभाव की बन जाती। साम्प्रदायिक हिंसे मानव जीवन के लिए एक हानि का स्रोत है, जिससे पूरा राष्ट्र बिखर जाता है। इसकी हानि को पंचवर्षीय योजनाएँ ही पूरा कर सकती है।

राजनीतिक अस्थिरता तथा अविश्वास -

साम्प्रदायिकता आर्थिक विषमताओं के कारण नहीं होती बल्कि इसमें राजनीति का बहुत बड़ा हाथ है। जब कोई बड़ा नेता बन जाता है, तब वह जनता को यह विश्वास दिलाता है मैं आप लोगों के लिए कार्य करुँगा। जब वह अपने वादे को पूरा नहीं कर पाता, जनता भड़क उठती है। कहीं दंगे कहीं हड़तालें अन्तः साम्प्रदायिकता का रुप ले लेती हैं। जनता को सरकार के प्रति अविश्वास उत्पन्न हो जाता है, जिससे सभी लोगों को राजनीतिक दलों को सरकार पर कीचड़ उछालने का अवसर मिल जाता है। राजनैतिक दलों के दुष्प्रचार से साम्प्रदायिक तनाव उभरने लगते हैं। कानूनों और व्यवस्था को बनाए रखने में करोड़ों रुपए का अनावश्यक व्यय हो जाता है, जिससे जनता अपने को असुरक्षित समझने लगती है। यह साम्प्रदायिक एक ऐसा जहर है जिसके कारण विभिन्न वर्गों की माँगें राष्ट्रीय तथा सामुदायिक हित में न होकर साम्प्रदायिक आधार पर की जाने लगती हैं। सरकार जब इन माँगों को पूरा नहीं कर पाती तब साम्प्रदायिक आधार पर प्रदर्शन होते हैं। साम्प्रदायिकता से दल बदल जैसी घटनाएँ सामने आने लगती हैं। ये सभी दशाएँ देश में राजनैतिक अव्यवस्था और अस्थिरता उत्पन्न करके साम्प्रदायिकता की समस्या को और गम्भीर बना देती है।

औद्योगिक विकास में बाधा-

हमारे देश में जो औद्योगिक विकास धीमी गति से हुए है। उनका प्रमुख कारण साम्प्रदायिक की प्रमुख समस्या है। साम्प्रदायिक भावनाओं के कारण न केवल मिलों और कारखानों में श्रमिक विभाजित रहते हैं बल्कि साम्प्रदायिक तनावों के कारण कभी-कभी तो सम्बन्धित स्थान पर लम्बी अवधि के लिए उत्पादन का कार्य पूरी तरह बन्द हो जाता है। साम्प्रदायिक

आधार पर भारत का विभाजन होने के पश्चात् अनेक कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों की हानि हुई। इनसे सम्बन्धित आनुवंशिक करीगरों ने स्थान परिवर्तन कर लिया था। साम्प्रदायिकता के कारण परिवार छिन्न-भिन्न हो गए।

अराजक तत्वों में वृद्धि-

साम्प्रदायिकता के कारण अराजक तत्वों में वृद्धि हो जाती है। जिससे सभी में घृणा और हिंसा बढ़ जाती है, जिससे कितने ही व्यक्ति लूटपाट, आगजनी हत्या को एक नैतिक व्यवहार के रुप में देखने लगते हैं। संकीर्णता, कट्टरता और प्रतिशोध की मनोवृत्तियाँ इतनी शक्तिशाली बन जाती हैं कि इनके अधीन व्यक्ति तरह-तरह के अपराध करना आरम्भ कर देते हैं। यह स्थिति केवल साम्प्रदायिक संघर्ष के तरह का नहीं बल्कि स्थाई रुप से सामाजिक प्रगति के मार्ग में एक बड़ी बाधा बन जाती है।

सांस्कृतिक एकीकरण में बाधक-

एक स्वस्थ राष्ट्रीयता के विकास के लिए यह आवश्यक है कि देश में रहने वाले सभी समूहों तथा समुदायों के बीच एकीकरण की प्रक्रिया क्रियाशील है। भारत में आज विभिन्न कल्याण कार्यक्रमों, सांस्कृतिक आयोजनों तथा शिक्षा के द्वारा सांस्कृतिक एकीकरण के सभी प्रयास साम्प्रदायिकता की समस्या के कारण धूमिल पड़ जाते हैं। जब कभी साम्प्रदायिक तनाव बढ़ते हैं जो वर्षों से विकसित हो रहा साम्प्रदायिक सद्भाव एकाएक लुप्त हो जाता है और उसके स्थान पर वही अविश्वास और घृणा हमारे जीवन को विषाक्त करने लगते हैं।

साम्प्रदायिकता के निवारण के उपाय-

भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या को दूर करने के लिए अनेक उपाय किए गए, क्योंकि यह समाज के लिए यह अभिशाप बन गया था। अनेक नेताओं तथा समाज सुधारकों ने सामज में फैली बुराइयों, दंगों, बेकारी, धर्म, जाति आदि के स्थान पर समाज में फैली बुराईयों को दूर किया। सन् १९६८ में मुख्यमन्त्रियों के सम्मेलन में साम्प्रदायिकता निवारण के लिए काफी लम्बी चर्चा हुई। इसके पश्चात् थोड़े बहुत अन्तर से साम्प्रदायिकता की समस्या में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ।

साम्प्रदायिकता के उन्मूलन के लिए यह आवश्यक है कि भारत के लिए सामाजिक विधानों में एकरुपता है। सरकार के द्वारा जब सभी के लिए कानून एक है। मुसलमानों, सिक्ख, ईसाई के लिए अलग-अलग है। इसी कारण सभी में भावनात्मक एकता का एकीकरण नहीं हो पाता। जब सभी भारत के निवासी एक ही राष्ट्र के सदस्य है, फिर धर्म के कारण उनमें पृथक्करण की भावना क्यों है। सामाजिक विधाओं की एकरुपता से धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं हो पाता।

साम्प्रदायिक संगठनों पर रोक लगाने से साम्प्रदायिक की समस्या बहुत कम हो सकती है। चाहे वह संगठन राजनैतिक हो, शैक्षणिक हो तथा सामाजिक कानूनों के द्वारा इन्हें समाप्त कराना तथा धर्मनिरपेक्ष रुप देना आवश्यक है। इस प्रकार शिक्षण संस्थाओं, समाज सुधार संगठनों, विभिन्न समितियों, संस्थाओं के नाम के साथ हिन्दू-मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई या जैन शब्दों के उपयोग पर वैधानिक प्रतिबन्ध होना आवश्यक है।

चुनावों के समय साम्प्रदायिकता को सबसे अधिक प्रोत्साहन मिलता है। साम्प्रदायिक आधार पर होने वाले

चुनाव प्रचार को अवैध माना जाए। किसी भी स्थान पर यदि किसी प्रत्याशी के समर्थन में साम्प्रदायिकता की बात उठाई जाती है अथवा साम्प्रदायिक आधार पर नारे लगाए जाते हैं व पोस्टर चिपकाए जाते है तो फोटो और टेपरिकार्ड के द्वारा सम्प्रदायवाद को सरलता से प्रमाणित किया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि उचित कानून का निर्माण करके तथा जनता में उनका प्रचार करके साम्प्रदायिकता को अधिक से अधिक हतोत्साहित किया जाएँ।

शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय एकीकरण को प्रोत्साहन देना उपयोगी सिद्ध होता है। वास्तव में शिक्षण संस्थाओं का कार्य प्रयोगशालाओं में निरर्थक प्रयोग करना विद्यार्थियों को सिद्धान्तों से परिचित कराना मात्र नहीं है। आज शिक्षा को राष्ट्रीय एकीकरण, सांस्कृतिक विकास तथा सामाजिक व्यक्तित्व के निर्माण का एक माध्यम बनाना आवश्यक है। शिक्षा चाहे विज्ञान की हो, कृषि की हो, चिकित्सा की हो, वाणिज्य या कला से सम्बद्ध हो, सभी के द्वारा राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण को प्राथमिकता मिलना आवश्यक है। शिक्षा के माध्यम से जैसे-जैसे युवा वर्ग सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद और इसी प्रकार की दूसरी संकुचित मनोवृत्तियों तथा इन्हें प्रोत्साहन देने वाले स्वार्थ-समूहों के क्रिया-कलापों से परिचित होता जायगा। इन समस्याओं में अपने आप कमी होने लगेगी।

प्राथमिक स्तर की शिक्षा में नैतिक शिक्षा का समावेश करने से भी साम्प्रदायिकता की समस्या को कम किया जा सकता है। किसी भी धर्म की शिक्षाएँ सम्प्रदायवाद का समर्थन नहीं करती। सभी धर्म इस बात पर बल देते हैं। कि ईश्वर का द्वार सभी के लिए खुला हुआ है जो सच्चाई, ईमानदारी, त्याग और परिश्रम के द्वारा अपने कर्तव्यों को पूरा करते हैं। धार्मिक, संकीर्णता, घृणा और पृथक्करण की भावना तो मुल्ला-मौलवियों और महन्तों द्वारा अपने निहित स्वार्थो के कारण फैलाई जाती है। यदि प्रारम्भिक स्तर पर ही सभी धार्मिक सम्प्रदायों के बच्चों को सभी धर्मों की मूल शिक्षाओं और उनकी समानताओं से परिचित कराया जाएँ तथा धार्मिक विभेदों के प्रति उनमें अरुचि उत्पन्न की जाए तो इससे उनकी मानसिकता अत्यधिक स्वच्छ और समन्वयकारी बन सकेगी। भविष्य में एक सामाजिक व्यक्तित्व ग्रहण करने के बाद उनकी साम्प्रदायिक विचारधाराओं में रुचि नहीं होगी।

साम्प्रदायिक संघर्षों का मुख्य कारण कुछ अराजक तत्व तथा धर्म के कट्टर प्रतिनिधि ही होते हैं, फिर भी साम्प्रदायिक संघर्ष के समय जान माल की हानि तो उन निरीह व्यक्तियों की होती है जिनका ऐसे संघर्षों से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता। अराजक तत्व और साम्प्रदायिकता के कट्टर समर्थक साफ बच निकलते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि साम्प्रदायिक संघर्ष वाले क्षेत्र में विशेष न्यायालयों की स्थापना की जाए, जिससे स्थानीय गवाहियों तथा परिस्थितियों के आधार पर दोषी व्यक्तियों को शीघ्र से शीघ्र दण्डित किया जा सके। दंगा ग्रस्त क्षेत्रों में अध्ययन दलों अथवा आयोगों की नियुक्तियों से कोई लाभ नहीं होगा। इसी के सम्बन्ध में विशेष न्यायालय द्वारा अपना कार्य समाप्त किए जाने तक राजनैतिक दलों अथवा धार्मिक संगठनों द्वारा साम्प्रदायिकता के बारे में किसी प्रकार के वक्तव्य न दिए जाए। दोषी व्यक्तियों को शीघ्र ही दण्ड मिलने से भविष्य में साम्प्रदायिक संघर्षों में स्वयं ही काफी कमी हो जाएगी।

भारत में अल्पसंख्यक समुदाय की धारणा के आधार पर किसी प्रकार के संरक्षण अथवा पृथक योजनाओं की बात करना हमारे लिए अत्यधिक घातक है। सभी व्यक्ति एक राष्ट्र के अंग हैं जो धर्म के नाम पर बहुमत अथवा अल्पमत की बात करने से साम्प्रदायिकता को अधिक प्रोत्साहन मिलता है। सभी के जीवन में समस्याएँ हैं चाहे वह

मुसलमान हो, हिन्दू, सिक्ख या ईसाई हो। किसी के लिए अलग से व्यवस्था नहीं होनी चाहिए।

साम्प्रदायिकता को दूर करने के लिए अनेक प्रशासनिक सुधार आवश्यक है। इनके लिए सरकार को अच्छे कदम उठाने का प्रयास करना चाहिए। सरकार को ऐसे दंगों पर नियन्त्रण लगाने का प्रयास करना चाहिए। राजनीति में ऐसे कोई भी कार्य न करें, जिससे जनता भड़क उठे, क्योंकि थोड़ी-सी चिंगारी पूरे देश का सर्वनाश कर सकती है। यह कहा जा सकता है कि हमें चुनावों में प्रचार के दौरान हर परिस्थिति में शान्ति को बनाए रखना है। ये नहीं करना है अपनी कुर्सी के खातिर दूसरे नेता की हत्या करवा दी जाएँ। यहीं से साम्प्रदायिक दंगों की आग सभी का नाश कर सकती है और थोड़ी-सी सावधानी करोड़ों का नुकसान बचाकर, अनेकों की हत्या होने से बचा सकती हैं। हमें धार्मिक उत्सवों तथा जुलूसों में विशेष सावधानी की आवश्यकता रखनी है। रेडियो, टेलीविजन तथा स्वयंसेवी संगठनों के द्वारा साम्प्रदायिकता के विरोध में प्रचार करना चाहिए, जिससे जनता भड़क न उठे।

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था - **"साम्प्रदायिकता को समाप्त करने के लिए विभिन्न सम्प्रदाय के लोगों द्वारा सहजीवन व्यतीत करना चाहिए।"**

इतिहासविद् प्रो० विपिनचन्द्र ने साम्प्रदायिकता को एक विचारधारा मानते हैं और साम्प्रदायिक हिंसा को इसका एक मूर्तरुप। इन्होंने साम्प्रदायिकता के तीन चरण गिनाए हैं। इस क्रम में सबसे पहला स्थान इस विश्वास का है कि एक ही धर्म मानने वालों के सांसारिक हित-यानी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हित भी एक जैसे ही होते हैं। साम्प्रदायिक विचारधारा के उदय की यह पहला चरण है। साम्प्रदायिक विचारधारा का दूसरा तत्व यह विश्वास है कि भारत जैसे बहुभाषी समाज में एक धर्म के अनुयायियों के सांसारिक हित यानी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक हित अन्य किसी धार्मिक अनुयायियों के सांसारिक हितों से भिन्न हैं। साम्प्रदायिकता अपने तीसरे चरण में तब प्रवेश करती है जब यह मान लिया जाता है कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों या 'समुदायों' के हित एक दूसरे के विरोधी है।

भारत में साम्प्रदायिकता का विकास-

भारत में उग्र साम्प्रदायिकता का उदय चाहे उन्नीसवीं एवं बीसवीं सदी में हुआ हो, किन्तु इसका इतिहास पुराना है। प्राचीन समय से ही अनेक आक्रमणकारी भारत आते रहे, लेकिन मुस्लिम आए तो वे एक नई संस्कृति और धर्म लेकर आए जिसका संघर्ष हिन्दू संस्कृति से हुआ। अंग्रेजों के आने से पूर्व भारत में हिन्दू-मुस्लिम शासकों और नवाबों के हाथों में सत्ता थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी उनसे डरती थी। फलतः उन्होंने हिन्दुओं की सहायता और सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिश की। प्लासी युद्ध सन् १७५७ के बाद जब कम्पनी के हाथ में शासन सत्ता आने लगी तो उसने मुसलमानों के प्रति सौतेला व्यवहार किया और हिन्दुओं को नौकरियों में प्रोत्साहन देकर मुसलमानों के प्रति उपेक्षा की नीति अपनाई।

मुस्लिम साम्प्रदायिकता का उद्भव सन् १८२० में अहमद बरेलवी द्वारा चलाए गए जिहाद आन्दोलन से शुरु हुआ। १८७५ का अलीगढ़ आन्दोलन तथा १६०६ में मुस्लिम लीग की स्थापना में वैमनस्यता को बढ़ाया। सन् १६४२ में मौलाना मौदूदी द्वारा स्थापित जमाते इस्लामी, १६५३ में अलीगढ़ और १६६१ में नई दिल्ली में कुछ मुस्लिम कन्वेन्शनों ने साम्प्रदायिकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तात्कालिक कुछ हिन्दू नेताओं के कार्यों ने भी साम्प्रदायिकता को

जाने अनजाने में हवा दिया।

सिक्ख साम्प्रदायिकता का उदय इस अज्ञात भय से हुआ कि यदि सिक्खों को हिन्दुओं के साथ मिला दिया गया तो वह अपना अस्तित्व खो देंगे। १९६० में मास्टर तारा सिंह की अलग पंजाब राज्य की माँग की जड़ में एक यह भी कारण था।

ईसाई साम्प्रदायिकता का उदय तब हुआ जब सरकार ने धर्म प्रचार की आजादी को नियंत्रित करने का प्रयास शुरु किया अंग्रेजों की **'फूट डालो और राज करो'** की नीति ने उग्र साम्प्रदायिकता को जन्म दिया।

के०वी० कृष्ण ने 'प्राब्लम ऑफ मिनिरिटाइज' में कहा है कि 'कहीं साम्प्रदायिकता को बढ़ाने में आर्थिक कारकों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की जैसे बंगाल में अधिकांश किसान मुस्लिम और जमींदार हिन्दू थे। इन दोनों के मध्य संघर्ष को साम्प्रदायिक संघर्ष के रुप में देखना आसान था।

प्रभा दीक्षित ने 'साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक सन्दर्भ' में लिखा है कि यह जानबूझकर एक राजनीतिक सिद्धान्त है जिसका प्रचार पुराने स्थापित विशिष्ट समुदाय का एक वर्ग लोकतांत्रिक शक्तियों को क्षीण करने के लिए करता है। इस प्रकार प्रभा दीक्षित यह मानती है कि साम्प्रदायिकता का मूल सत्ता के द्वन्द्व में था ,धर्म में नहीं।

धर्म को आधार बनाकर वोट की राजनीति अस्तित्व में आई। धार्मिक समुदाय, दबाव समूह का कार्य करते हुए कभी अपने पक्ष में निर्णय भी करवा लिए जैसे- हिन्दूकोड बिल, मुस्लिम पर्सनल ला, शाहबानों केस आदि।

भारत में साम्प्रदायिकता का उदय १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा २० वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ब्रिटिश उपनिवेश बाद के तत्वावधान में हुआ तथा अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति में इसको आगे बढ़ाया। जिसे अंग्रेजों ने बड़ी कूटनीतिज्ञता से व्यवहार लागू किया। धार्मिक सम्प्रदायों के मध्य विद्यमान धार्मिक मतभेदों के आधार पर उन्होंने सबसे पहले सामाजिक व सांस्कृतिक विभिन्नताओं को उभारा और तदोपरान्त इन्हीं विभिन्नताओं के आधार पर उन्होंने राजनीतिक विभाजन को जन्म दिया। मार्ले-मिन्टो सुधार द्वारा सन् १९०९ में मुस्लिमों के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्रों की व्यवस्था की गई। इन अधिनियमों द्वारा व्यवस्थापिकाओं और सरकारी नौकरियों में अल्पसंख्यकों द्वारा अधिकारों की माँग की जाने लगी। जाने अनजाने कांग्रेस की नीतियों ने भी साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया। स्वाधीनता संग्राम के दौरान जब कभी कोई साम्प्रदायिक संकट उभरा तो साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए विभिन्न समुदायों के शीर्ष स्तर के नेताओं से परामर्श किया गया, जनमानस को कभी भी विश्वास में नहीं लिया गया। ऐसे नेताओं ने विभिन्न प्रकार के हथकंडे अपनाकर राजनीति और धर्म को समिश्रित कर उसे वैधता प्रदान करने का सफल प्रयास किया है।

आज की परिस्थितियों में साम्प्रदायिकता की समस्या का एक बहुत बड़ा कारण संकुचित तथा निहित स्वार्थों से प्रेरित दलीय और चुनावी राजनीति है। चुनावी राजनीति के कारण पृथक् इस्लामिक राज्यों की माँग भी होने लगी है। सेना में होने वाली साम्प्रदायिक जनगणना भी साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दे सकती है। इसके अलावा सत्ताधारी दलों द्वारा अपना तुष्टीकरण की नीति तथा मुस्लिम महिलाओं के लिए आरक्षण की माँग साम्प्रदायिकता की आग में घी का काम करता है। सन् १९५० से लेकर अब तक जो साम्प्रदायिक दंगे हुए , उनमें से अनेक का परोक्ष कारण दलीय शब्दों में गहरी सच्चाई है **"सभी दंगों का मूल कारण राजनीति होता है और ये दंगे अपने स्वार्थों के लिए राजनीतिज्ञों द्वारा करवाए**

जाते हैं।"

साम्प्रदायिकता के उदय होने में कुछ सामाजिक कारणों की भूमिका रही है। विभाजन के लगभग ५० वर्ष बाद भी हिन्दुओं तथा मुसलमानों का एक दूसरे पर भरोसा नहीं है। मुसलमान अपना पृथक सांस्कृतिक अस्तित्व बनाए रखना चाहते और उन्हें भय है कि जब तक धार्मिक कट्टरपन को प्रोत्साहन नहीं दिया जाएगा, तब तक उनके सांस्कृतिक अस्तित्व को खतरा बना रहेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने इस्लाम धर्म को कबूल करने के लिए भी प्रोत्साहन किया है, परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दू इस्लाम या ईसाई धर्म कबूल करें। कुछ वर्ष पहले उड़ीसा के मनोहरपुर तथा डांग जिले में धर्मान्तरण के नाम पर हुए हिंसा में हिन्दू कट्टरपंथियों द्वारा ईसाई धर्म प्रचारक ग्राहय स्टेंस तथा उनके पुत्रों को जिन्दा जला दिया गया। यह साम्प्रदायिकता का जीता जागता उदाहरण है।

प्रो० विपिन चन्द्रा ने **'कम्युनिलिज्म इन माडर्न इंडिया'** में विचार दिया है कि आर्थिक धरातल पर स्वतन्त्र भारत की पूँजीवादी विकास प्रणाली ने दो प्रकार से साम्प्रदायिकता में वृद्धि की है, पहला तो यह है कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, तीव्र रुप में बढ़ती जनसंख्या की तुलना में काफी धीमी गति से विकसित हुई है। परिणामतः गरीबी, बेरोजगारी और असमानता जैसी प्रमुख समस्याओं का समाधान इस अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत नहीं हो पाया है। इससे अस्वस्थ प्रतियोगिता और निराशा की भावना को बढ़ावा मिला है। दूसरा यद्यपि कृषि एंव उद्योग के क्षेत्रों में पूँजीवादी विकास प्रणाली ने अधिक आमदनी एवं खुशहाली को उत्पन्न किया है, परन्तु इसका वितरण असमान रहा है। जिससे व्यापक निराशा हुई है। प्रसिद्ध मार्क्सवादी विचारक प्रो० रणवीर सिंह का मानना है कि भारत में पूँजीवादी का विकास विकृत ढंग से हुआ है। विकास की प्रक्रिया ने कुछ वर्षों में अमीर तथा गरीब की खाई को और चौड़ा कर दिया है। युवकों के लिए रोजगार उपलब्ध है और न ही समाज के लिए कोइ आदर्श या श्रेष्ठ दृष्टि ऐसी स्थिति में स्वाभाविक रुप से धार्मिक कट्टरवाद तथा साम्प्रदायिक विचारध ारा को प्रश्रय मिलता है।

हमारे देश में साम्प्रदायिकता के प्रसार में राजनीतिक पार्टियों तथा संगठनों की भूमिका कम महत्वपूर्ण नहीं है। इनके कारण राष्ट्रीय एकता की भावना के विकास में बाधा पड़ी है और साम्प्रदायिकता तत्वों का प्रोत्साहन मिला है। इन सभी के अतिरिक्त अति धार्मिकता जैसी भावना भी साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देती है। पूर्वकाल में धार्मिक समारोह बिना किसी अधिक तामझाम के धार्मिक स्थल पर ही मनाए जाते थे। पूर्वकाल में धार्मिक समारोह बिना किसी अधिक तामझाम के धार्मिक स्थल पर ही मनाए जाते थे। कालान्तर में इन धार्मिक समारोहों को भव्यता से मनाया जाने लगा जिससे अनावश्यक साम्प्रदायिक तनाव पैदा हो गया।

(ज) साम्प्रदायिक सद्भाव -

भारत विश्व के विभिन्न देशों में अग्रणी रहा है। यहाँ अनेकों धर्म हैं। सभी धर्म हमें यही शिक्षा देते हैं कि हमें नफरत की आँधी को प्रेम की आँधी में बदलना है। पूरे विश्व में कहीं भी इतनी शान्ति नहीं है जितनी भारत में है। यहाँ उदारता, त्याग, सहिष्णुता, परोपकार, ममता, करुणा, स्नेह, सद्भाव अधिकांश प्राणी में समाए हुए हैं, यहाँ की सादगी, रहन-सहन, वेशभूषा, आचार, विचार इतनी निर्मल है कि कल्पना नहीं की जा सकती, फिर भी यहाँ पर आए दिन

साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं। यहाँ हर बार झण्डे जरुर बदले हैं, लेकिन मंसूबे वही हैं। चाहे वह ८४ के दंगों में सिक्खों के खिलाफ छिड़ी मुहिम हो या फिर १९९२ में धराशायी होती बाबरी मस्जिद के साथ ही देश भर में सांप्रदायिक हिंसा की आग हो।

साम्प्रदायिकता एक ऐसा भाव है जो एकाधिक पंथों अथवा सम्प्रदायों के लोगों के मन में अपने सम्प्रदायों के हितों, व्यक्तिगत स्वार्थों, धार्मिक, प्रतिष्ठाओं एवं राजनैतिक सत्ता संघर्षों को लेकर दंगे के रुप में बदल जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो दो मतावलम्बियों, धर्मानुयायियों के बीच छोटी-छोटी बात पर झगड़ा हो जाए और उस झगड़े का स्वरुप साम्प्रदायिक हो जाए वहीं साम्प्रदायिकता हो जाती है। प्रभा दीक्षित का कहना है कि **"साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वे सभी भावनाएं व क्रिया कलाप आ जाते हैं, जिनमें किसी धर्म, जाति अथवा भाषा के आधार पर किसी समूह विशेष के हितों पर बल दिया जाए और उन हितों को राष्ट्रीय हितों के ऊपर प्राथमिकता दी जाए तथा उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाए या उसको प्रोत्साहन दिया जाए।"५४** बिसेन्ट स्मिथ के शब्दों में **"एक साम्प्रदायिक व्यक्ति या व्यक्ति समूह वह है, जो प्रत्येक धार्मिक अथवा भाषायी समूह को एक ऐसी पृथक् सामाजिक तथा राजनैतिक इकाई मानता है, जिसके हित अन्य समूहों से पृथक होते हैं और उनके विरोधी भी हो सकते हैं। ऐसे ही व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह की विचारधारा को 'सम्प्रदायवाद' या साम्प्रदायिकता कहा जाएगा।"५५**

साम्प्रदायिक सद्भाव यानि अच्छे विचार अर्थात् जिसमें किसी प्रकार का स्वार्थ न हो, आपसी प्रेम। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, जैन, बौद्ध आदि सभी भारत भूमि को अपनी मातृभूमि मानकर स्नेह और सद्भाव के साथ रहें।

आज एक शब्द चारों ओर सुनाई दे रहा है। घर, बाहर, सड़क, अखवार सभी जगह 'साम्प्रदायिकता' की बड़ी चर्चा है। बहुधा सम्प्रदाय और धर्म को एक समझने की भूल की जाती है। भारत ने जिस धर्म का संकेत चार पुरुषार्थों के प्रसंग में किया है उसका साम्प्रदायिकता से कुछ लेना-देना नहीं है। वह तो सार्वभौम मानव धर्म है। धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं -

"घृति : क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रिय मिग्रहः।
धीर्विधा सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।"५६

धैर्य, क्षमा, आत्मसंयम, चोरी न करना, पवित्र भावना, इन्द्रियों पर नियन्त्रण, बुद्धिमता, विद्या, सत्य और क्रोध न करना अपना आदर्श और अपना रंग मानते हैं। तब तो धर्म सारे संसार में केवल एक है। हाँ उस धर्म को अपने-अपने ढंग से व्याख्या करने वाले सम्प्रदाय अनेक हैं जैसे-हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध, ईसाई आदि। किसी भी सम्प्रदाय का सदस्य होना कोई बुरी बात नहीं है, किन्तु सिर्फ अपने सम्प्रदाय को ही श्रेष्ठ मानकर अन्य मतावलम्बियों को हेय दृष्टि से देखना या एक सम्प्रदाय को दूसरे से द्वेष की शिक्षा देना नास्तिकता है। इसी को उग्र साम्प्रदायिकता कहा जा रहा है। धर्म के नाम पर मनुष्य को मनुष्य का गला काटने की दुष्प्रेरणा, सम्प्रदाय के नाम पर दूसरों का घर जलाने और नारियों के अपमान की कुशिक्षा दिया जाना शैतानियत है, दानवता है। इसे धर्म कहना धर्म का और

ईश्वर का घोर अपमान है।

साम्प्रदायिक विद्वेष के जहर को इस देश ने शताब्दियों से झेली है। दुःख का विषय तो यह है कि आज भी हम इस लज्जाजनक मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाए हैं। देश के विभाजन के समय खून की जो होली खेली गई थी वह आज भी कोढ़ के रुप में चाहे जब फूट निकलती है। कभी अहमदाबाद, कभी सूरत, कभी मुरादाबाद, कभी अलीगढ़ और कभी मेरठ से यह नासूर बहने लगता है। इसका परिणाम यह होता है हत्या, आगजनी, लूट और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में देश की बदनामी। करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति का विनाश होता है, द्वेष की खाइयाँ और गहरी हो जाती है। सन्देह की लक्ष्मण रेखाएँ बड़ी सीपन को और जकड़ लेती हैं।

"जब-जब होता है दंगा,
आदमी हो जाता है और भी नंगा।
धर्म और मजहब का नाम,
व्यर्थ में होता है बदनाम।
आँखों से बरसने लगती है घृणा की धारा,
विवेक के बन्दी कर लेती है उन्माद की कारा,
पड़ोसीपन सड़कों पर सिसकता है,
आदमी पर आदमी का विश्वास।
चोरों की तरह खिसकता है।।"५७

इस साम्प्रदायिक दुराग्रह ने ही तो सुकरात को जहर परोसा है, ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया, महात्मा गाँधी व इंदिरा गाँधी के जिगर में गोली उतारी तथा राजीवगाँधी को बम से उड़ाया। अब पता नहीं कौन गोलियों और बमों का शिकार होगा । वर्तमान में पाकिस्तानी राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ पर दो बार हमला हो चुका और इन्हीं दंगों के कारण भगतसिंह को सूली पर चढ़ाया गया तथा सन् १९१८ का जलिया वाला कांड हुआ, जिससे हजारों लोगों की मृत्यु हो गई। कई माताओं के सिंदूर व बच्चे अनाथ हो गए, फिर भी यह साम्प्रदायिक दंगा बन्द होने का नाम नहीं ले रही हैं ।

"यूँ ही हमेशा उलझती रही है जुल्म से खल्क,
न उनकी रस्म नई है, न अपनी रीत नई"
यूँ ही हमेशा खिलाये हैं हमने आग में फूल,
न उनकी हार नई है, न अपनी जीत नई ।"५८ (फैज)

"जला सको तो दीप जलाओ,
हृदय जलाना मत सीखो
लगा सको तो बाग लगाओ,
आग लगाना मत सीखो ।"

धर्म शब्द का अर्थ है धारण करना है। धर्म जो जीवन में सही मार्गदर्शन करे और आपसी प्रेम व भाई चारे

को बढ़वा दे, विवेकशीलता ही मनुष्य का परम धर्म है। इसके आधार पर ही वह भले-बुरे के बीच अंतर समझकर श्रेष्ठता, महानता के मार्ग पर अग्रसर होता है। सदाचरण, आदर्शवादी व्यक्तित्व ही धर्म का पर्याय है।

गुजरात में जो साम्प्रदायिक दंगे हुए उनमें बेकसूर इंसानों को मार दिया गया और धर्म की आड़ लेकर धर्म के ठेकेदारों द्वारा नरसंहार की खूनी होली खेली गई । जिस महजब के नाम पर बेकसूर इंसानों को बेदर्दी से मारा गया, वे तो जानते भी नहीं थे कि किस महजब के नाम पर ये हिंसा भड़की है। जब भी शहर में दंगे होते हैं, तब उनकी रोजी रोटी पर लात पड़ती है, धर्म, जाति के आधार पर इंसान-इंसान को बाँटने वाले ये लोग क्या सचमुच धर्म के मूल्यों को स्थापित कर रहे हैं या राजनीति खेल रहे हैं और कहीं धर्म की ये स्थिति है -

"अपना मन्दिर अपनी मस्जिद अपना है गुरु द्वारा,
सब धर्मों ने हमें सिखाया रखना भाई चारा।।"

हिन्दू और मुसलमान की समस्या प्रेमचंद के समय में थी। कट्टर हिन्दूवादी, मुस्लिमवादी सोच समाज और राष्ट्र के लिए संकट थी। हिन्दू-मुसलमान एक साथ थे, फिर भी रह-रहकर लगता था कि वे दोनों दो तरफ के मनुष्य हैं और यह सोच टकराहट पैदा करती थी। प्रेमचंद जैसे मानवतावादी लेखक और इन्सान के लिए यह अलगाव और टकराहट सह्य नहीं था। वे हर स्तर पर हिन्दू-मुसलमान में सद्भावना पैदा करना चाहते थे। वे जानते थे कि दोनों एक ही ईश्वर की सन्तानें हैं। मानवीय स्तर पर उनमें कोई भी भेदभाव उचित नहीं है। यह भेदभाव मनुष्यता को झुलसाता है, आपसी भाईचारे को क्षत-विक्षत करता है, सामाजिक माहौल को बेचैन करता है और उस एकता की शक्ति को कमजोर करता है, जो आज़ादी की लड़ाई के लिए जरुरी है। प्रेमचन्द ने अपनी एक कहानी 'जुलूस' में बताया कि सभी हिन्दू और मुसलमान एक होकर देश के लिए कुर्बानी दे रहे हैं। उस जुलूस का नेतृत्व वृद्ध इब्राहीम कर रहे थे। जब दरोगा बीरबल सिंह उस जुलूस को रोक देते हैं, तब इब्राहीम ने कहा कि यह जुलूस अहिंसावादी है। कहीं कोई अशान्ति नहीं फैलेगी। 'हम इसी जगह रुके रहेंगे, लेकिन डी०एस०पी० के आते देख दरोगा बीरबल उस जुलूस पर हमला बोल दिया, वृद्ध घायल हो गया और तीन दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। इब्राहीम ने मरते समय अपनी वसीयत में कहा था कि उसकी लाश को गंगा में नहला कर दफनाया जाए और उनके कफन पर स्वराज्य का झण्डा खड़ा किया जाए। इब्राहीम की वसीयत हिन्दुओं की भावना का सम्मान करती है और अपने देश की प्रकृति के साथ गहरे जुड़ाव की भी प्रतीति कराती है।

भारतवर्ष एक आध्यात्मिक देश है। जहाँ राम, कृष्ण, महात्मा गाँधी, इंदिरागाँधी, गुरुनानक, कबीर, रैदास जैसे महापुरुषों ने जन्म लिया है। उन्होंने जो भी कार्य किए वे स्वान्ता सुखाय न होकर **'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'** के लिए किए। **स्वामी विवेकानन्द** ने कहा था - **"यदि पृथ्वी पर ऐसा कोई देश है, जिसे हम पुण्यभूमि कह सकते हैं। यदि कोई ऐसा स्थान है, जहाँ पृथ्वी के सब जीवों को अपना कर्मफल भोगने के लिए आना पड़ता है। यदि कोई ऐसा स्थान है, जहाँ भगवान को प्राप्त करने की आकांक्षा रखने वाले जीवमात्र को आना होगा। यदि ऐसा कोई देश है, जहाँ मानव जाति के भीतर क्षमा, धृति-दया, शुद्धता आदि सद्वृत्तियों का अपेक्षाकृत अधिक विकास हुआ है तो मैं निश्चित रुप से कहूँगा कि वह हमारी मातृभूमि भारतवर्ष ही है।"**

"मानवप्रेम वह पुण्य क्षेत्र है अमल असीम त्याग से विकसित ।

आत्मा के विकास से जिसमें मानवता होती है विकसित।"

गाँधी जी भारत के सबसे बड़े नेता थे। उन्होंने सदाचार का नाम दिया और सारे धर्मों में समभाव पैदा करने के लिए सत्याग्रह का सहारा लिया । गाँधीजी ने हिंसा को अहिंसा से और अन्याय को शान्तिमय सत्यागृह से पराजित करने का, अनोखा ढंग निकाला और इस प्रकार उन्होंने अत्याचारी ब्रिटिश शासन की मजबूत नींव हिला दी। वे अहिंसा के पुजारी थे, किन्तु उनकी अहिंसा में वीरता, निडरता तथा दृढ़ संकल्प विद्यमान थे। सत्य, अहिंसा और धर्म का राजनीति में प्रयोग करके गांधीजी ने एक अद्‌भुत आदर्श प्रस्तुत किया। उनकी कथनी और करनी में कोई भेद नहीं था। उन्होंने रामराज्य को अपना आदर्श घोषित किया। गाँधी जी ने कहा - **"यदि हम भारत की आबादी के पांचवे हिस्से को अस्थाई गुलामी की हालत में रखना चाहते हैं और जानबूझकर उन्हें राष्ट्रीय संस्कृति के सुफलों से वंचित रखना चाहते हैं तो स्वराज्य एक अर्थहीन शब्दमात्र रह जायेगा।"** कहा गया है -

> **"भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं ।**
> **वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"५९**

> **"हम किसी एक जाति एक कौम से बँधे नहीं**
> **ना ही हम किसी एक धर्म के ठेकेदार**
> **हम किसी एक जाति एक कौम से बँधे नहीं**
> **हम तो विश्व के सबसे खूबसूरत ख्यालों में रमते हैं।**
> **हर सद्‌भाव को अपनाना ही हमारा मजहब हैं।**
> **जीवन के विविध सुरों से मधुर रागिनी बनाना हमारी निष्ठा**
> **खुद के साथ-साथ दूसरों को समझाना हमारी समझ है।**
> **एक विशाल सामूहिक चेतना निर्माण ही हमारा ध्येय है।**
> **हर औरत में पौरुष और हर पुरुष में नारीत्व**
> **पनपाना हमारी चेतना है।"६०** (विनोबा भावे)

उपर्युक्त विवचेन से स्पष्ट है कि हमारा देश विभिन्न जातियों और धर्मों के लोगों से बना है। हमें शुरुआत अपने घर, परिवारों दोस्तों से करनी है। अपने बच्चों को बार-बार प्यार, परोपकार, संवेदनशीलता जैसे मानवीय नैतिक मूल्यों के बारे में बताना होगा। उन्हें समझाना होगा कि हिंसा का जवाब हिंसा नहीं है। विवाद, झगड़े आपसी बातचीत से सुलझाए जा सकते हैं। युद्ध कलह का कोई भविष्य नहीं है। हमें आने वाली पीढ़ियों को बताना होगा कि धर्म क्या है? धर्म हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई नहीं है। धर्म हमें इन सभी कौमों के संकुचित दायरों में कैद नहीं कराता। धर्म हमें इंसानियत प्यार सिखाता है। जुड़ना और जोड़ना सिखाता है। एक दूसरे से मिल जुलकर रहना सिखाता है। जो धर्म के नाम पर तोड़ना, बँटवारा हिंसा फैलाते हैं, वे हमारे दोस्त नहीं हो सकते, क्योंकि इकबाल ने कहा है -

> **"मजहब नहीं सिखाता, आपस में वैर करना,**

हम आपस में मिलजुलकर एक दूसरे की सहायता करेंगे, भूखों को रोटी खिलाएँगे, गरीबों की

सहायता करेंगे, तभी हम सबके बीच में सच्ची शान्ति, सद्भाव, प्रेम, विश्वास कायम रह पाएगा। तभी हम सही मायने में खुद को सभ्य कह पाएँगे।

"नफ़रत बोएँगे तो नफरत ही काटेंगे
प्यार पाऐंगे गर प्यार बाँटेंगे।"६१

"आ चलके तुझे मैं लेके चलूँ
इक ऐसे गगन के तले,
जहाँ गम भी न हो
आँसू भी न हो
बस प्यार ही प्यार पले।"६२

(झ) साम्प्रदायिक सद्भाव राष्ट्रीय एकता की महती आवश्यकता -

भारत अनेक धर्मों, जातियों और भाषाओं का देश है। पहले भारत को **'सोने की चिड़िया'** कहा जाता था, यहाँ पर दूध की नदियाँ बहती थीं और खेतों से सोना उत्पन्न होता था। भारत एक आध्यात्मिक देश है। यह ऋषियों और मुनियों की जन्मभूमि रही है। जहाँ राम, कृष्ण, गुरुनानक, गौतम बुद्ध, गाँधी, नेहरु, स्वामी विवेकानन्द जैसे महापुरुषों ने जन्म लिया और समाज में फैली साम्प्रदायिक कटुता को मिटाकर भाईचारा अपनाकर साम्प्रदायिक सौहार्द को बढ़ाया। मु० इकबाल की यह गीत-पंक्ति **'मजहब नहीं सिखाता, आपस में वैर करना, हिन्दी हैं हम बतन हैं, हिन्दोस्ताँ हमारा'** तथा **'हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई, आपस में सब भाई-भाई'** का यही निहितार्थ भी है।

धर्म का अर्थ है धारण करना। धर्म जो जीवन में सही मार्गदर्शन करे और आपसी प्रेम व भाई चारे को बढ़ावा दे। धर्म, जाति एवं भाषाओं की दृष्टि से विविधता होते हुए भी भारत में एकता की भावना विद्यमान रही है। जब कभी इस एकता को खण्डित करने का प्रयास किया जाता है, भारत का चैतन्य नागरिक सजग हो उठता है और राष्ट्रीय एकता को खण्डित करने वाली शक्तियों के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ हो जाता है। राष्ट्रीय एकता हमारे राष्ट्रीय गौरव की प्रतीक है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में -

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर-पशु निरा है और मृतक समान है।"६३

राष्ट्रीय एकता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा साम्प्रदायिकता की भावना है। साम्प्रदायिकता मानव में फूट डालती है, इसलिए कहा गया है -

"भाई भी है परिवार भी है पर प्यार नहीं है
खून का रिश्ता ये स्वीकार नहीं है
कितनी अजीब हो चुकी है इंसाँ की ये नीयत
आदमी का कोई उपचार नहीं है।"

दो दोस्तों के बीच घृणा और भेद की दीवार खड़ी करती है और अन्त में समाज के टुकड़े कर देती है। दुर्भाग्य से इस रोग को समाप्त करने के लिए जितना अधिक प्रयास किया गया, यह रोग उतना ही अधिक बढ़ता गया। परिणामतः देश का वातावरण विषावत होता जा रहा है। एक ही देश के वासी, दो भाइयों के इस संघर्ष पर कितनी सटीक टिप्पणी इन शब्दों में व्यक्त हुई है।

"यह क्या हुआ कि फासले इतने बढ़ा लिए,

इन दो घरों के बीच में दीवार ही तो है ।।"६४

यदि राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधे रखना है तो साम्प्रदायिक विद्वेष, स्पर्द्धा, ईर्ष्या आदि राष्ट्रविरोधी भावों को अपने मन से दूर रखना होगा तथा परस्पर साम्प्रदायिक सद्भाव जाग्रत करना होगा। साम्प्रदायिक सद्भाव से तात्पर्य है कि हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, जैन, बौद्ध आदि सभी भारतभूमि को अपनी मातृभूमि मानकर स्नेह और सद्भाव के साथ रहें। यह राष्ट्रीयता के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

राष्ट्रीय एकता से अभिप्राय है - सम्पूर्ण भारत की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और वैचारिक एकता। हमारे कर्मकाण्ड, पूजा-पाठ, खान-पान, रहन-सहन और वेशभूषा में अन्तर हो सकता है, इनमें अनेकता हो सकती है, किन्तु हमारी राष्ट्रीय भावना, मानवीय दृष्टिकोण एवं एकत्व की भावना होनी चाहिए।

मनुष्य जिस देश या समाज में जन्म लेता है, यदि उसकी उन्नति में समुचित सहयोग नहीं देता तो उसका जन्म व्यर्थ है। देश प्रेम की भावना ही मनुष्य को बलिदान और त्याग की प्रेरणा देती है। मनुष्य जिस भूमि पर जन्म लेता है, जिसका अन्न खाकर, जल पीकर अपना विकास करता है, उसके प्रति प्रेम की भावना का उसके जीवन में सर्वोच्च स्थान होता है। अपने देश के प्राचीन वाङ्मय संस्कृत साहित्य के आदि कवि महर्षि वाल्मीकि अपने विश्वविश्रुत ग्रंथ 'रामायण' में लिखते हैं -

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"६५

हर नवयुवक के अन्दर अपने देश के लिए मर मिटने की भावना होनी चाहिए। अपने लिए तो सभी जीते हैं, लेकिन जिसके हृदय में अपनी जन्मभूमि के लिए प्रेम रहता है, वही सच्चा देशभक्त है -

"भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।

वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"६६

आज हर जगह आन्तरिक शान्ति, सुव्यवस्था और बाहरी दुश्मनों से सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय एकता की परम आवश्यकता है। यदि हम भारतवासी किसी कारणवश छिन्न-भिन्न हो गए तो हमारी पारस्परिक फूट को देखकर अन्य देश हमारी स्वतन्त्रता को हड़पने का प्रयास करेंगे।

'अखिल भारतीय राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' में बोलते हुए भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने कहा था, **"जब-जब भी हम असंगठित हुए, हमें आर्थिक और राजनीति रुप में इसकी कीमत चुकानी पड़ी। जब-जब भी विचारों में संकीर्णता आई, आपस में झगड़े हुए। जब कभी नए विचारों से अपना मुख मोड़ा, हानि ही हुई और हम विदेशी शासन के अधीन हो गए।"**

जो लोग भाषा के नाम पर, जाति के नाम पर, दल तथा धर्म के नाम पर देश को अलग करने की बात करते हैं वे निश्चित ही पूर्वाग्रह से ग्रसित लोग लगते हैं। ऐसे लोग देश तथा देश के लोगों की अपेक्षा, अपना धर्म अपने लोग अपना झण्डा तथा अपने ही पूजा-स्थलों को महत्व देते हैं। ऐसे लोग राष्ट्रीय एकता में सहायक न होकर बाधक होते हैं। उसका बाधक होना ही साम्प्रदायिक तनावों को जन्म देता है, क्योंकि ऐसे लोग दूसरों का सुख दूसरों का आनन्द सहन ही नहीं कर पाते और लड़ाई और झगड़े पर उतर आते हैं जैसे कश्मीर का मुद्दा, खालिस्तान की माँग। इसी तरह के अनेक अलगाववादी मुद्दे हैं।

हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने देश को बचाने के लिए क्या नहीं किया। वह जेल गए और सत्य अहिंसा के बल पर अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए। गाँधी जी के साथ-साथ चाचा नेहरु तथा सुभाषचन्द्र बोस तथा भगतसिंह आदि नेताओं ने खूब साथ दिया। एक जगह कहा गया है **'संगठन में शक्ति है'** अगर हमें अपने देश को बचाए रखना है। हम फिर परतन्त्र न हो और गुलामी की दास्ताँ हमें फिर न देखनी पड़े तो हमें आपस में लड़ना नहीं है और एक दूसरे की भावनाओं को समझना है और देश के लिए अगर प्राण भी चले जाए तो उसके लिए पीछे नहीं हटना है। अभी हमारा भारतवर्ष विकास शील है। हमें अपने देश को विकसित देश बनाना है और स्वयं आत्मनिर्भर बनना है। जन-जन को दिशा देना है औरं हर भूले राही को रास्ता दिखाना है तभी हमारा राष्ट्र एकता के सूत्र में बँधा रह पाएगा। हम सबकी यही धारणा है

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माँ कश्चिद् दुखमाप्नुयात् ।"६७

"जिएँ तो सदा इसी के लिए, यही अभिमान रहे यह हर्ष
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष ।"६८

(ञ) अनेकता में एकता : भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता -

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ -

महात्मा मनु ने कहा -

"जन्मना जायते शूद्रः संस्करात् द्विजरुच्यते"

हर व्यक्ति जन्म से शूद्र अर्थात् प्राकृत दुर्बलताओं और अज्ञान से युक्त होता है, केवल संस्कार ही उसे 'द्विज' बनाते हैं। संस्कृति या संस्कार एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। आरम्भिक मानव में एवं अन्य पशुओं में कोई विशेष अंतर न था। निरन्तर अनुभवों और ज्ञानवृद्धि ने उसे सुसंस्कृत बनाया। उसका ज्ञान, उसकी कला, उसके अचार-विचार, परम्पराएँ वेशभूषा आदि सभी का सामूहिक नाम है संस्कृति। तभी तो प्रसिद्ध गद्यकार श्री वासुदेवशरण अग्रवाल कहते हैं,

"जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति है"

मानव जीवन के हर क्षेत्र में जो सर्वोत्तम अर्जित और निर्मित किया गया है, वही उसकी संस्कृति है।

विश्व की महान संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति का नाम सदैव से सम्मान के साथ लिया जाता रहा है। भारतभूमि पर अनादिकाल से कितने ही जनसमूहों का आगमन होता रहा है। उनके उद्देश्य चाहे जो रहे हो, लेकिन भारत की सांस्कृतिक उदारता के प्रभाव से वे अपने आपको नहीं बचा सके। आर्य, द्रविड़, हूण, शक, कुषाण, मंगोल, तुर्क, पारसी, ईसाई, मुसलमान, आस्तिक और नास्तिक सभी को इस मिट्टी की मृदुल गोद में कहीं न कहीं आश्रय अवश्य प्राप्त हुआ। अनेक सम्प्रदायों, उपसम्प्रदायों, आचार-विचारों, भाषा समूहों और प्रदेशों में विभाजित होते हुए भी इस देश की शिराओं में समन्वय का शीतल नीर सदा प्रवाहित होता रहा है।

भारतीय संस्कृति मनुष्य मात्र के सोचने-विचारने और अपना मत निश्चित करने की स्वतन्त्रता देती है। वह किसी प्रकार के अंधविश्वास या कट्टरता को प्रश्रय नहीं देती। अनेक धर्मों, सम्प्रदायों, विचारधाराओं और विश्वासों की उपस्थिति इसी विशेषता का प्रमाण है। भारतीय संस्कृति के शिल्पियों ने बहुत पहले ही घोषणा की थी -

"पुराणमित्येव न साधु सर्व, न चापि किंचित् नवमिव्यवधम् ।।"

अर्थात् कोई विचार या परम्परा या विश्वास केवल प्राचीन होने से ग्राह्य नहीं हो जाता और न नवीन होने के कारण कोई परम्परा अग्राह्य होती है। बुद्धिमान लोग परीक्षा करके ही किसी बात को स्वीकारते हैं। केवल मूर्ख ही परम्परा की दुहाई दिया करते हैं।

हमारे भारत में नारियों का सदा से ही सम्मान होता है। वे हर दुःख सहकर पुरुषों का साथ देती है। तभी तो हर जगह माताओं का नाम पहले आता है।

मनु का यह कथन है - **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता"**६९ जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं।

<u>विविधता में एकता-</u>

भारत में अनेक विशेषताएँ पाई जाती हैं, लेकिन सबसे ज्यादा महत्ता विविधता में एकता को दी गई हैं। भारत में प्रजाति, धर्म, संस्कृति, भाषा को प्रमुखता दी गई हैं। भारत में विभिन्नताओं के होते हुए एकता के दर्शन होते हैं। **सर हर्बर्ट रिजले ने लिखा है - "भारत में धर्म, रीति-रिवाज और भाषा तथा सामाजिक और भौतिक विभिन्नताओं के होते हुए जीवन की एक विशेष एकरुपता कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक देखी जा सकती हैं। भारत का एक अलग चरित्र एवं व्यक्तित्व है। जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती।"७० सी०ई० एम० जोड ने लिखा है - "जो भी कारण हो, विचारों तथा जातियों के अनेक तत्वों में समन्वय, अनेकता में एकता उत्पन्न करने की भारतीयों की योग्यता एवं तत्परता ही मानव जाति के लिए भारत की विशिष्ट देन रही हैं।"७१** राधाकुमुद मुकर्जी भारत की एकता को प्रकट वाले प० नेहरु के उद्धरण का उल्लेख किया है। पं० नेहरु ने एक बार कहा था - **"भारत का सिंहावलोकन करने वाले भारत की अनेकता और विभिन्नता से बहुत अधिक प्रभावित हो जाते हैं। वे भारत की एकता को साधारणतः नहीं देख पाते, यद्यपि युगों-युगों से भारत की मौलिक एकता ही उसका महान एवं मौलिक तत्व रहा है। पाँच या छः हजार वर्ष हुए कि सिन्धु घाटी की सभ्यता उत्तर में फली-फूली और कदाचित दक्षिण भारत तक फैल गई। इतिहास के उस प्रभाव से अगणित जातियाँ,**

विश्व की महान संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति का नाम सदैव से सम्मान के साथ लिया जाता रहा है। भारतभूमि पर अनादिकाल से कितने ही जनसमूहों का आगमन होता रहा है। उनके उद्देश्य चाहे जो रहे हो, लेकिन भारत की सांस्कृतिक उदारता के प्रभाव से वे अपने आपको नहीं बचा सके। आर्य, द्रविड़, हूण, शक, कुषाण, मंगोल, तुर्क, पारसी, ईसाई, मुसलमान, आस्तिक और नास्तिक सभी को इस मिट्टी की मृदुल गोद में कहीं न कहीं आश्रय अवश्य प्राप्त हुआ। अनेक सम्प्रदायों, उपसम्प्रदायों, आचार-विचारों, भाषा समूहों और प्रदेशों में विभाजित होते हुए भी इस देश की शिराओं में समन्वय का शीतल नीर सदा प्रवाहित होता रहा है।

भारतीय संस्कृति मनुष्य मात्र के सोचने-विचारने और अपना मत निश्चित करने की स्वतन्त्रता देती है। वह किसी प्रकार के अंधविश्वास या कट्टरता को प्रश्रय नहीं देती। अनेक धर्मों, सम्प्रदायों, विचारधाराओं और विश्वासों की उपस्थिति इसी विशेषता का प्रमाण है। भारतीय संस्कृति के शिल्पियों ने बहुत पहले ही घोषणा की थी –

"पुराणमित्येव न साधु सर्व, न चापि किंचित् नवमिव्यवधम् ।।"

अर्थात् कोई विचार या परम्परा या विश्वास केवल प्राचीन होने से ग्राह्य नहीं हो जाता और न नवीन होने के कारण कोई परम्परा अग्राह्य होती है। बुद्धिमान लोग परीक्षा करके ही किसी बात को स्वीकारते हैं। केवल मूर्ख ही परम्परा की दुहाई दिया करते हैं।

हमारे भारत में नारियों का सदा से ही सम्मान होता है। वे हर दुःख सहकर पुरुषों का साथ देती है। तभी तो हर जगह माताओं का नाम पहले आता है।

मनु का यह कथन है – "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता"६९ जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं।

विविधता में एकता-

भारत में अनेक विशेषताएँ पाई जाती हैं, लेकिन सबसे ज्यादा महत्ता विविधता में एकता को दी गई हैं। भारत में प्रजाति, धर्म, संस्कृति, भाषा को प्रमुखता दी गई हैं। भारत में विभिन्नताओं के होते हुए एकता के दर्शन होते हैं। सर हर्बर्ट रिजले ने लिखा है – "भारत में धर्म, रीति-रिवाज और भाषा तथा सामाजिक और भौतिक विभिन्नताओं के होते हुए जीवन की एक विशेष एकरुपता कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक देखी जा सकती हैं। भारत का एक अलग चरित्र एवं व्यक्तित्व है। जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती।"७० सी०ई० एम० जोड ने लिखा है – "जो भी कारण हो, विचारों तथा जातियों के अनेक तत्वों में समन्वय, अनेकता में एकता उत्पन्न करने की भारतीयों की योग्यता एवं तत्परता ही मानव जाति के लिए भारत की विशिष्ट देन रही हैं।"७१ राधाकुमुद मुकर्जी भारत की एकता को प्रकट वाले प० नेहरु के उद्धरण का उल्लेख किया है। पं० नेहरु ने एक बार कहा था – "भारत का सिंहावलोकन करने वाले भारत की अनेकता और विभिन्नता से बहुत अधिक प्रभावित हो जाते हैं। वे भारत की एकता को साधारणतः नहीं देख पाते, यद्यपि युगों-युगों से भारत की मौलिक एकता ही उसका महान एवं मौलिक तत्व रहा है। पाँच या छः हजार वर्ष हुए कि सिन्धु घाटी की सभ्यता उत्तर में फली-फूली और कदाचित दक्षिण भारत तक फैल गई। इतिहास के उस प्रभाव से अगणित जातियाँ,

विजेता, तीर्थ-यात्री एवं छात्र एशिया की ऊँची-ऊँची भूमि से भारत के मैदान में सैर के लिए आए, जिन्होंने भारतीय जीवन, संस्कृति और कला को प्रभावित किया, किन्तु वे इसी देश में विलीन हो गए। इन सम्पर्कों से भारत में परिवर्तन हुआ, किन्तु उसकी आत्मा मौलिक रुप से पुरानी रही है। यह तभी सम्भव होगा जब मौलिक एकता की भावना की जड़ें, गहराई तक हों, जब उन्हें नवागन्तुकों ने स्वीकार किया हो।"७२

धार्मिक विविधता में एकता-

भारत विभिन्न धर्मो की जन्म भूमि है। हिन्दू, जैन, बौद्ध एवं सिक्ख सभी धर्मो का उदय भारत में हुआ। इस्लाम धर्म विदेशों से यहाँ आए। प्रत्येक धर्म में कई मत-मतान्तर एवं सम्प्रदाय पाए जाते हैं। विभिन्न धर्मावलम्बी सदियों से भारत में साथ रह रहे हैं और धर्म ने भारत में एकता स्थापित की है, इकबाल की ये पंक्तियाँ हैं - **"मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना"**। हमारी संस्कृति हमें धर्म में प्रेम करना सिखाती है न कि वैमनस्यता। **प्रो० एम० एन० श्रीनिवास** लिखते हैं - **"एकता की अवधारणा हिन्दू धर्म में अन्तर्निहित है। भारत के कोने-कोने में हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ-स्थान हैं। पूरे देश के हर भाग में शास्त्रीय संस्कृति के कुछ विशिष्ट पहलू दृष्टिगोचर होते हैं। भारत न केवल हिन्दुओं के लिए ही पवित्र भूमि है, यह सिक्ख, जैन और बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए भी पवित्र स्थल है। मुसलमानों और ईसाईयों के भी भारत में अनेक तीर्थ स्थान है। विभिन्न धार्मिक समूहों में जाति प्रथा पाई जाती है। इससे इन सब में एक (समान) सामाजिक युक्ति दिखाई देती है।"७३**

प्रजातीय विविधता में एकता-

प्रजातीय दृष्टि से भारत को विभिन्न प्रजातियों का अजायबघर अथवा द्रवण पात्र कहा गया है। यहाँ विश्व की प्रमुख तीन प्रजातियों- श्वेत, पीत एवं काली तथा उनकी उपशाखाओं के लोग निवास करते हैं। उत्तरी भारत मे आर्य प्रजाति का और दक्षिण भारत में द्रविड़ प्रजाति का बाहुल्य है।

जातीय विविधता में एकता-

जाति-व्यवस्था के अन्तर्गत भारत में विभिन्न प्रकार की जातियाँ पाई जाती हैं। जाति-व्यवस्था एक खण्डात्मक संरचना है, जिसमें अनेक उपजातियाँ सम्मिलित हैं। प्रत्येक खण्ड की अपनी विशेषताएँ रीति-रिवाज एवं प्रथाएँ हैं।

मानसिक विविधता में एकता-

भारत देश विभिन्न धर्मों, जातियों व भाषाओं का देश है। इस देश में विभिन्न संस्कृतियों का आश्चर्यजनक संगम हुआ है। प्रत्येक संस्कृति, भाषा व धर्म की अपनी विशेषताएँ होती हैं जो व्यक्ति को मानसिक रुप से प्रभावित करती हैं। प्रत्येक व्यक्ति के विचारों पर उसके धर्म व संस्कृति की अमिट छाप देखी जा सकती है। इन विभिन्न संस्कृतियों व धर्मों वाले देश में मानसिक विविधता का पाया जाना स्वाभाविक है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है भारत एक विशाल देश है। यहाँ की संस्कृति विश्व की संस्कृतियों से अच्छी

है। सम्पूर्ण देश संस्कार के गूँज से गूँजा हुआ है। डॉ० के०एल० शर्मा ने कहा है - **"भारत सिद्धान्त और व्यवहार दोनों में एक बहुसामुदायिक समाज है, अतः भारतीय समाज को विविधता मे एकता और एकता में विविध ता रुपी समाज कहना उचित है। प्राचीन, मध्यकालीन एवं आधुनिक काल में भारत ने अनेक विषमताओं के होते हुए भी एकता बनाए रखी। भारत के प्रत्येक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक तथ्यों में एकता पाई जाती है। आज भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है। इस एक संविधान है और सब लोगों के लिए विभिन्न क्षेत्रों में रहते हैं, अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं और भिन्न-भिन्न धर्मों में विश्वास रखते हैं- एक ही विधि का शासन है। आज हिन्दू, सिक्ख, ईसाई, जैन और अन्य धर्मों के लोग प्रशासन, राजनीति और राजनीतिक जीवन में सहभागी हैं। सजातीय, भाषाई और धार्मिक विविधताएँ सामान्य और राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधक नहीं है। भारत की सांस्कृतिक विरासत विभिन्न संस्कृतियों के संश्लेषण का एक जीवन्त उदाहरण है। सभी धर्मों सांस्कृतिक संश्लेषण को प्रोत्साहित किया है।"**७४ विनोबाभावे जी ने भारत की इस विभिन्नता में एकता की बड़े सुन्दर शब्दों में व्यक्त करते हुए कहा है **"भारत में अनेक धर्म, भाषाएँ और जातियाँ हैं। यह महानभूमि अनेक सामाजिक समूहों का संगम स्थल रही है। इस प्रकार का महान दृश्य अन्य कोई देश उपस्थित नहीं करता जहाँ भिन्न-भिन्न भाषा बोलने वाले, भिन्न धर्मों के उपासक और भिन्न-भिन्न जाति के लोग एक साथ बस गए हैं, फिर भी यह उल्लेखनीय है कि सभी लोग भारत को अपना घर अपना देश मानते हैं।**

अतः कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति गंगां की पवित्र धारा के समान सदा समन्वयकारी रही है। जिस प्रकार गंगा के पावन जल से मिलकर बहुत-सी-नदियाँ एक रुप हो गई हैं। उसी प्रकार भारतीय संस्कृति में भी अनेक संस्कृतियाँ मिलकर एक रुप हो गई। भारतीय संस्कृति की इस विशेषता के बारे में कहा गया है - **"यत्र विश्व भवति एकनीद्रम"**। यजुर्वेद में कहा गया है कि **"सब प्राणी मुझे अपना मित्र समझें और मैं सब प्राणियों को अपना मित्र समझूँ"**। विविधता में एकता लिए भारतीय संस्कृति की ज्योति आज भी प्रकाशमान है। भारतीय संस्कृति के स्थायित्व को देखकर **कवि इकबाल** ने कहा था -

> **"यूनान, मिश्र, रुमा सब मिट गये जहाँ से**
> **अब तक मगर है बाकी नामो निशां हमारा**
> **कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी**
> **सदियों रहा है दुश्मन दौर-ए- जहाँ हमारा"**

(ट) वर्तमान परिस्थितियों में साम्प्रदायिक सद्भाव की आवश्यकता -

भारत में अनेकों धर्म हैं, जिनमें प्रमुख धर्म हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, बौद्ध आदि हैं। प्राचीनकाल में इस देश को **'सोने की चिड़िया'** कहा जाता था। हमारे देश में अन्य देशों की अपेक्षा प्रसन्नता, सम्पन्नता, भाईचारे का व्यवहार, आपसी मित्रता, स्नेह, आत्मीयता, करुणा, दया, ममता, परोपकार एवं त्याग की भावना थी।

इस देश में धर्म के नाम पर जो हिंसा, दंगा व साम्प्रदायिकता फैली हुई थी, उसके स्थान पर साम्प्रदायिक सद्भाव लाना था और बिखरे हुए मोतियों रुपी भाइयों को माता रुपी माला बनाना था, क्योंकि किसी ने कहा है -

"एक ही माँ के बच्चे हम सब एक ही पिता हमारा है,

न जाने किस मूरख ने हमें साम्प्रदायिकता करना सिखाया है"

साम्प्रदायिकता का अर्थ धर्म के बाह्यरुपों को पकड़कर अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति विद्वेष का भाव तथा सद्भाव से तात्पर्य अच्छे भाव से है। आज हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध किसी भी सम्प्रदाय का सदस्य होना बुरी बात नहीं है, लेकिन अपने सम्प्रदाय को श्रेष्ठ मानकर दूसरे के सम्प्रदाय को हेय दृष्टि से देखना या एक सम्प्रदाय को दूसरे से द्वेष की शिक्षा देना नास्तिकता है। आज इसे हम लोग साम्प्रदायिकता कहते हैं। धर्म के नाम पर मनुष्य को मनुष्य का गला काटने की दुष्प्रेरणा, सम्प्रदाय के नाम पर दूसरों का घर जलाने और नारियों के अपमान की कुशिक्षा लाना शैतानियत है, दानवता है।

हमारे देश में अक्सर दंगे धर्म, जर, जोरु, जमीन, छुआछूत जाति वर्ग भेद पर हुए। आज के जमाने में किसी के अन्दर सहन शक्ति नहीं है। अगर किसी ने एक सुनाया तो उससे आप चार सुन लो। बात कुछ भी नहीं है पर बात-बात में बात इतनी बढ़ जाती है कि उसे संभालना मुश्किल हो जाता है और वह हिंसा का रुप ले लेती है। साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक दंगे सिर्फ ब्रिटिश साम्राज्यवाद की उपज हैं। जब से अंग्रेज भारत में आए थें, तब से यह साम्प्रदायिक संघर्ष की स्थिति विद्यमान है। सन् १७१३ में हिन्दू मुस्लिम संघर्ष अहमदाबाद में हुआ।

आज हर समुदाय अपने को अहिंसक, उदार, सहिष्णु या धर्मभीरु मानना और दूसरे समुदाय को स्वभावतः क्रूर, धूर्त, कट्टर और अविश्वसनीय रुप में देखना ऐसे पूर्वाग्रह हैं, जिन्हें आमतौर से सभी समुदाय अपनी सोच के अभिन्न अंग के रुप में बनाए रखना चाहते हैं और इन पर किसी भी बहस से परहेज करते हैं। कई बार किसी समुदाय का आचरण ऐसा हो जाता है, जिस पर कोई सफाई नहीं दी जा सकती है। अपनी करतूत को वैध ठहराने के लिए यह समुदाय दूसरे समुदाय के व्यवहार में ऐसे तलाश करने लगता है, जिनसे उनका आचरण आलोचना की परिधि के बाहर आ सके। उदा० के लिए- सिर्फ साम्प्रदायिक शक्तियाँ ही अपने समुदाय को हिंसा के लिए उत्तेजित करने के लिए दूसरे समुदाय की क्रूरता का अतिरंजित वर्णन नहीं करती, बल्कि अपेक्षाकृत उदार बुद्धिजीवी तबका भी इसी तर्क से अपने समुदाय की हिंसा को तर्कसंगत सिद्ध करने लगता है। **"इंदिरागाँधी की हत्या के बाद सिक्खों के व्यापक संहार के पीछे लगभग हर शहर में यह अफवाह फैलाई गई कि सिक्खों ने हत्या के बाद मिठाई बाँटी, जिससे उत्तेजित होकर हिन्दुओं ने उन्हें मारा।"** कई बार तो अपने समुदाय के भोलेपन और अहिंसक होने के तर्क इतनी हास्यास्पद गंभीरता से रखे जाते हैं कि उन्हें स्वीकार करने का मतलब सारी मानवीय दुर्बलताओं और तार्किक व्यवहार का निषेध होता है। एक समुदाय हर स्थिति में अहिंसक और न्यायप्रिय बना रहता है और उसके द्वारा की गई हिंसा आत्मरक्षार्थ की गई प्रतिक्रिया मात्र होती है। १९४६ में बिहार में ३०,००० मुसलमानों (गैर सरकारी अनुमान ४०-५०,०००) की हत्या को नोआखली में मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं के नरसंहार की प्रतिक्रिया बताया गया।

नोआखली में सरकारी आँकड़ों के अनुसार १३९ गैरसरकारी अनुमान २०० हिन्दू मारे गए। साम्प्रदायिक

दंगे सड़कों से पहले दिल-दिमाग के स्तर पर होते हैं। समुदाय को बड़े पैमाने पर हिंसा में शरी क होने के लिए तैयार करने के पहले यह आवश्यक है कि उसके सामने कुछ ऐसे कारण रखे जाएँ जो न सिर्फ उसकी हिंसा को वैध ठहराएँ, बल्कि समुदाय की मानसिकता को ऐसे बिन्दु पर छुएँ जहाँ हिंसा में भाग न लेना कायरता से भी बढ़कर समुदाय-विरोधी समझा जाएँ। पाकिस्तान हिस्टारिकल सोसायटी द्वारा प्रकाशित अ हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट भाग II में शरीफ अल मुजाहिद के लेख कम्यूनल रायट्स के मुताबिक भारत के साम्प्रदायिक दंगे हिन्दुओं की बर्बरता और मुसलमानों की शांतिप्रियता के उदाहरण है।

धर्म पर आधारित राष्ट्र की अवधारणा कितनी खोखली थी, इसका पता १९७१ में बांग्लादेश के अलग राष्ट्र बन जाने से चल गया। इसी तरह हिन्दुत्ववादी शक्तियों ने पिछले कुछ दशकों में राष्ट्र की मुख्यधारा का प्रश्न उठाया है। ये शक्तियाँ चाहती हैं कि मुसलमान राष्ट्र की इस मुख्य धारा में शरीक हो जाएँ, पर राष्ट्र की यह मुख्यधारा है क्या, इस प्रश्न का कोई ठोस उत्तर इन शक्तियों के पास नहीं हैं। यदि राष्ट्र की यह मुख्यधारा हिन्दू धारा है, तो कौन-सी हिन्दू धारा मुख्यधारा बनेगी। हिन्दूधारा या शूद्र हिन्दू धारा, मलयाली हिन्दूधारा या पंजाबी हिन्दू धारा एक बहुलवादी समाज में जितने अंतर्विरोध हो सकते है, सभी हिन्दू और भारतीय समाज में मौजूद है और अक्सर ये अंतर्विरोध न केवल असहमति के, बल्कि संघर्ष के बिन्दू के रूप में आते हैं। हिन्दुत्ववादी शक्तियों का यह नारा कि **"जो हिन्दू-हित की बात करेगा, वही देश पर राज करेगा"** इस अवधारणा को हिन्दुओं के मन में बैठाने की कोशिश करता है कि हिन्दू होने के कारण उनके हित भी एक हैं और इसी आधार पर उन्हें चुनावों में एक साथ वोट देना चाहिए।

महाकवि तुलसीदास श्रीराम जी के अनन्य भक्त थे। उन्होंने रामकथा लोकभाषा अवधी में लिखी। चूंकि उस समय ब्राह्मण देवभाषा, संस्कृत का उपयोग करते थे। तुलसी की रामकथा अवधी में लिखी जाने के कारण ब्राह्मण वर्ग को काफी धक्का लगा, जिससे उन्होंने उन्हें जाति से निकाल दिया और उन्हें राम मन्दिर में आने से वंचित कर दिया। अब तुलसीदास जी अधिक व्याकुल हो गए कि अब हम कहाँ जाएँ। उन्होंने अपनी भक्ति नहीं छोड़ी और किसी को भी कोई नुकसान नहीं पहुँचाया। वे किसी मस्जिद में जाकर रहने लगे। उन्होंने अपनी आत्मकथा विनय चरितावली में लिखा है -

"तुलसी सरनाम गुलाम है राम को, जाको रुचै सो कहे वोह,
माँग के खाइबो मस्जिद मा रहिबो, लेबै का एक न देबै का दोऊ।" ७५

अंग्रेज जब भारत में आए, तब उनका उद्देश्य यहाँ से कच्चा माल ले जाना और अपने यहाँ औद्योगिक माल को बेचने के लिए बाजार का निर्माण करना था। अंग्रेजों ने अपने उद्देश्य को छिपाकर भारतीयों से कहा कि वे भारत को सभ्य बनाने के लिए आए हैं, यह भगवान द्वारा अंग्रेजों को दी हुई जिम्मेदारी हैं। साथ ही वे भारतीयों को मुगलों के अत्याचार से बचाने के लिए आए हैं।

भारत का जब विभाजन हुआ, तब उस समय साम्प्रदायिक हिंसा हुई और हिन्दू मुसलमान एक-दूसरे के क्षेत्रों में गए। जो मुसलमान यहाँ रह रहे थे, वे यही रहें और जो नौकरी पेशा और उद्योग वाले थे, वे पाकिस्तान चले गए। पाकिस्तान में इन मुसलमानों का हाल कुछ अच्छा नहीं है। उनको ऐसा भ्रम था कि एक धर्म के लोग एक देश में चैन से रह सकते हैं, परन्तु यह गलत साबित हुआ। भारत से जाने वाले ज्यादातर मुसलमानों को वहाँ नफरत की दृष्टि

से देखा जाने लगा। आज भी वहाँ पर ये मुसलमान अपनी सीमित जिन्दगी गुजार रहे हैं और अपने अधिकारों के लिए मुहाजिर कौमी आन्दोलन चला रहे हैं। दो देश का सिद्धान्त और धर्म राष्ट्र का आधार हो सकता है। इन्हीं बातों के कारण बांग्लादेश पाकिस्तान से अलग हो गया। पाकिस्तान में पंजाब के मुसलमानों का प्रभाव ज्यादा था और वे पूरे पाकिस्तान पर पंजाबी संस्कृति को लादना चाहते थे। जब उन्होंने उर्दू को राष्ट्रभाषा घोषित किया, तब बंगाली मुसलमानों ने विद्रोह किया और उसकी परिणिति अलग बांग्लादेश बनने में हुई।

अंग्रेजों ने जब दंगा शुरू कर दिया और वे अपनी हुकूमत चलाने लगे। जनता पर अत्याचार बढ़ता ही जा रहा था। लोगों को दो वक्त की रोटी नहीं मिल रही थी। माताएँ, बहनें, बच्चे बेघर हो गए। सभी जगह त्राह-त्राह मचने लगी थी। इधर भारतवासी ईश्वर के ध्यान में तल्लीन थे। उधर मुसलमान भी हिंसा कर रहे थे। इन अत्याचारों से मुक्ति पाने के लिए महात्मा गाँधी ने अहिंसा का बिगुल बजाया तथा सुभाषचन्द्र बोस ने कहा आप मुझे खून दो, मैं आपको इन लोगों से मुक्ति दिलाऊँगा। हमारे कई बड़े-बड़े नेताओं ने अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ाई लड़ी। माताओं ने अपने वीर, अपना सुहाग तथा बहनों ने अपने भाई खो दिए, तब कहीं जाकर उन्हें साम्प्रदायिकता से मुक्ति मिली। किसी ने कहा है -

जला सको तो दीप जलाओ,
हृदय जलाना मत सीखो।
लगा सको तो बाग लगाओ,
आग लगाना मत सीखो।

कोई भी धर्म किसी बेगुनाह व्यक्ति को मारने की इजादत नहीं देता है। साम्प्रदायिकता का दूसरा नाम आतंकवाद है। यह इस्लाम तक सीमित न होकर अलग-अलग धर्मों के लोगों ने अपनी राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार सहारा लिया। सन् १९४२ में एक यहूदी ने कैरो के एक होटल पर बम डाला, जिसमें बहुत से लोग मारे गए। वैसे ही टिमथी मैकवे नामक एक ईसाई ने आकेल..........में बमबारी कर करीब ३०० लोगों को मार डाला। ऐसे ही लिट्टे नाम के आतंकवादी, श्रीलंका में सैकड़ों बेगुनाह लोगों को मार चुके हैं, जिसमें हमारे पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीवगाँधी भी शामिल हैं।

दूसरे महायुद्ध के बाद से इजराइल का बनना आतंकवाद को उभारने का एक सबसे बड़ा कारण था। इजराइल बनने के कारण करीब ८ लाख अरब मुसलमान और ईसाईयों को अपने घरों से बेदखल होकर शरणार्थियों के रुप में दूसरे देशों में पनाह लेनी पड़ी। इसमें से आतंकवाद के बीज उभरे और बाद में तो ये अपने आप में खतरनाक नासूर बन गया।

आतंकवाद को प्रवृत करने के लिए साम्राज्यवादी देशों ने भी एक बड़ी भूमिका निभाई। साम्राज्यवादियों का उद्देश्य रहा है कि दुनिया भर के कच्चे माल पर अपना नियंत्रण करना और इसके चलते उन्होंने तेल बाहुल्य क्षेत्रों में जहाँ भी जनतंत्र की प्रक्रिया मजबूत हो रही थी वहाँ खासकर अमेरिका ने लोकतांत्रिक सरकारों का तख्ता पलटकरर अपने पिट्टओं को सत्ता पर बिठा दिया। इसका सबसे बड़ा उदा० ईरान में देखने को मिला। जहाँ १९५३ में लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकार के मुखिया मुसाद्देक तरीके से चुनी हुई सरकार के मुखिया की सत्ता तब पलट दी गई। जब उन्होंने

तेल के कुंओं का राष्ट्रीयकरण किया। इसी प्रकार अफगानिस्तान में सोवियत फौजों को मात देने के लिए अमेरिका ने आतंकवादियों को प्रशिक्षण देने के लिए बहुत सारे केन्द्र खोले और पाकिस्तान के माध्यम से बहुत सारे आतंकवादियों को प्रशिक्षण दिया। पैलेस्टीन के बहुत सारे भ्रमित नौजवानों ने आतंकवाद का सहारा लिया। इन्हीं आतंकवादियों के एक हिस्से ने कश्मीर में आकर कश्मीर की समस्या को और भी जटिल बना दिया।

हरिवंशराय वच्चन ने लिखा है

'वैर कराती मन्दिर मस्जिद मेल कराती मधुशाला'

आज देश को साम्प्रदायिक सद्भाव की जबरदस्त आवश्यकता है। हमारा देश चारों ओर ईर्ष्यालु पड़ौसियों से घिरा हुआ है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक कुचक्र हमको नीचा दिखाने का प्रयत्न कर रहे हैं। सीमाओं पर छेड़-छाड़, आतंकवाद को आश्रय और सबसे बढ़कर देश के साम्प्रदायिक वातावरण को दूषित करना है। ये वे करतूतें हैं, जिनसे भारत की स्थिरता और अखण्डता को ध्वस्त करने का प्रयास किया जा रहा है। अगर हमने अपने देश को साम्प्रदायिक दंगों से नहीं बचाया, तो हमें इसकी बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी। साम्प्रदायिक दंगों से देश का प्रशासन और अर्थतंत्र बुरी तरह प्रभावित होता है।

आज इन्हीं दंगों के कारण हम एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर हमारा सिर शर्म से झुक जाता है। घर में अँधेरा और मस्जिद में चिराग जलाने की कहावत चरितार्थ होने लगी है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सभी का हित इस बात में है कि हम लोग आपसी वैमनस्यता को हटाकर भाईचारा, प्रेम और सौहार्द बनाए। सभी को अपने कट्टर धर्मान्ध नेताओं के बहकावे में आकर अपना सत्यानाश नहीं करना चाहिये । हमें **'बहुजनहिताय बहुजन सुखाय'** की नीति अपनाना है और हमें किसी से भी किसी के प्रति गाँठ नहीं बाँधना है।

'परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्'

तथा

'दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज्य काहु नहिं व्यापा।' जैसा प्रजा तंत्र लाना हैं।

हमें इन्दिरागाँधी ,सुभाषचन्द्र बोस, महात्मागाँधी, जवाहरलाल नेहरु, विवेकानन्द, अकबर, ईसामसीह, स्वामी विवेकानन्द, गुरुनानक जैसे महापुरुषों जैसा बनना हैं, क्योंकि कहा गया है **"हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई आपस में है भाई-भाई"**

तभी हमारा भारत फिर से 'सोने की चिड़िया' वाला देश कहलाएगा। हमें साम्प्रदायिकता अर्थात् नफरत के बीज हटाकर प्रेम , सौहार्द (साम्प्रदायिक सद्भाव) लाना है।

(ठ) भीष्म साहनी के साहित्य में साम्प्रदायिक सद्भाव/विद्वेष का स्वरुप -

१. साम्प्रदायिक सद्भाव -

भारत विश्व के विभिन्न देशों में सांस्कृतिक दृष्टि से अग्रणी रहा है। यहाँ अनेक धर्म हैं। सभी धर्म हमें यही शिक्षा देते हैं कि हमें नफरत की आँधी को प्रेम की आँधी में बदलना है। पूरे विश्व में कहीं भी इतनी शान्ति नहीं है, जितनी भारत में है, यहाँ उदारता, त्याग, सहिष्णुता, परोपकार, ममता, करुणा, स्नेह, सद्भाव अधिकांश प्राणी में समाए हुए हैं। यहाँ की सादगी, रहन-सहन, वेशभूषा, आचार-विचार इतनी निर्मल है कि कल्पना नहीं की जा सकती, फिर भी यहाँ पर आए दिन साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं। यहाँ हर बार झण्डे जरुर बदले हैं, लेकिन मंसूबे वहीं हैं। चाहे वह ८४ के दंगों में सिक्खों के खिलाफ छिड़ी मुहिम हो या फिर १९९२ में धराशाई होती बाबरी मस्जिद के साथ ही देश भर में साम्प्रदायिक हिंसा की आग हो।

साम्प्रदायिक सद्भाव यानि अच्छे विचार अर्थात् जिसमें किसी प्रकार का स्वार्थ न हो, आपसी प्रेम। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, जैन, बौद्ध आदि सभी भारत भूमि को अपनी मातृभूमि मानकर स्नेह और सद्भाव के साथ रहें।

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों व कहानी में साम्प्रदायिक सद्भाव का चित्रण अनेक स्थानों पर किया है। 'तमस' व 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यासों में ऐसा ही साम्प्रदायिक सद्भाव का चित्रण अनेक स्थानों पर द्रष्टव्य है।

'तमस' उपन्यास में -

'तमस' के एक पात्र बख्शीजी में साम्प्रदायिक सद्भाव देखने को मिलता है। उनका जितना सम्मान किया जाए, उनके लिए शब्द भी कम हैं। वे गाँधीजी के ही अवतार हैं। वे हर मानव में एक ईश्वर का नूर देखते हैं। चाहे वह किसी भी धर्म का हो। वे हर प्राणी को शान्ति का पाठ सिखाते हैं। जब प्रभात फेरी हो रही है, तब मुस्लिमों ने कहा कि यह मुस्लिमों की पार्टी है, जबकि बख्शीजी ने कहा कि यह हिन्दू, मुस्लिम व सिक्ख सभी की पार्टी है। बख्शीजी मुसलमानों को अपने हृदय से लगाते हैं जबकि रुमी टोपी वाले ने कहा कि इसमें जरुर तुम्हारी कोई चाल है। देखा जाए तो बख्शीजी भी मुसलमान हैं। वे चाहते तो मुस्लिमों की पार्टी में भाग ले सकते थे, लेकिन उनके हृदय में मानव-मानव के प्रति प्रेम उमड़ रहा है। रुमी टोपी वाले बख्शीजी का अनादर करते हैं, लेकिन बख्शीजी नम्रता के नरम पुजारी हैं। वे सबका जवाब प्रेम से देते हैं। वे काफी साल जेल में रहकर आए हैं। उनके जीवन का एक उद्देश्य है कि सभी प्रेम से रहें। लोग एक दूसरे के खून के प्यासे न हों।

मस्जिद में जब कोई सुअर मारकर फेंक जाता है, तब सभी जगह काले साए नजर आने लगते हैं। सभी अपना-अपना धैर्य खो देते हैं। बख्शीजी ही एक हैं, जो हमेशा अपना धैर्य बनाए रखते हैं। कांग्रेस के लोगों ने बख्शीजी से कहा कि हमें इस खतरे में नहीं पड़ना है। जितनी जल्दी हो सके। हमें यहाँ से निकल जाना चाहिए। वे मेहताजी के विचारों को जानते थे। अगर तनाव बढेगा, तो मेहता कांग्रेस का साथ कभी नहीं देंगे। प्रभातफेरी में उन्होंने सफाई से काम

नहीं किया है। वे एक-एक कंकड़ ही कड़ाही में डालते रहे हैं। अब इस बुरे साये में मेहता ने भी साथ छोड़ दिया –

"मेहताजी, आप क्या कह रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी," फिर कश्मीरीलाल और जरनैल को सम्बोधन करके बोले – "तुम आ जाओ मेरे साथ।" और वे गली में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगे।"७६

बख्शीजी का उद्देश्य सुअर को ठिकाने लगाने का है। उन्होंने व जरनैल ने सुअर को उठाकर सड़क के पार ईटों में छिपा दिया है। उन्होंने अपने मन में सोचा कि अगर सुअर यहाँ पड़ा रहेगा तो दंगा और भड़क सकता है। जब मस्जिद के दरवाजे खुलेंगे तो और भी बड़ी समस्या खड़ी हो सकती है। वे मस्जिद की सीढ़ियों को भी धो देना चाहते हैं। उन्होंने देखा कि जो भी आदमी यहाँ से निकल रहा है। वह मस्जिद की सीढ़ियों पर जरुर देखता है और मुँह बनाकर निकल जाता है। वे चाहते थे कि सुअर को किसी तरह से हटा दिया जाएँ, जिससे शान्ति स्थापित हो सके। उन्होंने कश्मीरीलाल से कहा –

"तुम जाओ कश्मीरी, इधर पीछे भंगियों के डेरे में चले जाओ। वहाँ म्यूनिसिपैलिटी के भंगी रहते हैं। देखो, अगर दो भंगी अपना ठेला ले आएँ तो इसे उठवा देते हैं।"७७

अगर बख्शीजी भी अन्य लोगों की तरह ऐसे विचार रखते, तो कांग्रेस पार्टी कभी भी सफल नहीं हो पाती।

एक वृद्ध सज्जन व वानप्रस्थीजी में साम्प्रदायिक सद्भाव देखने को मिलता है ।

चारों ओर जब दंगा मचा हुआ था। हिन्दू लोग यही चाहते थे कि चारों ओर शान्ति हो जाएँ। हिन्दू कभी यह नहीं चाहते थे कि दंगा हो। वे हर दंगे को टालने की कोशिश कर रहे थे। जब मुसलमानों का दंगा ज्यादा बढ़ गया, तब सभी लोगों ने एक मीटिंग बुलाई, जिसमें सभी लोग यह विचार कर रहे थे कि कैसे भी हो, शान्ति हो जाए। मीटिंग में एक सज्जन खड़े हुए। वे यह चाहते थे कि दंगा न हो। उन सज्जन का कहना था के हमें शहर के डिप्टी कमिश्नर से मिलना चाहिए। अगर उनके पास हम चले जाएं, तो शायद हमारी समस्या का समाधान हो जाएँ –

"ओ महाराज, बच्चों को लाठी चलाना जरुर सिखाओ, नेजा और तलवार चलाना भी सिखाओ, सूरमा बन जाएँगे हमारे बेटे, पर सबसे पहले डिप्टी-कमिश्नर से मिलो, उससे कहो कि शहर में फिसाद नहीं होने दे। डिप्टी-कमिश्नर का बड़ा दबदबा है। वह चाहे तो चिड़ी नहीं फड़क सकती।"७८

रुमी टोपीवाले हयातबख्श, मुस्लिम लीग के कारकुन, अमरीकी प्रिंसिपल हरबर्ट, प्रो० रघुनाथ में साम्प्रदायिक सद्भाव देखने को मिलता है।

शहर की स्थिति खराब होने से सभी लोग डिप्टी-कमिश्नर के घर पहुँचे। सभी यह आशा लेकर गए थे कि शायद मामला सुलझ जाएँ और दंगा न हो। कांग्रेस के कई सदस्य गए थे। चार आदमी पगड़ियों वाले एक रुमी टोपीवाले, दो गाँधी टोपीवाले। वे पहले मुसलमान प्रधान के यहाँ गए। वहाँ से जब इन लोगों को निराशा मिली, तब ये लोग रिचर्ड के पास गए। बख्शीजी, हयातबख्श, हरबर्ट, प्रो० रघुनाथ ये लोग कांग्रेस के सदस्य थे।

बख्शीजी कांग्रेस के सदस्य थे। वे बहुत ही घबराए हुए थे। वे स्थिति को बहुत सँभालने की कोशिश कर रहे

थे, लेकिन स्थिति उनसे सँभल नहीं रही थी - **"सरकार की तरफ से फौरन ऐसी कारवाई की जानी चाहिए जिससे स्थिति काबू में आ जाएँ। वरना.........वरना इस शहर पर चीलें मँडराएँगी।"७६**

बख्शीजी रिचर्ड को हर तरफ से समझाने का प्रयास कर रहे थे कि दंगा न हो। रिचर्ड स्वयं चाहते थे कि दंगा हो। रिचर्ड चाहते तो दंगे को बन्द करवा सकते थे, लेकिन उनके बड़े ऑफीसर ने उनसे मना कर दिया था कि तुम्हें किसी भी हालत में समझौता नहीं कराना है।

रिचर्ड यह जानते थे कि अगर हम इनकी चाहे जितनी मदद करे। यह हमेशा हमें बुरा कहेंगे। हम चाहे अच्छा करो या बुरा करे। बख्शीजी ने रिचर्ड से कहा कि आपके हाथ में पूरी ताकत है। शहर की रक्षा की भी जिम्मेदारी आपकी ही है। जब रिचर्ड ने देखा कि बख्शीजी हमसे मुँह लगते जा रहे हैं। ये हमारी बात को समझ ही नहीं रहे हैं। बार-बार अपनी-अपनी कहे जा रहे हैं, तो रिचर्ड को गुस्सा आ गया -

"ताकत तो इस वक्त पण्डित नेहरु के हाथ में है," रिचर्ड ने फिर मुस्कराकर धीमे-से कहा। फिर बख्शीजी की ओर देखकर बोला - "आप लोग ब्रिटिश सरकार के खिलाफ तो भी दोष ब्रिटिश सरकार का, और जो आपस में लड़ें तो भी दोष ब्रिटिश सरकार का ।"८०

कांग्रेस का एक सदस्य हयातबख्श कहने लगा कि यह सारा कसूर हिन्दुओं का है। जब वे कांग्रेस के सदस्य हैं, तब उनको कांग्रेस का साथ देना है, न कि उन पर आरोप लगाना है। लक्ष्मीनारायण जो कांग्रेस के सदस्य है। वह सही बात मुसलमानों से कह देते, लेकिन उनका कोई भी साथ नहीं देता है।

बख्शीजी यह प्रयास कर रहे थे कि कैसे भी हो मामला सुलझे -

"अगर शहर में पुलिस गश्त करने लगे, जगह-जगह फौज की चौकियाँ बिठा दी जाएँ तो दंगा-फिसाद नहीं होगा, स्थिति काबू में आ जाएँगी।"८१

रिचर्ड हर बात को टालने का प्रयास कर रहा था। वह अपने ऊपर कोई मुसीबत लेना नहीं चाहता था। बख्शीजी ने कहा कि छावनी भी ब्रिटिश सरकार की है। हुकूमत भी ब्रिटिश सरकार की है। अगर आप फौज बैठा देंगे तो मामला काबू में आ जायगा।

रिचर्ड यह प्रयास कर रहे थे कि कैसे भी हो बला टल जाएँ। ये लोग यहाँ से चले जाएँ। वे अपने हाथ में मुसीबत लेना नहीं चाहते थे। वे हर चीज को कांग्रेस के लोगों से मना कर देते हैं। बख्शीजी हमेशा दूसरा रास्ता निकालने की कोशिश करते हैं। अगर आप फौज नहीं लगा पा रहे, तो आप शहर में कर्फ्यु लगा दें। इसी से स्थिति सँभल जाएगी। पुलिस की ही चौकियाँ बैठा दें। रिचर्ड ने कहा कि अगर हमने कर्फ्यू लगा दिया तो शहर में और घबराहट फैल जाएगी। उसने कहा कि आप लोग शहर के नेता हैं। आप लोग मिलकर एक अमन कमेटी बनाएँ। लोग आपकी बात को ध्यान से सुनेंगे।

बख्शीजी बोले कि जो हमसे होगा, वह तो हम करेंगे ही। हम आपके पास बड़ी फरयाद लेकर आए हैं। अगर आप कर्फ्यू नहीं लगवा सकते हैं तो एक हवाईजहाज ही ऊपर से उठवा दें, जिससे लोगों को पता चल जाए कि सरकार कुछ कर रही है -

"वह तो हम करेंगे ही," बख्शीजी फिर उत्तेजित स्वर में बोले - "मगर इस वक्त हालत नाजुक है। अगर मार-काट शुरु हो गई तो उसे सँभालना कठिन होगा। अगर एक हवाई जहाज ही शहर के ऊपर उड़ जाएँ तो लोगों को कान हो जाएँगे कि सरकार बाखबर है। फिसाद को रोकने के लिए इतना भी काफी होगा।"८२

रिचर्ड हवाईजहाज के लिए भी मना कर देते हैं कि यह हमारे अधीन नहीं है। वह अपने मन में यह विचार करते हैं कि यह आदमी सीमा से आगे बढ़ रहा है। हमें इसे अपने रास्ते से हटा देना चाहिए,

"वास्तव में आपका मेरे पास शिकायत लेकर आना ही गलत था। आपको तो पण्डित नेहरु या डिफैंस मिनिस्टर सरदार बलदेवसिंह के पास जाना चाहिए था। सरकार की बागडोर तो उनके हाथ में है।"८३

हरबर्ट भी यही चाहता था कि यह हमारा कोई राजनीतिक मामला नहीं है। यह एक नागरिक सवाल है। हमें अपनी-अपनी पार्टियों को भूलकर हमें यह प्रयास करना है कि शहर की स्थिति सँभली रहे। हमें इसी वक्त शहर का दौरा कर लोगों को यह समझाना चाहिए कि वह आपस में नहीं लड़ें। रिचर्ड ने उन लोगों का समर्थन करते हुए यही सुझाव दिया,

"मेरा सुझाव है कि एक बस ले ली जाएँ और उस पर लाउडस्पीकर लगा दिया जाएँ। आप लोग उसमें बैठ जाएँ और शहर-भर में घूमकर लोगों तक अपनी आवाज़ पहुँचाएँ।"८४

कांग्रेस के अन्य सदस्य अपने-अपने घर के लिए लौट रहे थे। रास्ते में मौलादाद जो बिजली कम्पनी का क्लर्क था। उसने हयातबख्श से पूछा कि डिप्टी कमिश्नर ने क्या कहा? हयातबख्श ने कहा कि बाहर शोर हुआ। हमने सोचा कि गड़बड़ होने वाली है, इसलिए हम लोग निकल आएँ। मौलादाद लक्ष्मीनारायण पर बिगड़ता ही जा रहा था -

"आप लोगों का बस चले तो आप तो फिसाद करवाकर ही छोड़ोगे। हमीं लोग बरदाश्त किये जा रहे हैं।" फिर उसकी नजर हकीमजी पर पड़ी और उन्हें देखते ही मौला दाद का पारा तेज हो गया, " यह हिन्दुओं का कुत्ता भी आपके साथ गया था? यह किसकी नुमाइन्दगी करने गया था?"

"मुसलमान का दुश्मन हिन्दू नहीं है, मुसलमान का दुश्मन वह मुसलमान है जो दुम हिलाता हिन्दुओं के पीछे-पीछे जाता है, उनके टुकड़ों पर पलता है.....।"८५

हकीम साहिब बड़ी सावधानी से काम कर रहे थे। वे हिन्दू और मुसलमान में दंगा पैदा नहीं करना चाहते थे। वे किसी के मुँह नहीं लगना चाहते थे। वे देश को आज़ाद तथा उसमें शान्ति स्थापित करना चाहते थे -

"देखिए मौला दादा साहिब," हकीमजी ने बड़े ठहराव के साथ कहा, "आपका जो मन आए मुझे कहिए, पर सबसे अहम सवाल हिन्दुस्तान की आज़ादी का है, अंग्रेज से ताकत छीनने का है, हिन्दू-मुसलमान का नहीं है।"

"चुप रह कुत्ते," मौला दाद ने चीखकर कहा। उसकी आँखें लाल हो रही थीं और होंठ काँप रहे थे।

"छोड़ो-छोड़ो, जाने दो, जाने दो, यह वक्त झगड़ा करने का नहीं है।"८६

हरनामसिंह व उसकी पत्नी बन्तो एवं राजो में साम्प्रदायिक सद्भाव देखने को मिलता है।

हरनाम सिंह और बन्तो सिक्ख है। दंगे के कारण उन्होंने अपना गाँव छोड़ दिया। वे राजो के यहाँ सहारा माँगने आए हैं। राजो ने उन्हें अपने घर में पनाह दे दी है। वे दिन भर के भूखे प्यासे हैं। राजो जब उन्हें कटोरे में लस्सी पीने को देती है, तब वन्तो उसे लेने में हिचकिचाती है। बन्तो और हरनामसिंह एक दूसरे की ओर देख रहे थे कि हम इनसे कैसे (मुसलमान) से कटोरा लें। राजो उनकी हिचकिचाहट को समझ गई और कहने लगी -

"तुम्हारे पास अपना कोई बर्तन हो तो उसमें डाल लो। इधर गाँव में एक पण्डित की दुकान है। अगर वह घर पर हुआ तो मैं उससे तुम्हारे लिए दो बर्तन ले आऊँगी, पर क्या मालूम वह मिलता है या नहीं। हमारे हाथ का नहीं लो, पर दिन-भर भूखे कहाँ पड़े रहोगे?"८७

हरनामसिंह और बन्तो दिनभर के भूखे प्यासे हैं। वह अपने मन में सोचने लगा कि हमने कभी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाएँ और आज हमें ऐसे दिन देखने पड़ रहे हैं। उसने वह कटोरा हाथ बढ़ाकर ले लिया।

"तेरे हाथ का दिया अमृत बराबर है बहन, हम तुम्हारा किया कभी नहीं उतार सकते।"८८

व्यक्ति कितना भी जात-पाँति माने, लेकिन पेट की आग मानव को सब कुछ करना सिखा देती है। भूख से बेहाल सर्पिणी भी अपने बच्चों को खा जाती है। बन्तो व हरनामसिंह भी यह जाति-पाँति का व्यवहार अपने घर तक मानते थे, लेकिन जब उनके पास विपत्ति की घड़ी आई, तब वही हरनामसिंह व बन्तो को मुसलमानों के बर्तनों में लस्सी पीनी पड़ रही है। आदमी किसी का दास नहीं है, लेकिन परिस्थितियाँ मानव को मजबूर कर देती है।

यहाँ पर बख्शीजी के हृदय में साम्प्रदायिक सद्भाव देखने को मिलता है।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है, जिससे गलतियाँ न हुई हो। हर व्यक्ति गलती करता है। जब दंगा समाप्त हो गया, तब रिचर्ड ने शरणार्थियों के लिए कैम्प खोले। रिचर्ड चाहता है,

"रिफ्यूजी कैम्पों में हम चाहेंगे कि पब्लिक संस्थाएँ सरकार को सहयोग दें। राशन की सप्लाई का इन्तजाम कर दिया गया है, टेण्ट लगा दिए गए हैं। हमें कुछ डॉक्टरों की जरुरत होगी, बहुत-से वालण्टियरों की भी जो रिफ्यूजियों की देखभाल में मदद दे सकें।"८९

कुछ लोगों ने रिचर्ड सरकार की आलोचना की। पहले जब इतना दंगा हुआ था, तब किसी ने कर्फ्यु नहीं लगाया था। लाशों को किसी ने ठिकाने नहीं लगाया था। वे स्वयं मौज से जीते हैं और आम जनता को परेशान करते हैं। हम लोगों ने कहा कि हमारी मदद करो, तब कोई सामने नहीं आया। बख्शीजी ने उस आदमी से कहा कि तुम शान्त हो जाओ। तुम्हारी गालियों का सरकार के ऊपर कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। हमारा लाभ इसी में है कि हम सबकी मदद करें, जिससे दुबारा शान्ति स्थापित हो सके। वह व्यक्ति इतनी बात सुनकर क्रोधित हो उठा कि आपने देश के लिए क्या किया?

"क्या नहीं किया है? मुस्लिम लीगवालों के पास गये हैं कि शहर में अमन रखने के लिए हमारे साथ मिलकर काम करो, डिप्टी कमिश्नर के पास गए हैं कि फौज बैठाओ और फिसाद को रोको और हम

कर ही क्या सकते थे? और अब जब लोग बर्बाद होकर आए हैं, हमारा क्या फर्ज है, हम उनकी मदद करें या सरकार को गालियाँ दें?"६०

यहाँ लाला लक्ष्मीनारायण व शेख नूरइलाही में साम्प्रदायिक सद्भाव का सुन्दरतम चित्र उपस्थित हुआ है।

सभी जगह जब शान्ति छा गई, तब देवव्रत ने नगर के सभी बड़े लोगों को अमन कमेटी स्थापित करने के लिए एक ईसाई कालेज चुना। उस हॉल में हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख सभी लोग आते हैं। मीटिंग अभी शुरु नहीं हुई थी कि सभी आपस में बार्तालाप कर रहे थे। लाला लक्ष्मीनारायण ने जब नूरइलाही से कहा कि तुम आ गए। तुमने फिसाद करवाके ही दम लिया। वे दोनों एक ही स्कूल में पढ़े थे। वे एक साथ खेले व बड़े हुए थे और दोनों ही कपड़े का व्यापार करते थे। वे दोनों इतने प्यार से मिल रहे थे कि पास खड़े लोग उनकी दोस्ती की तारीफ कर रहे थे -

"उन्हें इतने प्यार से मिलते देख एक ओर खड़ा सरदार मोहनसिंह अपने ही साथी से बोला - "हम सबको यहीं रहना है। जनून सिर पर चढ़ जाए, लेकिन सच बात तो यही है कि हम सबको यहीं रहना है। मामूली लड़ाई-झगड़े की कोई बात नहीं। यों तो घर के बर्तन भी एक-दूसरे से ठहक जाते हैं, हमसायों के आपस में झगड़े होते रहते हैं, लेकिन रहना तो हम सबको यहीं पर है। हमसाया तो अपना दायाँ बाजू होता है।"६१

वे दोनों भले ही अन्दर से कट्टरपंथी हो, लेकिन उनमें आन्तरिक दोस्ती भी है। वे एक-दूसरे के सुख-दुख को समझते हैं। शहर में दंगा मचा हुआ था। मुसलमान हिन्दुओं का सम्मान आग से जला रहे थे, उसके दोस्त नूरइलाही अपने मजाकिया अन्दाज में बोले,

"पहले तो मैंने कहा, जलने दो कराड़ का माल। फिर दिल में आया, नहीं यार, आखिर तो दोस्त है मेरा......।"६२

नूरइलाही कहे जा रहा था कि मैंने उससे कहा - **"जैसे भी हो, गाँठें उठवा दो नहीं तो लाला मुझे जीने नहीं देगा। पकड़ लाया फिर कहीं से दो मजदूर।"६३**

यहाँ पर देवदत्त के सहृदय में साम्प्रदायिक सद्भाव के सुन्दर चित्र रेखाकिंत है।

कोई भी धर्म हमें लड़ना नहीं सिखाता है। सभी धर्म हमें यह शिक्षा देते है कि हम मिलजुलकर रहें। जरूरत पड़ने पर सभी की मदद करें। किसी को कोई कष्ट न दें, लेकिन साम्प्रदायिक परिस्थितियाँ कमजोर मन वाले आदमी को मजबूर कर देती है। उस समय अंग्रजों का शासन था। अंग्रेज भारत में व्यापार करने के लिए आए थे। धीरे-धीरे वे भारत में ही अपना राज्य फैलाने लगे। अंग्रेज संख्या में बहुत कम थे, लेकिन बुद्धिमान बहुत थे। उन्होंने **'फूट डालो शासन करो'** की नीति अपनाकर हम भाइयों को आपस में लड़ा दिया और स्वयं राज्य किया। हमारे देश के अनेक वीरों ने अपनी जान की बाजी लगाकर अंग्रेजों को भारत से भगाया और एक ऐसी अमन कमेटी बनाई, जिससे देश में शान्ति स्थापित हो सके।

भारत के अन्य वीरों के समान देवदत्त भी एक ऐसा वीर है, जो देश में शान्ति स्थापित करना चाहता है।

वह नहीं चाहता कि लोग धर्म के नाम पर लड़ें। भाई-भाई आपस में लड़कर अपना खून बहाए। वह देश में एक अमन कमेटी स्थापित करना चाहता है, जिसमें सभी भाई भाग लेकर इस समस्या को सुलझाएँ। देवदत्त एक ऐसा कॉलेज चुनता है, जिसमें सभी लोग भाग ले सकें। वह ईसाईयों का कालेज चुनता है। उस कॉलेज के प्रिंसिपल लूकस साहब हैं। वह न हिन्दू थे, न ही मुसलमान थे। वह अमन कमेटी इसलिए बनाई गई थी कि शहर में शान्ति बनाए रखने के लिए शहर के सभी लोग अपना सहयोग दें। मुसलमान हिन्दुओं के घर नहीं जा सकते थे। हिन्दू मुसलमान के घर नहीं जा सकते थे और न ही सिक्ख। यद्यपि अंग्रेजों ने यह कह दिया था कि अब दंगा नहीं होगा, फिर भी सभी के अन्दर एक दूसरे के प्रति डर समाया हुआ था। लोग बाहर तो निकल रहे थे, लेकिन उनके अन्दर किसी जगह एक खौफ घुसा हुआ था। सभी लोग ऊपर से हाय हैलो कर रहे थे। वे एक दूसरे से बातचीत कर रहे थे, लेकिन डर के मारे कोई भी अन्दर से अच्छी तरह से खुले नहीं थे।

अमन कमेटी जब शुरु होती है, तब पहला मसला मुसलमान और कांग्रेस में होता है। मुसलमान व कांग्रेस के लोग लड़ने झगड़ने लगते हैं। मुसलमान कहने लगते हैं कि हम पाकिस्तान ले के रहेंगे। बख्शीजी आप फरेब छोड़ दें। यह कांग्रेस हिन्दुओं की जमात हैं। लूकस साहब इन सब की स्थिति देखकर कहने लगते हैं -

"मैं सोचता हूँ, इस वक्त हम सब मिलकर, जैसे भी हो, शहर की फिजा को बेहतर बनाएँ। यहाँ शहर के सभी बड़े-बड़े लोग मौजूद हैं, उनकी आवाज़ का बड़ा असर होगा। मेरा विचार है कि एक अमन कमेटी बनाई जाए और यह अमन कमेटी हर मुहल्ले में, हर गली में अमन का प्रचार करे। इसमें सभी सियासी जमातों के नुमाइन्दे शामिल हों। इस काम के लिए, मैं समझता हूँ कि अगर एक बस का इन्तजाम हो सके, जिस पर लाउडस्पीकर और माइक्रोफोन लगा दिए जाएँ और कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा अन्य सियासी जमातों के नुमाइन्दे बैठकर जगह-जगह बस में से अमन की अपील करें तो इसका बड़ा असर होगा।"६४

सभी लोग यह कह रहे थे कि एक बस का इन्तजाम होना चाहिए। शाहनवाज बोले कि बस का इन्तजाम मैं करुँगा। देवदत्त बोले कि बस सरकार करेगी। शाहनबाज ने कहा कि पेट्रोल का खर्चा मैं दूँगा। एक साथी बोला कि अमन कमेटी के लिए ओहदेदार चुन लें। सभी लोग धर्म के नाम पर लड़ने लगें। एक सरदार जी ने कहा कि आप एक हिन्दू, एक मुसलमान, एक सिक्ख को चुन लें और सभी लोग खुलकर नुमाइन्दगी दें -

"यहाँ हिन्दू-मुसलमान का सवाल न लाएँ, एक अमन कमेटी है।" देवदत्त फिर आगे बढ़ आया,"मैं दरख्वास्त करुँगा कि सभी सियासी पार्टियों के रुकन इस कमेटी में शामिल हों। मेरी तजवीज़ है कि जनाब हयातबख्श साहब मुस्लिम लीग की तरफ से, बख्शीजी कांग्रेस की तरफ से और भाई जोधसिंह जी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी की तरफ से वाइस प्रेजिडेण्ट चुने जाएँ।"६५

सभी लोग अपने-अपने धर्म के नाम पर लड़ रहे थे कि आपने इनके धर्म के इतने चुन लिए। हमारे धर्म को कौन पूछता है। देवदत्त से यह सब नहीं देखा जा रहा था। अगर हमहीं लोग लड़ते रहेंगे, तो हम क्या अमन कमेटी स्थापित कर पाएँगे? हम यहाँ शान्ति स्थापित करने के लिए आए हैं न कि एक दूसरे से लड़ने के लिए। देवदत्त लपककर

फिर सामने आ गया -

"साहिबान, इस तरह हम कोई काम नहीं कर सकेंगे। फिरकावाराना अनासर के खिलाफ हमें लड़ना है। यह जरुरी नहीं कि किसको नुमाइन्दगी मिले, जरुरी यह है कि अमन कमेटी सभी फिरकों की एक मुश्तरका जमात बने, ताकि हम हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई मिलकर एक प्लेटफार्म पर से अमन की अपील कर सकें। इसी बात को मद्‌देनजर रखते हुए मैं तजवीज करता हूँ कि जनाब हयातबख्श, बख्शीजी और ज्ञानी जोधसिंहजी को अमन कमेटी के वाइस-प्रेजिडेण्ट मुन्तखिब किया जाय।"९६

अमन कमेटी के सभी सदस्य जानते थे कि देवदत्त ने ही अमन कमेटी बनाने में भारी प्रयास किया है। इसके प्रयास से ही हम सभी लोग मिल सके हैं। जनरल सेक्रेटरी देवदत्त को ही बनाना चाहिए। सभी लोग देवदत्त के ऊपर आलोचना कसने लगे कि क्या शहर में और नौजवान मर गए हैं। जो जनरल सेक्रेटरी इसी को बनाया जाए। जबकि वास्तविकता भी यही है कि अगर देवदत्त ने यह अमन कमेटी बनाई ही न होती तो तुम इतनी नहीं कह सकते थे। जब अमन कमेटी बन जाती है, तब एक बस तैयार होती है और उस बस में हिन्दू-मुस्लिम एक हो ऐसे नारे लगने लगते हैं -

"हिन्दू-मुस्लिम-एक हो !
हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद....जिन्दाबाद !"
अमन कमेटी.....जिन्दाबाद !"९७

के नारे लगने शुरु हो गए थे। सभी यह देखने लगे कि ये नारे कौन लगा रहा है। ये नारे गाड़ी में बैठा मुरादअली लगा रहा था। अब सभी गाड़ी में बैठने के लिए लड़ने लगे कि कौन पहले बैठे। बस के पायदान पर खड़ा देवदत्त बोला,

"मनोहरलाल साहब, पर्दे के पीछे हम कोई बात नहीं करते। हम कांग्रेस की दुम नहीं है, हम पेशेवर क्रान्तिकारी हैं। शहर में अमन कायम करना जरुरी है और इसके लिए जरुरी है कि सभी पार्टियों के लीडरों को इकट्ठा किया जाए। आपकी पार्टी के भी, जिसके लीडर भी आप ही हैं और जनता भी आप ही हैं। हम भी जानते हैं ये रजअतपसन्द हैं, मगर इस वक्त शहर में अमन के लिए इन्हें एक प्लेटफार्म पर लाना जरुरी है।"९८

हिन्दुस्तान में धर्म एक ऐसा मामला है जिस पर चोट की जाए तो अलग-अलग धर्मों के लोग आप स में लड़ने के लिए आमादा हो जाएँगे, क्योंकि हर व्यक्ति अपने धर्म से प्रेम करता है। किसी का धर्म गुरुद्वारा है, तो किसी का अल्लाह आदि। अपने महापुरुषों का अगर हम इतिहास देखें तो सिक्ख सम्प्रदाय में ही कई नन्हें बालकों ने अपने धर्म की खातिर अपने प्राण तक तज दिए, लेकिन अपने धर्म को नहीं छोड़ा। ६ दिसम्बर १९९२ का अयोध्या काण्ड मन्दिर मस्जिद विवाद इसका जीता जागता उदाहरण है, जो आज तक विवादों के कटघरे में पड़ा हुआ है। मोटे कसाई का बड़ा लड़का गुरुद्वारे में आग लगाने जा रहा है। वह छिपकर गुरुद्वारे के पिछवाड़े में पहुँच जाता है। वह गुरुद्वारे की खिड़कियों में आग लगाने को ही होता है कि उसे घरघराने की खूब तेज आवाज़ सुनाई दी, वह अपने मन में यह विचार करने लगा

कि यह आवाज़ कहाँ से आ रही है। कसाई का बेटा देखता है कि अंग्रेज हेलीकाप्टर से हाथ हिलाकर अभिवादन कर रहे हैं और मुस्कराकर कह रहे हैं कि कहीं कुछ नहीं होगा। अब कोई आग नहीं लगाएगा, न ही कोई बन्दूक चलाएगा।

"मोटे कसाई के बेटे ने, जिसने गुरुद्वारे की खिड़कियों पर तेल छिड़क दिया था और बस दियासलाई लगाने की ही देर थी, अपने हाथ खींच लिए। लोग मुँह बाए हवाई जहाज की और देखते जा रहे थे।"९९

कसाई यह आग जानबूझकर नहीं लगा रहा था। कई लोगों ने उसे उकसा दिया था। उस कसाई के अन्दर कहीं मानवीय गुण छिपा हुआ था तो वह मुसलमान सिक्खों के गुरुद्वारे में आग लगाने जा रहा था। कहीं न कहीं उसके अन्दर दया, दूसरे धर्म के प्रति लगाव था, जिससे उसने जब अंग्रेजों की बात को सुना कि कहीं पर भी दंगा नहीं होगा, तो उसने आग लगाने का विचार छोड़ दिया और वह जहाँ से आया था, वहाँ चला गया।

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यास में -

'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यास के पात्र नीलू व सुधीर में साम्प्रदायिक सद्भाव का अति सुन्दर चित्रण उल्लेखनीय है।

नीलू का पूरा नाम नीलोफ़र था। नीलू मुसलमान लड़की थी, जबकि सुधीर हिन्दू लड़का था। सुधीर कला भवन की पढ़ाई के अन्तिम वर्ष में था, जबकि नीलू तीसरे वर्ष में थी। कॉलेज के दिनों से ही उनका (प्रेम) चल रहा था। ये लोग एक दूसरे के इतने करीब आ चुके थे कि एक-एक पल एक दूसरे के बगैर गुजारना मुश्किल हो रहा था,

"जब पहली बार सुधीर ने उसे देखा था तो उसे काँपते पत्ते का-सा भास हुआ था। कुछ दिन बाद जब वे एक-दूसरे के निकट आने लगे थे और सुधीर ने उसे बताया तो पहले तो नीलू के गोरे-गोरे चेहरे पर लाली दौड़ गई थी, फिर वह खिलखिलाकर हँस दी थी।"१००

नीलू की जब परीक्षा खत्म हो गई, तब वह घर के लिए रवाना हो रही थी और वह बस स्टैन्ड पर सुधीर का इन्तजार कर रही थी। सुधीर जब बस स्टैन्ड पर पहुँचा, तब उसने कहा कि तुमने मुझे बताया क्यों नहीं ? जब दोनों विवाह कर लेते हैं, तब वे शिमला में नौकरी के लिए आते हैं। वे शिमला में गणेश जी के यहाँ रात गुजारते और अपने बारे में बताते हैं -

"तू तो गधा है," उसका मित्र जगदीश कह रहा था, " अगर किसी ने कह दिया कि मुसलमान लड़की को अगवा करके ले गया है, नीलू के ही बड़े भाई ने पुलिस में शिकायत लिखकर भेज दी तो क्या करेगा? कहाँ अपने को बचाता फिरेगा ?"१०१

यह तो अच्छा है कि यहाँ का स्टेशन ऑफीसर हिन्दू है अगर मुसलमान होता, तो समझ में आ जाती।

पुलिस का अन्तिम कथन यह था कि जो लड़की फैसला करेगी वह मान्य होगा। पुलिसवाले ने कहा कि आप अपनी लड़की को आधे घंटे के लिए घर ले जा सकते है। नीलू जब अपने पिता व भाई के साथ जाती हैं, तब उसको उसके भाइयों ने बहुत डाँटा नीलू का अंतिम फैसला था -

" मैं सुधीर के साथ जाऊँगी।"१०२

नीलू ने जब इतना कहा ही था, तब उसके अब्बा उठ खड़े हुए थे -

"और अब नीलू बिटिया, समझ ले कि हम तेरे लिए मर गए और तू हमारे लिए मर गई।"१०३

हमीद ने कुछ गाली दी पर सुधीर समझ नहीं पाया - **"हम भी देख लेंगे, समझ लेंगे।"१०४**

सुधीर ने जब पहली बार नीलू से विवाह के बारे में बाबूजी को बताया, तब बाबूजी ने रसोईघर में से जलती लकड़ी उठा ली थी -

"तेरा भेजा फोड़ दूँगा, अगर फिर उस लड़की का नाम लिया"। बाबूजी ने अपनी लाल-लाल आँखें दिखाते हुए कहा था।"१०५

नीलू और सुधीर के इस विवाह से सभी खिलाफ थे, लेकिन कानून का नियम था कि अगर लड़का-लड़की बालिग है, तो वे अपना जीवन साथी स्वयं चुन सकते है। इस विवाह से नीलू और सुधीर को काफी अपमान सहना पड़ा, लेकिन यह विवाह हमें इस और संकेत करता है कि ये दोनों परिवार एक दूसरे के साम्प्रदायिकतावादी थे और एक दूसरे की शक्ल देखना पसन्द नहीं करते थे, लेकिन विवाह के बन्धन ने दोनों को प्रेम के सूत्र में बाँध दिया।

ऐसा कहीं विवरण आता है कि हिन्दू और मुसलमान (लड़के और लड़की) एक दूसरे को पसन्द करते है। वे विवाह कर लेते हैं, लेकिन समाज व घर के लोग इस रिश्ते को स्वीकार नहीं करते हैं। अपनी बेटी के इस विवाह के रिश्ते को लेकर पिता लड़के को गोली मारने के लिए आतुर हो जाता हैं, लेकिन लड़की कहती है कि अगर आपको गोली चलानी है तो आप पहले मेरे ऊपर चलाइए। इतना कहते ही पिता के हाथ से बन्दूक छूट जाती है और विवाह के खिलाफ होते हुए भी उन्हें इस रिश्ते को स्वीकार करना पड़ता है और दोनों मजहबों की डोर मजबूत हो जाती है। दोनों लोग ईद में एक दूसरे के गले मिलते है।

यहाँ पर गणेश के हृदय में साम्प्रदायिक सद्भाव के सुन्दर दृश्य उपस्थित किए गए है।

सुधीर जब नीलू से विवाह कर लेता है, तब वे रहने के लिए शिमला में आते हैं और गणेश के यहाँ रूकते हैं। जब गणेशजी के यहाँ पार्टी होती है, तब मेन मुद्दा सुधीर और नीलू को लेकर हो जाता है और लोग उनको लेकर तरह-तरह की टिप्पणियाँ करते हैं। नीलू और सुधीर को एक सीलन वाले कमरे में ठहराया जाता है। वे अपनी रात उसमें काटते हैं। पार्टी जब समाप्त हो जाती है, तब अंजली और डॉ० गणेश में नीलू और सुधीर को लेकर टिप्पणियाँ शुरू हो जाती है। अंजली ने कहा -

"जवानी कैसी मस्तानी होती है, जी ! प्यार में अंधे होकर ये लोग आग में कूद गए हैं।"१०६

इस पर डॉ० गणेश ने कहा कि सो जाओ अंजली अब जमाना बदल गया है। लोगों की दृष्टि अब पहले जैसी नहीं रही। अंजली ने कहा कि क्या बदल गया है? सुधीर के पिताजी ने बहू को आशीर्वाद तक नहीं दिया। सुधीर उसे ब्याह कर ले आया। गलती तो इस लड़की ने की है। अंजली ने कहा कि लड़की न ससुराल की रही और न मायके

की। मुझे तो लड़की पर तरस आता है -

"तू तरस नहीं खाया कर। जो उसे ब्याहकर लाया है, वह उसकी देखभाल भी करेगा--- और सुन, उनके सोने का प्रबन्ध तुमने उस सीलन-भरे कमरें में क्यों कर दिया है ? बेचारा लड़की को हनीमून करवाने शिमला में लाया है और तुमने उन्हें उस फटीचर-सी जगह में धकेल दिया है।"१०७

अंजली ने जब अपने पति की ओर देखा क्या बात है जी? तुम कल तो उसे घर से जल्दी बिदा करने पर तुले हुए थे। आज उन दोनों के प्रति अचानक कैसे सद्भावना पैदा हो गई, इसलिए कि आपकी पार्टी कामयाब रही। यहाँ अल्ताफ़ और नीलिमा में साम्प्रदायिक सद्भाव के सुन्दर दृश्य उल्लेखनीय है। नीलिमा जब अल्ताफ़ के साथ खेलती उठती बैठती, तब उसके पिता बहुत खुश होते थे, लेकिन दादी माँ को यह सब पसन्द नहीं था। अल्ताफ़ मुसलमान था, जबकि नीलिमा हिन्दू थी। अल्ताफ़ नीलिमा के घर आता था। वे दोनों देर तक एक दूसरे से प्यार भरी बातें करते थे। इसी बात को लेकर दादी और नीलिमा के पिता के बीच खींचातानी होने लगी। पिताजी ने एक बार माँ से कह दिया था -

"माँ, अगर नीलिमा उस लड़के के साथ शादी करना चाहे तो मैं उसे रोकूँगा नहीं।"१०८

यद्यपि अल्ताफ़ मुसलमान था। वह अमीर पिताजी का बेटा था। उसके पिता वकील थे। नीलिमा के पिता और अल्ताफ़ एक गहरे मित्र थे। वे करीबी से एक दूसरे को जानते थे। इसी कारण अल्ताफ़ का घर आना-जाना था। यद्यपि पिताजी चाहते थे कि मेरी बिटिया खुश रहे। यहाँ पर लेखक ने हिन्दू और मुसलमान के आपसी प्रेम व स्नेह को बढ़ावा दिया है। दोनों एक दूसरे के कड़वे शब्दों को निकालकर एक दूसरे को अपनाए। नीलिमा के पिताजी वही चाहते थे। वे आज के बदले हुए इन्सान थे, पर दादी को यह रिश्ता मंजूर नहीं था -

"दोनों एक-दूसरे को चाहते हैं। मैं उस लड़के को जानता हूँ। उसका बाप मेरा दोस्त है। बड़े शरीफ़ लोग हैं। मुझे तो इसमें कोई बुराई नज़र नहीं आती, बहुत अच्छा ख़ानदान हैं। खाते-पीते लोग हैं।"१०९

नीलिमा की दादी ने कहा कि उनका धर्म दूसरा है। उनके खाने-पीने का रीति-रिवाज अलग है। मुसलमान दो बीबियाँ तक रखते हैं। अगर वह दूसरा विवाह कर लाया तो अपनी बेटी को कहाँ रखोगे। अगर उसने तलाक दे दिया तो तुम क्या करोगे ? बेटी परदे में रहेगी। वो परदे में बेटी के साथ कैसा व्यवहार करें क्या तुम देखने जाओगे ?

"माँ, तुम सब ठीक कहती हो, पर मैं अपनी बेटी के दिल को ठेस नहीं पहुँचा सकता।"११०

नीलिमा की दादी का अपने बेटे के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है -

"भगवान न करे अगर कल यह सुखी न हो पाई तो क्या करोगे ? अपनी जात-बिरादरी में ब्याह के बाद अनबन हो जाए, तो दस संबंधी मदद करने आ जाते हैं। शादी भी ठोक-बजाकर की जाती है, लड़की अकेली तो नही पड़ जाती। वहाँ तो नीलिमा निपट अकेली पड़ जाएगी। उनके रीति-रिवाज अलग, तीज-त्योहार अलग, खाना-पीना अलग। मैं मानती हूँ, खाते-पीते लोग है, पर इससे क्या होता है !"१११

नीलिमा के पिता ने अपनी माँ से कहा कि माँ जमाना बदल गया है। वह अपना अच्छा-बुरा खुद समझ सकती है। वह अब B.A. में पढ़ती है। वह टेनिस खेलती है। मुझे बहुत खुशी होती है उसका चेहरा दमकता है। वह बहुत खुश रहती है। बेटा तुमने केवल उनके बाहर की झलक देखी है। उनके अन्दर झाँककर नहीं देखा है। बेटा ने कहा -

"अल्ताफ़ का बाप भी बैरिस्टर था, विलायत का पढ़ा हुआ था, सिर पर सोला-टोपी लगाता था, सिगार पीता था। उसके घर की बैठक में जब कभी चाय पीने का मौका मिला तो चाँदी के सेट में चाय सर्व की गई। औरतें पर्दा भी नहीं करती थीं, दरवाजे खुले रहते थे, किसी प्रकार की बंदिश का भास नहीं होता था ।"११२

नीलिमा के पिता ने अपनी माँ से कहा कि माँ तुम ही तो कहती थी कि लड़की की शादी हो तो लड़की की रज़ामंदी होनी चाहिए -

"रज़ामंदी होनी चाहिए बेटा, पर अपनी जात-बिरादरी में से, अपने लोगों में से। अपना धर्म छोड़कर नहीं।"

" नीलिमा अपना धर्म कहाँ छोड़ रही है ? और आजकल धर्म को मानता कौन है?"११३

माँ ने कहा कि तुम हिन्दू हो। हमारे पुराने संस्कार है। घर में भगवान बैठे हुए है। हमें अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए। बरसों से जिन्हें हम मानते चले आ रहे है -

"किसके संस्कार हैं, माँ? जो मन्दिरों में जाकर माथा टेकते हैं वे कौन से दूध के धुले होते हैं ! कोई एवं नहीं जो वे न करते हों।"११४

नीलिमा के पिताजी ने अपनी माँ की बातों पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने अपना फैसला अपनी बेटी पर छोड़ दिया था जो बेटी को अच्छा लगे वही करे।

दादी ने कहा कि बेटा मैं पुराने ख्यालों की जरूर हूँ। बेटा पर लड़का-लड़की को बाँहों में बाँहें डालकर घूमना अच्छा नहीं हैं। विवाह के बाद घूमे अच्छा है, पर पहले घूमना अच्छा नहीं है। तुम बेटी को मर्यादा में रहना सिखाओ। इसी में उसका कल्याण है।

यहाँ अल्ताफ़ मुसलमान और नीलिमा हिन्दू हैं, फिर भी पिताजी अपनी बेटी का विवाह मुसलमान लड़के से कराना चाहते और लेखक ने उन दोनों के बीच प्रेम सम्बंध को साम्प्रदायिक सद्‌भाव में लाने का प्रयत्न किया है।

'झुटपुटा' कहानी में-

यह घटना उस समय की है, जब इन्दिरा गाँधी की मृत्यु हुई थी। सभी जगह सन्नाटा छाया हुआ था। एक दो दुकानें ही खुली हुई थी। दो दिन से दूध भी नहीं मिल रहा था। सब्जीवालों की दुकानें भी एक दो खुली हुई थी। प्रो० कन्हैयालाल जब दूध लेने आया, तब उसने क्या देखा कि एक दिन में मुहल्ला का सारा माहौल बदल गया? कुछ लठैत

मुहल्ले में घूमकर उनकी दुकानें लूट रहे थे। वे ऐसे खुले आम आते जैसे उनके पिताजी की दुकान हो। उनको किसी का डर नहीं था। वे अपने साथी लाकर सारी दुकान को अस्त व्यस्त कर देते है। वे केवल वे ही दुकानें लूटते हैं, जो हिन्दुओं की नहीं थीं। वे केवल सरदार की ही दुकानें लूट रहे थे।

सभी लठैतों ने जब एक दुकान को अस्त-व्यस्त कर दिया और वे अलमारी को घसीटकर सड़क के बीचोंबीच ले आए और उसे जलाने लगे तो एक लुटेरा अलमारी के साइनबोर्ड को तोड़ने की कोशिश कर रहा था –

"दुकान सरदार की है मगर घर तो हिंदू का है," तमाशबीनों में से एक आदमी बोला, "इसलिए अलमारी बाहर खींच लाए हैं।"११५ इसी बात पर एक और आदमी ने टिप्पणी की -

"इधर पीछे ड्राईक्लीनर की दुकान को आग नहीं लगाई।"

'क्यों ? "क्योंकि उसमें एक हिन्दू और एक सिक्ख दोनों भाईवाल हैं।"११६

इन दिनों अक्सर ये दिखता है कि अगर दुकान सरदार की है तो उसे लूट लिया जाएगा, लेकिन जहाँ हिन्दू और सिक्ख दोनों साथ रहते हैं। उसे लूटने की किसी में हिम्मत नहीं होती है, क्योंकि कहा गया है **"संगठन में शक्ति है"** वहाँ दोनों में आपसी प्रेम है, भाई चारे की भावना है।

लुटेरे जब आगे चलकर मोतीनगर में ड्राईक्लीनर की दुकान को जलाने गए, तब किसी ने उन लठैतों से पुकारकर कहा – **"ओ कमबख्तों, दुकान सिक्ख की है, पर उसमें कपड़े तो ज्यादा हिन्दुओं के ही हैं !"**११७

इतना कहने की ही देर थी। उन लठैतों ने उस दुकान को छोड़ दिया।

कन्हैयालाल जब दूध लेने गया, तब उसी दूध की लाइन में दो लड़के बार्तालाप कर रहे थे। एक कह रहा था -

"मुँह पर लगानेवाली क्रीम होती है या नहीं ? उसी की शीशियाँ मिली हैं और तू? तू क्या लाया?"

"वह ड्राईक्लीनर की दुकान थी यार, लोगों ने कुछ उठाने ही नहीं दिया। हम तो अन्दर घुस गए थे, पर अन्दर किसी आदमी ने हमें रोक दिया, "दुकान तो सरदार की है पर कपड़े तो सभी लोगों के हैं। अपने ही कपड़े लूटोगे ? चलो, यहाँ से।' हमारे हाथ तो कुछ नहीं लगा।"११८

हिन्दुओं में बहुत अपनापन है। उनके अन्दर किसी के प्रति घृणा नहीं है, बल्कि आपसी प्यार बहुत है। हिन्दुस्तानियों की यह विशेषता है कि भले ही दूसरा आदमी किसी भी धर्म का हो, अगर उसे खतरा है और उसे मालूम नहीं है तो हिन्दुस्तानी उस आदमी को सचेत जरूर कर देते है। ऐसा ही एक दृश्य वहाँ देखने को मिलता है। जब चौध ारी धीमी आवाज करके बोला -

"मेरे पड़ोस में वह सरदार रहता है कि नहीं? वह लंबा-ऊँचासा। आज सुबह मैंने दरवाजा खोला तो देखा, वह अपने घर के बाहर खड़ा था। मैंने पूछा, 'सरदार जी, सुबह-सवेरे कहाँ जा रहे हो?' तो बोला, 'थोड़ा घूमने जा रहा हूँ।' लो सुनो, शहर में क्या हो रहा है, और यह घूमने जा रहा है। मैंने कहा, 'सरदार जी, आज के दिन घूमने कौन जाता है ?' तो कहने लगा, 'घूमने की मुझे आदत है। घर

पर बैठ नहीं सकता।' वह रोज सुबह पार्क में टहलने जाता है। बड़ी मुश्किल से उसे घर के अन्दर भेजा।"११६

जहाँ प्रेम हो वहाँ कई लोग रह सकते है और वहाँ का वातावरण रामराज्य जैसा रहता है। वहाँ रहने वाला हर मनुष्य अपना भाई है। ऐसा ही एक दृश्य वहाँ देखने को मिलता है। जब कन्हैयालाल एक लड़की को दूध की लाइन में तीन डोलचियाँ लिए देखते है। कन्हैयालाल ने कहा कि इधर दूध का ठिकाना नहीं मिल रहा है। कब आयेगा और -

"तुम तीन डोलचियाँ उठा लाई हो, बेटी ! तुमने यह लाइन देखी है? अगर सभी लोग तीन-तीन डोलचियाँ दूध लेना चाहेंगे तो कितने लोगों को दूध मिलेगा ?"१२०

लड़की झेंप गई और उसने कहा - **"एक डोलची साथवालों की है, सरदार अंकल की, दूसरी ऊपर वालों की, एक हमारी।"१२१**

कन्हैयालाल ऐसा सुनकर क्रौंध जाता है कि एक हिन्दू लड़की सरदारों के लिए दूध लेने आई है। यह भाईचारा प्रेम नहीं तो क्या है, जो दोनों धर्मो को एक सूत्र की डोर में बाँधने का प्रयत्न कर रही है और हमारे देश का सिर ऊँचा कर रही है।

किसी को जब दूध नहीं मिलता है, तब लाइन में खड़ा एक मद्रासी चौधरी से पूछता है कि दूध की क्या पोजीशन है? चौधरी ने कहा कि दूध तो बहुत है। ट्रक के ट्रक भरे हैं। बस वहाँ से कोई ले आए। वे लेकर क्यों नहीं आते हैं ? वहाँ के सारे ड्राइवर सरदार हैं। उन्हें खतरा है। जब एक सरदार बच्चों के लिए अपनी जान पर खेलकर दूध का ड्रम ले आता है, तब कन्हैयालाल से रहा नहीं जाता है। वह पूछता है कि सरदार जी आप कैसे। सरदार जी ने मुस्कराकर उत्तर दिया - **"बाबा, बच्चों ने दूध तो पीना है ना ! मैंने कहा, चल मना ; देखा जाएगा जो होगा। दूध तो पहुँचा आएँ।"१२२**

यदि देखा जाए तो 'झुटपुटा' पूरी कहानी साम्प्रदायिक सद्भाव को लेकर लिखी गई है। सरदार यद्यपि जानता है कि मैं मारा भी जा सकता हूँ, लेकिन वह अपनी जान पर खेलकर सभी के लिए दूध ले आया।

'कबिरा खड़ा बजार में' -

हमारे समाज में चारों तरफ लड़ाई झगड़ा बढ़ता चला जा रहा है। चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। हर आदमी एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न कर रहा है। साम्प्रदायिकता के नाम पर हिन्दू और मुस्लिम एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे एक दूसरे के गले काटने पर तुले हुए हैं। उनके अन्दर मानवता नाम की कोई चीज नहीं रह गई है। जीवन में कोई महापुरूष ही होते है, जो मानव-मानव को एक मिलाने का प्रयत्न करते हैं। सभी के हृदय में एक परमात्मा का नूर देखते हैं। उनको गले से लगाते हैं। हिन्दू और मुस्लिम समाजों में जो साम्प्रदायिकता फैली है। उसको साम्प्रदायिक सद्भाव के द्वारा दूर करने का प्रयत्न किया है। **ऐसा ही एक परिदृश्य 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में देखने को मिलता है।**

कबीर अपने सत्संग स्थल में एक भण्डारा कर रहे हैं, जिसमें सभी धर्म के लोग आकर भोजन करेंगे। इस भण्डारे मे किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं बरता जाएगा। इसमें सभी व्यक्ति भेदभाव भूलकर, आपस में भाई-चारे का व्यवहार अपनाकर भोजन करेंगे। यह भण्डारा करने से सभी को समान अधिकार मिलेगा। इससे धर्म की मर्यादाएँ टूटेगी। एक दूसरे के प्रति कटुता के व्यवहार दूर होंगे। सभी में प्रेम व सद्भाव बढ़ेगा। यह बीमारी केवल हमारे काशी में ही नहीं है। यह बीमारी पूरे देश में देखने को मिलती है। कोतवाल का कायस्थ के प्रति यह कथन अधोलिखित है,

"सब लोग मिलकर भोजन करेंगे। चमार-नाई-मोची-हिन्दू तुर्क। मिलकर भण्डारा करेंगे।

इससे क्या होगा ?

इससे धर्म की मर्यादाएँ टूटेंगी, जात-पाँत के नियम टूटेंगे। हमनें सुना है यह बीमारी काशी में ही नहीं फूटी है, देश के और स्थानों में भी फूट रही है। कुम्मी-कमीने इकट्ठा हो रहे हैं।"१२३

इस भण्डारे में मण्डली के सभी सदस्य गीत गाने लगते हैं -

"हमने राम रहीम करीमा, कैसो अलह राम सति सोई।

विसमिल मेटि बिसंबर एकै और न दूजा कोई ----"१२४

चाहे वह खुदा हो या परमात्मा दोनों एक ही है। दोनों का उद्देश्य ईश्वर के दरबार तक पहुँचना है। उनका जप, पूजा, आराधना एवं परमात्मा के ध्यान में तल्लीन होना है। शेखतक्की ने कहा कि हिन्दू लोग यह नहीं मानते कि बुत ही खुदा है। बुत एक जरिया है। खुदा तक पहुँचने का। उदा०- हमें दिल्ली जाना है हम चाहें तो मोटर से, रेलगाड़ी से, हवाईजहाज से चले जाएँ, लेकिन हमारा उद्देश्य दिल्ली तक पहुँचना है। ऐसे ही पूरे विश्व में आदमी अपने-अपने धर्म को मानता है। धर्म के अनुसार सभी के इष्ट अलग-अलग हैं, लेकिन सभी का उद्देश्य अपने इष्ट तक पहुँचना है। वैसे ही सिकन्दर का वजीर के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है,

"अब तुम समझो एक फनकार है, तस्वीरें बनाता है। उसके दिल में एक जज्बा उठता है। अब जज्बे का अपना तो कोई रंगरूप नहीं होता, कोई शक्ल नहीं होती, लेकिन वह फनकार रंगो, लकीरों की मदद से उस जज्बे को बयान कर देता है। मतलब कि तस्वीर देखनेवाला उन रंगो और लकीरों को देखते हुए उस जज्वे को पा जाता है जिसे फनकार बयान करना चाहता है। समझे? इसी तरह पत्थर का बुत अपने में खुदा नहीं है, लेकिन उसके जरिए हम खुदा का तसव्वुर कर लेते हैं। ऐसा इन लोगों का कहना है, पर हमें तो, सच पूछो, इन बातों के बारे में सोचकर ही सिर-दर्द होने लगता है।"१२५

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि कोई भी धर्म कभी किसी भी धर्म का तिरस्कार करना नहीं सिखाता। हर धर्म का एक ही लक्ष्य है कि परम ब्रह्म को प्राप्त करना। जैसे- सभी नदियाँ विभिन्न मार्गो से होती हुई समुद्र में जाकर गिरती है। उनका लक्ष्य एक ही है, उसी प्रकार सभी धर्मो का एक ही लक्ष्य खुदा को प्राप्त करना है।

२- साम्प्रदायिक विद्वेष -

साम्प्रदायिकता एक ऐसा भाव है जो एकाधिक पंथों अथवा सम्प्रदायों के लोगों के मन में अपने सम्प्रदायों

के हितों व्यक्तिगत स्वार्थों, धार्मिक प्रतिष्ठाओं एवं राजनैतिक सत्ता, संघर्ष को लेकर दंगे के रूप में बदल जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो दो मतावलम्बियों धर्मानुयायियों के बीच छोटी-छोटी बात पर झगड़ा हो जाएँ और उस झगड़े का स्वरूप साम्प्रदायिक हो जाएँ, वही साम्प्रदायिकता हो जाती है। **प्रभा दीक्षित** का कहना है -

"साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वे सभी भावनाएँ व क्रिया-कलाप आ जाते हैं, जिनमें किसी धर्म, जाति अथवा भाषा के आधार पर किसी समूह विशेष के हितों पर बल दिया जाए और उन हितों को राष्ट्रीय हितों के ऊपर प्राथमिकता दी जाए तथा उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाए या उसको प्रोत्साहन दिया जाए।"१२६ बिसेन्ट स्मिथ के शब्दों में - **"एक साम्प्रदायिक व्यक्ति या व्यक्ति समूह वह है, जो प्रत्येक धार्मिक अथवा भाषायी समूह को एक ऐसी पृथक् सामाजिक तथा राजनैतिक इकाई मानता है, जिसके हित अन्य समूहों से पृथक होते हैं और उनके विरोधी भी हो सकते हैं। ऐसे ही व्यक्ति अथवा समूह की विचारधारा को 'सम्प्रदायवाद' या साम्प्रदायिकता कहा जाएगा।"१२७**

धर्म का अर्थ धारण करना है, लेकिंन आज धर्म का अर्थ गलत प्रयोग किया जा रहा है। धर्म के नाम पर मनुष्य को मनुष्य का गला काटने की दुस्प्रेरणा, सम्प्रदाय के नाम पर दूसरों का घर जलाने और नारियों के अपमान की कुशिक्षा दिया जाना शैतानियत और दानवता है। इसे धर्म कहना धर्म का और ईश्वर का घोर अपमान है।

साम्प्रदायिक विद्वेष के इस जहर को इस देश ने शताब्दियों से झेला है। दुख का विषय तो यह है कि आज भी हम इस लज्जाजनक मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाए हैं। देश के विभाजन के समय खून की जो होली खेली गई थी। वह आज भी कोढ़ के रूप में चाहे जब फूट निकलती है। वह कभी मुरादाबाद, कभी सूरत, कभी कानपुर, कभी अलीगढ़, कभी मेरठ से यह नासूर बहने लगता है। इसका परिणाम यह होता है कि हत्या, आगजर्नी, लूट और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में देश की बदनामी। करोड़ों रूपयों की सम्पत्ति का विनाश होता है, द्वेष की खाइयाँ और गहरी हो जाती हैं। सन्देह की लक्ष्मण रेखाएँ बड़ी सीपन को और जकड़ लेती हैं।

इस साम्प्रदायिक दुराग्रह ने ही तो सुकरात को जहर परोसा है, ईसामसीह को सूली पर चढ़ाया, महात्मा गाँधी व इन्दिरा गाँधी के जिगर में गोली उतारी तथा राजीव गाँधी को बम से उड़ाया और **वर्तमान में पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो २७ दिसम्बर सन् २००७** को इसका शिकार हुई। अब पता नहीं कौन गोलियों और बमों का शिकार होगा। पाकिस्तानी राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ पर दो बार हमला हो चुका और इन्हीं दंगों के कारण भगतसिंह को सूली पर चढ़ाया गया तथा १६१६ का जलियावाला कांड हुआ, जिसमें हजारों लोगों की मृत्यु हो गई। कई माताओं के सिंदूर व बहनों के भाई उजड़ गए, फिर भी यह साम्प्रदायिक दंगा बन्द होने का नाम नहीं ले रहा है और जिधर देखो उधर साम्प्रदायिकता नजर आ रही है।

सन् १६४७ का वर्ष देश को १५ अगस्त को मिली आज़ादी के लिए ही नहीं बल्कि इस वर्ष भारत में हुए सबसे भयंकर साम्प्रदायिक दंगों के लिए भी हमेशा याद रहने वाला वर्ष है। अगस्त से पहले शुरू हुए और बाद में काफी समय तक चलते रहने वाले इन दंगों ने अमानवीयता के क्रूरतम रूपों का इतिहास रचा और कम से कम छः लाख निर्दोष स्त्री-पुरूष, बच्चों-बूढ़ों ने इन भयानकतम क्षणों में बड़ी क्रूरताएँ सहकर अपने प्राण गँवाए। हजारों-लाखों स्त्रियों ने अपनी

देह के साथ वह वहशत भरा सलूक झेला, जिन्हें अभी तक साहित्य और कला के अन्य रूपों में चित्रित तक नहीं किया जा सका है। एक करोड़ के करीब लोगों ने विस्थापन और उससे जुड़े अन्य अत्याचार झेले।

'तमस' का लेखनकाल १६७३ के आस-पास का है। इसके कुछ ही समय पहले महाराष्ट्र के भिवंडी में साम्प्रदायिक दंगे हुए थे। स्वाधीन भारत के इस दंगे के बाद के दारूण दृश्यों ने भीष्मसाहनी को कहीं बहुत गहरे स्तर पर एक रचनात्मक उत्तेजना दे दी थी, जिससे तमस का लेखन सम्भव हो सका था। भीष्मसाहनी ने कहा कि -

''मुझे ठीक से याद नहीं कि कब बम्बई के निकट, भिंवडी नगर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए, पर मुझे इतना याद है कि उन दंगों के बाद मैंने 'तमस' लिखना आरम्भ किया था।''१२८

भीष्मसाहनी ने अपने उपन्यास व कहानी में साम्प्रदायिक विद्वेष का चित्रण अनेक स्थानों पर किया है। 'तमस' उपन्यास में ऐसी ही साम्प्रदायिक संकीर्णता अनेक स्थानों में देखने को मिलती हैं।

कांग्रेस के जब सभी सदस्य प्रभातफेरी के लिए निकलते है और नालियाँ साफ करते है, तब बख्शी जी के पास एक उड़ता हुआ पत्थर आता है। बख्शीजी व उनके अन्य साथियों ने कहा कि जरूर कहीं पर गड़बड़ है। एक बुजुर्ग ने कांग्रेस के सदस्यों से कहा कि भाई मेरी बात मान जाओ। ज्यादा देर तक यहाँ पर रूकना उचित नहीं है। कांग्रेस के अन्य सदस्यों के पास एक के बाद एक पत्थर उड़ते नजर आए। सभी लोग आपस में सलाह करने लगे कि आखिर बात क्या है। जब हम लोग सफाई कर रहे थे, तब वह हमारी तारीफ कर रहा था। अब यहाँ से जाने को कह रहा हैं। कही कश्मीरी-या शंकर ने किसी लड़की-बड़की को तो नहीं छेड़ा है, लेकिन कश्मीरी सारा वक्त नाली साफ करता रहा है।

सभी लोग जब एक जगह इकट्ठे हो गए, तब उन्होंने सड़क के पार एक मस्जिद देखी, जिसे केलों की मस्जिद कहा जाता था। मस्जिद की सीढ़ियों पर एक काला सुअर पड़ा हुआ था। उसके ऊपर एक बोरा ढका हुआ था। जब बख्शीजी ने उस सुअर को देखा, तब उन्होंने कहा कि मैंने कहा था कि जरूर कहीं गड़बड़ है। रामदास व कश्मीरीलाल कहने लगे कि जितनी जल्दी हो सके, हमें यहाँ से निकल जाना चाहिए। जब मस्जिद पर सुअर पड़ा हुआ था, तब मुसलमान भड़क उठे थे। आसमान पर चीलें उड़ती नजर आ रही थी। सभी जगह बुरे आसार नजर आ रहे थे। जो लोग कांग्रेस के सदस्य हैं। वे प्रभातफेरी के लिए निकले हैं। वे यह चाहते हैं कि लोगों का ध्यान देश की भक्ति के लिए बढ़े। कांग्रेस के अन्य सदस्यों का प्रभातफेरी के लिए निकलना एक दिखावा मात्र है। जब बख्शीजी ने मेहता व जरनैल से कहा कि तुम लोग सुअर हटाने में मेरी मदद करो तो मेहता की हिम्मत नहीं पड़ी कि वे सुअर हटाने में मदद करें। उन्हें यह लग रहा था कि कहीं मेरे कपड़े गन्दे न हो जाएँ। बख्शीजी व जरनैल ने उस सुअर को उठाकर सड़क के पार-ईटों से छिपा दिया। बख्शीजी मस्जिद की सीढ़ियों को धो देना चाहते थे।

बख्शीजी कश्मीरीलाल से बोले कि तुम किसी भंगी को बुलाकर यह सुअर उठवा दो। तभी उन्होंने क्या देखा कि एक गाय भागती आ रही है। उसके पीछे एक आदमी सिर पर मुँडासा बाँधे और हाथ में डण्डा लिए गाय के पीछे भागा जा रहा है। वह गाय बादामी रंग की थी। डर के मारे उस गाय की पूँछ उठी हुई थी। ऐसा लग रहा था जैसे वह गाय रास्ता भूल गई हो। वह गाय को हाँकता हुआ दायें हाथ की ओर ले जा रहा था। बख्शीजी अपने मन में घबरा रहे

थे। उन्हें यह समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें और क्या नहीं ? वे शान्त होकर खड़े रहे, फिर बोले -

"लगता है शहर पर चीलें उड़ेंगी। आसार बहुत बुरे हैं।" और उनका चेहरा पहले से भी ज्यादा पीला और गम्भीर लगने लगा।"१२६

कांग्रेस के सदस्य जब रिचर्ड के यहाँ दंगे सुलझाने की बात करते है, तब सभी लोगों को बाहर से घबराहट भरी आवाजें सुनाई देने लगी। उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे कि किसी आदमी का कत्ल कर दिया गया है।

"पुल के पार एक हिन्दू को कत्ल कर दिया गया है," बाहर बैठे चपरासी से कोई आदमी कह रहा था। "सभी बाजार बन्द हो गए हैं।"१३०

सभी लोगों ने जब ऐसी आवाज़ें सुनी, तब सभी लोग घबराने लगे कि हम अपने घर कैसे जाएँगे? सड़क पर किसी के भागते कदमों की आवाज़ आ रही थी। कांग्रेस के अन्य सदस्यों को, जिसको जो साथ मिला, वह वहाँ से भाग निकाला। जब मेहता और बख्शी जी ताँगे के साथ निकल गए, तब लक्ष्मीनारायण ने मेहता की तरफ देखा कि वे ताँगे से निकल गए। लक्ष्मीनारायण ने जब उनकी ओर देखा, तब वे विचार करने लगे -

"हिन्दू हिन्दू के साथ ऐसा ही व्यवहार करेगा। प्राचीन काल से यही कुछ होता आ रहा है, वाह रे हिन्दुओं।"१३१

बख्शीजी का तांगा, जब हयातबख्श के पास से गुजरा, तब हयातवख्श ने कहा कि भागते हो कायरो ! पहले इश्तआल देते हो, बाद में भागते हो।" हयातबख़्श ने विशनसिंह से कहा कि बख्शीजी तो निकल गए। अमन करवाने चले थे। यह तो खसलत है इन लोगों की।

सारा इलाका मुसलमानी है। सभी एक दूसरे का साथ ढूढ़ रहे हैं। लक्ष्मीनारायण अपने मन में विचार करने लगे कि हमें हयातबख्श का साथ लेना चाहिए। हयातवख्श साथ में होगा तो हमें डर नहीं रहेगा। हयातबख्श ने अपने मन में विचार किया कि आगे का सारा इलाका हिन्दुओं का है। अगर लक्ष्मीनारायण साथ में होगा, तो कोई परेशानी नहीं होगी।

सभी कांग्रेसवासियों के अन्दर डर समाया हुआ था, लेकिन वे अन्दर से हिम्मत बाँधे हुए आगे बढ़ते जा रहे थे। बख्शीजी का अन्दर से खून खौल रहा है कि वे संकट की स्थिति में अपना धैर्य खोते जा रहे है। वे साथियों से खीझते जा रहे हैं। जब आदमी के ऊपर चारों तरफ से विपत्ति आती है, तब उसका दिमाग काम करना बन्द कर देता है। जब आदमी के अन्दर जोश आता है, तब वह अपने को बिल्कुल भूल जाता है।

"चींलें उड़ेगी मेहताजी, शहर पर चीलें उड़ेगी ।"

मुरादअली के द्वारा नत्थू को आदेश दिए जाने पर नत्थू एक सुअर को मारकर मस्जिद के समीप फेंक देता है। जब सुअर मर गया, तब वातावरण में तनाव आ गया। शहर का कोई भी व्यक्ति अपने अन्दर से प्रसन्न नहीं था। उसे हर वक्त यही डर लगा रहता था कि कब दंगा भड़क उठे, कब मार-काट हो जाए। कांग्रेस के सदस्यों का आन्दोलन जबरदस्त जारी था। वे अंग्रेजों के खिलाफ जाने क्या-क्या नारेबाजी लगा रहे थे। जब सुअर को मस्जिद के पास पाया गया, तब जरनैल समझ गया कि यह सारा कसूर अंग्रेजों का है। अंग्रेज ही हम लोगों को लड़ाने का प्रयत्न

कर रहा है। शहर में हर साल गुरू पूर्णिमा मनाई जाती थी, जिसमें सिक्खों का जुलूस निकलता था। जब सिक्खों का जुलूस निकलता है, तब शहर में तनाव आ जाता है। मुसलमानों और सिक्खों के कोई भी जुलूस निकलते हैं तो शहर में तनाव की संभावना बनी रहती है।

मुसलमानों का जब जामामस्जिद से जुलूस निकलता है। उनके ताजिए निकलते है, लोग अपनी-अपनी छातियाँ पीटते हैं और या हुसैन बोलते हैं। वे अपनी छातियाँ पीटते-पीटते पसीने से तर हो जाते हैं। अगर किसी ने कुछ कर दिया, तब थोड़ी-सी चिंगारी दंगे का भयानक रूप ले लेती है।

खुदाबख्श नाम का एक दर्जी है। उसके पास शहर भर के कपड़े सिले जाते है। उसकी दुकान के पास ही एक पुराना मन्दिर है। मन्दिर के ऊपर एक घड़ियाल टँगा हुआ है। यह घड़ियाल सन् १८२६ में बनवाया गया है। यह खतरे की घंटी है। शहर में कोई दंगा हो जाए या कोई खतरा हो जाए तो शहर के सभी लोगों को इसको बजाकर सूचना दी जाती है। अगर ये घंटा बजा मानो शहर में कोई खतरा है। आप लोग सँभल कर रहें। उस घंटे को साफ किया जा रहा है। खुदाबख्श के मुँह से निकल पड़ा -

"या अल्लाह ! "

"शहर में फिसाद का डर है ----"

"इस घड़ियाल की आवाज़ सुनकर रूह काँप जाती है; खुदाबख्श ने कहा, "पहले फिसाद में जब बजा था तो मण्डी में आग लगी थी और शोले आधे आसमान को ढके हुए थे।"१३२

निर्धन मजदूर एक उड़ान की बेंच पर बैठे हुए हैं। वे टीन के बर्तन में खाना खा रहे हैं। तभी मजदूरों ने ढोल बजने की आवाज़ सुनी। कोई आदमी टाँगे पर बैठा ढोल बजा रहा है, जिस पर कांग्रेस का झण्डा लहरा रहा है। जरनैल ढोल पीट रहा है। उसने जब ढोल पीटना बन्द कर दिया, तब वह मुनादी करने लगा -

"वतन का फ़िक्र कर ज्यादा मुसीबत आने वाली है।

तेरी बर्बादियों के तजकरे हैं आसमानों में।।

साहिबान,

आज शाम के छः बजे गंजमण्डी में जिला कांग्रेस-कमेटी की तरफ से एक आम पब्लिक जलसा होगा जिसमें हिन्दुस्तान की आज़ादी की जद्दोजहद में अंग्रेजी सरकार की फूट की नीति का पर्दाफाश किया जाएगा और सारे शहर के अवाम से अपील की जाएगी कि वे अमन को बरकरार रखें। भारी तादाद में शामिल होकर जलसे की रौनक को बढ़ाएँ।"१३३

वहीं पर कुछ आदमी बैठे बार्तालाप कर रहे हैं। एक अधेड़ उम्र को व्यक्ति ने कहा कि वह आदमी अभी पकड़ा गया, जिसने मस्जिद के ऊपर सुअर डाला था। वह खंजार का बच्चा है। उसके हाथ पैर में कीड़े पड़ें।

नत्थू जब अपनी पत्नी के पास आराम से सो रहा था, तब उसकी पत्नी को कुछ अजीब-सी आवाज़ सुनाई देती है। पत्नी को कुछ लाल-लाल-सी रोशनी नजर आ रही है। बाहर कुत्ते भौंक रहे हैं। उसकी पत्नी यह सब देखकर घबरा जाती है। पत्नी को ऐसा लगा कि दरवाजा खोलकर देखना चाहिए कि बाहर कैसा शोर सुनाई दे रहा है।

नत्थू की पत्नी जब कार्य करने के बाद सोने कई, तब शेखों वाली घड़ी दस बजाती है। पत्नी को यह आवाज़ अटपटी-सी लग रही है। यह आवाज़ घड़ियाल की है। बाहर शोर बढ़ता हुआ नजर आ रहा है। लोग बाहर आ-आकर आग के शोले देख रहे हैं।

"मण्डी में आग लगी है।"

नत्थू की पत्नी ने जब आकर देखा, तब उसे यह आवाज़ें साफ सुनाई दे रही थी। इस आवाज़ को जब लीजा ने सुना, तब वह बहुत घबरा गई। उसने ऐसी आवाज़ें पहले कभी नहीं सुनी थी। ये आवाज़ें कभी हवा में खो जाती है, कभी उड़ाकर फिर यथा स्थान आ जाती है। लीजा को ऐसा लगा जैसे-

"तूफान में, सागर की लहरों से जूझते अपना रास्ता खोजते किसी जहाज की घण्टी बज रही हो।"१३४

लीजा ने जब रिचर्ड को जगाया। तुमने ऐसी आवाज़ सुनी। इससे मेरा दिल घबरा रहा है। वह स्थिति को समझ गई। उसको यह शोर अलग तरह का लगा -

"शहर की ओर से आनेवाला भिनभिनाता-सा शोर उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। कभी-कभी कोई आवाज़ इस भिनभिनाते शोर में से ऊपर उठ जाती, जैसे कोई किसी को बुला रहा हो फिर उसी शोर के सागर में डूब जाती। तभी अन्धकार की लहरों पर तैरती हुई एक और आवाज़ आई।"१३५

लीजा ने कहा कि यह कैसा शोर है ? शहर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच फिसाद हो गया है। उसने कहा कि क्या तुम इनके झगड़े सुलझा नहीं सकते हो? रिचर्ड ने कहा कि यह झगड़े इनके आपस के झगड़े हैं। पत्नी ने कहा कि इन झगड़ों से तुम्हें कोई खतरा तो नहीं हैं। ये लोग आपस में लड़ रहे हैं, क्या ये अच्छी बात है? रिचर्ड जानता था कि अगर हमने इनका साथ दिया तो मुझे ही खतरा हो सकता है। जलती हुई लकड़ी हम अपने ऊपर क्यों मारें? जिस डाल पर हम बैठे हैं। हम उस डाल को क्यों काटें? क्या हम मूर्ख हैं? हम शासन तभी कर पाएँगे, जब हम इन्हें आपस में लड़ाते रहें। हमारा उद्देश्य **'फूट डालो शासन करो'** की नीति का है।

"क्या यह अच्छी बात होगी कि ये लोग मिलकर मेरे खिलाफ लड़ें, मेरा खून करें ?" रिचर्ड ने कहा और करवट बदलकर एक हाथ से लीजा के बाल सहलाने लगा। "कैसा रहे अगर इस वक्त ये आवाज़ें मेरे घर के बाहर उठ रही हों, और ये लोग मेरा खून बहाने के लिए संगीनें उठाये बाहर खड़े हों ?"१३६

रिचर्ड एक अंग्रेजी डिप्टी-कमिश्नर है। वह अंग्रेज अधिकारियों का प्रतिनिधित्व करता है। उसके पास सूक्ष्य निरीक्षण दृष्टि हैं। वह भारतीय लोगों की अबोधता से पूरी तरह परिचित है। समाज में धर्म को कितना महत्व ये लोग देते हैं, यह उसे मालूम है। रिचर्ड जानता है कि हिन्दुस्तान में धर्म एक ऐसा मामला है, जिस पर चोट की जाएँ तो वहाँ के लोग हिन्दू, मुस्लिम सिक्ख तीनों ही उग्र हो जाएँगे।

रिचर्ड समाज में **'फूट डालो शासन करो'** की नीति अपनाता है और उसमें कामयाब होता है। इसी फूट पर प्रकाश डालने के लिए 'तमस' उपन्यास लिखा गया है। धर्म के नाम पर ही साम्प्रदायिक दंगे होते हैं, जिसमें सब कुछ बर्बाद हो जाता है। सभी एक दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं। बख्शी जी ने कहा- **"फिसाद करवानेवाला**

भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करनेवाला भी अंग्रेज, घरों मे बसानेवाला भी अंग्रेज---"१३७

रिचर्ड बहुत ही स्वार्थी प्रवृत्ति का है। लीजा ने रिचर्ड से कहा कि तुम इतने निर्दयी क्यों हो गए? समाज में इतने दंगे हो गए, फिर भी आपका कलेजा क्यों नहीं पसीजता है। आपका हृदय है या पत्थर है।

वास्तव में देखा जाए तो रिचर्ड के अन्दर कहीं न कहीं थोड़ी बहुत मानवीयता का गुण हैं लेकिन उसे-

"इसमें कोई विशेष बात नहीं है, लीजा, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है। हम यदि हर घटना के प्रति भावुक होने लगें तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पाएगा।"

"यदि १०३ गाँव जल जाएँ तो भी नहीं?"

"तो भी नहीं," रिचर्ड ने तनिक रूककर कहा, " यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।"१३८

रिचर्ड के अन्दर थोड़ी बहुत संवेदना थी, लेकिन उसे प्रशासन के पद ने तटस्थ बना दिया था। जैसाकि उनके कथन से ही स्पष्ट है रिचर्ड ने आगे कहा भी है कि अगर मेरे देश के लोग होते तो मैं इनके बारें में स्वयं सोचता । ये लोग मेरे देश के नहीं हैं, इसलिए हमें इनसे कोई लगाव नहीं है।

हिन्दुस्तान में धर्म एक ऐसा मामला है जिस पर चोट की जाए तो अलग-अलग धर्मो के लोग आपस में लड़ने के लिए आमादा हो जाएँगे, क्योंकि हर व्यक्ति अपने घर्म से प्रेम करता है। किसी का धर्म गुरूद्वारा है, तो किसी का अल्लाह आदि। अपने महापुरूषों का अगर हम इतिहास देखें; तो सिक्ख सम्प्रदाय में ही कई नन्हे बालकों ने अपने धर्म की खातिर अपने प्राण तक तज दिए, लेकिन अपने धर्म को नहीं छोड़ा। ६ दिसम्बर १९९२ का अयोध्याकांड मन्दिर मस्जिद विवाद इसका जीता जागता उदाहरण है, जो आज तक विवादों के कटघरे में पड़ा हुआ है। ऐसा ही एक परिदृश्य यहाँ दर्शाया गया है।

मोटे कसाई का बड़ा लड़का गुरूद्वारे में आग लगाने जा रहा है। वह छिपकर गुरूद्वारे के पिछवाड़े में पहुँच जाता है। वह गुरूद्वारे की खिड़कियों में आग लगाने को ही होता है कि उसे घरघराने की खूब तेज आवाज़ सुनाई दी। वह अपने मन में यह विचार करता है कि यह आवाज़ कहाँ से आ रही है। कसाई का बेटा देखता है कि अंग्रेज हवाई जहाज से हाथ हिला-हिलाकर अभिवादन कर रहे हैं और मुस्कराकर कह रहे हैं कि कहीं कुछ नहीं होगा। अब कोई आग नहीं लगाएगा, न ही कोई बन्दूक चलाएगा -

"मोटे कसाई के बेटे ने, जिसने गुरूद्वारे की खिड़कियों पर तेल छिड़क दिया था और बस दियासलाई लगाने की ही देर थी, अपने हाथ खींच लिये। लोग मुँह बाए हवाई जहाज की ओर देखते जा रहे थे।"१३९

कसाई यह आग जानबूझकर नहीं लगा रहा था। कई लोगों ने उसे उक्सा दिया था। उस कसाई के अन्दर कहीं मानवीय गुण छिपा हुआ था तो वह मुसलमान सिक्खों के गुरूद्वारे में आग लगाने जा रहा था। कहीं न कहीं उसके अन्दर दया, दूसरे धर्म के प्रति लगाव था, जिससे उसने जब अंग्रेजों की बात को सुना कि कहीं पर भी दंगा नहीं होगा,

तो उसने आग लगाने का विचार छोड़ दिया और वह जहाँ से आया था; वहाँ चला गया।

भीष्मसाहनी की अनेक कहानी में भी साम्प्रदायिक विद्वेष कई स्थानों पर व्यक्त हुआ है।

कहानी में -

'अमृतसर आ गया है' -

जब देश स्वतंत्र हो चुका था। देश के दो टुकड़े हो गए थे। एक भारत और पाकिस्तान। भारत एक सुसम्पन्न राष्ट्र था। भारत में हिन्दू और मुसलमान, सिक्ख, ईसाई सभी रहते थे। भारत में हिन्दुओं की संख्या अधिक थी। मुसलमान लोग कम थे। देश का बँटवारा होने से सभी लोग अपने-अपने देश भागने लगे। किसी को यह समझ में नहीं आ रहा था कि हम कहाँ जाए? भारतीयों में एक जोश यह था कि हमारा भारत स्वतंत्र हो चुका है। पाकिस्तान अलग हो गया है।

शरणार्थी अपना घर बार छोड़कर अपने लिए ठौर ठिकाना ढूड़ रहे थे। लोग तरह-तरह की कल्पनाएँ कर रहे थे। अब भारत का विभाजन हो गया है। अब आगे क्या हागा? उनकी सीट के सामने जो सरदार जी बैठे थे। वे उनसे पूछ रहे थे कि -

"पाकिस्तान बन जाने पर जिन्ना साहिब बम्बई में ही रहेंगे या पाकिस्तान में जाकर बस जाएँगे, और मेरा हर बार यही जवाब होता- बम्बई क्यों छोड़ेंगे, पाकिस्तान में आते-जाते रहेंगे, बम्बई छोड़ देने में क्या तुक है।"१४०

सभी शरणार्थी यह जानने का प्रयास कर रहे थे कि कौन-सा शहर किस देश में आएगा? लाहौर और गुरदासपुर कौन से देश में आएँगे? जब लोग अपना-अपना घर छोड़कर जा रहे थे, तब अन्य लोग उनका मजाक उड़ा रहे थे। जिसने अपना घर छोड़ दिया हो और वे बेसहारा हो। यह कौन जान सकता था? कभी-कभी बेसहारा लोगों का सन्तुलन भी खो जाता है। इधर-उधर भटकने के कारण वे यह फैंसला नहीं कर पा रहे थे कि क्या सही है क्या गलत है ? जगह-जगह दंगे हो रहे थे। सभी जगह खून खराबा छाया हुआ था। साम्प्रदायिकता भड़क उठी थी। सभी लोग एक तरह से खून के प्यासे थे। सभी अपनी-अपनी हुकूमत चला रहे थे। लोगों का यह विश्वास था कि भारत के आज़ाद होने पर दंगे अपने आप बन्द हो जाएँगे, लेकिन यह दंगे बन्द होने का नाम ही नहीं ले रहे थे।

"वातावरण के इस झुटपुटे में आज़ादी की सुनहरी धूल-सी उड़ रही थी और साथ-ही-साथ अनिश्चय भी डोल रहा था और इसी अनिश्चय की स्थिति में किसी-किसी वक्त भावी रिश्तों की रूपरेखा झलक दे जाती थी।"१४१

गाड़ी जब धीरे-धीरे आगे बढ़ती जा रही थी। बजीराबाद शहर आ गया था। गाड़ी वहाँ पर थोड़ी देर के लिए रूकी गाड़ी के दूसरे डब्बे में से एक आदमी नल पर पानी भरने के लिए गया। उस आदमी ने पानी भरा और वह भागकर अपने डब्बे की और लौट आया। उस आदमी के अन्दर डर समाया हुआ था। उसे ऐसा लग रहा था। उसने वहाँ कुछ देखा है। जिस ढंग से वह भागा। उसने अपने आप ही सब कुछ बता दिया था। जगह-जगह दंगे मचे हुए

थे। हर जगह साम्प्रदायिक विद्वेष छाया हुआ था। जब वह गाड़ी में बैठा, तब वह वहाँ की स्थिति को देख रहा था। नल के पास तीन-चार आदमी खड़े हुए थे। वे इधर-उधर देख रहे थे। कुछ ही समय में वे आदमी वहाँ से भाग गए और प्लेटफार्म खाली हो गया। वे उस समय की स्थिति अपने आँखों से देख रहे थे। सभी जगह दंगा फसाद मचा हुआ था। आतंकवादियों का बोलबाला था। कहीं कुछ था, लेकिन क्या था, कोई भी स्पष्ट नहीं जानता था।? वह आदमी अनेकों दंगे देख चुका था, इसलिए वातावरण में होने वाली छोटी-सी तब्दीली को भी भाँप गया था। भागते व्यक्ति खटाक से बन्द होते दरवाज़े घरों की छतों पर खड़े लोग चुप्पी और सन्नाटा सभी दंगों के चिह्न थे।

जब बाहर के मुसाफिर डब्बे के अन्दर घुसने का प्रयत्न कर रहे थे। अन्दर के डब्बे पूरी तरह से भर चुके थे। लोग अन्दर से धक्का देकर मुसाफिरों का सामान बाहर फेंक रहे थे। जब गाड़ी प्लेटफार्म को लांघती हुई आगे बढ़ गई और शहर पीछे छूट गया।

"तभी शहर की ओर से उठते धुएँ के बादल और उनमें लपलपाती आग के शोले नज़र आने लगे थे।

- दंगा हुआ है। स्टेशन पर भी लोग भाग रहे थे। कहीं दंगा हुआ है।

शहर में आग लगी थी। बात डब्बे-भरके मुसाफिरों को पता चल गई और वे लपक-लपककर खिड़कियों में से आग का दृश्य देखने लगे।"१४२

गाड़ी धीमे-धीमे सरकती जा रही थी। जब गाड़ी कहीं पर रूकी, तब एक आदमी सभी को पानी पिला रहा था। बच्चे औरतों खिड़की में से हाथ निकाल निकालकर पानी पी रहे थे।

"बहुत मार-काट हुई है, बहुत लोग मरे हैं। लगता या, वह इस मार-काट में अकेला पुण्य कमाने चला आया है।"१४३

बाबू अपनी सीट पर से उतरकर नीचे लेट गया । एक पठान ने कहा -

"तुम मर्द ए कि औरत ए ? सीट पर से उठकर नीचे लेटता ए। तुम मर्द के नाम को बदनाम करता ए।"१४४

वह फर्श से उठकर सीट पर बैठ गया; शायद उसे डर था कि -

"बाहर से गाड़ी पर पथराव होगा या गोली चलेगी; शायद इसी कारण खिड़कियों के पल्ले चढ़ाए जा रहे थे।"१४५

रात का समय था। सभी लोग सो रहे थे। पठान लोग निश्चिंत बैठे थे। आकाश में चाँद निकल आया था। गाड़ी में बैठे लोगों को आग के शोले नज़र आ रहे थे, कहीं कोई नगर जल रहा था। कहीं पथराव नजर आ रहा था। गाड़ी मे बैठे लोग घबरा रहे थे। लोग डर के मारे व्याकुल हो रहे थे। गाड़ी मे बैठे लोगों को भूख, प्यास लगती, लेकिन वे बाहर नहीं निकल रहे थे।

उस गाड़ी में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, सफर कर रहे थे। गाड़ी में इतनी भीड़ थी कि लोगों का खड़ा होना भी मुश्किल हो रहा था। एक आदमी अपनी पत्नी व लड़की को लेकर जब जबरदस्ती गाड़ी में घुस आते है, तब पठान

अपनी लात आदमी पर मारता है। वह लात आदमी पर न लगकर उसकी औरत पर लगती है। वह औरत चुपचाप बैठ जाती है। औरत जहाँ बैठी थी। बाबू ने उस समय कुछ नहीं कहा । जब अमृतसर आ गया, तब बाबू ने पठान को खुब गाली दी और उसे पीटने लगा एवं पठान से कहा - **" नीचे उतर, तेरी मैं ---- हिन्दू औरत को लात मारता है, हरामजादे, तेरी उस -------।"१४६**

पठान ऊपर से नीचे तक काँप गया। वह घबरा गया। पठान ने कहा कि मुझे गाली मत दो। मैं तुम्हारी जबान खींच लूँगा। सरदार कहने लगा कि यह लड़ने का स्थान नहीं है। आराम से बैठो। थोड़ी ही देर में पूरा सफर कट जाएगा।

"तेरी मैं लात न तोड़ूँ तो कहना, गाड़ी तेरे बाप की है? बाबू चिल्लाया।

-ओ अमने क्या बोला। सभी लोग उसको निकालता था, अमने भी निकाला। ये इदर अमको गाली देता ए। अम इसका जबान खींच लेगा। बुढ़िया बीच में फिर बोल उठी- वे जीण जोगयो, अराम नाल बैठो। रे रब्ब दियो बंदयो, कुज होश करो।"१४७

पठान के होंठ फड़फड़ा रहे थे। मुँह की मुस्कराहट भी चली गई थी। बाबू चिल्लाए जा रहा था -

"अपने घर में शेर बनता था। अब बोल, तेरी मैं उस पठान बनानेवाले की----।"१४८

साम्प्रदायिक विद्वेष जिधर देखो वहाँ नजर आ रही थी। कहीं किसी रूप में तो कही किसी रूप में। लोग अपनी-अपनी जान बचाने में लगे हुए थे। वे किसी से कोई चीज की मना करते। भाई ऐसा न करो। वह जब न माने और करें, तब वह साम्प्रदायिक विद्वेष का रूप ले लेती थी। जब बाबू सो रहा था, तब उसे कहीं से खरोंचने की आवाज़ सुनाई दी। बाबू की नींद टूटी। उसने दरवाजे के पास जाकर देखा कि आदमी गाड़ी पर चढ़ने की कोशिश कर रहा है -

"वह आदमी हाँफ रहा था-खुदा के लिए दरवाजा खोलो। मेरे साथ में औरत जात है। गाड़ी निकल जाएगी।"१४६

बाबू ने मना किया कि गाड़ी में जगह नहीं है। जब उसने बहुत विनती की, तब बाबू ने दरवाजा खोल दिया। बाबू ने छड़ उसके सिर में दे मारी - **"तभी सहसा उसके चेहरे पर लहू की दो-तीन धारें एक साथ फूट पड़ीं। झुरमुटे में मुझे उसके खुले होंठ और चमकते दाँत नजर आए। वह दो-एक बार 'या अल्लाह!' वुदवुदाया फिर उसके पैर खड़खड़ा गए। उसकी आँखों ने बाबू की ओर देखा, अधमुँदी-सी आँखें, जो धीरे-धीरे सिकुड़ती जा रही थीं, मानो उसे पहचानने की कोशिश कर रही हों कि वह कौन है और उससे किस अदावत का बदला ले रहा है।"१५०**

"तभी सहसा डंडहरे पर से उस आदमी के दोनों हाथ छूट गए और वह कटे पेड़ की भाँति नीचे जा गिरा और उसके गिरते ही औरत ने भागना बन्द कर दिया, मानो दोनों का सफर एक साथ ही खत्म हो गया है।"१५१

इस प्रकार से भीष्मसाहनी ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से अपने युग के साम्प्रदायिक सद्भाव एवं

विद्वेष की स्थिति को बड़े सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है।

(ड) संवेदन हीन अंग्रेजों के प्रति भारतीयों की भावनाएँ -

अंग्रेजों का दंगा कराने में सबसे बड़ा हाथ था। इन्हीं दंगों के कारण साम्प्रदायिकता की लहर बढ़ती ही गयी। भारत की सत्ता अंग्रेजों के हाथ में थी। अंग्रेज चाहते तो साम्प्रदायिक दंगे को रोक सकते थे, लेकिन दंगे जब ज्यादा बढ़ गये तब लोगों का काफी नुकसान हुआ। जब अंग्रेजों ने दंगा बन्द करवाया, तब चारों ओर शान्ति छा गई। इस शान्ति से कुछ लोग खुश थे, कुछ लोग खुश नहीं थे। जब रिचर्ड शहर में लोगों की मदद करते है, तब वह आमजनता से अपील करते कि आप लोग कुछ हमारी मदद करें। बाहर से सभी लोगों ने कहा कि हम तुम्हारी मदद करेंगे, लेकिन अन्दर से सभी के खून खौल रहे थे।

"रिफ्यूजी कैम्पों में हम चाहेंगे कि पब्लिक संस्थाएँ सरकार को सहयोग दें। राशन की सप्लाई का इन्तजाम कर दिया गया है, टेण्ट लगा दिये गये हैं। हमें कुछ डॉक्टरों की जरूरत होगी, बहुत-से-वालण्टियरों की भी जो रिफ्यूजियों की देखभाल में मदद दे सकें। ------।"१५२

मीटिंग जब शुरू हुई तब रिचर्ड अपनी बात कहकर चला गया। मनोहरलाल नाम का एक आदमी भड़क उठा और कहने लगा -

"यहाँ सभी टोडी इकट्ठे हुए हैं, सरकार की चापलूसी करनेवाले। हम किसी से डरते नहीं हैं, साफ बात मुँह पर कहते हैं। इन फिसादों के लिए जिम्मेदार कौन है? सरकार उस वक्त कहाँ थी जब शहर में तनाव बढ़ रहा था, अब कर्फ्यू लगाया गया है, उस वक्त क्यों नहीं लगाया गया ? उस वक्त साहब बहादुर कहाँ थे? हम किसी से डरते नहीं हैं, साफ बात मुँह पर कहते हैं----।"१५३

बख्शीजी ने कहा कि तुम्हें इन लोगों की आलोचना करने से क्या मिलेगा? मनोहरलाल ने कहा कि आप ऐसी बातें कर रहे हैं। आप ही जाइए चरखा काटिए और गलियाँ साफ कीजिए। सियासत आपके वश का रोग नहीं है। बख्शी जी ने कहा कि क्या मैं नहीं जानता हूँ कि फिसाद करनेवाला अंग्रेज है। हमने शान्ति बनाए रखने के लिए क्या नहीं किया? डिप्टी कमिश्नर के पास गए और कहा कि फौज बैठाओ और फिसाद को रोको जो हमसे हो सकता था, हमने किया। एक आदमी ने दूसरे आदमी से कहा कि छोड़ो यार, हमने बहुत देखे हैं। यहाँ सब तोते बैठे हैं। गाँधी जी वर्धा में बैठे हुक्म देते है तो यहाँ उस पर अमन होने लगता है, लेकिन खुद वह कुछ नहीं सोच सकते।

इन बातों का बख्शी जी पर काफी असर हो रहा था। वह अन्दर से बहुत खिन्न हो गए थे। उनके समझ में यह नहीं आ रहा था कि हमें क्या करना चाहिए? वह अन्दर ही अन्दर कुढ़ता रहता था। बख्शी जी ने कहा भी है,

"फिसाद करवानेवाला भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करनेवाला भी अंग्रेज, घरों मे बसानेवाला भी अंग्रेज---।"१५४

बख्शी जी को इतनी बात खल रही थी कि अंग्रेज दिमाग का कितना तेज है। मुट्ठी भर लोग और इतने बड़े भारत पर शासन कर रहे है। बख्शी जी ने कहा -

"अंग्रेज फिर बाजी ले गया।' पर शुरू से आखीर तक स्थिति उनके काबू में नहीं आई।"१५५

(ढ़) अंग्रेजों की भारत के प्रति दुर्भावनाएँ -

रिचर्ड जानते हैं कि हिन्दुस्तान में धर्म एक ऐसा मामला है, जिस पर चोट की जाएँ तो हिन्दू-मुस्लिम दोनों उग्र हो जाएँगे। रिचर्ड अपने इस मंसूबे में सफल हो जाते हैं। हिन्दु, मुसलमान और सिक्ख धर्म के कारण आपस में लड़ रहे हैं। उन्हें यह पता नहीं है कि कसूर इनका नहीं है, लेकिन अंग्रेज मजा लूट रहे हैं।

'तमस' उपन्यास में साहनीजी ने विभाजन के मूल कारणों को ढूँढ़ने का प्रयास किया है। भारत-पाकिस्तान विभाजन के पूर्व कई जगह भयानक दंगे हुए हैं। जिनमें इतनी भीषण हत्यायें हुई, जिससे समाज क्षत-विक्षत हो गया। इन दंगों ने गाँवो, कस्बों को भी अपने में समेट लिया था। मारकाट, आगजनी, घृणा, क्रोध, प्रतिशोध से समाज क्षत विक्षत हो गया, जिससे साम्प्रदायिकता रूप 'तमस' ने जन्म लिया।

भीष्मजी ने अपनी यादें बताते हुए कहा है कि सन् १९२६ में पहला दंगा हुआ था। उन दिनों भी दंगा करवाना हाकिमों के लिए कोई मुश्किल नहीं हुआ करता था। पुलिस के घर ऑफसरों द्वारा दंगे करवा दिए जाते थे। अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर नर का छोटा-सा इशारा काफी हुआ करता था और दंगा भड़क उठता था।

अंग्रेजों ने जब दंगे को रूकवा दिया और सभी जगह शान्ति छा गई, तब रिचर्ड लीजा को घुमाने के लिए ले जाना चाहता था। रिचर्ड ने कहा कि १०३ गाँव जल चुके हैं। एक गाँव में एक कुँआ है, जिसमें स्त्रियों और बच्चों की लाशें पड़ी हैं उसमे दवाई डलवानी है। वातावरण में अब शान्ति छा गई है। तुम भी वहाँ चलो तुम्हें वहाँ लार्क पक्षी की आवाज़ सुनने को मिलेगी। लीजा ने कहा -

"तुम कैसे जीव हो रिचर्ड, ऐसे स्थानों पर भी तुम नये-नये पक्षी देख सकते हो, लार्क पक्षी की आवाज़ सुन सकते हो ?"

इसमें कोई विशेष बात नहीं है, लीजा, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है। हम यदि घर घटना के प्रति भावुक होने लगें तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पायेगा।

"यदि १०३ गाँव जल जायें तो भी नहीं ?"

"तो भी नहीं," रिचर्ड ने तनिक रूककर कहा - "यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।"१५६

रिचर्ड या अंग्रेजी हुकूमत किस मिट्टी की बनी है, जिसमें संवेदना नाम की कोई चीज नहीं है। वह एक शासक है। निर्मम हत्यारा और सबसे बड़ा प्रतिनायक जिसमें सुकून मिलता है। इंसानी रिश्ते को तोड़ने में खून-खराबा कराने में एक और देखने में, किन्तु अंग्रेजी हुकूमत का एक सफल किरदार है, जिस पर उसकी हुकूमत गर्व कर सकती है।

संदर्भ संकेत-

१. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ०प्र० लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो० एम०एल० गुप्ता एवं डॉ० डी०डी० शर्मा, पृ०सं० २५२

२. वही, पृ०सं० २५२

३. वही, पृ०सं० २५२

४. वही, पृ०सं० २५४

५. वही, पृ०सं० २५४

६. वही, पृ०सं० २५४

७. वही, पृ०सं० २५४

८. वही, पृ०सं० २५४

९. वही, पृ०सं० २५४

१०. वही, पृ०सं० २५४

११. वही, पृ०सं० २५४

१२. वही, पृ०सं० २५६

१३. वही, पृ०सं० २५६

१४. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ०प्र० लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो० एम०एल० गुप्ता एवं डी०डी० शर्मा, पृ०सं० २५६

१५. हिन्दू-संस्कृति-अंक, श्री नीरजाकान्त चौधरी देवशर्मा, पृ०सं० २१९

१६. वही, पृ०सं० २२२

१७. वही, पृ०सं० २२३

१८. हिन्दू साहित्य में दलित चेतना, डॉ० आनन्द वास्कर, पृ०सं० २१

१९. हरिजन सेवक, २३.२.१९३४

२०. भक्तिकालीन हिन्दी कविता को मुस्लिम कवियों का योगदान, शाइंस्ता खान, पृ०सं० १०

२१. वही, पृ०सं० १०

२२. भक्तिकालीन हिन्दी कविता को मुस्लिम कवियों का योगदान, शाइंस्ता खान, पृ०सं० १०

२३. रश्मिलोक, रामधारी सिंह दिनकर, पृ० सं० ५१

२४. इण्टरमीडिएट हिन्दी नवनीत, डॉ० रामस्वरुप त्रिपाठी, पृ०सं० ९५

२५. डॉ० अम्बेडकर बाबा साहब के विचार। 'सारिका' सम्पादकीय। उन्होंने कहा था सं० कमलेश्वर/ अप्रैल १९७५/ पृ० सं० ११

२६. प्रा० पाटगावंकर चन्द्रकान्त। डॉ० आम्बेडकर खास अंक-१९७६-७७ सं० रमेश ढावरे/आनन्द वास्कर/कोल्हापुर/

पृ० सं० ५४

२७. चित्रा न्यूकोर्स हिन्दी सौरभ, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल, पृ०सं० ३६६

२८. वौद्ध संस्कृति, डॉ० अँगनेवाला, पृ०सं० ४३

२६. हिन्दी साहित्य में दलित चेतना, डॉ० आनन्द वास्कर पु० सं० ४६

३०. नरेश मेहता, समय-देवता, मेरा समर्पित एक रात, पृ० स० ७७

३१. मधुशाला, हरिवंशराय वच्चन, छन्द सं० ५०

३२. वच्चन, मधुशाला (५७) पृ० ५५

३३. भगवती चरण वर्मा/ हिन्दू/मधुकण। पृ० ५३

३४. नरेन्द्र शर्मा/ हत्यारा/ रक्त चन्दन। पृ० ३२

३५. नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृ० ३१

३६. गिरिजाकुमार माधुर, पूरव की किरण, धूप के धान, पृ० ८१

३७. इण्टरमीडिएट हिन्दी नवनीत, डॉ० रामस्वरुप त्रिपाठी, पृ०सं० १२

३८. सर्वमत निश्चित सिद्धान्त सूत्रावली, भक्तियोगी श्री वासुदेवानन्द जी भाई बन्धु, पृ०सं० ४०

३६. वैदिक सूत्र रत्नावली, डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी, पृ० सं० ७४

४०. कविरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ. सं० २७

४१. वही, पृ. सं० २७

४२. वही, पृ. सं० २६

४३. वही, पृ. सं० ३०

४४. कविरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ. सं० ३३

४५. वही, पृ. सं० ३७

४६. वही, पृ. सं० ४७

४७. वही, पृ. सं० ५३

४८. वही, पृ. सं० ६१

४६. वही, पृ. सं० ६३

५०. पटरियाँ, भीष्मसाहनी, पृ० सं० २६

५१. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ०प्र० लोक सेवा आयोग समाज शास्त्र, प्रो० एम०एल० गुप्ता एवं डी०डी० शर्मा, पृ०

३५७

५२. वही, पृ० ३५७

५३. वही, पृ० ३५७

५४. प्रभा दीक्षित, साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक सन्दर्भ बम्बई, मेकमिलन, १६८०, पृ० ४८

५५. कर्णसिंह सामरा, साम्प्रदायिक सद्भाव एवं राजनीतिक चेतना, जयपुर प्रिन्टवेल, १६६२, पृ० ४४

५६. आधुनिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना, गोपाल प्रसाद मुद्गल, मोतीलाल विजयवर्गीय, निर्मल वर्मा, पृ०सं० २६६

५७. एक्सीलेंट न्यूकोर्स इण्टरमीडिएट हिन्दी प्रभा, महेश प्रसाद शर्मा एवं प्रेमचन्द्र अग्रवाल, पृ०सं०७३७

५८. सबला, (दिसम्बर, २००२, मार्च, २००३) अमन एकता मंच'- खुर्शीद अनवर, ४५

५६. चित्रा न्यूकोर्स हिन्दी सौरभ, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल, पृ०सं० ३७६

६०. सबला, (दिसम्बर, २००२ - मार्च, २००३) 'हर वाशिन्दे के नाम'- आभा मैया, पृ०सं० २

६१. सबला, (दिसम्बर, २००२ - मार्च, २००३) 'पहले खुद से ही करें'- जुही, पृ०सं० ४८

६२. सबला, (दिसम्बर, २००२ - मार्च, २००३) 'मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना'- चित्रा पंच कर्ण, पृ०सं० १६

६३. चित्रा न्यूकोर्स हिन्दी सौरभ, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल, पृ०सं० ३६०

६४. वही, पृ०सं० ३६१

६५. वही, पृ०सं० ३७८

६६. वही, पृ०सं० ३७६

६७. वही, पृ०सं० ३७०

६८. वही, पृ०सं० ३७६

६६. आधुनिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना, गोपाल प्रसाद मुद्गल, मोतीलाल विजयवर्गीय एवं निर्मल वर्मा, पृ०सं० २८६

७०. प्रतियोगिता साहित्य श्रृंखला उ०प्र० लोक सेवा आयोग समाजशास्त्र, प्रो० एम०एल० गुप्ता एवं डॉ० डी०डी० शर्मा, पृ०सं० २४६

७१. वही, पृ०सं० २४७

७२. वही, पृ०सं० २४७

७३. वही, पृ०सं० २४७

७४. वही, पृ०सं० २५०

७५. साम्प्रदायिकता : क्या सच? क्या झूठ, पृ०सं० १४

७६. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० ५८

७७. वही, पृ०सं० ५६

७८. वही, पृ०सं० ६३

७६. वही, पृ०सं० ७६

८०. वही, पृ०सं० ७६

८१. वही, पृ०सं० ७७

८२. वही, पृ०सं० ७८

८३. वही, पृ०सं० ७८

८४. वही, पृ०सं० ७६

८५. वही, पृ०सं० ८४-८५

८६. वही, पृ०सं० ८५

८७. वही, पृ०सं० १६२

८८. वही, पृ०सं० १६२

८६. वही, पृ०सं० २२६

६०. वही, पृ०सं० २२७

६१. वही, पृ०सं० २५०

६२. वही, पृ०सं० २५१

६३. वही, पृ०सं० २५१

६४. वही, पृ०सं० २५५

६५. वही, पृ०सं० २५६

६६. वही, पृ०सं० २५६

६७. वही, पृ०सं० २५८

६८. वही, पृ०सं० २५६

६६. वही, पृ०सं० २२१

१००. नीलू नीलिमा नीलोफ़र, भीष्म साहनी, पृ०सं० ८

१०१. वही, पृ०सं० १६

१०२. वही, पृ०सं० २२

१०३. वही, पृ०सं० २२

१०४. वही, पृ०सं० २२

१०५. वही, पृ०सं० २४

१०६. वही, पृ०सं० ३६

१०७. वही, पृ०सं० ३६

१०८. वही, पृ०सं० ७६

१०६. वही, पृ०सं० ७६

११०. वही, पृ०सं० ७६

१११. वही, पृ०सं० ८०

११२. वही, पृ०सं० ८१

११३. वही, पृ०सं० ८२

११४. वही, पृ०सं० ८२

११५. पाली, भीष्म साहनी, पृ०सं० ४८

११६. वही, पृ०सं० ४८

११७. वही, पृ०सं० ४६

११८. वही, पृ०सं० ५०

११९. वही, पृ०सं० ५३

१२०. वही, पृ०सं० ५४

१२१. वही, पृ०सं० ५५

१२२. वही, पृ०सं० ५६

१२३. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, पृ०सं० ८४

१२४. वही, पृ०सं० ९१

१२५. वही, पृ०सं० ९३

१२६. प्रभा दीक्षित, साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ बम्बई, मेकमिलन, १९८०, पृ०सं० ४८

१२७. कर्णसिंह सामरा, साम्प्रदायिक सद्भाव एवं राजनीतिक चेतना, जयपुर फिन्टवेल, १९९२, पृ०सं० ४४

१२८. आज के अतीत, भीष्म साहनी, पृ०सं०२२५

१२९. तमस, भीष्म साहनी, पृ०सं० ५६

१३०. वही, पृ०सं० ७६

१३१. वही, पृ०सं० ८१

१३२. वही, पृ०सं० ९४-९५

१३३. वही, पृ०सं० १००-१०१

१३४. वही, पृ०सं० ११३

१३५. वही, पृ०सं० ११४

१३६. वही, पृ०सं० ११५

१३७. वही, पृ०सं० २२८

१३८. वही, पृ०सं० २३३

१३९. वही, पृ०सं० २२१

१४०. पटरियाँ, भीष्म साहनी, पृ०सं० २२

१४१. वही, पृ०सं० २२

१४२. वही, पृ०सं० २६

१४३. वही, पृ०सं० २७

१४४. वही, पृ०सं० २७

१४५. वही, पृ०सं० २८

१४६. वही, पृ०सं० २६

१४७. वही, पृ०सं० ३०

१४८. वही, पृ०सं० ३०

१४६. वही, पृ०सं० ३२

१५०. वही, पृ०सं० ३३

१५१. वही, पृ०सं० ३४

१५२. तमस, भीष्म साहनी, पृ०सं० २२६

१५३. वही, पृ०सं० २२७

१५४. वही, पृ०सं० २२८

१५५. वही, पृ०सं० २२८

१५६. वही, पृ०सं० २३३

● संदर्भ संकेत

अध्याय - ६

हिन्दी जगत को भीष्म साहनी का योगदान

हिन्दी जगत को भीष्म साहनी का योगदान -

भीष्मसाहनी हिन्दी साहित्य की प्रगतिशील परम्परा के प्रतिभावान लेखक हैं। वे एक निर्भीक एवं साहसी साहित्यकार हैं। वे जहाँ एक तरफ प्रतिष्ठित और सफल स्थापित लेखक हैं, वहीं रंगमंच के जमे हुए कलाकार भी हैं। उनकी जिन्दगी लगातार आदान-प्रदान का विषय रही है।

वे एक मानववादी लेखक हैं। उन्होंने मानव को मानव के साथ जोड़ने की कोशिश की है। मानव कल्याण की कामना से युक्त उनका साहित्य है। कबीर एवं प्रेमचंद की मानवतावादी विचारधारा का उन पर विशेष प्रभाव पड़ा है। भारत के नगरों और महानगरों में रहनेवाला मध्यवर्ग उनकी कथा का केन्द्र है। उनके साहित्य में उदात्तता तथा भारतीय जनता की आज़ादी के यथार्थ जीवन सिद्धान्तों का, समाज के भीतर चलने वाले संघर्षों का मार्मिक चित्रण देखने को मिलता है। साहित्यकार और विचारक के रुप में उनका स्थान उल्लेखनीय है। उनके साहित्य में सामन्तवाद, पूँजीवाद, वर्णभेद, धर्माडम्बर, मध्यवर्ग, नारी संचेतना, शोषित एवं आर्थिक, शोषक वर्ग की संस्कृति का चित्रण मिलता है। अपने युग के साम्प्रदायिक परिवेश का उद्घाटन उन्होंने यथार्थ रुप से किया है। उन्होंने अपने साहित्य पर एक ओर सामाजिक जीवन की यथार्थता को प्रभावी बना दिया है, तो दूसरी ओर क्रान्ति और मुक्ति की सक्रिय निरन्तर प्रक्रिया को उद्घाटित किया है। राष्ट्र की उन्नति के लिए भावात्मक एकता की कामना उन्होंने अपने साहित्य में की है। उन्होंने समाज में व्याप्त अंह धर्माभिमान, द्वेष, मत्सर का चित्रण कर हमारी कमियों की ओर संकेत करते हुए हमें मानवीय दृष्टिकोण के लिए प्रेरणा दी है।

धर्म के नाम पर कौन-कौन सी शक्तियाँ अपना मुनाफा पा लेती हैं? सामुदायिक हत्या क्यों की जाती है? हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई भाई-भाई बनकर क्यों नहीं रह पाते? साम्राज्यवाद की साजिशें क्या हैं? इनके कथा संदर्भ में क्रमशः खुल जाते हैं।

हिन्दी कथा साहित्य में उपन्यास साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास कथा साहित्य का विस्तृत फलक है जिसके माध्यम से मानव-जीवन की विस्तार पूर्वक व्याख्या की जा सकती है। उन्होंने सात उपन्यास लिखे हैं। उनके उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों के परिदृश्य देखने को मिलते हैं। उनका 'तमस' उपन्यास हिन्दी जगत का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। इस पर उनको **सन् १९७५ में साहित्य अकादमी** पुरस्कार प्राप्त हुआ।

चूँकि भीष्म साहनी का उत्कृष्ट साहित्य पहले प्रेमचन्द के नजदीक से गुजरता है, उसके बाद यशपाल के पास आकर उनके समानान्तर चलने लगता है। उन जैसे समर्थ साहित्यकार ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण कर न केवल अपनी सर्वोत्कृष्ट बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया, बल्कि उनका आगमन हिन्दी साहित्य जंगत के लिए नवीन प्रकाश पुंज के ज्ञान का द्योतक है। देश की आज़ादी के लिए प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप में संघर्षरत भीष्म जी भारत-पाक-विभाजन के बाद एक लंबी यात्रा करते हुए जव दिल्ली में रहने लगे, तो साहित्य-सृजन में अनवरत संलग्न हो गए।

साहित्य युग का प्रतिबिंब होता है। किसी भी भाषा के साहित्य से उस देश की प्रवृत्तियाँ, परिस्थितियाँ तथा

मान्यताएँ सहज ही जानी जा सकती हैं। भीष्म जी का साहित्य, साहित्यकार के अन्तर्मन का वह दर्पण है, जिसमें उसके सभी सिद्धान्त और मान्यताएँ, उसकी आशाएँ, आकांक्षाएँ सहज ही प्रतिबिंबित हो उठी हैं।

भीष्म साहनी का कलाकार जिस दृष्टिकोण से समाज़ के अंगों - प्रत्यंगों को देखता है। उसी दृष्टिकोण से वह अपने विचारों को आम जनता में प्रस्तुत करता है। यद्यपि उनके कुछ सिद्धान्त व मान्यताएँ हैं, जिनके द्वारा वे नवीन संदेश देना चाहते हैं।

आदिकाल में जो साहित्य लिखा गया, वह राजाओं व महाराजाओं को प्रसन्न रखने के लिए लिखा गया, जिसे साहित्येतिहासकारों ने इस साहित्य को लोकमंगल का साधन नहीं माना। प्रेमचंद जी ने दलित, पीड़ित, शोषित, कुचले हुए, कमजोर तथा निम्नवर्ग के मानव की पीड़ा का अनुभव किया और कहा - **"आज साहित्यकार को जीवन में साहित्य रचना करनी होगी। आज हमारी साहित्यिक रुचि बड़ी तेजी से बदल रही है। अब साहित्य केवल मनबहलाव की चीज नहीं है। मनोरंजन के सिवा उसका और भी कुछ उद्देश्य है। अब वह स्फूर्ति या प्रेरणा के लिए अद्‌भुत आश्चर्य जनक घटनाएँ नहीं ढूँढ़ता और न अनु प्रास का अन्वेषण करता है, किन्तु उसे उन प्रश्नों से दिलचस्पी है जिससे समाज या व्यक्ति प्रभावित होते हैं। उसकी उत्कृष्टता की वर्तमान कसौटी अनुभूति वह तीव्रता है, जिससे हमारे भावों और विचारों में गति पैदा करता है।"**[१] राजकवि मैथली शरण गुप्त ने कहा है-

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।

इसमें उचित उपदेश का मर्म होना चाहिए।।

भीष्म साहनी चूंकि प्रगतिशील लेखक है जैसा कि उनके विचारों से स्पष्ट हो चुका है। वे हमेशा स्वतन्त्र होकर लिखते थे। वे अपनी मान्यताओं को व्यक्त करने में हिचकिचाते नहीं थे। इसकी वजह यही हो सकती है कि उन्हें अपनी मान्यताओं में दृढ़ विश्वास है। वे जिस विचार धारा के समर्थक हैं, वह तो शरीर में रक्त की तरह उनकी रचनाओं में रची-बसी है।

भीष्मसाहनी ने अपने कथा तथा नाट्य साहित्य में नए-नए पात्रों की सृष्टि अलग-अलग परिवेश में एक समाजवादी वैज्ञानिक दृष्टि से की है। उनके साहित्य में सामाजिक यथार्थ सिर्फ उतना ही नहीं आया है, जितना समाज की सतह पर उतरी हुई समस्याओं के रुप में सामने आता है, बल्कि उसका वह संघर्ष कहीं अधिक सामाजिक सत्य के रुप में उभरा है, जो सतह के नीचे की गहराई में ह्रासोन्मुख और प्रगतिशील शक्तियों के बीच अनवरत रुप से जारी रहता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में कथावस्तु का चयन बड़ी धैर्यता के साथ किया है।

भीष्म साहनी ने अपने साहित्य में जिन-जिन रचनाओं व बिन्दुओं पर प्रकाश डाला है। वे इस प्रकार हैं-

भीष्म साहनी ने **'तमस'** उपन्यास में साम्प्रदायिकता की समस्या को उठाया है। स्वतन्त्रता के बाद भी भारत अँधेरे में है तो इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि भारतीय जनता के मनोजगत पर अभी भी साम्प्रदायिकता का तमस छाया हुआ है। भीष्म साहनी का **'तमस'** शीर्षक उपन्यास स्वतन्त्रता-पूर्व भारत के पश्चिम-उत्तरप्रदेश के निवासी हिन्दुओं-सिक्खों और मुसलमानों के आपसी वैमनस्य की, उस वैमनस्य के कारणों,परिणामों और उससे जुड़े सन्दर्भों को यथार्थवादी स्पैक्ट्रम पर प्रतिविम्बित करता है। वह साम्प्रदायिकता के जिस तमस पर प्रकाश डालता है, वह आज भी

अपनी समस्त विभीषिका के साथ भारतीय जन-मानस के क्षितिज को आवृत किए हुए है। प्रसिद्ध कथाकार अमरकान्त के शब्दों में -

"भीष्म साहनी की अनेक रचनाओं में यह धैर्य देखने में आता है। विशेष रुप से मैं यहाँ तमस का जिक्र करना चाहूँगा।" साम्प्रदायिकता जैसे नाजुक विषय पर सही दृष्टि से लिखने के लिए जिस अपरिसीम धैर्य की जरुरत है, उसका आभास इस रचना को पढ़कर ही हो सकता है। पंजाब के दंगों पर रामानंद सागर की रचना 'और इंसान मर गया' तथा यशपाल जी की रचना 'झूठा-सच' दो महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। सागर की रचना के हिला देने वाले प्रसंग अंत में एक सस्ती भावुकता में पिछड़ गए हैं। 'झूठा-सच' में विवरणात्मक विस्तार है और वह यथातथ्यता के अधिक निकट पहुँच गया है। इन दोनों रचनाकारों ने कच्चे माल की 'मैन्युफैक्चरिंग' मेहनत और धैर्य के साथ नहीं की है। पर भीष्म जी इन रचनाओं में एक अद्भुत शिल्पी के रूप में उभर कर आए हैं । उन्होंने इस रचना में अपार धैर्य एवं अनुशासन का परिचय दिया है और इस रचना की कोई चूल ढीली नहीं है। एक सही ऐतिहासिक दृष्टि व समझ से बनाया गया यह एक ऐसा ठोस भवन है, जो सरल, सुन्दर, मजबूत व विशाल है और हमारे बीच प्रकाश स्तंभ की तरह जगमगा रहा है ! "२

देश में कई मनीषियों ने साम्प्रदायिकता को एक विकार माना है, जिसका अर्थ ही है, पूरे शरीर को विनष्ट कर देना और यह साम्प्रदायिकता चाहे भारतीय परिप्रेक्ष्य में हो या विश्व के परिप्रेक्ष्य में, मानव जाति के लिए बहुत ही घातक होती है; शायद यही वजह है कि आज न केवल पंजाब बल्कि समूचा भारत इस आग की लपेट में आज भी जल रहा है। प्रसिद्ध आलोचक वीरेन्द्र ने कहा है -

"यह है साम्प्रदायिकता का जहर जिसमें सामान्यजन तबाह होता है।"३

'तमस' में जो वर्बाद होते हैं, घर से बेघर होते हैं, वे सम्पन्न वर्ग के लोग नहीं होते हैं। बल्कि गरीब व असहाय लोगों के घर उजड़े हैं जैसे 'तमस' के हरनामसिंह चायवाला और उसकी पत्नी बन्तो। साहनी जी ने काफिर के साथ मित्रता और उच्च्य तथा निम्न वर्ग में जो भिन्नता दिखलाई है। वह वास्तव में तमस में देखते ही बनती है। शाहनबाज मुसलमान और रघुनाथ हिन्दू व्यक्ति है। जब दंगा अपनी पराकाष्ठा पर होता है, तब ऐसे तनाव पूर्ण और मार-काट माहौल में भी शाहनवाज खुले आम अपनी नीले रंग की मोटर में सवार होकर रघुनाथ के घर पहुँचता है, तो शाहनवाज को रघुनाथ का नौकर मिल्खी दिखाई देता है। शाहनवाज मिल्खी को देखकर उसके हृदय में हिन्दुत्व विरोधी संस्कार प्रबल हो उठता है। वह मिल्खी को सीढ़ियों से धक्का दे देता है। ऐसा ही एक निर्धन इत्रफरोश मुसलमान एक हिन्दू लड़के के छुरे का शिकार होता है। अगर हम इन साम्प्रदायिक दंगों पर नजर डालें तो हम पाएँगे कि सबसे ज्यादा शोषण निर्धन पक्ष का हुआ।

"फिर चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान, सिक्ख हो या कोई और; उनमें अधिकांश संख्या गरीबों की ही होती है। शाहनवाज जैसे रईस मुसलमान, रघुनाथ जैसे खाते-पीते हिन्दू और तेजासिंह जैसे रजे हुए मुखिया सरदार इन सारे दंगों में 'साफ' और 'बेदाग़' होकर बच निकलते हैं।"४ इसी सम्बन्ध में

वीरेन्द्र मोहन ने ठीक ही कहा है -

"ये साम्प्रदायिक शक्तियाँ एक-दूसरे से घृणा तो करती हैं, लेकिन इनको ज्यादा घृणा उन शक्तियों से है, जो साम्प्रदायिक मानसिकता को समाप्त कर मानवीय एकता स्थापित करने में प्रयत्नशील हैं। तमस के देवदत्त,सोहनसिंह और मीरदाद अलग-अलग तरीकों से अपनी ही जाति के अंदर यातनाग्रस्त है।"५

साम्प्रदायिकता की यह लहर तमस में ही नहीं 'अमृतसर आ गया' कहानी में भी देखने को मिलती है।

'तमस' में एक जगह साम्प्रदायिकता तो दूसरी ओर साम्प्रदायिक सद्भाव भी देखने को मिलता है। साहनी जी यह कभी नहीं चाहते थे कि हिन्दू, मुसलमानं, सिक्ख, ईसाई आपस में लड़ें। वे सभी के अन्दर एक परमात्मा का नूर देखते हैं। बख्शीजी कांग्रेस के हैड थे, लेकिन जाति से मुसलमान थे। वे १६-१७ साल जेल रहकर आए थे। जब मस्जिद पर सुअर पड़ा हुआ था, तब कांग्रेस के सभी साथी वहाँ से भाग गए, लेकिन बख्शीजी व जरनैल ने उस सुअर की टाँगों को पकड़कर सड़क के किनारे ईटों में छिपा दिया।

ऐसा ही साम्प्रदायिक सद्भाव शाहनवाज व रघुनाथ, हरनामसिंह व उसकी पत्नी बन्तो तथा मुसलमान राजो में दिखाई देता है। इसका एक कथन द्रष्टव्य है-

"तेरे हाथ का दिया अमृत बराबर है बहन, हम तुम्हारा किया कभी नहीं उतार सकते।"६ यही भाव लाला लक्ष्मीनारायण व नूर इलाही में देखने को मिलता है। नीलू नीलिमा नीलोफ़र के नीलू और सुधीर का अन्तर्जातीय विवाह ही साम्प्रदायिक सद्भाव उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने 'झुटपुटा' कहानी में एक हिन्दू लड़की व सरदार के द्वारा साम्प्रदियक सद्भाव को दर्शाया है।

साहनी जी ने 'कबिरा खड़ा बजार में' कबीर के माध्यम से यह बतलाया है कि संसार में कोई विरले ही महापुरुष होते हैं जो स्वयं कष्ट सहकर दूसरों का कल्याण करते हैं। उन्हें सही राह दिखाकर एक श्रेष्ठ मानव बनाते हैं। कबीर ने पूरे गाँव को भोज दिया, जिसमें सभी-जाति के लोग भोजन करेंगे। किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं बरता जाएगा।

भीष्म साहनी के कथा व नाट्य साहित्य में राजनीतिक परिदृश्य की अनेक झांकियाँ मुखरित हुई हैं। इसमें भारत के स्वतन्त्रता-पूर्व तथा स्वतन्त्रता के बाद अनेक परिदृश्य देखने को मिलते हैं। स्वतन्त्रता पूर्व भारत में अंग्रेजों का शासन था। ब्रिटिश साम्राज्य पूरे भारत में छाया हुआ था। 'अंग्रेजों की फूट डालो शासन करो' की नीति के कारण जनता में हाहाकार मचा हुआ था। अंग्रेज लोग, हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख लोगों को आपस में लड़ा रहे थे और स्वयं मजे से शासन कर रहे थे। वे जनता पर अत्याचार कर रहे थे। सभी जगह आग, खून-खराबा, दंगे, हत्याएँ, रेप, मारकाट, छाया हुआ था। अंग्रेजों का उपद्रव ज्यादा बढ़ने के कारण हिन्दू स्वयं में यह विचार कर रहे थे। कि मुसलमान हमें नुकसान पहुँचा रहे हैं और मुसलमान यह सोच रहे थे कि हिन्दू हमें नुकसान पहुँचा रहे हैं। अगर वास्तविकता पर नजर डाली जाए तो यही स्थिति भीष्म जी के 'तमस', 'मय्यादास की माड़ी' व 'कुंतो' में दिखाई देती है। **'तमस'** तो आज़ादी के मात्र पाँच दिन पूर्व की कथा है।

रिचर्ड एक डिप्टी-कमिश्नर है। वह तमस का एक पात्र है। साहनी जी ने रिचर्ड के माध्यम से यह बताया कि समाज में ऐसे कई लोग हैं जो समाज में भ्रष्टाचार फैला रहे हैं। आज़ादी से पूर्व अंग्रेजो की एक स्पष्ट नीति थी कि पहले हिन्दुस्तान के लोग देश के नाम पर एक जुट होकर उनसे लड़ने के लिए आमादा हो, उन्हें आपस में ही लड़ा भिड़ाकर उनकी जुझारु शक्तियों को कुंठित कर दिया जाए और जब लडभिड़ कर वे थक जाएँ तो उन्हें शान्ति और व्यवस्था के नाम पर अपनी व्यवस्थापक भूमिका के चमत्कार से चकाचौंध कर दिया जाए। बख्शीजी से जब यह स्थिति नहीं देखी गई, तब उन्होंने कह ही दिया-

"फिसाद करवानेवाला भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करने वाला भी अंग्रेज, घरों में बसानेवाला भी अंग्रेज।"७

तमस में ऐसे अनेक पात्र हैं जो देश के लिए मर मिटने को तैयार हैं जैसे बख्शीजी, जरनैल आदि कुछ ऐसे स्वार्थी पात्र भी हैं जो ऊपर से तो देश के शुभ चिंतक दिखते हैं, लेकिन जब देश पर विपत्ति के बादल मंडराते हैं, तब वह चूहे की तरह भाग जाते हैं जैसे मेहता शंकर आदि । ऐसे ही चित्र मय्यादास की माड़ी में देखने को मिलते है। मय्यादास की माड़ी में सिक्ख अमलदारी के उखड़ते हुए पाँव और अंग्रेजी हुकूमत की बढ़ती शक्ति का चित्रण है। भीष्म जी ने ऐसे कई चित्र उभारे हैं, जो इस शक्ति के विरोध में देश की खातिर अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ता से टिके हैं, जो जबकि कुछ टूटकर पाला बदल लेते हैं। इन दोनों के अलावा भी कुछ ऐसे है जो शुरु से इस बात को लेकर परेशान रहते हैं कि इस बदलते परिवेश में हमारी भूमिका क्या होगी? भले ही राजा अमीरचंद और मय्यादास अस्तांचल के सूरज हो, लेकिन अपनी निष्ठा और स्वाधीनता के लिए भूलकर भी पाला नहीं बदलते। जबकि मलिक मंसाराम समय के साथ विदेशी सामानों का एजेंट बन जाता है। दीवान धनपत सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए खालसा फौज के पतियों की तरह शुरु से अंग्रेजों के साथ मजबूत करता है, परन्तु वहीं कुंतो का हीरालाल सब कुछ लुटाकर देश की आज़ादी प्राप्त करता है। वह साम्राज्यवादी ताकतों के सामने प्रताडनाओं के बावजूद नहीं झुकता है। इसी तरह विकट स्थितियों से घिरा मय्यादास की माड़ी का लेखराज दीवान धनपत के सामने नहीं झुकता । अंततः उसे धनपत के इशारे पर अंग्रेजी हुकूमत लापता कर देती है।

'नौसिखुआ' एक ऐसे नवयुवक सिक्ख की कहानी है। जिसने अपने गुरुमहाराज गुरु तेग बहादुर के प्रति गुरुभक्ति दिखाई है। स्वतन्त्रता के बाद लिखी गई ऐसी अनेक कहानियाँ जैसे **'अमृतसर आ गया'** वाङ्चू जिसमें राजनैतिक परिदृश्य के चित्र देखने को मिलते हैं।

भीष्मजी ने अपने नाट्य साहित्य में राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर चित्र उभारा है। उन्होंने समाज के सामने ऐसे दृश्य उपस्थित किए कि एक राजा अपने यश की खातिर बेटी का परित्याग कर उसे पर पुरुष के हाथ में सौंप देता है जिसका चित्रण उनके 'माधवी' नाटक के राजा ययाति में देखने को मिलता है। उन्होंने ऐसे अत्याचारी राजाओं का वर्णन किया जो समाज के श्रेष्ठ पुरुषों को बिना कसूर के दण्ड देते हैं। कभी वे उनकी आँखें निकलवा देते तो कभी उसे बाहर कर देते हैं।

'हानूश' नाटक का नायक हानूश और **'कबिरा खड़ा बजार में'** कबीर ऐसे प्रताड़ित पात्र हैं।

समाज में जातीय विद्वेष हर जगह देखने को मिलता है। श्रेष्ठ जाति के लोग छोटी जाति के लोगों का

रिचर्ड एक डिप्टी-कमिश्नर है। वह तमस का एक पात्र है। साहनी जी ने रिचर्ड के माध्यम से यह बताया कि समाज में ऐसे कई लोग हैं जो समाज में भ्रष्टाचार फैला रहे हैं। आज़ादी से पूर्व अंग्रेजो की एक स्पष्ट नीति थी कि पहले हिन्दुस्तान के लोग देश के नाम पर एक जुट होकर उनसे लड़ने के लिए आमादा हो, उन्हें आपस में ही लड़ा भिड़ाकर उनकी जुझारू शक्तियों को कुंठित कर दिया जाए और जब लडभिड़ कर वे थक जाएँ तो उन्हें शान्ति और व्यवस्था के नाम पर अपनी व्यवस्थापक भूमिका के चमत्कार से चकाचौंध कर दिया जाए। बख्शीजी से जब यह स्थिति नहीं देखी गई, तब उन्होंने कह ही दिया-

"फिसाद करवानेवाला भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करने वाला भी अंग्रेज, घरों में बसानेवाला भी अंग्रेज।"७

तमस में ऐसे अनेक पात्र हैं जो देश के लिए मर मिटने को तैयार हैं जैसे बख्शीजी, जरनैल आदि कुछ ऐसे स्वार्थी पात्र भी हैं जो ऊपर से तो देश के शुभ चिंतक दिखते हैं, लेकिन जब देश पर विपत्ति के बादल मंडराते हैं, तब वे चूहे की तरह भाग जाते हैं जैसे मेहता शंकर आदि । ऐसे ही चित्र मय्यादास की माड़ी में देखने को मिलते है। मय्यादास की माड़ी में सिक्ख अमलदारी के उखड़ते हुए पाँव और अंग्रेजी हुकूमत की बढ़ती शक्ति का चित्रण है। भीष्म जी ने ऐसे कई चित्र उभारे हैं, जो इस शक्ति के विरोध में देश की खातिर अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ता से टिके हैं, जो [illegible] पाला बदल लेते हैं। इन दोनों के अलावा भी कुछ ऐसे है जो शुरु से इस बात को लेकर परेशान रहते हैं कि इस बदलते परिवेश में हमारी भूमिका क्या होगी? भले ही राजा अमीरचंद और मय्यादास अस्तांचल के सूरज हैं, लेकिन अपनी निष्ठा और स्वाधीनता के लिए भूलकर भी पाला नहीं बदलते। जबकि मलिक मंसाराम समय के साथ ब्रिटिश सरकार का एजेंट बन जाता है। दीवान धनपत सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए खालसा फौज के पतियों की तरह शुरु से अंग्रेजों के साथ [illegible] करता है, परन्तु वहीं कुंतो का हीरालाल सब कुछ लुटाकर देश की आज़ादी प्राप्त करता है। वह साम्राज्यवादी ताकतों के सामने प्रताड़नाओं के बावजूद नहीं झुकता है। इसी तरह विकट स्थितियों से घिरा मय्यादास की माड़ी का [illegible] दीवान धनपत के सामने नहीं झुकता । अंततः उसे धनपत के इशारे पर अंग्रेजी हुकूमत लापता कर देती है।

'नौसिखुआ' एक ऐसे नवयुवक सिक्ख की कहानी है। जिसने अपने गुरुमहाराज गुरु तेग बहादुर के प्रति समर्पण दिखाई है। स्वतन्त्रता के बाद लिखी गई ऐसी अनेक कहानियाँ जैसे **'अमृतसर आ गया'** वाङ्चू जिसमें राजनीतिक परिदृश्य के चित्र देखने को मिलते हैं।

भीष्मजी ने अपने नाट्य साहित्य में राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर चित्र उभारा है। उन्होंने समाज के सामने ऐसे दृश्य उपस्थित किए कि एक राजा अपने यश की खातिर बेटी का परित्याग कर उसे पर पुरुष के हाथ में सौंप देता है जिसका चित्रण उनके 'माधवी' नाटक के राजा ययाति में देखने को मिलता है। उन्होंने ऐसे अत्याचारी राजाओं का वर्णन किया जो समाज के श्रेष्ट पुरुषों को विना कसूर के दण्ड देते हैं। कभी वे उनकी आँखें निकलवा देते तो कभी उन्हें [illegible] कर देते हैं।

'हानूश' नाटक का नायक हानूश और **'कबिरा खड़ा बजार में'** कबीर ऐसे प्रताड़ित पात्र हैं।

समाज में जातीय विद्वेष हर जगह देखने को मिलता है। श्रेष्ठ जाति के लोग छोटी जाति के लोगों का

रिचर्ड एक डिप्टी-कमिश्नर है। वह तमस का एक पात्र है। साहनी जी ने रिचर्ड के माध्यम से यह बताया कि समाज में ऐसे कई लोग हैं जो समाज में भ्रष्टाचार फैला रहे हैं। आज़ादी से पूर्व अंग्रेजो की एक स्पष्ट नीति थी कि पहले हिन्दुस्तान के लोग देश के नाम पर एक जुट होकर उनसे लड़ने के लिए आमादा हो, उन्हें आपस में ही लड़ा भिड़ाकर उनकी जुझारु शक्तियों को कुंठित कर दिया जाए और जब लडभिड़ कर वे थक जाएँ तो उन्हें शान्ति और व्यवस्था के नाम पर अपनी व्यवस्थापक भूमिका के चमत्कार से चकाचौंध कर दिया जाए। बख्शीजी से जब यह स्थिति नहीं देखी गई, तब उन्होंने कह ही दिया-

''फिसाद करवानेवाला भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करने वाला भी अंग्रेज, घरों में बसानेवाला भी अंग्रेज।''७

तमस में ऐसे अनेक पात्र हैं जो देश के लिए मर मिटने को तैयार हैं जैसे बख्शीजी, जरनैल आदि कुछ ऐसे स्वार्थी पात्र भी हैं जो ऊपर से तो देश के शुभ चिंतक दिखते हैं, लेकिन जब देश पर विपत्ति के बादल मंडराते हैं, तब वह चूहे की तरह भाग जाते हैं जैसे मेहता शंकर आदि । ऐसे ही चित्र मय्यादास की माड़ी में देखने को मिलते है। मय्यादास की माड़ी में सिक्ख अमलदारी के उखड़ते हुए पाँव और अंग्रेजी हुकूमत की बढ़ती शक्ति का चित्रण है। भीष्म जी ने ऐसे कई चित्र उभारे हैं, जो इस शक्ति के विरोध में देश की खातिर अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ता से टिके हैं, जो जबकि कुछ टूटकर पाला बदल लेते हैं। इन दोनों के अलावा भी कुछ ऐसे है जो शुरु से इस बात को लेकर परेशान रहते हैं कि इस बदलते परिवेश में हमारी भूमिका क्या होगी? भले ही राजा अमीरचंद और मय्यादास अस्तांचल के सूरज हो, लेकिन अपनी निष्ठा और स्वाधीनता के लिए भूलकर भी पाला नहीं बदलते। जबकि मलिक मंसाराम समय के साथ विदेशी सामानों का एजेंट बन जाता है। दीवान धनपत सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए खालसा फौज के पतियों की तरह शुरु से अंग्रेजों के साथ मजबूत करता है, परन्तु वहीं कुंतो का हीरालाल सब कुछ लुटाकर देश की आज़ादी प्राप्त करता है। वह साम्राज्यवादी ताकतों के सामने प्रताडऩाओं के बावजूद नहीं झुकता है। इसी तरह विकट स्थितियों से घिरा मय्यादास की माड़ी का लेखराज दीवान धनपत के सामने नहीं झुकता । अंततः उसे धनपत के इशारे पर अंग्रेजी हुकूमत लापता कर देती है।

'नौसिखुआ' एक ऐसे नवयुवक सिक्ख की कहानी है। जिसने अपने गुरुमहाराज गुरु तेग बहादुर के प्रति गुरुभक्ति दिखाई है। स्वतन्त्रता के बाद लिखी गई ऐसी अनेक कहानियाँ जैसे **'अमृतसर आ गया'** वाङ्चू जिसमें राजनैतिक परिदृश्य के चित्र देखने को मिलते हैं।

भीष्मजी ने अपने नाट्य साहित्य में राजनीतिक परिदृश्य का सुन्दर चित्र उभारा है। उन्होंने समाज के सामने ऐसे दृश्य उपस्थित किए कि एक राजा अपने यश की खातिर बेटी का परित्याग कर उसे पर पुरुष के हाथ में सौंप देता है जिसका चित्रण उनके 'माधवी' नाटक के राजा ययाति में देखने को मिलता है। उन्होंने ऐसे अत्याचारी राजाओं का वर्णन किया जो समाज के श्रेष्ट पुरुषों को बिना कसूर के दण्ड देते हैं। कभी वे उनकी आँखें निकलवा देते तो कभी उसे बाहर कर देते हैं।

'हानूश' नाटक का नायक हानूश और **'कबिरा खड़ा बजार में'** कबीर ऐसे प्रताड़ित पात्र हैं।

समाज में जातीय विद्वेष हर जगह देखने को मिलता है। श्रेष्ठ जाति के लोग छोटी जाति के लोगों का

अपमान कर उन पर अत्याचार करते हैं। समाज में ऐसे जातीय विद्वेष को देखकर लेखक का हृदय द्रवित होने लगता है। उनसे ऐसे दृश्य नहीं देखे जाते। उन्होंने 'कबिरा खड़ा बजार में' नामक नाटक में ऐसी परिस्थितियों को दर्शाया है और नाटक के नायक कबीर के माध्यम से ऐसे जातीय विद्वेष को दूर करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने सभी जाति के लोगों को एक परमात्मा का नूर माना है। लेखक ने जातीय विद्वेष के स्थान पर जातीय सद्भाव लाने का प्रयत्न किया है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण उनकी कहानी **'अमृतसर आ गया'** के बाबू में देखने को मिलती है।

निर्धनता जीवन का बहुत बड़ा अभिशाप है। गरीबी के कारण मानव की क्या दशा होती है? उसको लेखक ने अपने साहित्य में दिखाया है। **'हानूश'** नाटक में हानूश का बेटा सर्दी के कारण मर गया। **'तमस'** उपन्यास में प्रकाशो निर्धनता के कारण अपने माता-पिता के पास वापस लौटकर नहीं आई, क्योंकि वह जानती थी कि वह स्वयं अपना पेट नहीं पाल पा रहे हैं तो मेरा कैसे पालेंगे? **'कड़ियाँ'** में प्रमिला व नारंग में यह स्थिति देखने को मिलती है। ऐसी ही निर्धनता 'आवाजें' कहानी के मक्खनलाल तथा देवकी और 'झूमर' कहानी में अर्जुनदास और उसकी पत्नी कमला को आर्थिक तंगी मे गुजरना पड़ता है।

भीष्म साहनी के उपन्यास 'झरोखे','बसंती' और 'तमस' में मजदूर-पूँजीपति का वर्णित संघर्ष इस परम्परा की परिपुष्टि करता है। यद्यपि भीष्म जी के उपन्यासों में यह संघर्ष नारेबाजी और जुलूस से हटकर एक नए तरह का संघर्ष है जैसा कि तुलसी,नत्थू और बसंती के साथ होता है। ये पात्र अपने वर्ग की पीड़ा और अभाव की स्थितियाँ झेलते जाने के साथ-साथ जिंदगी के प्रति अडिग आस्था और भविष्य की सुंदर आकांक्षाएँ लिए संघर्ष पथ पर अग्रसित होते हैं। भीष्मजी का इन पात्रों के साथ खड़ा होना ही इस बात का प्रतीक है कि वर्ग-संघर्ष की भूमिका में समाज की नवीन एवं जीवंत शक्तियाँ पुरानी शक्तियों को नष्ट कर एक नवीन शोषण रहित समाज की स्थापना का प्रयास है।

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में मूल्यों के बीच द्वंद की समस्या को कई स्थानों पर उठाया है। उनका विचार है कि मनुष्य व समाज अपने अनुभव से और परिस्थितियों के प्रभाव में अपने जीवन-निर्वाह के साधनों और व्यवस्था में परिवर्तन करता जाता है। समाज जिन जीवन-प्रणालियों और व्यवस्था के बीच से गुजरता है, उसकी विचारध ारा भी वैसे ही हो जाती है। भीष्म जी ने 'तमस' का जरनैल,सोहनसिंह,मीरदाद और देवदत्त तथा बसंती का बसंती तथा झरोखे का तुलसी, मय्यादास की माड़ी' का हुकूमतराय, दीवान धनपत तथा 'कुंतो' का धनराज, सुषमा, जयदेव जैसे पात्रों को रुढ़ियों और परम्परागत मूल्यों के विरोध में खड़ा किया है। कहने आशय यह है कि उन्होंने न तो पुरातन को पूरी तरह से नकारना चाहते हैं और न ही नूतन को पूरी तरह से ग्रहण करना चाहते हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हमें वहाँ देखने को मिलता है। जब झरोखे के तुलसी से चलते-चलते, कुंतो के प्रोफ़ेस्साब तक पूरी हो जाती है।

साहनी जी ने धार्मिक परिदृश्य को अपने साहित्य का आधार बनाया है। हिन्दू और मुसलमानों में जो उपद्रव मचा हुआ है। एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। इसका सबसे प्रमुख कारण धर्म है।

जो धर्म कभी समाज के सर्वांगीण विकास में सहायक था, मानवता का रक्षक था, वही समाज का विघटन करनेवाला तथा मानवता का भक्षक बन गया। हिन्दू धर्म की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि भौतिक जगत और भौतिक सुख की अपेक्षा पारलौकिक सुख में आस्था रखती है, लेकिन आधुनिक युग में पाश्चात्य प्रभाव से उसमें परिवर्तन हो गए।राजनैतिक संघर्ष, आर्थिक पतन तथा समाज विघटन का रूप विक्रत बना।

लेकिन आज समाज में धर्म की भावना कितनी विकृत बनी है? सभी एक ही जाति के लोग होते हुए भी विभिन्न संप्रदायों के कारण एक दूसरे की मारकाट करते हैं। यह सांप्रदायिक तनातनी का तमस सघन होता जा रहा है। विनाश का घोर तमस छाया रहता है न जाने इसमें कितने लाख लोग मारे गए और न जाने कितनी संपत्ति जलकर नष्ट हो गई। इसी उद्देश्य को लेकर तमस लिखा गया है। तमस की एक पात्र लीजा है। उसने हमेशा अपने पति रिचर्ड से यही कहा है कि अगर तुम चाहो तो इन उपद्रवों को रुकवा सकते हो। रिचर्ड ने कहा -

"यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।"८

धर्म का यही विकृत रुप 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में देखने को मिलता है। भीष्म जी ने कबीर के माध्यम से लोगों को यह सन्देश दिया है कि वे धर्म के नाम पर नहीं लड़ें। कबीर ने जहाँ उचित समझा वहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों की फटकार लगाई। कबीर ने कहा है -

"दिन भर रोजा रहत है, रात हनत है गाय।

यह तो खून वह बन्दगी, कैसी खुसी खुदाय"९

भीष्म साहनी धर्म के आदर्श व विकृत रुप को अन्तर्जातीय विवाह के माध्यम से दिखाना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि अगर अन्तर्जातीय विवाह होंगे तो दोनों धर्मों में परस्पर प्रेम बढ़ेगा, लोग एक दूसरे का आदर करेंगे। वही उन्होंने धर्म का विकृत रुप बताते हुए यह भी कहा है कि हो सकता है कि परिवार वाले इस अन्तर्जातीय विवाह को स्वीकार न करें, जिससे उनमें आपसी वैमनस्यता व उपद्रव व टकराहट का रुप ले लें। यही स्थिति 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' उपन्यास के नीलू और सुधीर में देखने को मिलती है।

ऐसे ही धर्म के बदलते परिदृश्य का चित्र हमें झुटपुटा कहानी के सरदार में देखने को मिलता है।

भीष्म साहनी ने नारी संचेतना को अपने कथा व नाट्य साहित्य का आधार बनाया है। मानव जीवन में प्रेम का उच्च स्थान होता है। अगर जीवन में प्रेम नहीं है तो वह जीवन शुष्क मरुस्थल के समान है, परन्तु वही प्रेम श्रेष्ठ माना जाता है, जो व्यक्ति के अंदर छिपे हुए देवत्व का विकास कर उसे मानवता के उच्चासन पर बिठा दे। जो प्रेम हमें विपरीत दिशा में ले जाए उसका कोई महत्व नहीं होता है। उन्होंने उसी प्रेम को आदर्श दिया जो जीवन का सर्वांगीण विकास करे।

भीष्मसाहनी के प्रायः सभी उपन्यास, कहानियों एवं नाट्य साहित्य में प्रेम-तत्व की सृष्टि हुई है। प्रेम अपने विभिन्न रुपों में प्रकट हुआ है। ये प्रेम प्रेमी-प्रेमिका, पति-पत्नी, प्रेमिका और पति, पत्नी और प्रेमी में संचारित हुआ है। 'कड़ियाँ' उपन्यास का महेन्द्र एक तरफ अपनी पत्नी प्रमिला और प्रेमिका सुषमा को प्यार करना चाहता है, लेकिन एक पत्नी के होते हुए हमारे सामाजिक और पारंपरिक मूल्य इस तरह के प्रेम को प्रश्रय नहीं देते हैं। महेन्द्र का प्रेम विपरीत दिशा में जाता है, जिसका परिणाम यह होता है कि वह ना तो प्रमिला का पति हो पाता और न सुषमा का प्रेमी। भीष्मजी का ऐसा मानना हैं कि प्रेम में वासना का स्थान तो हो, परन्तु यदि प्रेम वासना तक ही सीमित रह जाए, तो वे प्रेम के घोर विरोधी दिखाई पड़ते हैं। तमस उपन्यास में भीष्म साहनी ने अल्लाहरक्खा द्वारा प्रकाशो का अपहरण नाजायज माना, परन्तु बाद में उन्होंने उन दोनों का विवाह करवा दिया। उन्होंने इस अनैतिकता को नैतिकता का जामा

पहिनाकर ग्राह्य बना दिया।

"प्रेमचंद भी नारियों के आदर्श प्रेम में विश्वास रखते थे। विवाह के पूर्व शारीरिक संबंध स्थापित होना, अथवा अन्य घृणित कार्यों को परंपरा के विरुद्ध मानते थे। उन्होंने जितने भी नारीपात्र प्रेमिका के रुप में चित्रित किए हैं, उन सभी में आदर्श प्रेम ही दिखाई पड़ता है। वे कभी अपने कर्तव्य पथ से च्युत नहीं होतीं और अपनी आत्मा का हनन कर आत्म-प्रवंचना का शिकार नहीं होती। चाहे वह रंगभूमि की सोफिया हो,या गोदान की मालती या वरदान की विरजन। सभी में प्रेम का उच्च रुप मिलता है।"१०

ऐसा ही चरित्र **'बसंती'** उपन्यास की बसंती और **'कुंतो'** उपन्यास की सुषमा में देखने को मिलता है। बसंती, दीनू से प्रेम करती थी, लेकिन उसने अपने शरीर को तब तक छूने नहीं दिया, जब तक उसने दीनू से ब्याह नहीं कर लिया। प्रेम का यही आदर्श रुप **'नीलू नीलिमा नीलोफ़र'** उपन्यास में नीलू और सुधीर में मुखरित हुआ है। वहाँ लेखक ने जयदेव को उच्छृंखल होने से बचाया, वहीं सुषमा के कौमार्य की भी रक्षा की। कुंतो उपन्यास में सुषमा गिरीश से विवाह के पहले तक जयदेव के प्रति पूरी तरह समर्पित थी। उसका प्रेम इतना पवित्र है कि वह पुरुष के सामीप्य से अनभिज्ञ है। जयदेव ने सुषमा के अन्दर प्रेम का अंकुर जगाने का प्रयत्न किया, लेकिन सुषमा पर इसका कुछ भी असर नहीं हुआ। जयदेव का प्यार वासनात्मक था, लेकिन शादी के बाद जयदेव भले ही सुषमा के प्रति झुका रहा, किन्तु सुषमा ने अपनी सीमा रेखा की पहचान बना ली थी। यह है लेखकीय दायित्व जिसका भीष्म जी ने ईमानदारी से निर्वाह किया है। ऐसा ही प्रेम **'कबिरा खड़ा बजार में'** नाटक के लोई और कबीर में, 'हानूश' के हानूश और कात्या में दिखलाई देता है। 'झूमर' कहानी के अर्जुनदास और कमला में देखने को मिलता है।

यही प्रेम जब विपरीत दिशा में जाता है, तब विनाश का कारण बनता है। इसमें सबसे ज्यादा दुर्दशा नारी की होती है। नारी कहीं की नहीं रहती है। वह आर्थिक दृष्टि से कमजोर होकर हर तरफ से शोषण का शिकार होती है। साहनी जी ने यहाँ पर यह भी दिखाने का प्रयास किया है कि नारी को अपने पति की और पति को अपनी पत्नी की भावनाओं को समझना चाहिए। अगर नारी पुरुष की अर्द्धांगिनी है तो उसका प्रथम कर्तव्य है कि वह अपने पति को खुश रखे और उनका सम्मान करे।

भीष्म साहनी ने आदर्श परिवार के चित्र भी उभारे है। अगर मानव अपने परिवार में मिल जुल कर अच्छी तरह से रहता है तो वह परिवार स्वर्ग माना जाता है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण कुंतो उपन्यास में देखने को मिलता है। भीष्म साहनी जी ने अपने साहित्य का प्रमुख आधार अन्तर्जातीय विवाह को बनाया है। अगर समाज में दहेज प्रथा, ऊँच-नीच की भावना को खत्म करना है तो अन्तर्जातीय विवाह, को प्रोत्साहन देना चाहिए जैसे **'नीलू नीलिमा नीलोफ़र'** उपन्यास के नीलू और सुधीर, तमस के अल्लाहरक्खा और प्रकाशों में मुखरित हुआ।

भीष्म साहनी ऐसे पहले लेखक नजर आते हैं, जिन्होंने शिक्षा के महत्व को अपने पहले उपन्यास **'झरोखे'** में रेखांकित किया है। 'झरोखे' का तुलसी एक सीधा-सादा युवक था। जिस घर में वह रहता था। उस घर के अधिकांश सदस्य शिक्षित थे। तुलसी काम से फुर्सत होकर थोड़ा समय पढ़ने के लिए निकाल लेता था। तुलसी की मालकिन तुलसी

को पढ़ाने के लिए मना करती थी। अगर यह पढ़ लिख जाएगा तो अपनी वास्तविक स्थिति को समझ जाएगा। डॉ० वीरेन्द्र मोहन ने इस संदर्भ में कहा-

"यह है वर्गीय मानसिकता। इसलिए जब तुलसी का बोध जाग्रह हो जाता है तो उच्च वर्ग उसके प्रति करुणा या सहानुभूति से कुछ नहीं करता, क्योंकि इस वर्ग की करुणा और सहानुभूति भी छद्म होती है - स्वार्थ के लिए,श्याम। बीबी की तरह। तुलसी आर्य समाज औषधालय, बैंक सब जगह भटकता है, नियतिवाद को ढोते हुए, लेकिन उसे कहीं भी उचित मुआवजा नहीं मिलता, इसलिए वह औषधालय और बैंक के अनेक परिवारों का बोझा न ढोकर पुनः पुराने एक परिवार में आ जाता है।"११

यही समस्या 'मय्यादास की माड़ी' में देखने को मिलती है। मय्यादास की माड़ी के वानप्रस्थी की बेटी सुमित्रा का पति सिर्फ इसलिए मर गया कि उसकी बीमारी की सूचना जिन पत्रों में आती है, सुमित्रा अशिक्षित होने की वजह से नहीं पढ़ पाती। जब उसका पिता वानप्रस्थी जी घर लौटकर आता है, तब वह दुखी होकर अपने पिता से कहती है-

"मैंने भी दो अक्षर पढ़ लिए होते तो क्या मालूम वह बच ही जाते।"१२

भीष्म साहनी जी ने शिक्षा के प्रति अपनी लेखनी घुमाई है। सुमित्रा के पति की मृत्यु इस बात का परिचायक बन जाती है कि अशिक्षा भी किसी महामारी से कम नहीं है। इसकी आड़ में कितने लोग घर से बेघर हो गए। कभी उन्हें भाग्य के नाम पर छला गया तो कभी किसी नाम पर भीष्म साहनी ने इस समस्या को वैज्ञानिक तरीके से सुलझाने का प्रयास भी किया है। डॉ० रामविलास शर्मा ने कहा है -

"प्रगतिशील साहित्य से मतलब उस साहित्य से है जो समाज को आगे बढ़ाता है, मनुष्य के विकास में सहायक होता है।"१३

भीष्म साहनी प्रगतिशील परम्परा के सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार हैं। अन्य समकालीन साहित्यकारों ने उनकी रचना दृष्टि पर अपने विचार प्रकट किए हैं-

१. विष्णु प्रभाकर जी ने उनके लेख में लिखा है-

"भीष्म साहनी को मैंने एक पाठक की दृष्टि से पढ़ा है। उनकी कहानियाँ केवल भावनात्मक स्तर पर ही प्रभावित नहीं करती, बल्कि हमारे संस्कारों पर गहरे चोट करती है। इस मामले में मैं भीष्म को यशपाल से ऊपर-मानता हूँ खासकर विभाजन की त्रासदी को लेकर उन्होंने जिन चरित्रों का निर्माण किया हैं उसमें बड़ी खूबी के साथ सारी स्थितियाँ सहज भाव से आती है।"

२. "भीष्म साहनी बहुत ही संवेदन शील व्यक्ति हैं। इसका असर उनके साहित्य में देखने को मिलता है। उनके सरल और सौम्य व्यक्तित्व के कारण ही उन पर मार्क्सवाद उस रुप में हावी नहीं है, जैसा अन्य वामपन्थी लेखकों में देखने को मिलता है।"१४

१. डॉ० नामवर सिंह जी के मतानुसार- "जीवन की विडम्बना स्थितियों की पहचान भीष्म साहनी में अप्रतिम है। आधुनिक महानगरों में अमानुषिक घृणा पुराने जमाने की सरल घृणा से कितनी अलग हैं।"

२. "प्रेमचन्द की तरह उनकी सृजनात्मक प्रतिमा कहानी विधा के अंदर अधिक कलात्मकता

के साथ व्यक्त हुई है।"

३. हिन्दी में नारी मुक्ति के प्रश्न पर लिखा हुआ 'माधवी' जैसा मार्मिक नाटक मेरे देखने में नहीं आया। उनके नाटकों के लिए उपयुक्त रंगमंच मिले तो यह प्रमाणित हो जाएगा कि उनमें मोहन राकेश से कहीं बड़ी नाट्य प्रतिभा है।

४. भीष्म साहनी वर्तमान जगत के उन थोड़े लेखकों में से है जो सच्चे अर्थों में धर्म निरपेक्ष और प्रतिबद्ध हैं। वे अपनी रचनाओं में आस्था का ढोल नहीं पीटते। उनके सौम्य, शालीन, सहज और विनम्र व्यक्तित्व के साथ विचारों की दृढ़ प्रतिबद्धता इतनी घुलमिल गई है कि कभी-कभी उसके बारे में भ्रम भी होता है। बिना आक्रमण हुए भी कोई लेखक प्रतिबद्ध हो सकता है इसकी सर्वोत्तम मिसाल भीष्म साहनी है।

५. इस पचहत्तर वर्ष की उम्र में वे श्रम और साधनों में किसी भी युवा लेखक से युवतर दिखाई पड़ते हैं। उनकी शक्ति का मूल स्रोत क्या है, यह मेरे लिए हमेशा कौतूहल और आश्चर्य का विषय रहा है।"१५

१. राजेन्द्र यादव का कहना है- "मेरी दृष्टि में भीष्म साहनी सहज मानवीय उष्मा के संवेदनशील कथाकर है। प्रेमचंद भी इसी प्रकार सहज मानवीय भावनाओं के रचनाकार है हालांकि प्रेमचंद की अपेक्षा उनका कलात्मक पक्ष ज्यादा मजबूत है।"

२. "आदमी में जो गुस्सा होता है, भीष्म साहनी में नहीं दिखाई देता, इसलिए उनकी प्रतिक्रिया या उनका प्रतिरोध उतना तीव्र नहीं है, जितना हमें यशपाल,मंटो या पंजाब की विभाजन की त्रासदी से गुजरे हुए अन्य रचनाकारों में दिखाई देता है।"

३. "भीष्म साहनी का समग्रता में अभी मूल्यांकन नहीं हुआ है। अब तक उनके कथा साहित्य को पूरा मानसिक बनावट को एक गहरी अर्न्तदृष्टि के साथ समझने की कोशिश नहीं हुई है।"१६

१. कमलेश्वर जी के मतानुसार - भीष्म साहनी ने अपने कथा साहित्य में जीवन की सच्चाई को बहुत कहीं गहराई और सघनता से पेश किया है। संवेदना भरे चरित्र और स्थितियों में छिपा हुआ इतिहास और समाज का दंश को उद्‌घाटित किया है।

२. "साम्प्रदायिक वैमनस्य को लेकर जो कुछ अनुभव भीष्म के हैं वे प्रेमचंद से ज्यादा गहरे हैं। भीष्म ने उस भयानक नरसंहार को खुद देखा है, सहा है, जिया है जबकि प्रेमचंद के सामने वे अनुभव नहीं थे।

३. "विचारधारा के स्तर पर भीष्म साहनी मार्क्सवादी है। उन्होंने लगातार अपने शिल्प को तोड़ा है। उन्होंने जो सहजता इस समय के अन्तराल में रचनाकार के रुप में प्राप्त की है, वह बड़ी विरल चीज है।"१७

१. शानी जी का कहना है - "भीष्म साहनी अपने संपूर्ण लेखन में चाहे वह कहानी हो या उपन्यास या नाटक सीधे जनता खासकर आम जनजीवन से जुड़े रहे हैं लेखक उन्हें ढूँढ़ निकालता है। भीष्म साहनी ने भी वही किया है।"१८

१. कृष्णा सोवती की नजर में - **"जिनके स्तर पर भीष्म के पास एक सुधरा, सुरक्षित, मजबूत चौखटा है जिसने भीष्म के समूचे लेखन और काफी हद तक जीवन दृष्टि को भी प्रभावित किया है। उनकी** राजनीतिक आस्थाएँ हैं। उनके रहन-सहन और सलीके में भी आप यही अन्दाज देख सकते हैं। लेखक के व्यक्तित्व को रुमान बनाने वाली चोंचले और किसी हद तक जरुरी साज सामान भीष्म के यहाँ गैरहाजिर है।"

भीष्म को एक में तीन जैसी बेनयाज बीबी मिली हुई है। बीबी-प्रेमिका-पाठिका 'थ्री इन वन'।"१६

भीष्म जी की भाषा शैली अलंकृत तथा संस्कृत शब्दावली से युक्त है, जिसमें भाषा शैली की वक्रता, कलात्मकता और साहित्यिकता की छटा विकीर्ण है। उनकी भाषा शैली मौलिक है। उनकी वाणी में गंभीरता और शैली में अल्हड़पन, विचारों में तर्कशीलता तथा शैली में वह व्यंग्यात्मक चुटीलापन है जो सहज ही हृदय पर घाव करता है।

निष्कर्ष के रुप में यह कहा जा सकता है कि उनकी समस्त कृतियों में सामाजिक, राजनैतिक, नैतिक, आर्थिक, धार्मिक व सांस्कृतिक परिवेश की छटा विद्यमान है। भीष्म जी मानवतावादी साहित्यकार है। उनमें प्रगतिशील विचारधाराओं का प्रभाव है। जो एकता की माँग करता है। मानवता उनकी प्रमुख ध्वनि है।

सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियों-अंतर्विरोधी दृष्टि का स्पष्टीकरण कर लेखक और पाठक से नाजुक रिश्ता जोड़ने में सफल हुए हैं। अपनी सहानुभूति और सद्भावना पाठक के दिल में उतार उसके दिल की गहराई तक पहुँचा दी है. इसमें यथार्थ के साथ भावुकता है। मानव-प्रेम की कमियों का उद्घाटन सफलता के साथ हुआ है। दिल खोलकर एवं भरे दिल से लिखा है। इसमें भीष्मजी के हृदय में हृदय की उदारता, सृष्टि की विशालता, दुःखी दलित लोगों के प्रति आस्था प्रकट हुई है।

भीष्म जी ने देश की मूक मानवता को चेतना देकर उत्तेजित किया है। देशव्यापी भावना का आग्रह किया है। अमानुष पात्रों को लेकर गहरी अमानवीयता भरी व्यथा कथा लिखी है। राष्ट्र की इच्छा आकांक्षा और सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतीकात्मकता स्पष्ट की है। अपनी ध्येयनिष्ठा के लिए सहायक होने वाले विचारों, सिद्धान्तों तथा कार्यक्रमों के प्रति सजगता प्रकट की है, लेकिन भीष्म जी भावना के स्तर पर अपने ध्येय की सिर्फ पूर्ति नहीं चाहते तो अपनी चिंतनशीलता का परिचय भी देते हैं। राष्ट्रीय चेतना जनजागरण का संदेश भी देते हैं, जो प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक परंपरा की श्रेष्ठता है। साहनी जी ने अपना उत्कृष्ट साहित्य लिखा जिससे आज वे हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट पंक्ति में खड़े हैं। तमस जैसा उपन्यास तो उनकी अमरकृति का सबल प्रमाण है। यह उपन्यास न केवल साम्यवादियों के बीच चर्चा में है, बल्कि आम पाठकों का प्रिय है। उन्होंने सत्ता और व्यवस्था के खोखलेपन को बड़ी ही सहजता और निर्भीकता से सदैव उघेड़ा है। इस प्रकार भीष्म साहनी ने हिन्दी कथा व नाट्य साहित्य की धरोहर में कुछ बहुमूल्य रत्न जोड़ने का सफल प्रयास किया है। एक प्रतिबद्ध ईमानदार, संवेदनशील एवं धर्मसम्प्रदाय-निरपेक्ष लेखक के रुप में हिन्दी साहित्य जगत में इनका नाम सदैव स्मरणीय रहेगा।

संदर्भ संकेत -

१. प्रेमचंद : कुछ विचार, पृ०सं० ६

२. अमरकान्त : भीष्मसाहनी : रचना और व्यक्ति, पृ०सं० २४६

३. वीरेन्द्र मोहन : उपन्यास दृष्टि और मानवीय आस्था (लेख) में, पृ०सं० ११८

४. भीष्मसाहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना एवं प्रतापठाकुर, पृ०सं० १३०

५. वीरेन्द्र मोहन : उपन्यास दृष्टि और मानवीय आस्था (लेख से), पृ०सं० ११८

६. तमस, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १६२

७. वही, पृ०सं० २२८

८. वही, पृ०सं० २२३

९. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्मसाहनी, पृ०सं० १७

१०. डॉ० सुरेश सिन्हा : हिन्दी उपन्यासों में नायिक की परिकल्पना, पृ०सं० २४६

११. भीष्मसाहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना : प्रतापठाकुर, पृ०सं० १२१

१२. मय्यादास की माड़ी, भीष्म साहनी, पृ०सं० २६१

१३. राम विलास शर्मा : प्रगति और परंपरा, पृ०सं० ४०६

१४. विष्णु प्रभाकर, सारिका, अगस्त १९९०, पृ०सं० ४३

१५. नामवर सिंह, सरिता, अगस्त १९९०, पृ०सं० ४४

१६. राजेन्द्र यादव, सारिका, अगस्त १९९६, पृ०सं० ४४

१७. कमलेश्वर, सारिका, अगस्त १९९०, पृ०सं० ४५

१८. शानी, सारिका, अगस्त १९९०, पृ०सं० ४५

१९. भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, कृष्णा सोवती, सं-ठाकुर/सक्सेना, पृ०सं० ६१

- संदर्भ संकेत

परिशिष्ट - (१)

आधार ग्रन्थ

उपन्यास

१) झरोखे

२) कड़ियाँ

३) तमस

४) बसंती

५) मय्यादास की माड़ी

६) कुंतो

७) नीलू नीलिमा नीलोफ़र

नाटक

हानूश

कबिरा खड़ा बजार में

माधवी

मुआवजा

आलमगीर

कहानी संग्रह

१. भाग्यरेखा

२. पहला पाठ

३. भटकती राख

४. पटरियाँ

५. वाङ्चू

६. शोभायात्रा

७. निशाचर

८. पाली

९. डायन

१०. मेरी प्रिय कहानियाँ

अन्य निबन्ध संग्रह

अपनी बात

बाल साहित्य

१. गुलेल का खेल

२. वापसी

आत्मकथा

मेरा भाई बलराज

आज के अतीत

परिशिष्ट-(२)

(अन्य संदर्भ ग्रन्थ)

ग्रन्थ		लेखक
१. हिन्दी गद्य और विकास	-	डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी
२. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास	-	डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी
३. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास	-	डॉ० बच्चन सिंह
४. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	-	डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त
५. हिन्दी साहित्य का सर्वेक्षण	-	विश्वम्भर मानव
६. हिन्दी कहानी की विकास प्रक्रिया	-	डॉ० आनन्द प्रकाश
७. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी	-	डॉ० के० एम० मालती
८. हिन्दी अनुसंधान	-	डॉ० विजयपाल सिंह
९. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास	-	डॉ० आर० सुरेन्द्रन
१०. हिन्दी उपन्यास युग चेतना और पाठकीय संवेदना	-	डॉ० मुकुन्द द्विवेदी
११. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास	-	डॉ० कृष्ण लाल
१२. हिन्दी उपन्यास - कथासार (खण्ड १,२)	-	डॉ० प्रभाकर माचवे
१३. कहानी नई कहानी	-	डॉ० नामवर सिंह
१४. हिन्दी साहित्य कोश भाग - एक	-	ज्ञान मण्डल वाराणसी
१५. हिन्दी साहित्य कोश भाग - दो	-	ज्ञान मण्डल वााराणसी
१६. हिन्दी साहित्य का इतिहास	-	डॉ० नगेन्द्र
१७. हिन्दी शब्द कोश	-	डॉ० धीरेन्द्र वर्मा
१८. हिन्दी लघु उपन्यास	-	घनश्याम 'मधुप'
१९. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना	-	शोभा पालीवाल
२०. वृन्दावन लाल के उपन्यासों में नैतिकता	-	डॉ० कमलेश माथुर
२१. भैरव प्रसाद गुप्त के उपन्यासों में	-	कु० प्रिया अम्बिका
२२. प्रेमचन्द्रोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना	-	डॉ० अमर सिंह, जगराम लोधा

देश के विभाजन की वास्तविकता से

अवगत होने के संदर्भ में

अमृतसर जिले के कुछ सिक्ख परिवारों

से साक्षात्कार के दौरान लिए गए

छाया चित्र
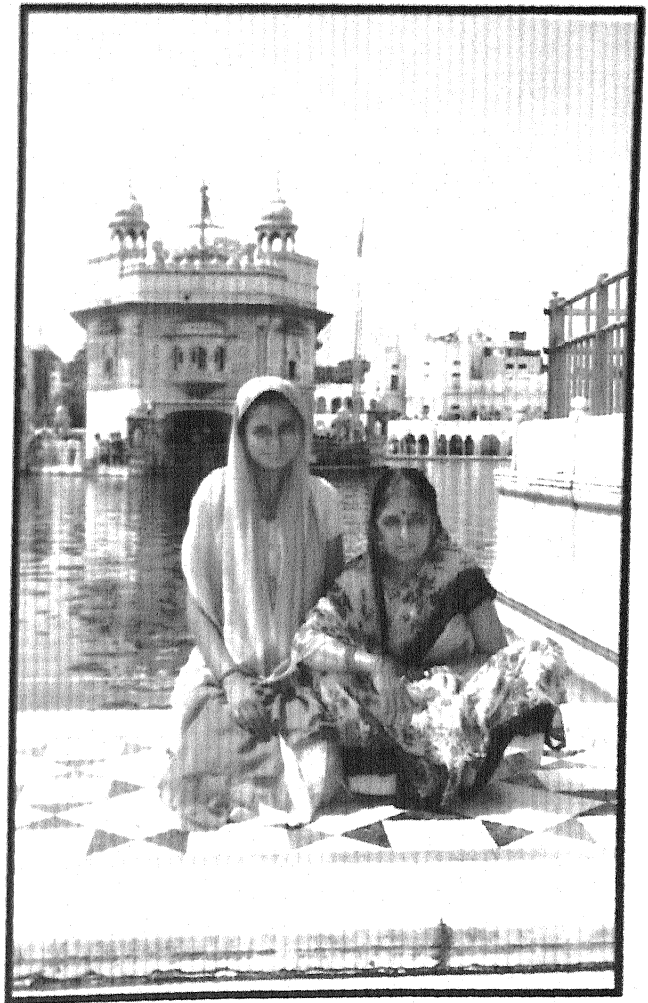
भारत पाकिस्तान सीमा बाघा पर शोधार्थी अपने माता–पिता के साथ

अमृतसर स्थित स्वर्णमन्दिर परिसर में शोधार्थी अपनी माँ के साथ

अमृतसर में सिक्ख परिवार के बीच शोधार्थी